Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

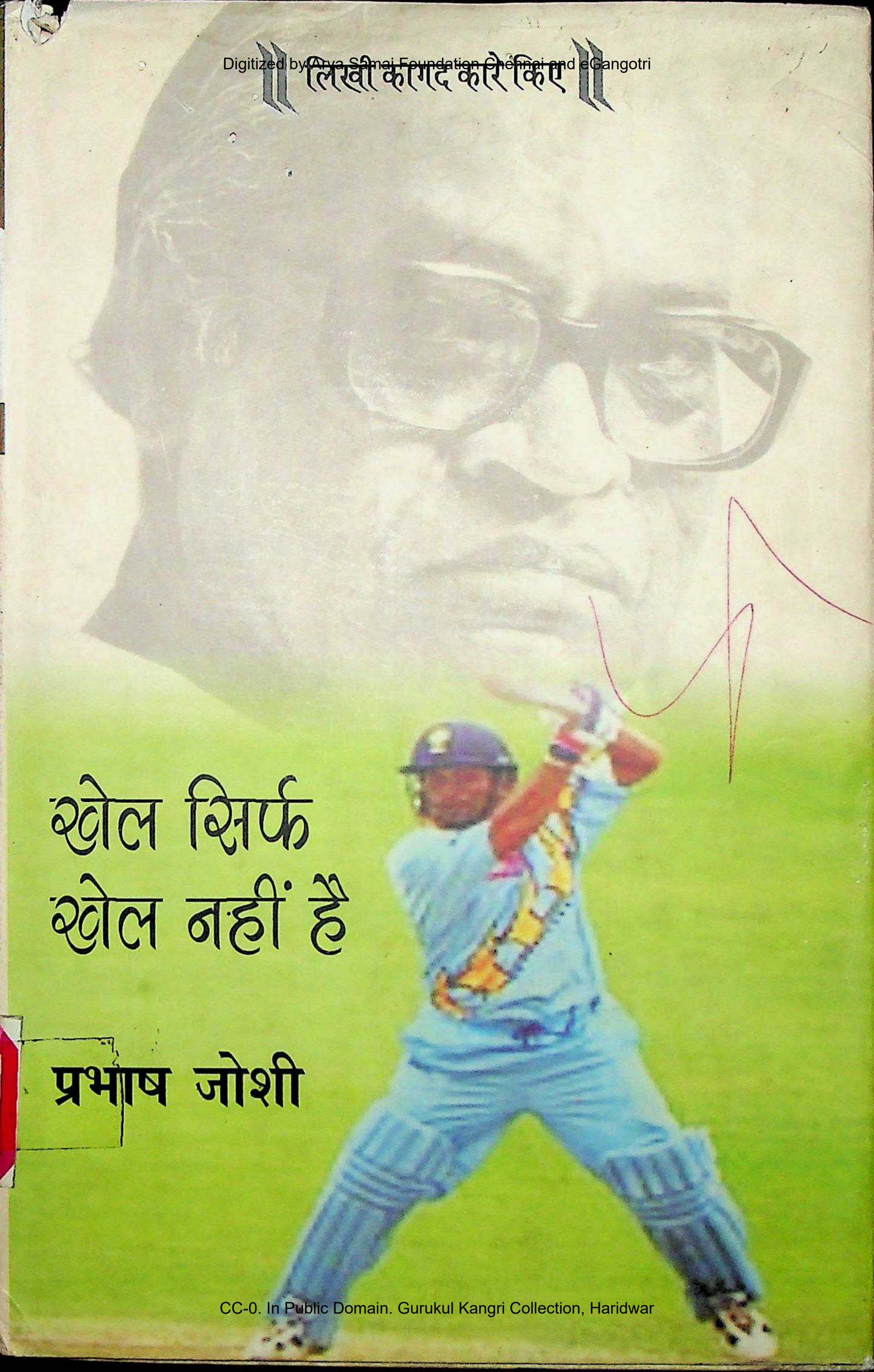

खेल सिर्फ खेल नहीं है

प्रभाष जोशी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

‘खेल सिर्फ खेल नहीं है’ पुस्तक में प्रभाष जोशी द्वारा खेल पर लिखे गए लेख संकलित हैं। इन लेखों से हिन्दी में खेल विश्लेषण का पूरा परिदृश्य ही बदल गया था।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभाष जोशी ने अपनी भूमिका में लिखा है : “इस पुस्तक में वे लेख दिए गए हैं जो मैंने खेल पर लिखे। अब जिस तरह राजनीति पर सम्पादकीय पेज पर सम्पादकीय या मुख्य लेख या जब जरूरी हुआ, पहले पेज पर लिखता रहा। उसी तरह खेल जैसे खेले जाते रहे—पहले पेज, आखिरी पेज और सम्पादकीय पेज पर कवर करता रहा। ऐसा करते हुए जो बच जाता था या जिसके मानवीय पहलू के लिए खबर में गुंजाइश नहीं होती थी, वही कागद कारे में आया।

खेल को महज एक मनोरंजन या शारीरिक व्यायाम मैं नहीं मानता। खेल मनुष्य का चरित्र बनाता है लेकिन उससे भी ज्यादा खेल में मनुष्य का चरित्र व्यक्त और प्रकट होता है। अंग्रेज माँ के केनेडियन बेटे ग्रेग रूज़ेस्की ने अमेरिकी माइकल चांग से एक मैच में एक सेट जीता, एक हारा और तीसरे सेट में चार-चार गेम पर थे। रूज़ेस्की सर्व कर रहा था तीस-तीस पर। गेम जीतने के लिए दो पाइंट और चाहिए थे। किसी तरह वह ड्यूस पर आया और फिर एडवांटेज पर। एक पाइंट के बाद गेम उसका होना था। सर्व करने के पहले रूज़ेस्की ने अपने पर क्रॉस बनाया और गेंद चूमी। तभी मुझे लगा कि गेम यह हार जाएगा। रूज़ेस्की ने सर्विस की और नेट में मार दी और फिर मार के डबल फॉल्ट कर दिया। चांग को मौका मिला और वह गेम और सेट दोनों ले गया। तब रूज़ेस्की की सर्विस गोले जैसे होती थी और उसका कैरियर बन रहा था। मैंने लिखा कि वह कभी कोई ग्रैंड स्लेम जीत नहीं पाएगा। जीता भी नहीं और अब तो खेलता भी नहीं। उस मैच के सबसे नाजुक और निर्णायक मौके पर रूज़ेस्की का अपने पर विश्वास नहीं था इसलिए उसने क्रॉस बनाया और गेंद चूमी। सबसे कठिन घड़ी में जिसका अपने पर विश्वास नहीं होता, उससे कुछ भी जीता नहीं जाएगा।

मैं क्रिकेट, टेनिस, फुटबॉल जैसे खेल इन्हीं नाजुक और कठिन घड़ियों में खिलाड़ियों और टीमों के चरित्र समझने के लिए देखता हूँ। महज मन बहलाने के लिए नहीं। खेल सचमुच एक अनुशासन है जो मनुष्य को पूरा बनाता और प्रकट करता है।”

144430

, हरिद्वार
144030
सदस्य
संख्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय

गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

वर्ग संख्या R 0८९ जोशी - रश्मि आगत संख्या 144430

पुस्तक विवरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित ३० वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापस आ जानी चाहिए अन्यथा ५० पैसे प्रतिदिन के हिसाब से विलम्ब दण्ड लगेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

144430

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खेल सिर्फ खेल नहीं है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खेल सिर्फ खेल नहीं है

प्रभाष जोशी

144430

राजकमल प्रकाशन
नयी दिल्ली पटना इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar
144430

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस पुस्तक के सर्वाधिकार सुरक्षित हैं। प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश की, फोटोकॉपी एवं रिकॉर्डिंग सहित इलेक्ट्रॉनिक अथवा मशीनी, किसी भी माध्यम से अथवा ज्ञान के संग्रहण एवं पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा, किसी भी रूप में, पुनरुत्पादित अथवा संचारित-प्रसारित नहीं किया जा सकता।

संपादक
सुरेश शर्मा

मूल्य : रुपये 450.00

© प्रभाष जोशी

पहला संस्करण : 2008

प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन प्रा. लि.
1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग
नई दिल्ली-110 002

शाखाएँ : अशोक राजपथ, साइंस कॉलेज के सामने, पटना-800 006
पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-211 001

वेबसाइट : www.rajkamalprakashan.com
ई-मेल : info@rajkamalprakashan.com

आवरण : राजकमल स्टूडियो

मुद्रक : बी.के. ऑफसेट
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110 032

KHEL SIRF KHEL NAHIN HAI
by Prabhash Joshi

ISBN : 978-81-267-1610-4

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

*एस. मुलगावकर जिनने घुड़दौड़
की रपट लिखकर पत्रकारिता
का जीवन शुरू किया!*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुक्रम

पुरोवाक् : नामवर सिंह *11*
लिखी कागद कारे किए : प्रभाष जोशी *13*
सम्पादकीय : सुरेश शर्मा *23*

क्रिकेट

कंगारुओं का कोकाकोलाकरण 31
यह उलटबाँसी नहीं है 36
रटोरे होकर अपने को शत-प्रतिशत देना 41
देखिए, यह क्रिकेट नहीं है 46
इस पागलपन में अर्थ है 52
सिगरेट और शराब का खेल 58
सफलता भी कैसी विडम्बना है 64
रहेंगे भारतीय भोगेंगे बुखार 70
अपराजेय भी पिटा 76
मारने वालों के हारने का सुख 82
अब कोई क्यों टोकता नहीं 88
ईडन गार्डंस से खुद ही निकाले गए हम लोग 93
दहशत में वे वहशत में हम 101
भेड़ों का बब्बर शेर होना 107
सब खेलों से बड़े खेल में 112
आखिर खेल तो मन का है 117
विलाप और सन्निपात में झूलना 122
किस मिट्टी के होते हैं चैम्पियन? 127
जितने दिल उतनी ट्रॉफी जीतो 132

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खिलाड़ी हैं या बलि के बकरे? 137
एक नई आक्रामकता जिता रही है 142
हुक करके और डक करके भी 147
लेकिन टीम है कहाँ? 152
जीतने के फायदे हारने के सबक 157
क्रिकेट क्या सट्टेबाजी में डूब जाएगा? 162
हम क्या झूठे और बेईमान हैं? 167
पैसे लेने चलो शारजाह 172
नासिर हुसैन और बाला साहेब ठाकरे का विकेट 178
दक्षिण अफ्रीका में खेलना 184
डेनेस को बाहर करके 189
द्वीप देशों में शिखर से रसातल 194

भारत-पाक

हारने के डर से कतराता पाकिस्तान 201
दो ब्याहों की नई दास्तान 207
प्रकटे कोई भीषण प्रतिभा 213
अब होगी अग्नि-परीक्षा 219
बताया कि किनके बिना काम चल सकता है 225
खिसियाकर खम्भे नोचने को हम रह गए 231
बार-बार पाकिस्तान की हेकड़ी निकालो 237

सचिन

सम्प्रास और सचिन तेंदुलकर फिर नए हुए दो पुराने हीरो 245
क्या सचिन को फिर फेल करना है? 251
सचिन की मूरत का सिन्दूर खरोचने वाले 257
सचिन से अजय रात्रा तक 262
सचिन पर सिन्दूर चढ़ाने वाले 267
अभी तो सचिन से टैक्स लेना है 272

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टेनिस

इनामी रकम की कीमत 279
रात से सुबह तक—एक पागलपन 284
एक हरियाले आलिंगन की ललक 289
जो घट में है और ब्रह्मांड में भी 295
घास पर परम्परा 300
यह पिता और कोच बताइए कैसा है ? 306
जो प्रतिभा को शिखर दे 311
ध्रुव तारा हुआ एक आवारा 316

खेल प्रसारण

उतरते खुमार का खालीपन 323
अच्छा पिच है टीवी का परदा 328
अपनी एक खेल चैनल भी होनी चाहिए कि नहीं? 333
इस मखौल में सब शामिल हैं 338
जो औलाद वे छोड़ गए 343
सब धन्धे के खेल में हैं 348

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरोवाक्

'कागद कारे' आखिर किताब की शक्ल में आ ही गए। आफ्रीं सद आफ्रीं। देर आयद दुरुस्त आयद। लगातार पन्द्रह वर्षों तक किसी अखबार में एक कॉलम का जारी रहना अपने आपमें एक मिसाल है। सिर्फ 'कागद कारे' को ही पढ़ने के लिए मेरे जैसे बहुत से लोग रविवारी 'जनसत्ता' लेते रहे हैं।

'कागद कारे' एक तरह से आज का 'महाभारत' है और उसके लेखक प्रभाष जी आधुनिक व्यास। फर्क सिर्फ यह है कि व्यास को लिखने के लिए गणेश की मदद लेनी पड़ी, जबकि प्रभाष जी लिखने के मामले में भी स्वयंसेवी रहे सिर्फ एक अपवाद को छोड़कर और वह भी आपद्धर्म में। इस प्रक्रिया में क्रमशः जो ग्रन्थ तैयार हुआ वह भी 'महाभारत' की तरह ही एक साथ इतिहास भी है और काव्य भी विविध उपाख्यानों के साथ लगभग डेढ़ दशकों का एक महाख्यान!

पन्द्रह वर्षों के बाद आज 'कागद कारे' का एकत्र प्रकाशन एक तरह से युगान्त का सूचक है। महाभारत को भी 'युगान्त' की संज्ञा दी गई है। 1992 से भारतीय लोकतंत्र में एक नए युग का आरम्भ हुआ था जिसकी चरम परिणति का आभास 2008 में होने लगा है। ऐसी स्थिति में अभी तक के समग्र 'कागद कारे' का प्रकाशन निश्चय ही एक ऐतिहासिक घटना है।

व्यास की तरह प्रभाष जी ने यह दावा तो नहीं किया कि 'यदिहास्ति तदन्यत्र, यन्नेहास्ति न तत्क्वचित्', अर्थात् जो कुछ यहाँ है वह दूसरी जगह भी है और जो यहाँ नहीं है वह कहीं नहीं है। फिर भी समग्रतः 'कागद कारे' में कथित युगान्त का प्रतिबिम्ब पर्याप्त समावेशी है। यदि इस युग के चरितनायकों पर दृष्टिपात करें तो सबसे पहले खंड 'जीने के बहाने' में अंकित चरित्रों की सूची पर ही सरसरी नज़र दौड़ा लेना काफी है। 20 राजनीतिक नेता हैं तो उनसे कहीं अधिक सामाजिक कार्यकर्ता हैं। एक दर्जन साहित्यकार हैं तो आधे दर्जन संगीतकार, चित्रकार और फिल्म निर्माताओं की भी छवियाँ सुशोभित हैं। खेल जगत और उसमें भी क्रिकेट तो प्रभाष जी की अपनी रुचि का विशिष्ट क्षेत्र है। इसलिए उस दुनिया की यदि 16 विभूतियाँ जगमगाती हुई दिखें तो क्या आश्चर्य! उल्लेखनीय है कि प्रभाष जी की इस चित्रशाला में देश के यशस्वी उद्योगपतियों को भी सम्मान के साथ स्थान दिया गया है। तात्पर्य यह है कि प्रभाष जी का प्रस्तुत 'रचनावृत्त' कोरा वृतान्त नहीं बल्कि महाभारत की तरह हाड़-मांस के जीते-जागते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन्सानों से पूरी तरह आबाद है।

वस्तुतः प्रभाष जी के इस महाभारत के केन्द्र में व्यास के 'महाभारत' की तरह ही परिवार है जिसमें 'माताराम' सर्वोपरि हैं तो 'भेन जी' यानी प्रभाष जी की जीवनसंगिनी अपनी पूरी गरिमा और आत्मीयता के साथ आख्यान में अन्तःसलिला के समान रस-सिंचित करती रहती हैं। इस निजी आख्यान को रमणीय प्राकृतिक पृष्ठभूमि प्रदान करती है प्रभाष जी के अपने मालवा की धरती और उस अंचल की विशिष्ट लोक संस्कृति। कहना न होगा कि 'धन्न नरबदा मइया हो' शीर्षक खंड समस्त 'चरितवृत्त' का सबसे मर्मस्पर्शी और काव्यात्मक अंश है। इस प्रसंग से स्पष्ट हो जाता है कि प्रभाष जी जितने बड़े पत्रकार हैं उससे कहीं अधिक समर्थ सर्जक साहित्यकार हैं।

प्रभाष जी की सर्जनात्मकता का अमोघ अस्त्र है उनकी भाषा! ठेठ हिन्दी का ठाट क्या है, इसका अहसास प्रभाष जी के गद्य को पढ़ने पर ही होता है। इस गद्य की उर्वर भूमि है मालवा की लोक बोली! इस धारणा की पुष्टि के लिए 'कागद कारे' में प्रयुक्त अपनी बोली के शब्दों की सूची बनाकर ही की जा सकती है, जो फिलहाल सम्भव नहीं है। प्रभाष जी की सर्जनात्मक प्रतिभा का सबसे बड़ा प्रमाण है कॉलम का शीर्षक। पिटी-पिटाई लीक से हटकर वे ऐसा शीर्षक लगाते हैं कि एक तो पाठक को तुरन्त अपनी ओर खींचता है और फिर पूरे कॉलम के मूल स्वर का भी आभास दे देता है। उदाहरण के लिए कुछ शीर्षक देखिए—'लुटियन के टीले का भूगोल' से : 'नर और सिंह के वर्णसंकर राज में', 'लोग नहीं हैं, वोट हैं', 'शानदार गैर-जिम्मेदारी और टुच्ची सत्ताकांक्षा में', 'अच्छी पिच है, टीवी का परदा', 'जो बहस के काबिल नहीं वह हमले के भी काबिल नहीं', 'कांग्रेसी नागनाथ, भाजपाई साँपनाथ, अपना हाथ जगन्नाथ', 'गोधरा गुजरात की बाबरी मस्जिद है', 'गैलप पोलों की पोलपट्टी', 'कुछ करनी कुछ करमगत' और 'निजी कैसे सार्वजनिक हैं' इत्यादि।

प्रभाष जी का यह गद्य हाथ-कते, हाथ-बुने और हाथ-सिले खादी के परिधानों की तरह साफ-स्वच्छ और तुलसीदास के शब्दों में 'विसद-गुनमयफल' वाला है।

'कागद कारे' पढ़ते हुए कभी-कभी मन में एक बात उठती है। जिस रंग में प्रभाष जी क्रिकेट पर लिखते हैं उसी रंग में क्या साहित्यिक कृतियों के बारे में भी लिखा जा सकता है? साहित्य भी तो शब्दों का एक खेल ही है और जैसा कि प्रभाष जी कहते हैं कि 'खेल सिर्फ खेल नहीं है' तो शब्दों का यह खेल भी सिर्फ खेल नहीं है और तय है कि खेल की भाषा में ही इस शाब्दिक खेल पर लिखना कोई खेल नहीं है। किसी भी साहित्यिक समालोचक के लिए प्रभाष जी का 'कागद कारे' एक चुनौती है।

27 जुलाई, 2008

—नामवर सिंह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखी कागद कारे किए

सिडनी से ही ब्रिसबेन गया था और भारत को आस्ट्रेलिया से एक रन से हारते देखकर लौट आया था। सिडनी में भारत का मैच पाकिस्तान से होना था और फिर क्रिकेट के दो सबसे पुराने प्रतिद्वन्द्वियों इंग्लैंड और आस्ट्रेलिया का मुकाबला था। यानी काम के दिन दो थे और सिडनी में टिकना सात दिन था।

काफी समय था सिडनी को खँगालने के लिए और समझने के लिए कि जब एक देश के अपराधी दूसरे देश में भेजे जाते हैं और वहीं रहने को मजबूर होते हैं तो वे कैसा देश-समाज बनाते हैं। ब्रिसबेन में मैच के बाद के खाली दिन होटल की खिड़की से बल खाती डार्लिंग नदी और उसके बाद के विस्तार को देखते हुए लगा था—महत्त्व की बात यह नहीं है कि आप क्या थे और आपको क्या मिला। महत्त्वपूर्ण यह है कि जो आपको मिला था उसका आपने क्या किया। अपने को फिर से बनाते हुए उसका क्या बनाया। क्रिकेट विश्व कप के बहाने आस्ट्रेलिया को देखने-समझने की यही अपनी लाइन होनी थी।

डार्लिंग हार्बर पर पार्क रॉयल में कमरा था। वहाँ से समुद्र और उसके किनारे पर बसा सिडनी महानगर खूब दिखाई देता था। एक दिन तो जाकर सिडनी क्रिकेट ग्राउंड और स्टेडियम में अपने बैठने की जगह और वहाँ दर्शकों की सुविधाएँ आदि देख आया। दूसरे दिन जैसे अपना बैग रख के और सूट बूट न पहनकर क्रिकेट लेखक का चोला उतार दिया। धोती-कुरता और चप्पल पहनकर सबेरे जल्दी उतरा और पैदल चल निकला। सोचा था कि बीच में टैक्सी, ट्राम, रेल, बस जो भी मिलेगी ले लूँगा लेकिन जितना भी चल सकता हूँ, पैदल चलूँगा। किसी निश्चित जगह पहुँचना नहीं था इसलिए देखता-परखता और समझता चलता चला गया। थका तो किसी पार्क की बेंच पर बैठ गया या सड़क किनारे की इमारत से सटकर सुस्ता लिया। चलता चला गया तो सामने एक विशाल पुल उभर आया। पढ़ रखा था और फोटू में देख रखा था। यह वही विशाल सिडनी हार्बर ब्रिज था।

समुद्र पर मनुष्य के इस्पाती उद्यम की अद्‌भुत मिसाल। दाहिनी तरफ सिडनी का दूसरा मशहूर स्थान ऑपेरा हाउस। अपनी उत्तेजना में या समुद्र की ठंडी हवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के थपेड़े के कारण ऐसा आवेग महसूस किया कि पुल पर चलता चला गया। दूसरे सिरे पर ही जाकर रुका। बड़ी देर तक घूम-घूमकर चारों तरफ देखता रहा। फिर लगा कि कुछ खा लेना चाहिए। रेलवे स्टेशन पर बहुत भीड़ थी। लोग दफ्तर जाने की जल्दी में थे। एक स्टॉल से सलाद लिया और बेंच पर बैठकर इत्मीनान से खाया। दफ्तर जाते लोगों और उनकी रेलगाड़ियों को देखता रहा। लंदन की ट्यूब में भी इसी तरह लोगों और उन्हें लाती, उतारती और ले जाती गाड़ियों को देखा है। मुझे लगा कि पहनावे, बोलचाल और चलने-फिरने में आस्ट्रेलियाई अंग्रेजों से कहीं अधिक अनौपचारिक और खुले हुए हैं। पैदल वापस पुल पार करने की इच्छा नहीं हुई। किसी भी स्टेशन का टिकट लेकर जो भी अगली रेलगाड़ी आई उसमें बैठ गया।

कोने की सीट पर बैठा था और पुल पर से ऑपेरा हाउस और उसके पार सिडनी महानगर दिख रहा था। अपने किसी भी महानगर से ज्यादा तरतीब और व्यवस्था वहाँ दिख रही थी। अचानक मुझे लगा कि मान लो सन् बहत्तर में जेपी के सामने हथियार डालनेवाले चम्बल और बुन्देलखंड के कोई छह सौ बागियों को अगर अंडमान निकोबार या ऐसे ही किसी द्वीप पर परिवार सहित भेज दिया जाता तो क्या होता? क्या वे मुम्बई या दिल्ली या ग्वालियर जैसा कोई महानगर खड़ाकर देते? या चम्बल घाटी जैसा बीहड़ संसार बनाते? उनके सरदारों—माधोसिंह और मोहरसिंह—को मैंने काफी नजदीक से जाना था। मुझे भरोसा नहीं हो रहा था कि वे आस्ट्रेलिया जैसा देश बना सकते हैं। अपनी चम्बल घाटी जैसा समाज भी बना सकते हैं या नहीं, इसमें भी मुझे सन्देह हुआ।

मैं नहीं जानता कि आत्मसमर्पण करनेवाले चम्बल बुन्देलखंड के बागियों की क्षमता में यह शक मुझे क्यों था। उन्हें तो वैसा मौका मिला ही नहीं जैसा इंग्लैंड के अपराधियों को आस्ट्रेलिया में मिला था। यानी अभी जिन्हें मैं देख रहा या उनके पूर्वजों को। जिन भारतीयों ने जावा, सुमात्रा, बाली, थाईलैंड, इंडोनेशिया आदि पूरब के देशों में जाकर अंगकोरवाट जैसे मन्दिर और बस्तियाँ बनाईं क्या वे अंग्रेजों जैसे विस्तारवादी और उपनिवेशवादी थे? वे कौन लोग थे कहाँ से गए थे और क्यों गए थे? उत्तर भारत का इतिहास जो पूरे भारत का इतिहास मान लिया जाता है उसमें इन लोगों का वर्णन क्यों नहीं है? हमारी जातीय स्मृति में इन लोगों की यात्राओं और इनके वहीं रह जाने की याद क्यों नहीं है? क्या हम हमेशा बाहर से आनेवालों के हमलों या मेल-मिलाप के शिकार ही होते रहे हैं? जहाँ हम गए वहाँ के लोगों से हमारी मुठभेड़ या हमारे सम्मिलन का इतिहास हमारे पास क्यों नहीं है? क्या इसलिए कि हमारा इतिहास भारत पर हमला करने या यहाँ बसकर राज हथिया लेनेवाले लोगों के वर्णनों से ही बनाया गया है? क्यों उन्हीं को प्रामाणिक स्रोत माना जाता है और हमारे अपने अनुभवों का कोई जिक्र तक नहीं होता?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसी गुंतारे में पड़ा रेल से कहाँ और कब उतरा और कैसे होटल के कमरे पहुँच गया पता नहीं। आस्ट्रेलिया की यात्रा पर सिडनी के होटल के कमरे में होने और रज्जू बाबू को पुल पर से जाने और इन सब बातों की चर्चा में उलझाने की प्रतीति मुझे तभी हुई जब किसी ने दरवाजे पर खटकाकर सन्देश का एक पुर्जा दिया। मैं अपने पर चकित था क्योंकि जिन राजेन्द्र माथुर से मैं ऐसे सजीव संवाद में पड़ा हुआ था उनको गए कोई दस महीने हो चुके थे। जब सिडनी हार्बर पुल को पारकर रहा था तो मुझे बारबार गड़बड़ी का वह पुल याद आ रहा था जिस पर चलते-चलते हम यानी मैं और रज्जू बाबू बातों में ऐसे मशगूल थे कि ध्यान ही नहीं रहा कि पीछे से रेलगाड़ी आ रही है। जब वह बहुत पास आ गई और इंजिन ने सीटी मारी तो हम हड़बड़ाए। लकड़ी के फट्टों पर बेतहाशा भागे और पुल खत्म हुआ तो वे दाहिनी ओर कूदे और मैं बाईं ओर। रड़कते हुए हम नीचे नदी के किनारे पहुँचे। बड़ी राहत से रेल को गुजरते हुए देखा। फिर अपने छिलने से खून पोंछा, धूल-कंकर निकाले और कराहते हुए पुल पर इकट्ठे हुए। जान बचने के सदमे में चुपचाप चलते गए।

तब रज्जू बाबू यानी राजेन्द्र माथुर इन्दौर की पलशीकर कॉलोनी में कोटिया जी के घर किराए पर रहते थे। वहाँ से थोड़ी दूर दाहिनी तरफ से खंडवा की छोटी लाइन जाती थी। तब वहाँ सुनसान हुआ करता था और रेल की पटरियों के बीच चलते हुए कभी-कभी तो हम बीजलपुर तक चले जाते थे। वह गाँव अपने दानेदार चॉकलेटी गुड़ और जामफल यानी अमरूद के लिए प्रसिद्ध था। उस दिन के हादसे के बाद भी हमारा बात करते हुए पटरी पर जाना चलता रहा। एक बार दिल्ली आने पर हम राजघाट कॉलोनी से राष्ट्रपति भवन तक पैदल गए। मई का महीना था और आसमान पर आँधी से राजस्थान से आई रेत चढ़ी हुई थी। उसके बीच सूरज बुझते हुए कंदील की तरह लटका था। लौटते हुए हम हाँफ रहे थे। रज्जू बाबू ने अपना बुश्शर्ट और मैंने अपना कुरता कन्धे पर टाँग रखा था। हमें विश्वास था कि दिल्ली के राजपथ पर हमें कोई नहीं जानता और हम मज़े में बनियान में ही घर पहुँच सकते हैं।

इस तरह बात करते, सोचते, एक दूसरे की बात पर बात चढ़ाते और अपने को बेलाग व्यक्त करते हुए हम अन्दर से बहुत भरे-भरे महसूस करते। लगता कि अपने जीने का पिच, उछाल, गति और घुमाव तय हो रहा है। रज्जू बाबू के दिल्ली आने और 'नवभारत टाइम्स' के सम्पादक हो जाने के बाद भी कभी-कभी ऐसा चलना और बतियाना हुआ। सघनता तो वैसी ही रही, बारम्बारता लेकिन बहुत घट गई। आखिरी बार हम भोपाल में माखनलाल चतुर्वेदी की जयन्ती पर उनके नाम के पत्रकारिता विश्वविद्यालय की महापरिषद की बैठक में चार अप्रैल को मिले। बैठक के बाद महेश पांडे की छोटी बेटी छुटकी ने आकर मुझे कहा—ताऊजी,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपको इस होटल की लक्जरी अच्छी लगती है? नहीं तो फिर घर चलिए। यहाँ क्यों रहना? उसके और महेश पांडे के साथ होटल छोड़ते हुए रज्जू बाबू ने हमें लॉबी में देखा। उठ के आए। कहाँ जा रहे हो? मैंने बताया। अरे यार! प्राइवेसी भी कोई चीज़ होती है!

इसके बाद नौ अप्रैल को जब मैं निर्माण विहार के अपने घर से मुम्बई जाने के लिए निकला तो बाहर विकास मार्ग पर डॉक्टर डोगरा के क्लिनिक में वे भर्ती थे। मुझे शंका तक नहीं थी कि वे वहाँ होंगे। मुम्बई पहुँचकर उस दिन के काम निपटाए। रात भोजन करके कमरे में गया तो रामनाथ गोयनका की निजी सचिव गीता मोर ने आकर विमान का टिकट दिया। कहा—आपके रज्जू बाबू नहीं रहे। सबेरे का टिकट है।

वह अपने खिड़की दरवाजे एक-एक कर बन्द होने और कमरे में कैद होने की शुरुआत थी। नौ अप्रैल इकानवे को राजेन्द्र माथुर गए। सितम्बर में शरद जोशी। अक्टूबर में रामनाथ गोयनका और तेरह जनवरी बानवे को लखनऊ में था कि देवास से कुमार गंधर्व चले गए। अपन जिनसे बात कर सकें और जिनकी ओर देखकर जी सकें ऐसे चारों जने देखते-देखते और यों ही चले गए। एक ने भी उनके बिना जीने की तैयारी करने का मौका नहीं दिया। जैसे कछुआ अपने हाथ, पैर और सिर अपनी पीठ के नीचे छुपाकर निःश्वास बैठ जाता है वैसे ही अपन बैठ गए।

यह तो उस दिन सिडनी हार्बर की पार्क रॉयल होटल के उस कमरे में रज्जू बाबू से संवेदी संवाद करते हुए अपने को पकड़ा तो जैसे इलहाम हुआ कि अपन किस ऑक्सीजन के बिना जी रहे हैं। जो सोहबत और जो संवाद आपके बोलने-चालने और सोचने-समझने के सारे खिड़की, दरवाजे, परदे, काँच और देखे-अनदेखे आवरण उतार दे और आपको अभिव्यक्त होकर सार्थकता से जीने को निरन्तर प्रेरित करे वह दरअसल आपके अमृत-कलश को लगातार भरता रहता है। कोई दस महीने से मैं अपनी ही सोहबत में अपने से ही संवाद करता बियाबान में अकेला पड़ा हुआ था। करने को सब कर रहा था। वन-डे क्रिकेट का विश्व कप कवर करने यहाँ आस्ट्रेलिया ही आ गया था। अपने लिए आस्ट्रेलिया का आविष्कार भी कर रहा था। लेकिन जैसे कोई जानवर अपनी इन्द्रियों के जिलाए जीता है वैसा ही जी रहा था। अनुपस्थित रज्जू बाबू से बात करते हुए अचानक लगा कि मन, बुद्धि और आत्मा के स्तर पर जीने को किस तरह बर्फ जैसा जमाकर पशुवत जी रहा था।

रज्जू बाबू इनमें सबसे पुराने संगी थे। लेकिन कुमार जी शायद उनसे भी पहले के। सुनवानी महाकाल से देवास सात किलोमीटर पड़ता था। वहाँ से पैदल जाकर कुमार जी के रियाज में बैठना और सृजनात्मक संगीत को बनते हुए सुनना क्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गजब स्फूर्तिदायक अनुभव होता था। तब भानु ताई जीवित थीं और कुमार जी लम्बी बीमारी से मुक्त होकर उठे थे और गाने को फिर से आविष्कृत कर रहे थे। मुकुल से छोटे बेटे को जन्म देते हुए भानु ताई गई। कुमार जी ने नया घर बनाया तो उसका नाम भानुकुल रखा। अपना लोक और सांस्कृतिक संसार कुमार जी की मध्य लय के मधुर संवेदनशील स्वरों से रचा गया था। उनके जाने के बाद उस संसार का जैसे दरवाजा ही बन्द हो गया। शरद जोशी से दोस्ती नई दुनिया में जाने के बाद हुई। उनमें अच्छी से अच्छी परिस्थिति में विद्रूप देखने की विलक्षण और सहज प्रतिभा थी। वे सब पर हँस सकते थे। हर एक का मखौल उड़ा सकते थे। लेकिन अन्दर से इतने नाजुक और सहज भेद्य थे कि तिनके से भी घायल हो जाएँ। उन्हें बच्चे की तरह बचाकर रखने में सुख मिलता था। वे रज्जू बाबू के जाने के पाँच महीने बाद ही चले गए।

रामनाथ गोयनका यानी आरएनजी से सबसे बाद सन् बहत्तर में मिलना हुआ। अक्टूबर इकानवे में एक रात जब वे गए तो सतासी बरस के थे। उनसे मुलाकात हुई तब वे अड़सठ बरस के थे और इन्दिरा गांधी से राजनीतिक लड़ाई लड़ने की तैयारी कर रहे थे। इन्दिरा गांधी और उनके बेटे राजीव गांधी दोनों से उनकी राजनीतिक लड़ाई हुई और दोनों को ही आतंकवादियों के हाथों मारे जाते उनने देखा। संजय गांधी को भी विमान दुर्घटना में जाते हुए उनने देखा था। कैसी विडंबना है कि जवाहर लाल नेहरू ने इन्दिरा गांधी के परिवार की देखभाल करने की जिम्मेदारी आरएनजी को सौंपी थी और फ़ीरोज़ गांधी 'इंडियन एक्सप्रेस' के महाप्रबंधक भी हुआ करते थे। लेकिन इन्दिरा गांधी के ही पूरे परिवार को नहीं उनने अपनी पत्नी और इकलौते बेटे भगवानदास को भी जाते हुए देखा था। चेन्नई के अपने घर में दाढ़ी बढ़ाए हुए और अपने कमरे में अकेले रहते हुए बैरागी रामनाथ गोयनका को भी मैंने देखा था। उन्हें जैसे उस काल कोठरी में देखकर मैंने अपने से पूछा था–जीने और लड़ने को इस आदमी के लिए अब क्या बचा है?

लेकिन अस्सी के साल में और अपने छिहत्तरवें वर्ष में आरएनजी लौटकर अपनी वाली पर आए। इन्दिरा गांधी भी सत्ता में वापस आई थीं। इसके बाद के ग्यारह साल आरएनजी ने फिर संघर्ष में बिताए। कोई युद्ध न हो तो जीना उन्हें निष्प्रयोजन लगता था। लड़ते हुए वे तन, मन, धन से लड़ते थे और कुछ भी उठाए नहीं रखते थे। अपने सारे विकल्प हर समय खुले रखते थे। इतनी राजनीतिक लड़ाइयाँ लड़े लेकिन राजनीति से अपने लिए कुछ नहीं लिया। विलक्षण विरोधाभासों के आदमी थे। रोक कर या बचाकर अपने पास कुछ नहीं रखते थे। राग-विराग और राग-द्वेष सबमें और खुलकर जीते थे। धर्म भीरु थे लेकिन मर्यादाओं और बाधाओं से खेल करते रहना स्वभाव में था। उस छोटे से आदमी के गजब के वेग का रहस्य ही यही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था कि किसी भी स्थिति में से कर गुजर के निकलने की कोशिश कभी छोड़नी नहीं चाहिए। हारी हुई लड़ाई भी कैसे जीती जाती है यह रामनाथ गोयनका से कोई भी सीख सकता था। उनके साथ रहना हमेशा एक घोड़े पर चढ़कर सरपट दौड़ते रहना था। एक अर्थ में वे राजेन्द्र माथुर से बिलकुल विपरीत चरित्र के आदमी थे। मेरी दोनों से इतनी पटी इसे देखकर मुझे आज भी अचरज होता है।

उस दोपहर सिडनी के होटल के उस कमरे में पहली बार मैंने समझा और आकलन किया कि इन चारों के जाने से कितना अव्यक्त, अधूरा और निपट अकेला रह गया हूँ। मुझे आत्मीय संवाद के लिए अपने अन्दर ठिठककर जमी बर्फ को पिघलाना पड़ेगा। फिर पाल को तोड़कर अनजाने और अनगिनत स्रोतों से इकट्ठे होते जल को बेझिझक बहते रहने के लिए साधना होगा। ऐसा नहीं कर पाया तो जीना मुश्किल होता जाएगा। उस शाम जब सिडनी क्रिकेट ग्राउंड जाने के लिए निकला तो मुझे लगा कि अपनी गुत्थी मैंने पकड़ ली है। उसका एक सिरा भी अँगूठे और पहली उँगली के बीच आ गया है। सँभलकर और हलके हाथों से खोलूँगा तो एक दिन पूरा धागा सीधा हो जाएगा और तब मैं उसे हुचके पर बाँधकर ठीक से लपेट लूँगा। शायद ऐसे ही धागे से बँधी अपनी जिन्दगी सीधी खुलती जाएगी।

सिडनी के बाद न्यूजीलैंड गया और ऑकलैंड से डनेडिन तक का चक्कर लगाया। डनेडिन से दक्षिणी ध्रुव तक कोई ज़मीन और बस्ती नहीं है। समुद्र और जमी हुई बर्फ है। वहाँ से लौटकर एडीलेड और फिर मेलबर्न और फिर अपने देश अपने घर। दफ्तर आकर पहले जवाहर लाल कौल और फिर 'जनसत्ता' के रविवारी के सम्पादक मंगलेश डबराल को सिडनी में उस सुबह पुल पार करने और आस्ट्रेलिया पर राजेन्द्र माथुर से बात करने का किस्सा सुनाया। यह भी कहा कि सम्पादकीय और लेख लिखता रोज हूँ लेकिन लगता है कि मन की बात मन में ही रह गई। कथा कहानी लिखता रहता तो शायद अपनी अभिव्यक्ति पूरी हो पाती। लेकिन जब ऐसा लिखने का उत्साह और कहानियाँ थी तब लगता था कि अपने आसपास के राजनीतिक संसार को प्राप्त परिस्थितियों में समझना और समझाना भी जरूरी है। ठोस और भौतिक वर्तमान से उसी के उपकरणों से निपटना भी एक चुनौती है और उसका भी सामना करना चाहिए। अगर गाँव सुनवानी महाकाल और ग्रामसेवा छोड़कर पत्रकारिता में नहीं आता तो शायद साहित्य में ही लगा रह सकता था। लेकिन पत्रकारिता में रपट पड़ा हूँ तो यों ही 'हर गंगा' क्यों करूँ? इसलिए तथ्यों और वर्तमान को साधने में लगा रहा। कल्पना और अनुभूति के बजाय तथ्यों और तर्कों को औजार बनाया।

फिर एक दिन हमारे सम्पादकीय पेज के सम्पादक जवाहर लाल कौल आए। अपना पेज वे फाइनल करके आए थे और चाय पीने और गप लगाने के मूड में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थे। वे 'दिनमान' में अज्ञेय और रघुवीर सहाय, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना और श्रीकांत वर्मा जैसे कवियों के साथ काम कर चुके थे लेकिन कविताई और कथाई के चक्कर में नहीं पड़ते थे। अच्छी पेशेवर पत्रकारिता करते थे। अपने राजनीतिक लगावों, झुकावों और विचारों को अपने पत्रकारीय कामकाज से अलग रखते थे। लेकिन, छल-कपट से छुपाकर नहीं। उनसे बरतते हुए आप जानते थे कि वे कहाँ खड़े हैं और आपसे उनकी दूरी या नजदीकी कितनी है। कोई घंटे-डेढ़ घंटे दुनिया-भर की गप लगाने के बाद उनने कहा कि आप एक कॉलम क्यों नहीं लिखते। ऐसा कि जिसमें जो मन में आए आप लिखें और कोई स्पष्ट निष्कर्ष निकालने की कोशिश ना करें। बेमतलब की बात में भी मतलब हो। बिलकुल निजी हो लेकिन प्राइवेट उसमें कुछ न हो। जैसे कविता बिलकुल निजी होती है लेकिन सबकी अनुभूति को प्रकट करती है।

तब तक 'जनसत्ता' के सम्पादकीय पेज पर किसी का कोई कॉलम नहीं छपता था। हमने तय कर रखा था कि सम्पादकीय पेज को तात्कालिकता और सामयिकता के लिए खाली रखेंगे। जब जैसा अखबार के नाते जरूरी हो छापेंगे। रविवारी में भी कॉलम एक ही छपता था—रघुवीर सहाय का। वे जब तक जिए लिखते रहे। कॉलमों से अखबार की जगह बँध जाती है। हर सुबह अखबार खाली नाव की तरह दिन में उतरे और रात डेढ़ बजे तक जरूरी सामग्री भरकर पाठक के पास ले जाए और खाली होकर लौट आए। इसलिए मूल अखबार में जगह निकलने की कोई गुंजाइश नहीं थी। फिर खबरों और उनके विश्लेषणों के बीच वैसा निजी किस्म का कॉलम बहुत अटपटा लगता। मंगलेश जी को बुलाकर पूछा कि ऐसा कोई कॉलम लिखूँ तो क्या आप छापेंगे? छापेंगे भी तो किस पेज पर और कैसे? वे सोचकर आए और रविवार के दिन सम्पादकीय पेज की जगह हम जो किताबों और सांस्कृतिक मामलों पर सामग्री छापते थे उसमें उनने जगह निकाली।

कॉलम में क्या होगा यह उन्हें विस्तार से बताया था। उन्हीं को उसका नाम सुझाना था। उनसे कहा था कि ऐसा कतई नहीं लगना चाहिए कि यह किसी गम्भीर विवेचन का कॉलम है। इसमें भावनाओं, गपों और सीधी-सीधी बतकही होगी। सम्पादकीय पेज की सामग्री और वैसा ही उससे बरतना इसमें नहीं होगा। ऐसा हल्का-फुल्का नाम रहे कि न लिखनेवाले पर कोई बोझ हो, न पढ़नेवाले पर कोई भार पड़े। मंगलेश जी ने 'कागद कारे' सुझाया। यह तुलसीदास का लिखि कागद कोरे नहीं था। यह प्रभाष जोशी का यों ही लिखकर कागद काले करना था। मुझे यह नाम पसन्द आया। कौल साब को बताया तो उन्हें भी ठीक लगा। फिर भी हमारे अखबार में गम्भीर पत्रकारिता करने और औपचारिकता निभानेवालों की कमी नहीं थी। उन्हें लगा कि सम्पादक कॉलम लिखे और उसमें वजन न हो तो अखबार और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादक की छवि बिगड़ेगी। उन्हें कागद कारे नाम और उसका सम्भावित कथ्य और रूप दोनों ही हल्के-फुल्के साप्ताहिक के लायक लगता था। उन्हें बताया कि गम्भीर सामग्री तो अपन हर दिन छापते ही हैं। रविवार को कुछ ऐसा भी छाप सकते हैं जो पत्रकारिता के निर्धारित और अपेक्षित ढाँचे से अलग हो। जब वे भी मान गए तभी यह कॉलम शुरू हुआ।

पाँच अप्रैल बानवे के अंक में पहला 'कागद कारे' छपा क्रिकेट के कोकाकोलाकरण पर। तब से अब तक यानी कोई सोलह साल से ज्यादा हर रविवार के लिए लिखता रहा हूँ। बहुत कम ऐसे रविवार रहे हैं जब सचमुच अपरिहार्य कारणों से लिखा न गया हो। सन् चौरानवे के मई महीने में मुम्बई के अस्पताल में अपनी बाईपास हुई। ऑपरेशन थिएटर से बाहर तीन दिन रिकवरी में रहा। चौथे दिन कमरे में आते ही आलोक तोमर को बोलकर लिखवाया। ध से धैवत और धन्यवाद। एक वही कॉलम है जो खुद बैठकर नहीं लिखा। एक बार मालवा के जीवन पर यों ही लिख दिया। मुम्बई के सबसे रईस रिहायशी इलाके वालकेश्वर से मालवा या राजस्थान से ब्याह कर आई एक लड़की ने उसे पढ़कर रोते हुए चिट्ठी लिखी। वह वैसे ही हुमक रही थी जैसे अपने बचपन के घर आँगन को याद करके मेरी आत्मा हुमकती है।

पाँच-छह साल पहले महाराष्ट्र के मालेगाँव जाना हुआ। अखबार में छपे भाषण से तार जोड़ते हुए एक सज्जन आखिर मुझ तक पहुँच गए। एक बड़ा-सा बेलफल लेकर आए थे और दूसरे झोले में अखबार की कतरनें थीं। निकालकर थप्पे के थप्पे उनने मेरे सामने रखे। उनने एक भी कागद कारे छोड़ा नहीं था। उनकी शिकायत थी कि मुम्बई से 'जनसत्ता' निकलना बन्द हुआ तो अब यह कॉलम मैं कहाँ से पढ़ूँ। देखिए मैं आपका ऐसा पाठक हूँ। आपको कम-से-कम कोई इन्तजाम तो करना चाहिए कि मुझे डाक से प्रत्येक रविवार का अंक मिले। मैंने हाथ जोड़कर कहा—महाराज, इतनी कतरनें तो दफ्तर में हमारे रामबाबू ने भी निकालकर ऐसे जतन से नहीं रखीं होंगी। मैं सोच नहीं सकता कि ऐसा भी कोई दीवाना पाठक होगा। लेकिन मैं आपको भरोसा नहीं दे सकता कि हर रविवार की 'जनसत्ता' आपको मिल जाएगी। मैं सिर्फ सलाहकार हूँ और मैंने कोई कार्यकारी अधिकार नहीं रखा है। वे सज्जन असन्तोष में चले गए। लेकिन उनके दिए बेलफल से मीठा बेल अपन ने कभी खाया नहीं था।

लेकिन मालेगाँव के उन सज्जन की कतरनों का झोला देखने के बाद मेरे मन में कृतज्ञता का भी एक बोध बढ़ गया। जैसी बातें कागद कारे पढ़नेवालों के मुँह से मैंने सुनी हैं और जैसे खत मुझे मिलते रहे हैं, मेरी कृतज्ञता की कारी कामली लगातार भींग कर भारी होती गई। भावुक हो जानेवाले साधारण पाठकों की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
प्रतिक्रियाएँ फिर भी समझ में आ सकती हैं। लेकिन एक बार इतने पढ़े-लिखे और ऐसे आलोचक नामवर जी ने धीरे से मुझे कहा—कब तक कतरनें काटकर रखूँ। फाइल बहुत मोटी हो गई है। आप इन्हें छपवा क्यों नहीं देते। सबसे ज्यादा पढ़े और याद रखे जानेवाले वे कॉलम हैं जो निहायत निजी किस्म के कहे जाएँगे। कहीं भी जाऊँ कोई न कोई निपट अनजान मुझसे आकर पूछेगा—भेनजी कैसी हैं? माताराम कहाँ है? माधव कैसा खेलता है? पप्पू, मुनमुन, लालू आदि के क्या हाल हैं? बड़ी बहन की मृत्यु पर लिखा तो रतलाम के विष्णु बैरागी ने फोन कर के और फिर चिट्ठी लिख के बताया कि वे कितना रोए। जीजा जी के श्राद्ध में गया और लिखा तो 'इंडियन एक्सप्रेस' अमदाबाद के सम्पादक एनके सिंह ने सिर्फ यह बताने के लिए दो बार फोन किया कि वे कितना रोए। बीकानेर के किसी सज्जन ने फोन कर के कहा—उस बेंच पर आप अकेले नहीं बैठे हैं। मैं आपके पास बैठा हूँ।

मैं जानता हूँ कि 'जनसत्ता' के पाठकों से पहले दिन से मेरा एक निजी और आत्मीय सम्बन्ध है। इसके बिना न तो यह कॉलम इस तरह लिखा जा सकता है, न पढ़ा। आज सोलह साल बाद सिडनी की वह दोपहर मुझे धन्य करती है जिसमें से कागद कारे करने की प्रेरणा निकली। इसे लिखकर अनेक हो जाने की मेरी आदिम इच्छा पूरी होती है। 'जनसत्ता' के पाठकों ने भरा-पूरा जीवन जीने का मौका देकर मुझे कितना धन्य किया है मैं ही जानता हूँ। इन्हें छपवाकर पुस्तकाकार करने की माँग और दबाव जब बहुत बढ़ गया तो रामबाबू से फाइल लेकर मैंने सुरेश शर्मा को ले जाकर दी जो 'जनसत्ता' छोड़कर 'नवभारत टाइम्स' में चले गए थे लेकिन मुम्बई अभी नहीं गए थे। दस साल के कागद कारे उनने देखे, पढ़े और छाँटे। उन्हीं ने पाँच पुस्तकों में इनका विभाजन किया। वे 'जनसत्ता' के हमारे पुराने साथी हैं। लेकिन पहला कॉलम रवीन्द्र त्रिपाठी ने देखा क्योंकि तब वे रविवारी में मंगलेश डबराल के सहयोगी थे। रामबाबू ने इन्हें काटकर सहेजकर रखा और सुरेश शर्मा ने सम्पादित किया। अपने तो बस की बात नहीं थी कि यह सब कर पाते। मैं तो सच बताऊँ लिखने और छपने के बाद इन्हें पढ़ भी नहीं पाया हूँ।

इस पुस्तक में वे लेख दिए गए हैं जो मैंने खेल पर लिखे। अब जिस तरह राजनीति पर सम्पादकीय पेज पर सम्पादकीय या मुख्य लेख या जब जरूरी हुआ पहले पेज पर लिखता रहा। उसी तरह खेल जैसे खेले जाते रहे पहले पेज आखिरी पेज और सम्पादकीय पेज पर कवर करता रहा। ऐसा करते हुए जो बच जाता था या जिसके मानवीय पहलू के लिए खबर में गुंजाइश नहीं होती थी वही कागद कारे में आया।

खेल को महज एक मनोरंजन या शारीरिक व्यायाम मैं नहीं मानता। खेल मनुष्य का चरित्र बनाता है लेकिन उससे भी ज्यादा खेल में मनुष्य का चरित्र व्यक्त और

144430
R
0-29
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकट होता है। अंग्रेज माँ के केनेडियन बेटे ग्रेग रूज़ेस्की ने अमेरिकी माइकल चांग से एक मैच में एक सेट जीता एक हारा और तीसरे सेट में चार चार गेम पर थे। रूज़ेस्की सर्व कर रहा था तीस तीस पर। गेम जीतने के लिए दो पाइंट और चाहिए थे। किसी तरह वह ड्यूस पर आया और फिर एडवांटेज पर। एक पाइंट के बाद गेम उसका होना था। सर्व करने के पहले रूज़ेस्की ने अपने पर क्रॉस बनाया और गेंद चूमी। तभी मुझे लगा कि गेम यह हार जाएगा। रूज़ेस्की ने सर्विस की और नेट में मार दी और फिर मार के डबन फॉल्ट कर दिया। चांग को मौका मिला और वह गेम और सेट दोनों ले गया। तब रूज़ेस्की की सर्विस गोल जैसे होती थी और उसका कैरियर बन रहा था। मैंने लिखा कि वह कभी कोई ग्रैंड स्लेम जीत नहीं पाएगा। जीता भी नहीं और अब तो खेलता भी नहीं। उस मैच के सबसे नाजुक और निर्णायक मौके पर रूज़ेस्की का अपने पर विश्वास नहीं था इसलिए उसने क्रॉस बनाया और गेंद चूमी। सबसे कठिन घड़ी में जिसका अपने पर विश्वास नहीं होता उससे कुछ भी जीता नहीं जाएगा।

मैं क्रिकेट, टेनिस, फुटबॉल जैसे खेल इन्हीं नाजुक और कठिन घड़ियों में खिलाड़ियों और टीमों के चरित्र समझने के लिए देखता हूँ। महज मन बहलाने के लिए नहीं। खेल सचमुच एक अनुशासन है जो मनुष्य को पूरा बनाता और प्रकट करता है।

अशोक महेश्वरी के लिए क्या कहूँ। तीन साल से तो ये सेट किए हुए रखे रहे मेरे पास और मैं आज कल करता रहा। आज ये आपके हाथ में हैं तो सुरेश शर्मा, अशोक महेश्वरी और रामबाबू की बदौलत!

15 जुलाई, 2008

–प्रभाष जोशी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खेल सिर्फ खेल नहीं है

प्रभाष जोशी की पुस्तक 'खेल सिर्फ खेल नहीं है' में उनके खेल सम्बन्धी आलेख संकलित हैं। ये लेख 'जनसत्ता' में प्रकाशित उनके कॉलम 'कागद कारे' से लिए गए हैं।

प्रभाष जोशी से पहले हिन्दी में खेल पर महज सूचनापरक लेखन हुआ करता था। खिलाड़ियों की उपलब्धि के आँकड़े और मैच के खबरधर्मी वृत्तान्त छापकर खेल विवेचन की इतिश्री मान ली जाती थी। लेकिन प्रभाष जोशी ने हिन्दी में खेल सम्बन्धी लेखन का पूरा परिदृश्य ही बदल दिया। जब 1983 में उन्होंने 'जनसत्ता' दैनिक आरम्भ किया तो उसमें बिलकुल नई शैली में खेल का विश्लेषण शुरू किया। पहले पन्ने पर प्रमुखता से उसे छापा। अखबार में हर सप्ताह अलग से खेल पर एक फीचर पन्ने की शुरुआत की। इनसे खेल सम्बन्धी लेखन को एक नया रूप मिला। उन्होंने जब 1992 में अपना कालम 'कागद कारे' शुरू किया तो उसका पहला लेख 'कंगारुओं का कोकाकोलाकरण' खेल पर ही था। बाद में तो अपने इस कालम में उन्होंने खेल की दुनिया के विवादास्पद और निर्णायक मुद्दों पर बार-बार लिखा और बहस को नई दिशा दी। 1992 से 2002 के बीच लिखे गए ऐसे ही लेख इस पुस्तक में शामिल किए गए हैं।

इन लेखों में प्रभाष जोशी ने खेल का नया आलोचनाशास्त्र विकसित किया है। खेल के दर्शन की तलाश की है। उसमें राष्ट्रीय जीवन और राष्ट्रीय अस्मिता की तस्वीर देखी है। खेल के माध्यम से देशों के मानस और उनके चरित्र को समझने का प्रयास किया है। यही वजह है कि प्रभाष जोशी का खेल सम्बन्धी लेखन हिन्दी में एक नई शुरुआत है।

प्रभाष जोशी ऐसा इसलिए कर सके हैं क्योंकि उनके लिए खेल सिर्फ खेल नहीं है। 'कागद कारे' कालम शुरू करते हुए अपने पहले ही लेख में उन्होंने लिखा था : 'खेल में एक आदमी, उसका समाज, उसका देश और उसकी सभ्यता और उसकी संस्कृति प्रकट होती है। इसलिए खेल भी, आदमी, समाज और देश को समझने का वैसा ही माध्यम है जैसा साहित्य या राजनीति।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभाष जोशी खेल को महज टाइम पास करने का शगल या मनोरंजनपरक तात्कालिक उत्तेजना हासिल करने का साधन नहीं मानते। उनके लिए तो खेल साहित्य की तरह राष्ट्रीय जीवन को समझने का एक जरिया है। वे खेल को मनोरंजन और तमाशा की सतह से ऊपर उठकर देखते हैं। लिखते हैं : 'खेल के जरिए आप खेलनेवाले के चरित्र, उसके लोगों की ताकत और कमजोरियाँ समझ सकते हैं। अपन तो दरअसल खेल को खेल मानकर कभी खेलते और देखते ही नहीं। सारे खेल अपने को खेलनेवालों और उनके देश को समझने में मदद करते हैं। इसलिए साहित्य और ज्ञान-विज्ञान से खेल को अपन ने कभी छोटा नहीं माना।'

('आखिर खेल तो मन का है')

प्रभाष जोशी खेल को सर्जन का एक रूप मानते हैं। इसीलिए उन्हें वह साहित्य की संवेदना के करीब लगता है। लिखते हैं : 'साहित्य और कलाओं का मर्म अगर यही मानवीय संवेदन और इस पर चलनेवाले सम्बन्धों में है तो आप पाएँगे कि खेल और खिलाड़ियों को भी यही संवेदन प्रेरित और समृद्ध करता है।'

('जो घट में है और ब्रह्मांड में भी')

प्रभाष जोशी के अनुसार खेल और साहित्य दोनों के सृजन का प्रेरक तत्त्व मानवीय संवेदना है। इसलिए काफी हद तक दोनों की सृजन प्रक्रिया एक जैसी है। हालाँकि दोनों की आस्वाद प्रक्रिया में कुछ अन्तर है। गतिशीलता के कारण खेल नाटक के ज्यादा करीब है। संस्कृत के काव्यशास्त्रियों ने नाट्य सृजन के स्वरूप और उसकी संरचना पर काफी विचार किया है। 14वीं सदी के विश्वनाथ कविराज ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'साहित्य दर्पण' में नाट्य सृजन की प्रक्रिया के विभिन्न चरणों का उल्लेख किया है। वे कहते हैं कि नाटक में पहले 'आरम्भ' आता है। 'आरम्भ' में फल या उद्देश्य के प्रति उत्सुकता का संकेत दिया जाता है। दूसरा चरण 'प्रयत्न' है, जिसमें अभिनेता लक्ष्य के लिए तेजी से सक्रिय होते हैं। तीसरा चरण 'प्राप्त्याशा' है। इसमें लक्ष्य हासिल करने की दिशा में सहायक और उसके विरुद्ध के बीच निर्णायक संघर्ष होता है। इसके बाद का चरण 'नियताप्ति' कहलाता है। नाटक के इस पड़ाव पर संघर्षकारी बाधाएँ दूर होने की सम्भावना प्रकट होती है। इसके बाद नाट्य संरचना का अन्तिम चरण 'फलागम' आता है, जब लक्ष्य की प्राप्ति हो जाती है। नाट्य संरचना के इन विभिन्न चरणों को हम क्रिकेट, टेनिस या फुटबॉल की खेल प्रक्रिया में आसानी से ढूँढ़ सकते हैं। इन खेलों की एक सुनिश्चित शुरुआत होती है। इसके बाद निर्णायक संघर्ष होता है, फिर कोई न कोई पक्ष अपना लक्ष्य हासिल कर लेता है।

लेकिन नाटक और खेल की संरचना में कुछ बुनियादी फर्क भी है। नाटक में सब कुछ पूर्व निर्धारित होता है। लेकिन खेल के केन्द्र में पूर्व निर्धारित कुछ नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होता। उसमें सिर्फ परिस्थितिजन्य तात्कालिक सृजनशीलता होती है। नाटक का प्रदर्शन स्क्रिप्ट आधारित होता है। लेकिन किसी भी मैच की कोई स्क्रिप्ट नहीं होती। खिलाड़ी हर बार एक नई स्क्रिप्ट लिखते हैं। किसी भी नाटक का पुनर्प्रदर्शन लगभग एक-सा ही प्रभाव पैदा करता है, लेकिन दो टीमें अगर दो बार खेलती हैं तो दो तरह का अन्त हो सकता है। स्वभावतः उसकी प्रभावान्विति में भी फर्क आ जाता है। 'खेल नाट्य' का यह 'पल-पल परिवर्तित' स्वरूप उसकी परिस्थितिजन्य तात्कालिक सृजनशीलता की वजह से है। इसी विशेषता के कारण यह खेल नाट्य जितनी बार प्रदर्शित होता है उतनी बार उसकी नई स्क्रिप्ट बनती है। रंगमंच के अभिनेताओं के विपरीत मैदान के खिलाड़ी अपने नाट्य का 'इंप्रोवाइजेशन' करते हुए हर मैच में नुक्कड़ नाटक की तरह एक नए नाट्य का सृजन करते हैं। इस चिर नवीनता के कारण ही आप क्रिकेट देखते हुए कभी नहीं ऊबते, लेकिन 'अभिज्ञान शाकुंतलम' का प्रदर्शन आप लगातार देखेंगे तो एकरसता महसूस करने लगेंगे।

सृजन में एक हद तक नाट्य के करीब होते हुए भी खेल के आस्वाद की प्रक्रिया कुछ भिन्न है। देश की टीम खेल रही हो तो दर्शक की आस्वाद प्रक्रिया राष्ट्रीयता से निर्धारित हो जाती है और वे अपनी टीम के साथ हो जाते हैं। देश की विजय कामना से भरे दर्शकों को अपनी टीम का कौशल और सफलता ज्यादा आह्लादित करती है। लेकिन जब दो भिन्न देशों के बीच मैच हो रहा हो तो आमतौर पर दर्शक बिना किसी पूर्वग्रह के खेल और उसकी कलात्मकता का आनन्द लेते हैं। उन्हें किसी एक टीम की विजय से अधिक दोनों ही टीमों का रण-कौशल और उनके खिलाड़ियों की परिस्थितिजन्य सर्जनात्मकता अधिक आनन्दित करती है। दोनों में से कोई भी टीम या खिलाड़ी अपने खेल को कलात्मकता के शिखर पर पहुँचाता है तो वे रोमांचित हो उठते हैं। दर्शकों के सामने मैदान मंच बन जाता है और दोनों टीमों के खिलाड़ी पात्र। दर्शक उन्हें समग्रता में लेते हैं और खेल की कला का आनन्द लेते हैं। इस तरह का मैच देखते हुए दर्शकों के आस्वाद ग्रहण का रूप भिन्न होता है। इसमें खिलाड़ी तो अपनी-अपनी टीम की ओर से खेलते हैं लेकिन दर्शक दोनों टीम की ओर से खेलते हैं। प्रभाष जोशी अपने खेल सम्बन्धी लेखों में खेल के इस नए सौन्दर्यशास्त्र की खोज करते हैं। 'साहित्य दर्पण' में विश्वनाथ कविराज ने कहा है कि 'नाटक में आशा निराशा का द्वन्द्व आवश्यक है न कि इच्छा मात्र से अभ्युदय की प्राप्ति'। खेल के प्रसंग में भी यही बात लागू होती है। किसी टीम की जीत के लिए हम शुरू से ही शुभकामनाओं से भरे हों और वह जीत जाए, तो इसमें उतना आनन्द नहीं है जितना अपनी शुभासंशा वाली टीम को कड़ा संघर्ष करके जीतता हुआ देखने में। प्रभाष जोशी ने अपने खेल लेखन से खेल का नया आलोचनाशास्त्र विकसित किया है। खेल समीक्षा की नई भाषा विकसित की है। उनकी भाषा में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
आँकड़ों का पुनराख्यान नहीं बल्कि एक भारतीय मन की सांस्कृतिक संवेदना और दर्शन की गूंज है।

प्रभाष जोशी ने अपने खेल लेखन की नई दुनिया का आविष्कार यों ही नहीं किया है। इसके पीछे खेल के प्रति उनका अद्वितीय समर्पण और एकान्त तन्मयता है। जनसत्ता में जब-जब मैं सम्पादकीय पेज देखता था तो दिन में अनेक बार प्रभाष जी के पास जाना होता था। प्रभाष जी एक-एक पेज सम्पादकीय लिखते जाते थे और उनके लिखे हुए एक-एक पन्ने को मैं बार-बार कम्पोजिंग में जाकर देता था। इस दौरान मैं देखता था कि प्रभाष जी सम्पादकीय तो राजनैतिक विषय पर लिख रहे हैं लेकिन टीवी पर किसी मैच का अनवरत प्रसारण चल रहा है! जहाँ खेल में रोमांच की घड़ी आती थी वहाँ वे थोड़ी देर रुककर उसे देख लेते थे फिर अधूरा सम्पादकीय पूरा करने लगते थे।

दफ्तर की औपचारिकताओं से दूर जब प्रभाष जोशी घर में हों तब तो खेल की वजह से उनकी स्वाभाविक दिनचर्या का सारा क्रम टूटता रहा है। वे एक मैच के प्रसंग में लिखते हैं : 'सवेरे पाँच बजे से उठकर टहलने जाने के बजाय टीवी देखने बैठना और रात को नौ बजे तक देखते ही रहना। सोलह घंटे लगातार। जब खेल में लंच टी आदि हो तो नित्य कर्म से निपटना। जो ऐसा करे, सारे समय उसी में खोया रहे उसे आप बीमार नहीं कहेंगे तो क्या कहेंगे? लेकिन मैं जनवरी के दूसरे सप्ताह से लेकर इस महीने के अन्त तक यही करता रहा।'

('किस मिट्टी के होते हैं चैम्पियन')

खेल के प्रति इस आत्यन्तिक लगाव ने ही प्रभाष जोशी के खेल लेखन को सृजनधर्मी बनाया है। उनका खेल लेखन एक मिशन की तरह है। लिखते हैं : 'अगर आप खेल समझते हैं और खेलों का आनन्द लेना चाहते हैं तो इतनी खिलाड़ी भावना आपमें होनी चाहिए कि सबको मौका मिले और सब उसका आनन्द लें और दूसरों तक पहुँचाएँ।'

प्रभाष जोशी का खेल लेखन खेल का आनन्द बाँटने के लिए है इसीलिए वह मिशनधर्मी है। उनके खेल लेखन की सबसे बड़ी उपलब्धि तो यह है कि इन लेखों को पढ़कर अनेक लोगों को जिनकी खेल में कोई रुचि नहीं थी उन्हें खेल में रस आने लगा। अजहरुद्दीन पर लिखे अपने एक लेख में प्रभाष जोशी ने अपनी एक पाठक का हवाला दिया है। उस महिला पाठक को जनवरी 1998 में ढाका में हुए भारत-पाक फाइनल के सिलसिले में अगले दिन प्रभाष जी के विश्लेषण का इन्तजार था। प्रभाष जोशी किसी वजह से उस मैच का विश्लेषण नहीं कर पाए थे। उस महिला पाठक ने प्रभाष जोशी को फोन किया और उस मैच के बारे में क्यों नहीं लिखा, इसकी शिकायत की। प्रभाष जोशी उसके कथन का हवाला देते हुए लिखते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
हैं : 'मुझ जैसे गिरस्तिन को तो न क्रिकेट का शौक था न मैं कुछ समझती थी। आपका ही लिखा पढ़-पढ़कर मुझे शौक लगा। थोड़ा बहुत समझने भी लगी हूँ। लेकिन आज आपने कुछ नहीं लिखा इसलिए अपसेट हूँ। मैं समझना चाहती थी कि आखिर यह सब क्या हो रहा है लेकिन आपने कुछ लिखा ही नहीं।' इस गिरस्तिन जैसे अनेक पाठक हैं जिनके जीवन में खेल के आनन्द का प्रवेश प्रभाष जोशी के लेखों के कारण हुआ है।

प्रभाष जोशी खेल के माध्यम से अपने देश के मनोविज्ञान और समाजशास्त्र को समझने की कोशिश करते हैं, जो निश्चय ही महत्त्वपूर्ण है। लिखते हैं : 'निराशाओं, हताशाओं और हमारी सरासर बेवकूफियों से हमारे सभी खेलों का इतिहास भरा पड़ा है। क्रिकेट में यह प्रवृत्ति कुछ ज्यादा ही देखी गई है क्योंकि गौरवशाली अनिश्चितताओं के इस खेल में विफलताओं को महिमामंडित करने की परम्परा है और क्रिकेट भले ही हमारे देश में न जन्मा हो इसकी कई परम्पराएँ हमारे स्वभाव से बहुत मेल खाती हैं। इसीलिए बावजूद तमाम पूर्वग्रहों के क्रिकेट हमारे देश का सबसे लोकप्रिय खेल है। राष्ट्रीय भी, क्योंकि भारतीयों की कमजोरियों, खामियों, दुर्बलताओं और गौरवभावना को जितनी अच्छी तरह यह खेल प्रकट करता है दूसरा कोई नहीं करता।'

इस तरह का विश्लेषण यह साबित करता है कि प्रभाष जोशी की खेल आलोचना खेल के बहाने समाज की भी आलोचना है। उनके लेखों की यही विशेषता उन्हें नई प्रासंगिकता देती है और कालजयी बनाती है।

—सुरेश शर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रिकेट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कंगारुओं का कोकाकोलाकरण

कई मित्रों और मिलने-जुलने वालों को अचरज है कि अखबार और घर छोड़कर विश्व कप के लिए मैं आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड चला गया। वह भी महीने-भर।

और अपन माने बैठे थे कि क्रिकेट पर अपना पागलपन इतना जगजाहिर है कि भाई लोग भले ही इसे खब्त मानें पर सहज स्वाभाविक कर्म मानने की कृपा भी करेंगे। बचपन, जवानी और अधबूढ़ेपन से गुजरते हुए चवालीस साल तक एक खेल को जो जुनून की तरह जिए उसे विश्व कप देखने और उस पर लिखने की छूट तो होनी चाहिए। लेकिन देखता हूँ कि काफी लोग बड़ी संजीदगी से मुझे एक गम्भीर आदमी माने हुए थे। उन्हें अचरज है तो इसीलिए कि क्रिकेट या कोई भी खेल इस देश में किसी जिम्मेदार और समझदार आदमी का समर्पित और सम्मानित जीवन कर्म होने के योग्य नहीं माना जाता। बचपन में खेलो, जवानी में शगल की तरह लो और फिर काम-धन्धे से लग जाओ। खेल की तरफ यह हमारे समाज का पारम्परिक और सर्वव्यापी रवैया है।

खेल में एक आदमी, उसका समाज, उसका देश और उसकी सभ्यता और संस्कृति प्रकट होती है इसलिए खेल भी आदमी, समाज और देश को समझने का वैसा ही माध्यम है जैसा साहित्य या राजनीति। अपने आपको 'सर्वाधिक विवादास्पद संस्कृतिकर्मी' वर्णित करने वाले कवि, आलोचक और प्रशासक अशोक वाजपेयी को जब इस पुच्छ-विषाणहीन पशु-पत्रकार की भारत भवन आलोचना का जवाब देना था तो अपना क्रिकेट और फिल्म जैसे 'लोकप्रिय' विषयों पर लिखना उनके काम आया।

लोकप्रिय विधाओं और विषयों पर लिखना जैसे माता सरस्वती को बाजार में नचवाना हो। सत्यजित राय को भी विशेष ऑस्कर और मृत्यु सामीप्य प्राप्त किए बिना भारतरत्न के योग्य नहीं समझा गया। और वह भी इसलिए कि सत्यजित राय—लोकप्रिय नहीं—हमारे श्रेष्ठिवर्ग के विशिष्ट फिल्मकार हैं। पूँजीवादी देशों के खुले बाजार वाली अर्थव्यवस्था जब इस देश में फैशन में आई तो जेआरडी टाटा भारतरत्न हो गए। लेकिन चौंतीस शतक और दस हजार एक सौ बाईस टैस्ट रन बनाकर सुनील गावसकर ने अपने को दुनिया का सबसे बड़ा बल्लेबाज सिद्ध और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
स्वीकृत भले ही करवा लिया हो, भारतरत्न वे नहीं माने गए। भारतरत्न पर बहस में जब मैं इन तीनों दिग्गजों के नाम लेता तो सत्यजित राय और जेआरडी पर तो फिर भी सहमति हो जाती लेकिन सुनील गावसकर के नाम पर ऐसी मुस्कुराहट आती जैसे—हाँ, क्रिकेट आपका खब्त है ना।

बहरहाल देश के इसी रवैये के कारण मैंने तय किया कि विश्व कप कवर किया जाए। राष्ट्रपति, प्रधानमन्त्री बल्कि उपप्रधानमन्त्री के साथ विदेश यात्राओं पर जाना हिन्दी के सम्पादकों के लिए गौरव की परम्परा रही है। अपने को हमेशा लगा कि यह राजनीतिक संवाददाता का काम और अधिकार है। फिर दूतावासों और उच्च आयुक्तों के निमन्त्रण पर विदेश घूमने की भी अच्छी-खासी परम्परा अपने यहाँ है। रात को उनकी दारू पार्टियों में जाना और उनसे मिली सामग्री के समुचित उपयोग का प्रबन्ध करना दिल्ली की उच्च पत्रकारिता में बन सके तो रोज करने वाला काम माना जाता है। दिल्ली में चौबीस साल से होते और कलम घसीटते हुए भी अपन ने एक निमन्त्रण मंजूर नहीं किया। हो सकता है कि किसी ने अपने को इस योग्य ही न समझा कि खूब मान-मनुहार करके ले जाए। फिर हमारे रामनाथ जी का कहना था कि जो भी किसी सम्पादक को लाखों रुपया खर्च करके अपने देश ले जाएगा तो इसलिए नहीं कि उसके चरण पड़ने से वह देश पवित्र हो जाएगा। यह सम्पादक को प्रभावित करने और मौका पड़ने पर सहयोग और सहानुभूति से लिखवाने का 'सभ्य' तरीका है। विदेशी मामले समझना सम्पादक के लिए जरूरी हैं तो उसे अखबार की तरफ से अखबार के खर्चे पर जाना चाहिए। अपने को यह बात इसलिए भी जमती है कि सत्ताईस साल पहले इन्दौर और नई दुनिया में होते हुए इंग्लैंड की महारानी की सरकार का निमन्त्रण अखबार और सम्पादक की सहमति के बाद अपन ने मंजूर कर लिया था। बाद में सम्पादक के एक दोस्त ने कहा कि वे ऐसा मानते हैं कि यह निमन्त्रण अपन ने हाबनाबिंग (चालू हिन्दी में कहें तो मक्खन लगाकर या चम्मच होकर) घाड़ लिया है।

दो-तीन साल पहले स्वयं सम्पादक निमन्त्रण पर अमेरिका गए थे और लौटकर उन्होंने कोलम्बस के बाद हुई दूसरी भूल पर कोई बत्तीस लेख लिखे थे।

अपन ने इंग्लैंड से लौटकर एक लाइन नहीं लिखी न फिर कभी कोई निमन्त्रण मंजूर किया। हालाँकि वह इंग्लैंड यात्रा भी यार्कशायर पोस्ट के सम्पादक हुए माइकल हाइड्स और तब के भारत में ब्रिटेन के उच्चायुक्त लेकिन—न्यू स्टेट्समन के प्रसिद्ध सम्पादक जॉन फ्रोमन के कहने पर की थी। और निमन्त्रण मिलने पर लगा था कि इंग्लैंड तो रज्जू बाबू (राजेन्द्र माथुर) को जाना चाहिए था हालाँकि न तो अपन महारानी की सरकार को ऐसा कह सकते थे न रज्जू बाबू इस तरह लाए गए निमन्त्रण पर जाते। अब लोग कहते हैं कि निमन्त्रणों पर जलने-भुनने वाले ऐसी ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात कहते हैं और फिर क्या पता कि सम्पादक ने ऐसा कहा हो और उनके दोस्त ने अपनी तरफ से न लगा दिया हो। तुमने नाहक एक जिद में दुनिया देखने और समझने के मौके खो दिए।

कोई पछतावा नहीं है। बल्कि सन्तोष है कि फोकट में दुनिया देखने के लालच से बच गया। देखना आसान नहीं है। उसके आगे-पीछे समझना लगा हुआ है। और समझ-बूझकर देखने के लिए अपनी जिज्ञासा और अपने निर्णय की जरूरत होती है, किसी के बुलाने और घुमाने की नहीं। आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड अपन अपनी जिज्ञासा और निर्णय से गए। रामनाथ जी की धरोहर लेने वाले विवेक गोयनका ने अपनी जिज्ञासा और इच्छा का सम्मान किया और दोनों देशों में ऐसी व्यवस्था करवाई जो एक सम्पादक को शोभा देती है।

फिर अपनी इच्छा सिर्फ एक विश्व कप देखने की नहीं थी। देखना तो यहाँ भी हो सकता था। जिन मुलगावकर को अपन आजादी के बाद की भारतीय पत्रकारिता का भीष्म पितामह मानते हैं उन्होंने तो कहा ही था—'हाऊ कैन यू, स्पेअर ए मंथ फार इट। वाच द डैम थिंग ऑन टीवी।' और मुलगावकर का क्रिकेट प्रेम और ज्ञान अपने से ज्यादा ही है। अपन गए तो इसलिए कि वन डे क्रिकेट का कोकाकोलाकरण आस्ट्रेलिया में हुआ और कैरी पैकर ने टीवी की अपनी चैनल नाइन के लिए किया। जिस क्रिकेट को अपन चरित्र बनाने और बताने वाला खेल मानते और खेलते हुए बड़े हुए, जिस आस्ट्रेलिया के क्रिकेट की दन्तकथाएँ सुनकर सिहरन होती रही और फन्तासी की निजी दुनिया बनी उसी आस्ट्रेलिया में उसी खेल के बिकाऊ माल बना दिए जाने और उसी रूप में उसे दुनिया के सभी देशों की मान्यता मिलने की दुर्घटना को अपनी आँखों देखना था।

कैरी पैकर आपको याद दिला दूँ कि आस्ट्रेलिया के अखबार 'आस्ट्रेलियन' के मालिक और बड़े पूँजीपति हैं। टीवी पर उन्होंने एक चैनल ले रखी थी। क्रिकेट दिखाने का एकाधिकार वे अपनी इस चैनल के लिए चाहते थे और उसकी कीमत भी देने को तैयार थे। आस्ट्रेलिया के क्रिकेट बोर्ड और ब्राडकास्टिंग कारपोरेशन ने माना नहीं। पैकर ने विश्वामित्र की तरह क्रोध में तय किया कि अपना क्रिकेट वे खुद चला लेंगे। पहले तो उन्होंने टोनी ग्रेग को इंग्लैंड की कप्तानी से अपनी तरफ लुभाकर दुनिया-भर के बड़े खिलाड़ियों को इकट्ठा करके समानान्तर टीमें बनवाईं। फिर वन डे टीवी पर देखने लायक शानदार तमाशा हो सके। इसलिए गेंद का रंग सफेद किया, खिलाड़ियों को सफेद के बजाय रंगीन कपड़े पहनाए। गेंद सफेद हो गई इसलिए साइट स्क्रीन काला करवाया। स्टम्प के पास जमीन में माइक लगवाए ताकि गेंद के मारे जाने या बल्ले से लगने की आवाज से लेकर खिलाड़ियों की गाली-गलौच तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दर्शकों को सुनाई जा सके। ऐसे-ऐसे कोणों पर ऐसे-ऐसे कैमरे लगाए कि क्रिकेट मैच—क्रिकेट कैसा भी हो—अद्‌भुत रूप से दर्शनीय हो जाए। क्रिकेट को अपने लिए खेले जाने वाले खेल के बजाय कैरी पैकर ने टीवी पर देखा जाने वाला मारधाड़ से भरपूर एक्शन पैक्ड, रोमांचक और सनसनीखेज दृश्य बना दिया। क्रिकेट टीवी के लिए खेला जाने वाला खेल हो गया।

विश्वामित्र तो अपना अलग विश्व न बनाने के लिए मना लिए गए थे। लेकिन कैरी पैकर नहीं माने और पारम्परिक क्रिकेट के प्रतिष्ठान से जीत गए। शुरुआती विरोध के बाद प्रतिष्ठान ने पैकर को क्रिकेट दिखाने का एकाधिकार दे दिया। आस्ट्रेलिया में पैकरीकृत वन डे ही चलता रहा। लेकिन इंग्लैंड में खेले गए 79 और '83 और भारत और पाकिस्तान में हुए, विश्व कपों में गेंद लाल ही रही, खिलाड़ियों ने सफेद कपड़े ही पहने और परम्परागत क्रिकेट के नियम और संस्कृति का सम्मान किया। आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड में यह पहला विश्व कप था जिसमें पैकर की सफेद गेंद, रंगीन कपड़े और दूसरे सभी प्रयोग विश्व क्रिकेट प्रतिष्ठान ने मंजूर कर लिए। अन्तर्राष्ट्रीय क्रिकेट कान्फरेंस के अध्यक्ष सर कालिन काउड्री से मैंने एडिलेड में पूछा कि क्रिकेट का यह कोकाकोलाकरण क्यों होने दे रहे हैं? काउड्री वैसे भी भलेमानस हैं और फिर अखबारवालों के बीच वे दोटूक जवाब नहीं दे सकते थे। उन्होंने कहा—मैं जानता हूँ कि आपका मतलब क्या है। इस प्रश्न पर हमारा विचार चल रहा है।

लेकिन आस्ट्रेलिया में विश्व कप का आयोजन देखकर समझने में मगजपच्ची नहीं करनी पड़ती थी कि कैरी पैकर जीत गए हैं। क्रिकेट हरी घास पर लाल गेंद और लकड़ी के बल्ले से नीति-नियमों का सम्मान करते हुए आनन्द के लिए खेला जाने वाला खेल अब नहीं रह गया है। वह बाजार में बेचा जाने वाला माल है। क्रिकेट के इस कोकाकोलाकरण से समझौता करने वाले कहते हैं कि असली चीज तो अभी भी पाँच दिनों का टैस्ट क्रिकेट ही है। वन डे की आमदनी से टैस्ट क्रिकेट को जीवित रखा जा सकता है। यानी असली चीज को जिन्दा रखने के लिए उसके एक नकली प्रकार को बेचना जरूरी है। यानी माँ न मरे इसलिए बेटी को कोठे पर बैठा देना जरूरी है। समझौता करने वाले यह भी कहते हैं कि पारम्परिक क्रिकेट धीमे चलनेवाले जमाने में कृषि संस्कृति से उपजा एक अलसाया-सा ग्रामीण खेल था। अब औद्योगिक क्रान्ति के तीसरे जमाने की रफ्तार इतनी तेज है कि पाँच दिनों तक चलकर भी ड्रा हो जाने वाले खेल के लिए किसके पास वक्त है। वन डे और कैरी पैकरकृत क्रिकेट के लिए मैदान में दर्शक भी बहुत जुटते हैं और टीवी पर उसे देखने वाले भी करोड़ों लोग होते हैं। इसलिए टीवी और मैदानवालों की अच्छी खासी आमदनी होती है। आज की दुनिया तेज चलने और तेजी से कमाने की दुनिया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
यह सोचने की फुरसत और इच्छा आज के इन लोगों को नहीं है कि तेजी से चलकर कहाँ पहुँचेगी? और क्या वहाँ तेजी से कमाए गए धन को आनन्द से खर्च करने की फुरसत भी होगी?

क्रिकेट का कोकाकोलाकरण बाजार पर टिकी सभ्यता ने किया है और उसका केन्द्र अमरीका है। यह अचरज की बात नहीं कि इन दिनों अमेरिका का एक सबसे बड़ा और प्रभावशाली पूँजीपति एक आस्ट्रेलियन है जो पहले छोटा-मोटा व्यापारी था। आस्ट्रेलिया पर अपने मातृ देश इंग्लैंड का असर तो उतर गया है। आप कहें कि ब्रिटेन का भी तो कोकाकोलाकरण हो गया है तो मैं ना नहीं कर सकता। आस्ट्रेलिया में इंग्लैंड और न्यूजीलैंड में आस्ट्रेलिया ज्यादा बचा नहीं है। इसीलिए वहाँ परम्परागत क्रिकेट का प्रतिष्ठान पैकर के सामने हार गया। मेलबर्न क्रिकेट क्लब वाले शान से कहते हैं कि पैकर सिडनी को लुभा ले गए पर मेलबर्न ने उनके आगे घुटने नहीं टेके। लेकिन सिडनी क्रिकेट ग्राउंड पर पैकर ने जो किया वही और उससे बेहतर मेलबर्न में परम्परागत क्रिकेट वालों ने कर लिया है।

कोकाकोलाकरण का उत्तम उदाहरण आस्ट्रेलियाई कंगारुओं की टीम थी। चैनल नाइन और उसकी आवश्यकताओं के लिए क्रिकेट की दर्जीगिरी करने की भर्त्सना इमरान खान ने फाइनल में पहुँचने के पहले की और जीतने के बाद बन्द कर दी। भर्त्सना करने वाले इमरान खान क्यों जीत गए जब कि वे पैकर सर्कस में शामिल थे और पैकर सर्कस से अलग रहने वाले बॉर्डर और सिमसन की टीम क्यों हार गई ? अगले हफ्ते बताऊँगा कि पाकिस्तान सिर्फ इमरान खान के कारण नहीं जीता वह इसलिए जीता कि इमरान और पाकिस्तानी खिलाड़ियों का कोकाकोलाकरण नहीं हुआ है।

(5.4.92)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह उलटबाँसी नहीं है

कोकाकोलाकरण मँजे काय? मँजे आदमी की निजता में जो बाँकापन होता है, उसकी अपनी जो विशेषता होती है और जिनके कारण उसे व्यक्तित्व और चारित्रिकता मिलती है उन्हें बाजार का रन्दा छील-छुला और घिस-घुसा देता है। आदमी को सीधा सपाट और चिकना चौकस बना देता है। साम्यवाद ने भी आदमी के समाजीकरण के नाम पर उसका यही करने की कोशिश की। कम्युनिस्ट राज्य के बिखरने से वह प्रक्रिया रुकी है। लेकिन उससे कोकाकोलाकरण की प्रक्रिया और तेज हो गई है।

गड़बड़ दरअसल यूरोपीय समाजशास्त्र बल्कि जीवन पद्धति में है। उसके सिक्के का एक पहलू है कोकाकोलाकरण और दूसरा है राज्य की शक्ति से आदमी का भेड़-बकरीकरण। यूरोप के आदमी की यही नियति है। वह या तो अपने को बाजार को समर्पित करे और अपना कोकाकोलाकरण होने दे या विचारधारा को समर्पित हो और भेड़-बकरीकरण हो जाने दे। कम्युनिस्ट राज्य अगर जोर-जबरदस्ती करके भी आदमी को वही सुख-सुविधाएँ देता जो पूँजीवाद ने कोकाकोलाकरण करके दी हैं तो नया आदमी और समाज बनाने का जो प्रयोग मार्क्स के साम्यवाद के नाम पर किया गया था, यूरोप में उसकी यह गत नहीं होती।

आदमी को महज परिस्थिति-पुत्र मानने और समाज को मशीन और आदमी को उसका पुर्जा बनाने की कोशिशों के कारण साम्यवाद अपने को कभी नहीं जमा। लेकिन उसके पराभव से कोकाकोलाकरण की प्रक्रिया का तेज होना अपने को खटकता है। सर्वहारा की तानाशाही के नाम पर राज्य और उसे चलाने वाले कुछ लोगों की तानाशाही से तो आदमी आजाद हो सकता है क्योंकि दमन से लड़ना उसके स्वभाव में भी है और नियोजित संघर्ष उसने सीखा भी है। लेकिन कोकाकोलाकरण आदमी को सुख-सुविधाएँ देकर इस तरह बाजार के अधीन करता है कि उसकी प्रतिकार की शक्ति ही घट जाती है। प्रतिकार की शक्ति एड्स के रोग में भी घटती चली जाती है। आदमी के शरीर के साथ एड्स जो करता है कोकाकोलाकरण वही उसकी आत्मा और बुद्धि के साथ करता है। तब आदमी कहने लगता है कि असली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
चीज तो टैस्ट क्रिकेट ही है लेकिन असल को बचाए और बनाए रखने के लिए हमें एक नकली माल बाजार में बेचना पड़ेगा।

जी, मैं वन डे क्रिकेट के बारे में ही कह रहा था। मैंने कहा था कि आस्ट्रेलिया और इंग्लैंड और न्यूजीलैंड भी इसलिए हारे कि उनके क्रिकेट का कोकाकोलाकरण हो गया है और पाकिस्तान इसलिए जीत गया कि वह इस प्रक्रिया से अभी बचा हुआ है। विश्व कप के लिए फरवरी का अन्त और मार्च का मध्य न आस्ट्रेलिया में क्रिकेट का मौसम है, न न्यूजीलैंड में। विश्व कप का आयोजन करने वाले ये दोनों देश अपने-अपने क्रिकेट सीजन में टैस्ट शृंखलाएँ खेल चुके थे। आस्ट्रेलिया भारत से और न्यूजीलैंड इंग्लैंड से। विश्व कप सीजन के बिलकुल आखिर में रखा गया। क्योंकि पैकर की चैनल नाइन के लिए पजामा क्रिकेट को बाजार में लाने का वही सबसे अच्छा वक्त था। इमरान का कहना सही है कि इंग्लैंड में तीनों विश्व कप बीच सीजन में हुए और भारत और पाकिस्तान में भी सीजन के बीच। आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड में मार्च बरसात के शुरुआत का महीना है और तब विश्व कप नहीं होना चाहिए। लेकिन आस्ट्रेलिया में क्रिकेट के आयोजन की तारीख टीवी वाले और उसके प्रायोजक तय करते हैं, खिलाड़ी और क्रिकेट प्रतिष्ठान नहीं। आस्ट्रेलिया के प्रतिष्ठान और खिलाड़ियों ने बाजार की तारीखें मान लीं क्योंकि उनमें कोकाकोलाकरण की ताकतों का प्रतिकार करने की शक्ति नहीं रह गई है।

यही बात बरसात के कारण रुके या बिगड़े मैचों को पूरा करवाने के वाहियात नियम पर भी लागू होती है। इंग्लैंड में नियम यह था कि विश्व कप का कोई मैच अगर बरसात के कारण रुके और उसी दिन पूरा न हो सके तो बचा हुआ मैच दूसरे दिन खेला जाए। आस्ट्रेलिया में यह माना नहीं गया क्योंकि बचे हुए मैच के लिए टीवी पर उतने दर्शक नहीं मिल सकते जितने कि क्रिकेट दिखाने के प्राइम टाइम में टीवी वालों को चाहिए। उनका आग्रह था कि या तो मैच उसी दिन पूरा करवाया जाए या पूरा मैच दूसरे दिन हो। बाजार की इस जरूरत को ध्यान में रखकर बनाए गए नियम के धुर्रे बाईस मार्च की रात सिडनी में उड़े जब दूसरे सेमीफाइनल में थोड़ी देर की बरसात के बाद खेल शुरू हुआ तो दक्षिण अफ्रीका से कहा गया कि जीत के लिए एक गेंद पर इक्कीस रन बनाओ। जब तक कि कोई कम से कम तीन नो बाल लगातार न करे और बल्लेबाज उन पर लगातार तीन छक्के न मारे और चौथी गेंद पर फिर चौका न मारे तब तक एक गेंद पर इक्कीस रन बन ही नहीं सकते। लेकिन इस विश्व कप का एक सेमीफाइनल इसी तरह तय हुआ।

सही है कि विश्व कप में खेलने वाले सभी देशों को ये नियम एक साल पहले भेज दिए गए थे और उन्होंने मंजूर भी किए थे। इमरान ने इसका विरोध तभी किया जब पाकिस्तान फाइनल में पहुँच गया जैसे इंजमामुल हक को उन्होंने सचिन तेंदुलकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेंदुलकर से ज्यादा प्रतिभावान बल्लेबाज तभी बताया जब ऑकलैंड में एक पारी वे खेल गए। इसके पहले न इंजमामुल हक ने कोई प्रतिभा दिखाई थी न इमरान को भरोसा था कि वे फाइनल में पहुँच जाएँगे। एक पारी के बल पर ऐसा खेल राजनीति इमरान ही कर सकते हैं और मेलबर्न में होने वाले फाइनल का भी फैसला कहीं सिडनी में हुए सेमीफाइनल जैसा न हो जाए इसलिए आयोजकों और अम्पायरों पर दबाव बनाए रखने के लिए नियम और आयोजन की आलोचना भी वही कर सकते थे।

इमरान का क्रिकेट के कोकाकोलाकरण से कोई विरोध नहीं है। वे सिर्फ यही चाहते थे कि विश्व कप के कोकाकोलाकरण की कीमत पाकिस्तान को न चुकाना पड़े। इमरान को अपनी माँ की याद में बन रहे कैंसर अस्पताल के लिए अगर कोकाकोलाकरण से पूरा पैसा मिल जाए तो वे नियम और आयोजन की कोई आलोचना ही न करें। जैसे बेंसन एंड हेजेस वाले सिगरेट बनाकर और क्रिकेट के जरिए उसे बेचकर लोगों के फेफड़े और स्वास्थ्य बिगाड़ते हैं और विश्व कप का आयोजन कर देते हैं। आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड में सिगरेट कम्पनियों को ऐसे प्रायोजन से वंचित करने के नियम हैं लेकिन विश्व कप के लिए उन्हें ताक पर रख दिया गया। पर्यावरण और आदमी के स्वास्थ्य की रक्षा के लिए भी पैसा तो कोकाकोलाकरण से ही मिलना है ना। इमरान को भी इसमें कोई विडम्बना नहीं दिखेगी कि जो बेंसन एंड हेजेस कप वे जीतकर लाए हैं वह सिगरेट बनाने वाली कम्पनी का दिया हुआ है। सिगरेट पीने से कैंसर होता है और इमरान के जीवन का एक ही प्रयोजन है पाकिस्तान में आधुनिक कैंसर अस्पताल बनाना।

बहरहाल मेरा कहना यह है कि पाकिस्तान विश्व कप इसलिए जीत सका कि उसके क्रिकेट का कोकाकोलाकरण नहीं हुआ है। यह भी संयोग नहीं है कि भारत और वेस्टइंडीज के भी क्रिकेट का कोकाकोलाकरण नहीं हुआ है और ये तीन बार विश्व कप जीत चुके हैं। इंग्लैंड शुरू से जीतने वाली टीम मानी जा रही थी और सट्टे बाजार में उसके भाव भी सबसे ऊपर थे। इसलिए कि बाजार में वन डे के लिए जो मानदंड माने जाते हैं उन्हें इंग्लैंड की टीम ही सबसे बेहतर तरीके से पूरे करती थी। वह बड़ी सन्तुलित टीम थी। उसमें शुद्ध बल्लेबाज, शुद्ध गेंदबाज और ऑल राउंडर थे और सभी अच्छी फील्डिंग करते थे। फिर वन डे क्रिकेट खेलने का सबसे ज्यादा अनुभव इंग्लैंड के खिलाड़ियों को है। उनमें जो पेशेवरी कौशल है वह और किसी टीम के खिलाड़ियों में नहीं था। इंग्लैंड की तैयारी भी बड़ी वैज्ञानिक थी। फील्डिंग, गेंदबाजी और बल्लेबाजी की ऐसी ट्रेनिंग उसके खिलाड़ियों की थी कि सामने वाली टीम को काबू में रख सके यानी उसे रोककर खुद आगे बढ़ सके।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस तैयारी में खिलाड़ी की निजी प्रतिभा और उसके चमत्कारी प्रदर्शन पर भरोसा नहीं किया जाता। हर खिलाड़ी की औसत क्षमता को ध्यान में रखकर टीम की कुल औसत क्षमता बढ़ाई जाती है। यानी हर फील्डर से अच्छी फील्डिंग कराई जाए और फील्डिंग पर सबसे ज्यादा ध्यान दिया जाए क्योंकि सामने वाली टीम को आसानी से रन नहीं मिलेंगे तो उसके बल्लेबाजों को लप्पेबाजी करने या दौड़कर ज्यादा रन बनाने का खतरा उठाना पड़ेगा और ऐसे खतरों में वह डूब जाएगी। फिर गेंदबाजी विकेट से विकेट के बीच थोड़ा आगे टप्पा देने वाली गेंदों की हो ताकि बल्लेबाज न आसानी से ड्राइव मार सकें, न कट, पुल और हुक जैसे शॉट मारने के लिए ज्यादा टप्पे वाली गेंद पा सकें। गोलंदाजी सामने वाली टीम को आउट करने के लिए नहीं उसे बाँध रखने के लिए हो। इसी तरह बल्लेबाजी सामने वाली टीम को गोलंदाजी के धुर्रे उड़ाने वाली धुआँधार लप्पेबाजी पर नहीं एक-एक दो-दो रन तेजी से भागकर जमा करने और इस तरीके से उसकी फील्डिंग और गोलंदाजी बिगाड़ने और फिर बिना मुश्किल आराम से रन बनाने के लिए हो। वन डे क्रिकेट के पेशेवरी कौशल के इस गणित और उसके समीकरणों में इंग्लैंड की टीम सिद्धहस्त थी। यह खेल के कोकाकोलाकरण की जीती-जागती तस्वीर थी।

इसी तरह की तैयारी आस्ट्रेलिया ने, न्यूजीलैंड ने और दक्षिण अफ्रीका ने की थी। जिस तरह बाजार में सबकी खपत वाली चीजें लोगों की औसत पसन्द, औसत चाह और औसत क्रयशक्ति को ध्यान में रखकर बनाई जाती हैं, उसी तरह इस क्रिकेट की तैयारी खिलाड़ियों की औसत क्षमता और कौशल बढ़ाने और उसे पूरी टीम की क्षमता और कौशल में बदल देने की होती है। न्यूजीलैंड, आस्ट्रेलिया और दक्षिण अफ्रीका ने इसीलिए फील्डिंग पर सबसे ज्यादा ध्यान दिया और अच्छी की भी। बल्लेबाजी और गोलंदाजी में भी आउट करने और होने के बजाय रोके रखने पर पूरा ध्यान दिया गया। अजीब है कि पहले तो ओवरों में सीभ करके और फिर दिन-भर में नतीजा निकालने की अनिवार्यता पैदा कर खेल को नकली बनाया गया और इस अनिश्चितता, रोमांच और सनसनी को नियन्त्रित कर प्रायोजित करने का पूरा शास्त्र गढ़ा गया। लेकिन यूरोपीय कोकाकोलाकरण का यही स्वभाव है।

इसके विपरीत पाकिस्तान टीम की ताकत उसके खिलाड़ियों की प्रतिभा और उसके चमत्कारी प्रदर्शन में भरोसे के कारण थी। इमरान ने अकरम को वाइड और नो बॉल न करने के लिए अपनी गोलंदाजी साधने को नहीं कहा। उन्होंने अकरम से कहा—वाइड और नो बॉल भले कितनी ही करो पर गोलंदाजी विकेट लेने के लिए करो। मुश्ताक अहमद से भी गोलंदाजी इमरान ने रन रोकने के लिए नहीं, विकेट लेने के लिए करवाई। इमरान जानते थे कि लेग स्पिन इंग्लैंड और न्यूजीलैंड वाले खेलना नहीं जानते इसलिए मुश्ताक के सामने दबे रहेंगे और रन नहीं बनाएँगे। मुश्ताक और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकरम ने विकट लेने के लिए गोलंदाजी की इसलिए सेमीफाईनल और फाइनल में उनकी न्यूजीलैंड और इंग्लैंड की बल्लेबाजी को मुसीबत में डाल दिया। ऑकलैंड और मेलबर्न यानी सेमीफाइनल और फाइनल में इमरान और जावेद ने ऐसी धीमी बल्लेबाजी की जो वन डे में नहीं चलती। लेकिन इससे उन्होंने वह ओट खड़ा किया जहाँ से उनके बल्लेबाज धुआँधार कर सकें। बल्लेबाजी में पाकिस्तान की ताकत एक-एक दो-दो रन बनाना नहीं धुआँधार करने में थी। और पाकिस्तान की फील्डिंग तो सबसे खराब थी।

चूँकि वन-डे मैच का फैसला दो-तीन ओवरों की निर्णायक गोलंदाजी और धुआँधार बल्लेबाजी से होता है इसलिए ऐन वक्त पर कुछ अनोखा कर दिखाने की क्षमता और उसके उपयोग की रणनीति कामयाब होनी चाहिए। इमरान की करिश्माई कप्तानी अपने खिलाड़ियों को अपनी प्रतिभा से चमत्कार कर दिखाने की प्रेरणा देती थी। इंग्लैंड, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड और दक्षिण अफ्रीका ने वन डे क्रिकेट को रोजमर्रा बाजारी कवायद के रूप में लिया और उसमें महारत हासिल की। इमरान की कप्तानी और पाकिस्तानी गोलंदाजी और बल्लेबाजी ने इस कवायदी महारत को निजी प्रतिभा के चमत्कार से तोड़ा। पाकिस्तानियों में अवसर के उपयुक्त खेल को ऊँचा उठा देने की प्रतिभाई चमत्कारिता थी। इंग्लैंड वाले मजदूरों की तरह खेल खेलकर महान कुछ कर दिखाने की इच्छा और क्षमता खो चुके हैं। आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड के भी यही हाल हुए हैं।

निजी प्रतिभा और चमत्कारी प्रदर्शन कोकाकोलाकरण के विपरीत हैं क्योंकि इनका कोई फारमूला, ढाँचा और नुस्खा तय करके बाजार के माल जैसा उत्पादन नहीं किया जा सकता। आस्ट्रेलिया में कोकाकोलाकरण से बाजार के माल हुए क्रिकेट की पराजय वन डे में असली क्रिकेट की जीत है। जो लोग समझते हैं कि क्रिकेट सिर्फ खेल है वे जीवन को क्या समझते हैं? और जैसी कि अंग्रेजी कहावत है—वे क्रिकेट का क्या जानते हैं जो सिर्फ क्रिकेट जानते हैं? थोड़ा गौर से देखिए, यह प्रभाष जोशी की उलटबाँसी नहीं है।

(12.4.92)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रटोरे होकर अपने को शत-प्रतिशत देना

अपने यहाँ इस मौसम का वह पहला मैच था। जयपुर में चल रहा था और आपको बताने की जरूरत नहीं कि मैं टीवी के सामने बैठा देख रहा था। तभी मुनमुन ने अपने रिमोट से चैनल बदल दिया। ये लोग चैनलों के साथ इसी तरह खेल करते रहते हैं। टीवी वाले जैसे एक भी सेकेंड खाली नहीं छोड़ते और खेल में लगभग हर गेंद और ओवर के बीच ठूँस-ठूँस कर विज्ञापन भरते हैं वैसे ही ये बच्चे लोग कोई विज्ञापन नहीं देखना चाहते। झट चैनल बदलकर कुछ और देखने लग जाते हैं और विज्ञापन खत्म होने के बाद ही खेल पर लौटते हैं।

मुझे दोनों से चिढ़ छूटती है। बार-बार ध्यान टूटने से खेल का मजा तो बिगड़ता ही है सोचने-समझने के लिए वह मिनट और कोना भी नहीं मिलता जो हर खेल में होता है और जिसके बिना जो खेला जा रहा है उसका अर्थ ही नहीं खुलता। लेकिन चौबीसों घंटे टीवी पर अगर कई चैनलें गटर गंगाओं की तरह बहनी हैं तो विज्ञापन दिखाए बिना उन्हें बहाते रहने के पैसे कहाँ से आएँगे? इसलिए चैनलें चल रही हैं और बेचारा देखने वाला खेल के मैदान के बजाय बाजार में विंडो शॉपिंग करता रहता है। आप अपने जमाने पर गर्व कर सकते हैं कि दुनिया में कहीं भी देखने लायक जो भी हो रहा हो उसे आप अपनी बैठक में होते हुए देख सकते हैं। लेकिन उसके साथ जो बाजार आप देखते हैं वह सबको बिकाऊ माल बना देता हो।

आजकल कोई भी घटना, दुर्घटना, समारोह-सम्मेलन पर्व-त्यौहार और तो और युद्ध भी एक बेचा जा सकने वाला मौका है। जो हो रहा है वह कैसा भी हो, खास यह है कि उसे मार्केट कैसे किया जा रहा है। उसे बेचा कैसे जा रहा है। अगर खूब ऊँचे दामों पर और धूमधाम से बेच दिया गया तो चीज से बड़ा उसका बेचना हो जाता है। राजनेताओं की छवियाँ और नीतियाँ अभिनेताओं और अभिनेत्रियों के शरीर और अदाएँ और खिलाड़ियों के खेल सब बेचे जाते हैं। जो जितना ऊँचा बिकता है उतना ही महत्त्वपूर्ण हो जाता है। अन्तर्निहित मूल्य नहीं बाजार का भाव सबसे बड़ा है। भाव तय करता है कि कोई बात, घटना, खेल और चीज कितनी बड़ी है। यह बाजार की अर्थव्यवस्था ही जीवन-पद्धति को तय करती है। आपके निहायत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
निजी संवेदना भी बाजार में तय होती है। आप चाहें तो अपने आँसुओं के खारे पानी को अमृत के भाव बेच सकते हैं। इसी का नाम उपभोक्ता संस्कृति है।

मुनमुन ने दूरदर्शन से उठाकर प्राइम स्पोर्ट्स पर ला दिया था। बेहतर दिख रहा था और मैं आवाज से पहचान गया था कि बॉयकॉट बोल रहे हैं। लेकिन अपने ही देश में होता मैच स्टार टीवी के प्राइम स्पोर्ट्स पर देखना मुझे जैसे अपने देश के साथ दगा करना लगा। मैंने मुनमुन को झिड़का कि ये क्या बदतमीजी है। दूरदर्शन लगाओ ! उसने लगा दिया और वहाँ भी मैं आवाज से पहचान गया कि बिशन सिंह बेदी और राजसिंह डूंगरपुर कमेंट्री कर रहे हैं। पर देखते-देखते लगा कि वे जो बोल रहे हैं परदे पर वह दिख नहीं रहा। उनके हाथ में माइक तो था लेकिन कैमरे पर टीडब्ल्यूआई यानी ट्रांस वर्ल्ड इंटरनेशनल का नियन्त्रण था। क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड ने भारत-इंग्लैंड सीरीज के तीनों टैस्ट और छहों वन डे दिखाने का अधिकार इस ब्रिटिश टीवी कम्पनी को बेच दिया था। यानी कोई दस लाख डॉलर यानी कोई पौने तीन करोड़ रुपए में तीन टैस्ट और छह वन डे मार्केट कर दिए गए थे। हम अपने ही देश में अपने ही मैच स्काई टीवी से प्राइम स्पोर्ट्स के जरिए देख रहे थे। अपने इकलौते और एकाधिकारी दूरदर्शन को भी अपने ही देश के मैच दिखाने के लिए पैसे देकर टीडब्ल्यूआई से दिखाने का अधिकार लेना पड़ा था। दिखा वे रहे थे और बुलग रहा था दूरदर्शन।

टैस्ट और वन डे सीरीजों को इस तरह एक विदेशी कम्पनी को बेचना उस वक्त के सूचना और प्रसारण मन्त्री को देशद्रोह लगा था। यानी देशभक्ति का एकाधिकार कोई संघ परिवार का ही नहीं है। निकम्मेपन में गच्चा खाए दूरदर्शन के मन्त्री भी दूसरों में देशभक्ति न होने का आरोप लगा सकते हैं। उन्होंने लगाया भी। बोर्ड ने कहा कि दूरदर्शन के निकम्मेपन के कारण हम क्यों भुगतें ? पाँच साल पहले दूरदर्शन को हमने विश्व कप दे दिया था जिसे वे न तो ठीक से बेच पाए न दिखा पाए। न उसके पास खेल दिखाने वाले कैमरे हैं, न कैमरामैन ! सही है। क्रिकेट ही नहीं दूरदर्शन कुछ भी उतना अच्छा नहीं दिखा सकता जितना और जैसा विदेशी टीवी दिखाता है। फिर दूरदर्शन पैसा भी अच्छा नहीं देता। उसे टैस्ट और वन डे सीरीज दिखाने का एकाधिकार सिर्फ इसलिए तो नहीं दिया जा सकता कि वह हमारा राष्ट्रीय प्रसारण तन्त्र है। अगर वह निकम्मा और कंगाल है तो बोर्ड अच्छे और अमीर दिखाने वालों से कमाई क्यों न करे। इस कमाई को खेल में लगाया जा सकता है जिससे वह बेहतर और मजबूत हो सके।

बोर्ड खेल और खिलाड़ी का क्या करता है इसकी असलियत सारा देश जानता है। लेकिन आप उस पर देशद्रोह का आरोप कैसे लगा सकते हैं जब देश ने खुद ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
अपनी अर्थव्यवस्था को दुनिया के बाजार से जोड़ने का फैसला करके विदेशी पूँजी और कम्पनियों के लिए राष्ट्रीय गौरव को पलक-पाँवड़े बनाकर बिछा दिया है। दुनिया के बाजार में हम जो भी बेच सकते हैं बेचने के लिए मरे जा रहे हैं। बोर्ड ने टैस्ट और वन डे सीरीज एक ब्रिटिश कम्पनी को बेच दी और सर्वशक्तिमान दस लाख डॉलर कमा लिए तो मनमोहन सिंह तो उसे निर्यात का बड़े से बड़ा पुरस्कार दे सकते हैं। समाजवाद के जमाने में जो देशद्रोह था वह खुली बाजार व्यवस्था में देश की सेवा हो गया है। मैंने कहा था न कि बाजार में मूल्य बदल जाते हैं। अजित पांजा बेचारे उस समाजवादी पश्चिम बंगाल से आए हैं जिसे मनमोहन सिंह की खुली बाजार-व्यवस्था ने उन्नीसवीं सदी में फेंक दिया है। इसीलिए जब उन्होंने बोर्ड पर देशद्रोह का आरोप लगाया तो पंजाब के एक सरकारी अफसर और बोर्ड के पदाधिकारी बिन्द्रा ने उनकी हँसी उड़ाई।

बहरहाल दूरदर्शन को टीडब्ल्यूआई से खेल उधार लेना पड़ा और जिस तरह विदेशी माल देशी बक्से में बेचना पड़ता है उसी तरह उसकी कमेंटरी हमारे लोगों ने की। कैमरे के दिखाने और उनके बोलने में तो मेल नहीं ही होता था उनका बोलना भी बड़ा अजीब लगता था क्योंकि उन्हें अहसास था कि दूसरी चैनल पर इसी दिखाने के साथ हेनरी ब्लोफेल्ड, जेफरी बॉयकॉट, डेविड गॉवर, चार्ल्स कॉलविल और हमारे अपने सुनील गावसकर बोल रहे थे। अब ऐसा नहीं है कि हमारे बिशनसिंह बेदी, जयसिम्हा, टाइगर पटौदी और अब्बास अली बेग को बॉयकॉट और गॉवर से खेल कम समझता हो। सुनील गावसकर आखिर उसी चैनल पर इन सबके कान काटते ही हैं और तमाम विदेशी खिलाड़ी कमेंटेटरों में गावसकर का बड़ा दबदबा है। लेकिन बेदी, जयसिम्हा, पटौदी और बेग पेशेवर कमेंटेटरों की तरह नहीं बोलते। बेदी और जयसिम्हा की आवाज तो लंच के साथ इतनी बीयर पी हुई लगती है कि जैसे वे खेल देखते हुए खुद अपने से ही बोल रहे हों। दर्शक को वे विशेष क्या दिखा और समझा सकते हैं इसका अहसास भी जैसे उन्हें नहीं है। गुड शॉट, माई गॉड, आई जस्ट जस्ट डोंट, अंडरस्टेंड—आदि कहकर रह जाते हैं।

इनकी अंग्रेजी की बात नहीं कर रहा हूँ। टाइगर पटौदी और अब्बास अली बेग की अंग्रेजी बॉयकॉट और गॉवर से खराब नहीं है। पटौदी और बेग इंग्लैंड के जिन विश्वविख्यात विश्वविद्यालयों में पढ़े—बॉयकॉट और गॉवर तो उनके दरवाजे पर भी नहीं पहुँचे। लेकिन अंग्रेजी उनकी भाषा है और पटौदी और बेग की नहीं है। इसलिए उन्हें उसे बोलने में कोई हिचक नहीं होती। बॉयकॉट जैसे उच्चारण अगर हमारे यहाँ प्राइमरी का कोई बच्चा करे तो मास्टरनी उसे झिड़क कर घर भगा देगी। बॉयकॉट ऑफ स्टुंप की गेंद को गुली में कुट करके रून बनाते हैं। और गेंद का उनका जुजमेंट बहुत अच्छा होता है। वे कालकुटा को बहुत पसन्द करते हैं हालाँकि वहाँ बीमार पड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
जाते हैं। बॉयकॉट यार्कशायर काउंटी के हैं और वहाँ का उच्चारण थोड़ा अजीब होता ही है। लेकिन हर शब्द के यू को उच्चारित करने वाले वे दुनिया के अकेले कमेंट्रीकार हैं। उनके जैसे उच्चारण हमारा कोई कमेंट्रीकार करे तो उसे एक के बाद दूसरा मौका नहीं मिले। बॉयकॉट की खेल की समझ और उसे बताने का तरीका उन्हें उत्तम कमेंटेटर बनाता है। लेकिन उनके उच्चारण। भगवान बचाए।

हेनरी ब्लोफेल्ड इस देश में सबसे लोकप्रिय अंग्रेज कमेंटेटर हैं। शारजाह में लेडीज के बड़े-बड़े झुमके दिखाकर उन पर कुरबान जाकर उन्होंने बड़ी शोहरत कमाई है। उनके कारण मैच देखने आने वाली महिलाओं में दर्शनीय और कर्णप्रिय झुमके पहनने की होड़ लगी रहती है। वे सोच समझकर बोलने वाले नहीं रवानी में ले उड़ने वाले कमेंटेटर हैं। साथ के विशेषज्ञ से मजाक करते रहते हैं। बॉयकॉट को चिढ़ाते रहते हैं। और जैसा कि बम्बई के एक दर्शक ने तख्ती पर लिखकर कहा हेनरी खेल के अलावा और सब बातों पर कमेंट्री करते रहते हैं। मद्रास टैस्ट में अम्पायर थे प्रोफेसर राठौड़। हेनरी ब्लोफेल्ड उन्हें पाँचों दिन प्रोफेसर रटोरे कहते रहे। प्रोफेसर राठौड़ ने भले ही पाँच और सात बॉल के ओवर दिए हों और मोरे का कैच छूटने के बाद भी उँगली उठा दी हो और कुछ गलत-सलत निर्णय भी दिए हों। लेकिन वे राठौड़ से रटोरे तो नहीं बनाए जा सकते। हेनरी ब्लोफेल्ड ने उनका नाम सही उच्चारित करने की कभी कोशिश नहीं की। लगभग सभी भारतीय नामों को वे बिगाड़ कर बोलते रहे। गावसकर ने गॉवर को भले ही क्रिकेट के हिन्दी शब्द रटवाए हों लेकिन उन्होंने हेनरी ब्लोफेल्ड को नहीं बताया कि अम्पायर प्रोफेसर रटोरे नहीं राठौर हैं।

हिन्दी और अंग्रेजी में कमेंट्री करने वाले भारतीय निश्चित ही विदेशी नामों के उच्चारण में ज्यादा सावधानी बरतते हैं। लेकिन खेल को अपने मुहावरे में समझाने-बताने की उन्होंने कोई कोशिश नहीं की है। जैसे राजसिंह डूंगरपुर का क्रिकेट का शौक और उसकी जानकारी अद्‌भुत है। वे राजस्थान में जन्मे, इन्दौर के डेली कॉलेज में पढ़े, वहीं उन्होंने क्रिकेट सीखा, राजस्थान की तरफ से खेले और बम्बई में रहते हुए खेल के प्रशासक हुए। उनके लिए क्रिकेट को हिन्दी में बताना मुश्किल नहीं होना चाहिए। लेकिन जयपुर में जान लगाकर गेंद रोकते कपिल के बारे में उन्होंने कहा—इसे कहते हैं टीम को शत प्रतिशत देना। हिन्दी में यह वाक्य न सिर्फ अटपटा लगता है, इसका कोई अर्थ भी नहीं निकलता। यह अंग्रेजी के—दिस इज गिविंग हन्ड्रेड परसेंट टू यूआर टीम—का हिन्दी अनुवाद है। सुशील दोषी ने हिन्दी वालों में क्रिकेट को पहुँचाने और लोकप्रिय करने में बड़ा योगदान दिया है। लेकिन वे भी अंग्रेजी मुहावरों के हिन्दी-अनुवाद से आगे नहीं जा पाए हैं। बार-बार वही शब्दावलियों और मुहावरों में बोलते हैं। सुन्दर शॉट लगाते हैं और उसी के साथ छक्का कर देते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। बाकी के बारे में तो चुप ही रहा जाए तो अच्छा है। वे न खेल समझते हैं, न उसे अपनी बोली में बता सकते हैं। हालाँकि उन्हें हमें बरसों से झेलनी पड़ रही है।

यह सब इसलिए लिखा कि खुली बाजार व्यवस्था में स्काई स्पोर्ट्स और प्राइम स्पोर्ट्स के लिए भारतीय दरवाजे खोल दिए हैं और सीधी होड़ में उनके खिलाफ कोई संरक्षण सरकार दूरदर्शन को भी नहीं दे पाएगी। अगर दूरदर्शन और उसके कमेंट्रीकारों ने दुनियाभर से होड़ में अव्वल निकलने की तैयारी नहीं की तो राष्ट्रभक्ति उन्हें बचा नहीं पाएगी। वैसे भी फिसड्डी और निकम्मे लोगों की ढाल राष्ट्रभक्ति को नहीं बनने देना चाहिए। लेकिन अन्देशा यही है कि हम होड़ में आगे निकलने के बजाय बाहर के बेहतर टीवी को घर में सब जगह पहुँचा देंगे। तब हमें अपना ही घर बाहर की आँखों से देखना पड़ेगा। इस देश के पढ़े-लिखे लोग यों भी भारत को पश्चिमी आँखों से ही देखने के आदी हैं और खाँटी भारतीय नजर और दृश्य को हिकारत से देखते हैं। उन्हें यह समझाने वाला भी कोई नहीं है कि जब तक हम अपने को अपनी नजर से नहीं देखेंगे सही देख नहीं पाएँगे। हम अपने मुहावरे में ही अपने को सही बता सकते हैं। हमारा आत्मबिम्ब हमारी सचाई और हमारे सपनों को जैसा प्रकट करता है वैसा दूसरों का नजरिया कभी करेगा ही नहीं। हम अपने रूप को दुनिया में स्थापित करना चाहते हैं या दुनिया हमें जैसा समझती है—वैसे ही हो जाना चाहते हैं। जैसे-जैसे आकाश से दुनिया की सेटेलाइट नजरों का हमला बढ़ता जाएगा वैसे-वैसे हम दुनिया के बाजार में लुटे पड़े ग्राहक बनते जाएँगे।

सही है कि अपने चारों ओर लोहे का परकोटा खड़ा करने वाला सोवियत संघ बिखर गया। बाँस का घेरा लगाने वाला चीन भी दुनिया के बाजार में दुकान लगा रहा है। हम तो खुले समाज ही रहे हैं इसलिए परकोटा चढ़ाने में हमारी रुचि भी नहीं रही। लेकिन क्या हम बाजार की भीड़ में खोकर अपनी भारतीयता और पाँच हजार साल की संस्कृति को भी गँवा देंगे? आत्महीनता की ऐसी बिजली हम पर गिरे क्या उसके पहले हम अपने व्यक्तित्व और आत्मबिम्ब को स्थापित करने के उपकरण बनाकर उनके उस्ताद नहीं होंगे? प्रोफेसर रटोरे होकर दुनिया को शत प्रतिशत देना ही क्या हमारी नियति होगी? क्रिकेट के बहाने जरा यह भी सोचिए।

(7.3.93)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखिए, यह क्रिकेट नहीं है

इकतीस गेंदों पर कुल ग्यारह रन बनाने थे। चार विकेट हाथ में थे और विनोद कांबली और अतुल बेदाडे विकेट पर थे। लेकिन अँधेरा बहुत तेजी से हो रहा था। गेंद दिखना मुश्किल हो रहा था। और हालाँकि अभी कपिल और नयन मोंगिया पेवेलियन में बैठे थे, भारत की जीत पर भरोसा करके बैठा नहीं जा सकता था।

गए साल श्रीलंका में जीता-जिताया मैच हमारी टीम देखते-देखते हार गई थी। और तीन साल पहले शारजाह में ऐसे ही घुप अँधेरे में पाकिस्तान से हम हारे थे। जैसे अजहर आउट हुए और उसके दो रन बाद रन आउट होने की दो आत्मघाती कोशिशों के बाद सिद्धू आउट हुए वैसे ही बचे हुए चार बल्लेबाजों के जाने में कितनी देर लगती है। मेरा दिल तेजी से और जोर-जोर से धड़कने लगा। कोई डॉक्टर आसपास होता तो टीवी बन्द करके मुझे कमरे में ले जाकर लिटा देता।

तभी खच्च जैसी आवाज हुई और आड़ी-तिरछी लाइनें दिखने लगीं। परदे पर कुछ देर तो सूचना आती रही कि यह चार देशों के सिंगर टूर्नमिंट के फाइनल का सीधा प्रसारण है। उस बनी-बनाई तख्ती पर 'लाइव' बार-बार झपकता भी रहा। फिर एक लाइन उभरी कि सेटेलाइट लिंक टूट जाने का खेद है। फिर सबसे ऊपर एक सूचना आई कि भारत को जीतने के लिए पाँच रन चाहिए। फिर थोड़ी देर बाद तीन रन चाहिए। काफी देर तक तीन रनों की ही जरूरत रही। आखिर सूचना उभरी कि भारत छह विकेट से जीत गया है। राहत मिली। फिर ढेर सारे विज्ञापनों का सिलसिला शुरू हुआ और जब सब विज्ञापन दिखा दिए गए तो सीधा प्रसारण समाप्त हुआ।

यह दूरदर्शन की कारस्तानी नहीं थी। अगर होती तो आप पाते कि दूसरे दिन अखबार उस पर टूट पड़ते। और कई दिनों तक पाठकों की चिट्ठियाँ छपती रहतीं कि ऐसा निकम्मा हमारा दूरदर्शन है कि जब फाइनल अपने रोमांच के चरम पर पहुँचा तभी लिंक टूट गई। और पैसों का लालची दूरदर्शन विज्ञापन दिखाता रहा और किसी ने बताया तक नहीं कि सेटेलाइट लिंक क्यों टूटी और न किसी ने उसके लिए दर्शकों से माफी माँगना जरूरी समझा। भारत की जीत का दृश्य भी हम देख नहीं पाए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
यह मैच अमेरिकी टेलीविजन कम्पनी वर्ल्ड टेल दिखा रही थी और पूरे टूर्नामेंट के प्रसारण को बाजार में निम्बस नाम की विज्ञापन एजेंसी ने बेचा था। यह वही टेलीविजन कम्पनी है जो दो साल बाद भारत, पाकिस्तान और श्रीलंका में होने वाला विश्व कप दिखाएगी। उसने एकाधिकार खरीद लिए हैं और जो तीन देश यह विश्व कप करने वाले हैं उनके राष्ट्रीय टीवी को भी इसी अमेरिकी टीवी कम्पनी से सीधा प्रसारण खरीदना पड़ेगा। अपने ही देश में जो विश्व कप मैच वे दिखाएँगे उन्हें वे इस अमेरिकी कम्पनी से खरीदने पड़ेंगे। अमेरिकी कम्पनियों को कब से क्रिकेट दिखाने में रुचि हो गई और कोई जानता है कि उन्हें क्रिकेट दिखाने का कितना शऊर और कौशल आता है।

लेकिन खुले बाजार में वर्ल्ड टेल ने बोली लगाई और सबसे ज्यादा डॉलर उछाल दिए। भारत, पाकिस्तान और श्रीलंका के क्रिकेट बोर्डों की सम्मिलित आयोजन समिति ने उसे प्रसारण का एकाधिकार बेच दिया। भारतीय उपमहाद्वीप में फटाफट क्रिकेट के अब भी सबसे ज्यादा दर्शक हैं और यही दोहन किया जा सकने वाला सबसे बड़ा औजार है। अमेरिकी कम्पनी की रुचि क्रिकेट और उसे भारतीय उपमहाद्वीप के मेरे जैसे क्रिकेट के करोड़ों मरीज दर्शकों को दिखाने में नहीं है। अनन्त सम्भावनाओं वाले इस बाजार का दोहन करने में है।

और हमारे देशों को अपने क्रिकेट और उसके दर्शकों की उतनी फिकर नहीं है जितनी कि उससे मिलने वाले डॉलरों की है। विश्व कप का आयोजन करोड़ों का मामला है और बाजार का दोहन करने में हमने मान लिया है कि हमसे ज्यादा चतुर और कुशल अमेरिकी प्राइवेट कम्पनियाँ होती हैं। पाकिस्तान, श्रीलंका और बांग्ला देश ने तो वैसे भी कभी ऐसे मामलों में आत्मनिर्भरता और अपने को पश्चिमी पूँजीवादी देशों की बाजारू ताकतों के शोषण से बचाने की कोशिश नहीं की। एक भारत ही इस उपमहाद्वीप का राजनीतिक और आर्थिक मायनों में सबसे ताकतवर और निश्चयी देश था। लेकिन मनमोहन सिंह की जय बोलिए कि आजादी के बाद पैंतालीस साल तक आत्मनिर्भरता और अपनी जरूरतों के हिसाब से अपनी अर्थव्यवस्था खड़ी करने का दृढ़ निश्चयी संघर्ष करने के बावजूद हम भी पश्चिमी बाजार में नीलाम होने के लिए खड़े हो गए हैं। रोज बोली लगती है और हम शरम के मारे सोचते हैं कि बाजार में हमारी कोई ऊँची कीमत नहीं है।

आप कहेंगे कि क्रिकेट से खुले बाजार की खगोली अर्थव्यवस्था पर छाती माथा कूटते हुए स्वदेशी जैसा यह राँड रोना लेकर क्यों बैठ गया। माफ कर दीजिए। दोनों हाथ जोड़ कर माफी माँगता हूँ। लेकिन जिस खेल को पागलों की तरह छियालीस साल से देख रहा हूँ उसे बाजार का टोटका बनते देखकर और उस टोटके के खोखलेपन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की असलियत समझकर अगर इतना भी दुख नहीं हो तो फिर क्या किसी खेल के पीछे दीवाने हुए।

मैं जानता हूँ कि समाजवादी-गांधीवादी मूल्यों और वातावरण में पनपी तीन-चार पीढ़ियाँ क्रिकेट को हमेशा उपनिवेशवादी कलंक मानती रही हैं। इस गरीब देश के करोड़ों लोगों के इस खेल के शौक पर समय और शक्ति बरबाद करने को कोसती रही हैं। और अंग्रेजी राज की छोड़ी हुई इस अफीम को जड़मूल से उखाड़ फेंकने की कसमें खाती रही हैं। इन लोगों से मेरी सिर्फ इतनी विनती है कि अगर स्वदेशी और समाजंवादी सपने को इस देश ने छोड़ दिया है तो इसका कारण सामन्तवादी-उपनिवेशवादी-पूँजीवादी खेल क्रिकेट नहीं है। और खेलों के दीवाने इस गरीबदास को क्रिकेट ही नहीं लगभग सभी संगठित खेलों के कोकाकोलाकरण का उतना ही दुख है जितना भारत जैसे देश के बाजारीकरण का। हम आजादी की लड़ाई लड़े तो इसलिए कि ईस्ट इंडिया कम्पनी के बाजार से ब्रिटेन के उपनिवेश बने रहना हमें मंजूर नहीं था। हम स्वराज्य में अपनी नियति के अनुसार अपना रास्ता खुद बनाने का संकल्प लेकर निकले थे। और अब अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक के जरिए विकसित देश फिर अपना ज़र खरीद बाजार बनाने में लगे हैं और हमें इतना भी याद नहीं रहा है कि पूँजीवादी बाजार की कठपुतली बनने के बाद क्या होता है।

क्रिकेट से इसलिए शुरुआत की कि बताऊँ कि भलमनसाहत और खिलाड़ी भावना की कसौटी माने जाने वाले शिष्ट जनों के इस खेल के बाजार के टोटके बन जाने से इसका क्या हाल हुआ है। जिस फाइनल मैच के अन्तिम और रोमांचकारी क्षणों का मैंने शुरू में वर्णन किया वह भारत, पाकिस्तान, आस्ट्रेलिया और श्रीलंका के बीच कोलम्बो में इस महीने खेल गए सिंगर कप का था। सिंगर इन चार देशों के किसी महान खिलाड़ी या खेल प्रशासक का नाम नहीं है। सिंगर एक ऐसी बहुराष्ट्रीय कम्पनी का नाम है जो इस उपमहाद्वीप में बरसों से सिलाई की मशीनें बनाती और बेचती रही है। अब यह कम्पनी टीवी आदि भी बनाती है। कनाडा में इसका मुख्यालय है और कनाडा कोई क्रिकेट खिलाड़ी देश नहीं है। लेकिन जिस तरह सिगरेटं और शराब बनाने वाली कम्पनियाँ अपने नाम के कप चलाकर अपना कारोबार बढ़ातीं और स्वस्थ लोगों की सेहत बिगाड़ने का पाप धोती हैं उसी तरह नए उत्पादों के साथ नई छवि बनाकर नए उभरते बाजार में सिंगर ने प्रवेश करने के लिए श्रीलंका से क्रिकेट से शुरुआत की।

श्रीलंका क्रिकेट में अब तक कोई ताकत नहीं बन पाया है न उसने कभी कोई अन्तर्राष्ट्रीय क्रिकेट टूर्नमिंट किया है। फटाफट क्रिकेट में ही उसे अपने से थोड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
बहुत उम्मीद है। पिछले कई सालों से लगातार पिटने के कारण उस देश के क्रिकेट प्रेमी उतने ही दुखी हैं जितने भारत और पाकिस्तान के रहते आए हैं। भारत और पाकिस्तान की तरह श्रीलंका के लोग भी अपनी राष्ट्रीय प्रतिष्ठा और अभिमान को क्रिकेट से जोड़ लेते हैं। बाहर तो वे जीत नहीं पाते लेकिन अपने अम्पायरों, पिचों और दर्शकों की मदद से अपने मैदानों पर कभी-कभी जीत जाते हैं। अपने यहाँ जीतने और कोई अन्तर्राष्ट्रीय टूर्नामेंट करने को उत्सुक श्रीलंका के क्रिकेट बोर्ड ने सिंगर कम्पनी को बुलाया या उस कम्पनी ने श्रीलंका बोर्ड को टूर्नामेंट प्रायोजित करने का प्रस्ताव भेजा, यह मुझे मालूम नहीं।

लेकिन यह आजकल आम बात है कि अन्तर्राष्ट्रीय क्रिकेट कान्फरेंस से निर्धारित कार्यक्रम से खाली दिनों या महीनों में कोई कमाऊ टूर्नामेंट करने और करवाने को बोर्ड और कम्पनियाँ उत्सुक रहती हैं। पिछले साल कलकत्ता में हीरो कप हुआ। फिर शारजाह में आस्ट्रेलेशिया कप हुआ। ये दोनों ऐसे ही उपक्रम थे। हीरो कप में भारत ने अपनी स्वायत्तता एक विदेशी टेलीविजन कम्पनी को बेची थी और शर्म की बात है कि करोड़ों क्रिकेट प्रेमियों के नाम पर अदालतों ने यह कानून-विरोधी काम भारत सरकार से करवाया। मैं नहीं जानता कि सिंगर कप को वर्ल्ड टेल कम्पनी को बेचने में श्रीलंका ने क्या किया। लेकिन इतना वे सब लोग कहते हैं जो सिंगर कप कवर करने या देखने कोलम्बो गए थे कि वहाँ बोर्ड तो पीछे कहीं था, टूर्नामेंट पर बोलबाला था तो प्रायोजक कम्पनी सिंगर और टीवी कम्पनी वर्ल्ड टेल का था।

प्रायोजक और प्रसारण करने वाली कम्पनियों को इसकी फिकर नहीं थी कि ऐसा टूर्नामेंट करने के लिए श्रीलंका में सितम्बर के मध्य का समय सबसे ठीक समय है या नहीं। सिंगर कम्पनी ने डेढ़ करोड़ से ज्यादा रुपया इस टूर्नामेंट में लगाया था और वर्ल्ड टेल ने इंग्लैंड की एक बीमा कम्पनी से इसके सीधे प्रसारण का बीमा करवा रखा था। टूर्नामेंट पूरा ही बरसात से धुल जाता तो भी वर्ल्ड टेल को तो कोई नुकसान नहीं होता। सिंगर को निराशा जरूर होती लेकिन उसके जैसे नाम और कारोबार वाली कम्पनी के लिए जन सम्पर्क पर डेढ़-एक करोड़ लगा देना कोई बड़े घाटे का काम नहीं है। टूर्नामेंट सिंगर कम्पनी की नई छवि फैलाने और वर्ल्ड टेल को विश्व कप के पहले प्रसारण की रिहर्सल करने और बाजार परखने के लिए था।

ऐसे प्रायोजित टूर्नामेंट में बोर्ड और खिलाड़ियों की अच्छी कमाई हो जाती है इसलिए चारों टीमों ने यह भी पहले जाँचने की जरूरत नहीं समझी कि टूर्नामेंट के नियम अन्तर्राष्ट्रीय क्रिकेट कान्फरेंस के नियमों के अनुरूप हैं या नहीं। बाद में पाकिस्तान और आस्ट्रेलिया की टीमें जब टूर्नामेंट से बाहर हो गईं तो उनके कप्तानों ने बरसात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
में खेल और रन रेट के नियमों की आलोचना की। गीले पिच और मैदान पर श्रीलंका और भारत के कप्तान पच्चीस ओवरों का फाइनल खेलने को तैयार नहीं थे। लेकिन आयोजक कम्पनी और टीवी कम्पनी ने अम्पायरों पर दबाव डाला कि पिच खराब हो या अच्छा फाइनल तो शनिवार को खेलना ही होगा। और मजा देखिए कि अम्पायरों ने न सिर्फ परिस्थितियों को खेल के लायक घोषित किया, कप्तानों को खेलने के लिए मजबूर भी किया। खेल और खिलाड़ी ऐसे टूर्नामेंट में महत्त्वपूर्ण नहीं होते। महत्त्वपूर्ण और निर्णायक पैसा होता है।

खिलाड़ी, बोर्ड और अम्पायर तो पैसा फेंकने वालों की मर्जी से नाचते यानी खेलने को तैयार थे। लेकिन बरसात पर अभी बाजार का जोर नहीं चलता। और श्रीलंका जैसे पिछड़े देश के पास इतने साधन नहीं होते कि बरसात के असर को नाकाम करके भी खेल करवा दे। धाराधार बरसात ने टूर्नामेंट का पहला मैच ही धो दिया। दूसरे दिन भी श्रीलंका और भारत का यह मैच पच्चीस-पच्चीस ओवरों का ही हो सका क्योंकि बरसात ने पूरे पचास-पचास ओवर का समय नहीं दिया। बरसात के बाद और उसके कारण आधे किए गए मैच में टॉस की लॉटरी चलती है। टॉस श्रीलंका के कप्तान ने जीता इसलिए भारत को पहले खेलाकर वे मैच भी जीत गए। बरसात के कारण भारत और पाकिस्तान के बीच वह चिरप्रतीक्षित मैच दो दिन तक हो ही नहीं सका जो कि सबसे काँटे का मुकाबला होने वाला था। इसलिए पाकिस्तान बिना खेले टूर्नामेंट के बाहर हो गया क्योंकि वह आस्ट्रेलिया और श्रीलंका से पहले ही हार चुका था। विश्व विजेता पाकिस्तान को कुल जमा एक पाइंट मिला वह भी बिना खेले मैच का। सबको उम्मीद थी कि वह टूर्नामेंट जीतेगा।

भारत पहले मैच में बरसात के कारण हारा लेकिन फाइनल में भी बरसात के कारण ही पहुँचा क्योंकि पाकिस्तान से उसका मैच दो दिन लगातार बारिश के कारण नहीं हो सका। एक हार और एक जीत और ऊँची रन रेट के कारण वह फाइनल में पहुँच गया। बरसात फाइनल के पीछे भी पड़ी रही। मैदान बदला फिर भी बरसात ने खेल बिगाड़ा। श्रीलंका ने बरसात से मिले फायदे के कारण दो मैच जीतकर और बरसात से ही धीमे हुए पिच पर पाकिस्तान को हराकर तीनों मैच जीते थे और अपने जीवन का पहला विश्व कप जीतने की कगार पर था। इसलिए पानी से बिगड़े फाइनल को शनिवार के बजाय रविवार को रखना चाहता था। लेकिन भारत टूर्नामेंट एक दिन आगे खिसकाने पर राजी नहीं था। एक दिन आगे बढ़ाने का मुआवजा उसने तीस हजार डॉलर माँगा जो कि आयोजक देने को तैयार नहीं हुए। आयोजक और श्रीलंका का बोर्ड इससे दुखी हुए लेकिन ऐसे मामलों में न अड़ने वाला भारत पैसे के लिए अड़ गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
आखिर फाइनल बरसात और आयोजक के दबाव के कारण पच्चीस-पच्चीस ओवर का हुआ। पहला मैच श्रीलंका ऐसी टॉस वाली लॉटरी में ही जीता था। फाइनल में वह किस्मत उसका साथ छोड़ गई जिसने उसे तीनों मैच जिताए थे। उसके कप्तान ने टॉस हारा और पच्चीस ओवर में श्रीलंका 98 रन ही बना पाया। फायदा भारत को मिला और वह फाइनल उन परिस्थितियों में जीत गया जिनका वर्णन मैंने शुरू में ही कर दिया है। अजहर सिंगर कप और कोई पाँच लाख रुपए लॉटरी में जीतकर आ गए। श्रीलंका ने जिसलिए टूर्नामेंट करवाया था वह उसे नहीं मिला। किस्मत और बरसात ने उसकी महत्त्वाकांक्षा पर पानी फेर दिया। जीत के मदमाते रस वाला कप उसके होंठों तक आकर छिन गया और अन्तर्राष्ट्रीय टूर्नामेंट करने का गौरव भी नहीं मिला।

जीता तो बाजार जीता। सिंगर कम्पनी ने डेढ़ करोड़ रुपए वसूल पाए। और वर्ल्ड टेल कम्पनी ने अनुभव और धन कमाया। लेकिन जो टूर्नामेंट टीवी के लिए था उसी का फाइनल सबसे रोमांचकारी क्षणों में भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश के दर्शकों को देखने नहीं मिला। मैच छह बजे के बाद तक गया और वर्ल्ड टेल ने सेटेलाइट लिंक का टाइम तभी तक के लिए लिया था। वर्ल्ड टेल ने दर्शकों से इसकी माफी भी नहीं माँगी। उसकी कमाई विज्ञापनों से हो चुकी थी। बाजार और टीवी के लिए जो टूर्नामेंट होता है वह खेल के लिए नहीं होता। क्या बाजार का यह सत्य भारत के मनमोहनसिंहों को समझ आएगा।

(25.9.94)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस पागलपन में अर्थ है

पहले करता था तो कोई नहीं कहता था। अब वैसी ही भागमभाग करूँ तो सब कहते हैं कि नहीं। और अन्दर से भी आवाज आने लगती है कि रुको। पर मैं न बाहर की सुनता हूँ न अन्दर की। फिर भी इस बार जरा ज्यादती हो गई। पिछले रविवार को सुबह लखनऊ, दोपहर कानपुर, रात फिर लखनऊ, सुबह दिल्ली और शाम इन्दौर और दूसरे दिन वापस दिल्ली।

लखनऊ से थका-माँदा लौटा और जब इन्दौर की उड़ान पकड़ने की तैयारी करने लगा तो फोन आया कि क्या इतना जरूरी है? सीके नायडू शताब्दी की मध्यप्रदेश समिति के अध्यक्ष हैं—माधवराव सिन्धिया। लेकिन वे आन्ध्र प्रदेश के टिकट बाँटने में लगे हैं इसलिए जा नहीं सकते। संयोजक हैं मध्यप्रदेश के मुख्यमन्त्री दिग्विजय सिंह—लेकिन वे आ नहीं सकते क्योंकि मध्यप्रदेश में स्थानीय प्रशासन संस्थाओं के चुनाव होने हैं। झंझट हो जाएगी। क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड की नायडू शताब्दी समिति के संयोजक हैं राजसिंह डूंगरपुर। लेकिन वे अभी उदयपुर से लौटे हैं। बिजली मन्त्री साल्वे की बड़ी रुचि है लेकिन वे भी अन्यथा व्यस्त हैं। प्लेग के कारण वेस्टइंडीज का दौरा आगे खिसका है इसलिए एक नवम्बर को नागपुर में नायडू शताब्दी की जो शुरुआत राष्ट्रीय स्तर पर होनी थी, हो नहीं सकती।

इसका मतलब यह कि नायडू साब के जन्म स्थान नागपुर में उनकी जन्म शताब्दी के पहले दिन यानी 31 अक्तूबर या एक नवम्बर को कोई समारोह नहीं होगा। अपने आग्रह पर इन्दौर में नायडू साब से बचपन में क्रिकेट सीखे दिग्विजय सिंह ने कमेटी बनाई, माधवराव सिन्धिया को अध्यक्षता के लिए राजी किया और साल-भर का कार्यक्रम बनाया। अपनी तरफ से उनने कोई कसर नहीं की बल्कि पूरे उत्साह से लोग और साधन जुटाए कि देश में पहली बार किसी खिलाड़ी की जन्म शताब्दी ऐसे मनाई जाए जैसे राष्ट्र जीवन के दूसरे महानायकों की मनती है। लेकिन उसकी शुरुआत न नागपुर में सही वक्त पर होगी, जहाँ वे जन्मे और जीवन के पहले इकतीस साल रहे, न इन्दौर में जहाँ उनके बाद के इकतालीस साल गुजरे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुख्यमन्त्री दिग्विजय सिंह को कहा कि ऐसा न हो तो उनने इन्दौर में कार्यक्रम रख दिया।

तो हो जाए कार्यक्रम। जब दूसरे सब नहीं जा पा रहे तो आपको ही क्या अड़ी है ?—किसी ने व्यथित होकर कहा। नहीं बताऊँगा कि किसने कहा। पर एक पल के लिए मैं रुक गया और अपनी थकावट में गुम बैठ गया। टिकट वापस हो सकता है और इसकी भी क्या गारंटी कि उड़ान चली जाएगी। पायलटों ने बीमार होकर सब गड़बड़ नहीं कर दिया है ? फिर अपने न जाने से ऐसा तो नहीं होगा कि कार्यक्रम हो ही नहीं। फिर क्या जरूरत है वही करने की जिसके चलते बाई पास सर्जरी करवानी पड़ी ? दुबारा आसानी से हो सकने वाला यह ऑपरेशन तो नहीं है।

लेकिन भारतीय क्रिकेट के पहले कथापुरुष की शताब्दी मने और प्रेम से मने इसके लिए अपने को कोशिश करना चाहिए ऐसा किसी ने कहा तो नहीं था। सम्पादकी की कोई मजबूरी या जिम्मेदारी भी नहीं थी कि ऐसी शताब्दी के लिए कोशिश करो। अपन न खेल प्रशासक हैं, न राजनेता जिसे ऐसी शताब्दी से कुछ मिलता हो। नायडू साब अपने पहले हीरो थे और क्रिकेट में अपनी पागलों जैसी रुचि है और लिखते हैं। लेकिन यह सब तो उनकी शताब्दी के पहले समारोह (वह भी जन्म दिन के एक दिन बाद) में जाने न जाने से भी चलता रह सकता है। इसलिए क्यों फूला-फूला फिरे जगत में कैसा नाता रे।

लेकिन तब मैंने अपने को उठाया और कहा कि नायडू साब को हीरो मानने को किसने कहा था? क्रिकेट के पीछे पागल होने की क्या मजबूरी है? और राष्ट्र जीवन में महान खिलाड़ियों का भी वही सम्मान होना चाहिए जो राजनेताओं, समाजसेवकों, साहित्यकारों, संगीतकारों और वैज्ञानिकों का होता है—यह बात सबको जँचाने का कोई तुम्हारा ठेका तो नहीं है। तुमको खुद ऐसा लगता है इसलिए साल-भर से लगे हो।

हम सब खुशी-खुशी, राजी-मर्जी या मजबूरी में वह सब करते हैं जो दुनिया करवाती है या दुनिया में जैसे हैं या उससे बेहतर होने के लिए करते हैं। फिर जिसमें अपनी धुन लग जाए ऐसा काम सेहत बल्कि जीवन को दाँव पर लगाकर भी करना पड़े तो क्यों नहीं करना? आखिर कुछ तो हो जीवन में जिसे हम स्वेच्छा से जिएँ और करें और सन्तोष पाएँ कि हमने ऐसा किया जिसे न करने की मजबूरी थी न जिसमें लाभ-हानि और दुनियादारी में पाने-खाने का मतलब था। बल्कि हमने ऐसा कुछ किया कि अपने होने और जीते रहने को अर्थ मिला। यह अर्थ हम खुद तय करते हैं। कोई दूसरा हमारे लिए तय नहीं करता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसलिए प्रभाष भाई उठो, और सेहत की चिन्ता छोड़कर चल दो, जहाँ होने से तुमको होने का अर्थ मिले। मैं हवाई अड्डे पहुँचा, उड़ान थोड़ी ही लेट थी। पर इन्दौर तो समय के कुछ पहले ही उतर गई। वहाँ भी कहने वाले ऐसे दोस्त और भाई तो मिल ही गए कि जब सब (बड़े) लोग नहीं आए तो आपको क्या अड़ी थी? देखो भाई अपन बुद्धू हैं। और बुद्धुओं से बहस का क्या मतलब? इसलिए छोड़ दो और कुछ और बात करो। धनतेरस पर क्या खरीदी की? बर्तन महँगे हैं या सस्ते?

यह वही शहर है जहाँ अपन ने पहली बार नायडू साब के बारे में सुना। सीके वे जिनने विलायत में इतना ऊँचा और लम्बा छक्का मारा कि मैदान के बाहर क्लॉक टॉवर पर लगी घड़ी का काँच टूट गया। नायडू वे जिनने इंग्लैंड की टीम के धुआँधार बल्लेबाज गॉय अर्ली के आठ छक्कों के जवाब में तेरह छक्के चौदह चौके मारकर सिर्फ 116 मिनट में 153 रन ठोंक दिए। अंग्रेजों के खेल में, विलायत से आई अंग्रेजों की ही टीम के ऐसे धुर्रे बिखेर कर नायडू ने बता दिया कि हिन्दुस्तानी उनसे सवाये हैं, उन्नीसे नहीं।

सुना कि नायडू साब खूब लम्बे हैं। रंग से काले हैं। नाक गरुड़ की चोंच जैसी है। शरीर में इतनी ताकत है कि गेंद को मारते हैं तो जैसे गरुड़ आकाश में ऊपर से ऊपर उड़ता चला जाता है वैसे ही गेंद थिग जाती है। फील्डर को दिखती ही नहीं। नीचे गिरती है तो पकड़ में नहीं आती। हाथ-पाँव ऐसे जैसे लोहे के बने हों। वे बल्ला लेकर उतरते हैं तो मैदान में ऐसी दहशत फैल जाती है जैसे बब्बर शेर के आने पर जंगल में फैल जाती है। बम्बई में खेलने उतरते हैं तो लोग-बाग कामकाज छोड़कर मैदान में आ जमते हैं। वहाँ एक ताँगेवाला तो ऐसा दीवाना है कि बाउंड्री पर ताँगा खड़ा करके देखता रहता है।

जब ये कथा-किस्से सुनता था तब भारत आजाद भी नहीं हुआ था। जूनी इन्दौर के रावजी बाजार के हम छोटे-छोटे बच्चे घर के सामने सड़क पर बिजली के खम्भे को विकेट मानकर चिथड़ों से बनी गेंद और कपड़े धोने की मोंगरी के बल्ले से खेलते और जो खेलते उसे क्रिकेट समझते। सब बच्चे उस वक्त के नामी खिलाड़ियों के नाम पर अपने नाम रख लेते और अपने करतबों का ऐसे बखान करते जैसे वे उन्हीं खिलाड़ियों के हों। सड़क के पार गई गेंद नायडू का छक्का हो जाती और बिजली के खम्भे पर लगी गेंद से डंडे बिखर जाते।

मिडिल स्कूल में पहुँचते-पहुँचते मुझे पता चल गया था कि नायडू साब कहाँ रहते हैं। रीगल टॉकीज के बगल से बिस्को पार्क एक सड़क जाती है। उस सड़क पर उनके बँगले के पिछवाड़े का बगीचा लगता है। बँगले के आगे सड़क है जो मिल एरिया में चली जाती है। उसी के साथ-साथ रेल की पटरी है। सड़क के किनारे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बैठकर देखो तो कभी-कभी नायडू साब दिख जाते हैं। जब टाउन हाल के पास से रीगल टॉकीज तक ओवर ब्रिज बनने लगा तो मैं शिवाजीराव स्कूल से तड़ी मारकर दिन-दिन-भर रेल की पटरी के पास सड़क के किनारे बैठा रहता। सामने के बँगले में कोई भी हलचल होती या कोई बरामदे में आता तो मेरी छाती धड़कने लगती।

एक दिन एक ऊँचे पूरे, काले-तगड़े आदमी दिखाई दिए तो उन्हीं को मैंने नायडू साब समझ लिया। जब एक दिन उन्हें पास से देखा तो सारे बदन में छुरहरी-सी दौड़ गई। लगा कि आँखें धन्य हो गईं। उत्तेजना में दौड़ा-दौड़ा घर पहुँचा और दोस्तों को इकट्ठा करके सुनाने लगा कि कैसे नायडू साब दिखे और कैसे लगते हैं। टीम के उन खिलाड़ियों को नायडू साब का दिखना वैसी ही उपलब्धि लगी जैसी मुझे लगी थी। उसी दिन पकड़ा गया कि स्कूल की तड़ी मारकर नायडू साब को देखने गया था। फिर पिताजी ने क्या किया होगा यह आप जान ही सकते हैं।

सन् पचास-इक्यावन में मेरी इतनी हिम्मत होने लगी थी कि यशवन्त क्लब जाकर मैदान के बाहर से होलकर टीम को प्रैक्टिस करते देखता। उस मैदान की मेरी सबसे पहली याद यह है कि नैट के पीछे मुश्ताक, सरवटे, निंबालकर, खंडू रांगणेकर आदि बेंच पर बैठे बतियाते-खेलते रहते हैं। फिर जैसे ही नायडू साब यशवन्त क्लब की तरफ से आते दिखते हैं तो सब बतियाना भूल जाते हैं। एकदम खेलने में ध्यान लगा लेते हैं। नायडू साब जंगल के राजा शेर की-सी चाल चलते नेट के पास पहुँचते तब तक ऐसा लगने लगता जैसे प्रैक्टिस नहीं मैच चल रहा हो।

आधे लोग मैदान का चक्कर लगाने लगते। सब उठ-उठकर या रुककर नायडू साब को गुड ऑफ्टरनून सर कहते। नायडू किसी को डाँटते, किसी को कुछ बताते, कुछ देर बालिंग करते, फिर बैटिंग करते। लम्बे-लम्बे, ऊँचे-ऊँचे छक्के पे छक्के पड़ते। शाम के डूबते सूरज की रोशनी में गेंद चमकती दिखती। पिच पर जूट या क्वायर की मैटिंग बिछी होती। विकेट के तीन तरफ लगी नैट से गेंद चिपककर लिपट जाती। फिर शाम हो जाती तो लोग नायडू साब को गुडनाइट सर कहकर आदर से सर झुकाते और जैसे चुपचाप खिसक जाते। मेरे मन में इस सबसे नायडू साब का खौफ और बैठ जाता।

लेकिन घर लौटते वक्त मैं पूछता कि शाम होते हुए तो ये लोग गुड ऑफ्टरनून करते हैं और रात होने के पहले ही गुडनाइट कर जाते हैं। लेकिन मेरी हिम्मत नहीं होती कि पिताजी से घर में या स्कूल में अंग्रेजी के मास्टर साब से पूछता कि ऐसा गलत क्यों बोला जाता है। सीके नायडू के अलावा, वहाँ मुश्ताक, सरवटे, गायकवाड़, निंबालकर, भाया, रांगणेकर, निवसरकर आदि भी होते और सभी मुझे देवता जैसे लगते। यशवन्त क्लब मुझे देवलोक लगता और वहाँ अन्दर जाने की हिम्मत नहीं होती। क्लब के बाहर टेनिस कोर्ट थे और उनके बाद क्रिकेट का मैदान जहाँ मैच

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होते तो चारों तरफ तम्बू लगते। एक तम्बू महाराजा होलकर का होता जिसमें वे अपनी गोरी महारानी के साथ बैठते।

तब कॉमनवेल्थ की टीमें आतीं और रणजी ट्रॉफी के भी मैच होते। पिताजी से टिकट के पैसे तो माँग नहीं सकते थे इसलिए चोरी-छुपे और बिना टिकट के तारों के बीच से घुसते। कभी-कभी टीमों के तम्बुओं तक पहुँच जाते और भगा दिए जाते। एक कॉमनवेल्थ की टीम में ब्रायन स्टेथम आए थे। तब वे उन्नीसेक बरस के रहे होंगे। लंच या टी में सीके साब महाराजा के तम्बू में आए थे। शायद महाराजा ने सिक्सर के लिए कहा था और सीके ने कहा था नया बॉल लेने दो। नई गेंद लेकर स्टेथम तेज गोलंदाजी करने आए और सीके साब ने छक्का मारा। गेंद होलकर महाराज के खाकी तम्बू पर गिरी।

एक कामनवेल्थ के कप्तान फ्रेंक वॉरल थे। उनकी तब बड़ी ख्याति थी। उनकी चाल-ढाल में भी सीके जैसी शाही अदा थी। मैच के दौरान एक बार लंच में हम घुस आए थे और बचते-करते कॉमनवेल्थ के तम्बू के पास पहुँच गए थे। वहाँ होलकर टीम के खिलाड़ी मेहमान खिलाड़ियों से बात करते सिगरेट पीते जाते थे। तभी सीके साब भी वहाँ मिलने चले आए। होलकर टीम के खिलाड़ी न सिर्फ खड़े हो गए बल्कि अपनी सिगरेट उनने अपनी-अपनी काउंटी कैपों के पीछे छुपा लीं। मैंने देखा कि बारेल भी खड़े हो गए हैं और उनने भी अपने एक हाथ की सिगरेट पर दूसरे हाथ से अपनी कैप रख ली है। लेकिन सीके साब तो अपनी मोटी सिगार शान से पी रहे हैं। उस दिन मेरे बाल-मन में बैठ गया कि सीके साब से दुनिया-भर के खिलाड़ी डरते हैं और उनका सम्मान करते हैं।

सीके साब को देखते, सुनते और उनका खौफ खाते मैं बड़ा हो गया। धीरे-धीरे मैंने पढ़ा और पाया कि सीके साब लीजंड हैं। दन्तकथा हैं। लेकिन उनके रेकार्ड उनकी ख्याति और दबदबे से अलग हैं। सन् बत्तीस और छत्तीस के उनके इंग्लैंड के दौरों की जानकारी भी मैंने पाई और सोचकर फूला नहीं समाया कि वे भारत के पहले टैस्ट के कप्तान रह चुके हैं। यह भी कि तब वे सैंतीस बरस के हो चुके थे और इंग्लैंड के दूसरे दौरे पर इकतालीस बरस के। उनके कड़े अनुशासन और नो नानसेंस और साहबी तौर-तरीकों को भी समझ चुका था।

लेकिन उनसे बात करने और उनकी शाबासी पाने का एक छोटा-सा अवसर मुझे नई दुनिया में आने के बाद मिला और वह मेरी स्मृति में खुदा है। इन्दौर में यूनिवर्सिटी के पश्चिमी क्षेत्र के मैच हो रहे थे। बम्बई की टीम में अशोक मनकड थे। उनने लम्बी पारी खेली थी। शायद सेंचुरी बनाई थी। सीके साब जिमखाना मैदान पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सफेद पतरें के साइट स्क्रीन के पास अपनी गाड़ी पार्क करते और सिगार पीते हुए गोल्फ की कुर्सीनुमा छड़ी पर टिके रहते। कोई कुछ गलत करता तो वहीं से चिल्लाते।

अशोक मनकड के आउट होने के बाद लंच या टी टाइम हुआ। मैंने डरते-डरते सीके साब से कहा—अगर दो गली लगा दी जाती तो अशोक कब का आउट हो जाता। वह हर बाल कट करता तो गेंद उड़कर गली के रीजन में गिरती। अच्छा ! सीके ने लाल आँखों से मेरी तरफ देखा। 'सर, आपने इसी तरह अशोक के पिता वीनू को आउट करवाया था—गली में जब वे और जस्सू पटेल खेले जा रहे थे।' सीके ने अंग्रेजी में कहा—"ऐसा लगता है कि तुमने कुछ क्रिकेट देखा है।" सन् 50-51 के सीजन का रणजी फाइनल इन्दौर में हुआ था और होलकर ने जीता था और उसी में वीनू मनकड और जस्सू पटेल की जोड़ी आखिर तक खेली थी। वह मैच मुझे आज भी याद है।

उसी जिमखाना मैदान के पास अब नेहरू स्टेडियम है और उसके बाहर गलत बनी सीके नायडू की लेट कट मारती प्रतिमा लगी है। इस प्रतिमा के पीछे ही नायडू शताब्दी की शुरुआत हुई। मुख्य अतिथि थे मध्यप्रदेश के उच्च शिक्षा और खेल मन्त्री मुकेश नायक। लोग तो थे ढाई-तीन सौ जिनमें मुश्ताक, सरवटे, सीएस नायडू और हीरालाल गायकवाड़ भी जिनका सम्मान किया गया। नायक चाहते थे कि प्रतिमा को पहले हार मैं पहनाऊँ। लेकिन हमने उन्हीं से यह माल्यार्पण करवाया। कोई बड़ा और भव्य कार्यक्रम नहीं था लेकिन भावना और लगाव से भरपूर था। जिनके कारण अपने को खेलों का शौक लगा और जो आज भी अपने महानायक हैं उनकी शताब्दी की शुरुआत हुई तो लगा जैसे अपना छोड़ा संकल्प पूरा हो रहा हो। सीके नायडू भारतीय खेल जीवन के पहले महानायक और इतिहासपुरुष हैं। अपने पूर्वज हैं। अपने गौरव हैं। उनकी शताब्दी मनना और अपना उसमें शामिल होना अपने होने का अर्थ देता है। क्या ऐसे अर्थ के लिए दौड़धूप नहीं करनी चाहिए? आप भी अपने अर्थ को ऐसे तलाशिए फिर देखिए कैसा सन्तोष होता है।

(6.1.94)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिगरेट और शराब का खेल

सिर्फ दिल्ली के दो डॉक्टरों ने आवाज उठाई। डॉक्टर चोपड़ा हार्ट केयर फाउंडेशन के अध्यक्ष हैं और डॉक्टर अग्रवाल उपाध्यक्ष। दोनों लोगों के दिल की देखभाल में लगे डॉक्टर हैं इसलिए उनका मन दुखा और चीख निकली कि बोर्ड ने केवल चालीस करोड़ में देश के स्वास्थ्य को बेच दिया। डॉक्टरों और वह भी हृदय का प्रतिष्ठान चलाने वाले डॉक्टरों से ऐसी सख्त भाषा की अपेक्षा नहीं रहती। लेकिन अगर आप उनका दर्द समझ लें तो मान जाएँगे कि वे ठीक ही बोले हैं।

जिस बोर्ड को इन डॉक्टरों ने कोसा है वह है अपना क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड। ज्यादा से ज्यादा पैसा कमाने के लालच में देश का और कोई भी संगठन बोर्ड से होड़ नहीं कर सकता। वैसे पैसा भी इस देश में सिर्फ क्रिकेट में है और बोर्ड खेल, खिलाड़ी और किसी का भी आखिरी बूँद तक दोहन करने में नहीं हिचकता। कई किस्से हैं और कई उदाहरण। लेकिन फिलहाल उन्हें छोड़ें।

आप कहेंगे कि क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड देश के स्वास्थ्य को चालीस करोड़ रुपयों में कैसे बेच सकता है ? तो बात यह है कि सन् छियानवे की शुरुआत में अपने इस क्रिकेट-पागल उपमहाद्वीप में विश्व कप होना है। विश्व कप का आयोजन अक्सर उस देश को मिलता है जिसने पिछला कप जीता हो। पहला यानी सन् पचहत्तर को और दूसरा यानी उनासी का विश्व कप वेस्टइंडीज़ ने जीता था। लेकिन वेस्टइंडीज जैसा कि आप जानते हैं छोटे-छोटे द्वीप देशों के समूह का नाम है और वे विश्व कप जैसा आयोजन नहीं कर सकते। इस कारण हो या इंग्लैंड के क्रिकेट का मातृदेश होने के कारण—तीसरा विश्व कप भी सन् तिरासी में इंग्लैंड में हुआ।

अपने को और सारी दुनिया को चकित करते हुए भारत ने यह विश्व कप जीत लिया और फिर अपने यहाँ इसके आयोजन का दावा किया। अन्तर्राष्ट्रीय क्रिकेट कान्फरेंस ने दावा मान लिया और भारत की एक बड़ी कम्पनी रिलायंस ने कप भी दिया और आयोजन का खर्च भी। पाकिस्तान ने अपने सारे मैच अपने ही मैदानों पर खेले। लेकिन अगर वह फाइनल में आता तो उसे कलकत्ता खेलने आना पड़ता। किस्मत देखिए कि भारत और पाकिस्तान दोनों ही सेमी फाइनल में हार गए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलकत्ता का फाइनल आस्ट्रेलिया और इंग्लैंड में हुआ और आस्ट्रेलिया ने यह विश्व कप जीता।

अब बानवे के विश्व कप का आयोजन आस्ट्रेलिया को मिला। भारत की तरह उसने भी अपने पड़ोसी और प्रतिद्वन्द्वी न्यूजीलैंड को साथ लिया। लेकिन कप दिया और आयोजन किया बेन्सन एंड हेजेस नाम की बहुराष्ट्रीय कम्पनी ने जो सिगरेट बनाती है। इस विश्व कप में भी न्यूजीलैंड ने अपने सारे मैच अपने ही मैदानों पर खेले। लेकिन वह भी अगर फाइनल में पहुँचता तो उसे मेलबर्न, आस्ट्रेलिया खेलने आना पड़ता। आस्ट्रेलिया तो पहले ही बाहर हो गया लेकिन न्यूजीलैंड ने सेमी फाइनल ऑकलैंड में पाकिस्तान से खेला और हार गया। फाइनल जैसा कि आपको याद है मेलबर्न में हुआ जिसमें पाकिस्तान ने इंग्लैंड को पीटकर विश्व-विजेता होने का सपना पूरा किया।

अब चूँकि विश्व कप पाकिस्तान ने जीता इसलिए उसे सन् छियानवे के विश्व कप का आयोजन मिल सकता था। लेकिन पाकिस्तान छोटा देश है। इतने मैदान और इतने साधन उसके पास नहीं हैं इसलिए भारत, पाकिस्तान और श्रीलंका ने मिलकर विश्व कप आयोजित करने का फैसला किया। क्रिकेट कान्फरेंस ने इसे मान लिया। तीनों देशों के बोर्डों और अन्तर्राष्ट्रीय क्रिकेट कान्फरेंस ने एक संयुक्त समिति बनाई है। इसके अध्यक्ष माधवराव सिन्धिया हैं जो पहले बोर्ड के अध्यक्ष रह चुके हैं। पाँच नवम्बर की रात जब कलकत्ता में विल्स कप फाइनल हो रहा था तब इस समिति की बैठक हुई जिसमें कप देने और प्रायोजन करने के लिए आईटीसी का दावा मान लिया गया।

आईटीसी यानी इंडियन टोबेको कम्पनी। सिगरेट बनाने वाली इस कम्पनी ने पाँच नवम्बर को कलकत्ता से सम्पन्न हुआ तीन देशों का टूर्नामेंट भी आयोजित किया था जो विल्स ट्रॉफी के नाम से जाना गया और जिसे भारत ने जीता। शायद इस प्रायोजन और इसकी ट्रॉफी से खुश और सन्तुष्ट होकर विश्व कप आयोजन समिति ने सन् छियानवे के विश्व कप को विल्स कप कहने और प्रायोजन आईटीसी को सौंपने का फैसला किया। विल्स सिगरेट बनाने वाली आईटीसी कम्पनी इसके लिए बोर्ड को आठ मिलियन पाउंड यानी आज की दर पर कोई चालीस करोड़ रुपया देगी।

डॉक्टर चोपड़ा और डॉक्टर अग्रवाल ने जिन चालीस करोड़ रुपयों में इस देश के स्वास्थ्य को बेच देने का आरोप लगाया है, वे यही चालीस करोड़ हैं जो आईटीसी बोर्ड को प्रायोजक के रूप में देगी। अब अगर इस जनहित डॉक्टरों का दर्द समझना हो तो खातिरजमा रखिए कि दुनिया में लोगों को मारने वाली कोई चीज नम्बर एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
पर है तो तम्बाकू। दूसरे नम्बर पर है शराब ! इसीलिए दुनिया-भर में तम्बाकू के खिलाफ मुहिम चल रही है। अमेरिका जैसे देश में सार्वजनिक धूम्रपान करना तक मुश्किल है। हर सभ्य और जिम्मेदार देश ने सिगरेट के पैकेट पर—धूम्रपान आपके स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है—छापना अनिवार्य कर रखा है।

सिगरेट पीने से कई रोग होते हैं जिनमें कैंसर और हृदय रोग सबसे बड़े हैं। जिन देशों को अपने लोगों के स्वास्थ्य की चिन्ता है वे सिगरेट पीने को कम-से-कम करवा रहे हैं। सार्वजनिक स्थानों पर धूम्रपान या तो कानूनन मना है या जनमत इतना जागृत है कि आप छुपकर भी पिएँ तो लोग पीछे पड़ जाते हैं। इंडियन एयरलाइंस के विमानों में धूम्रपान नहीं किया जा सकता और टीवी पर तो तम्बाकू के खिलाफ रोज विज्ञापन आते हैं। डॉक्टर चोपड़ा और डॉक्टर अग्रवाल मानते हैं कि विश्व कप विल्स कप कहलाएगा और उसके जरिए टीवी, रेडियो, अखबारों आदि में विल्स नामक सिगरेट की धूम होगी तो तम्बाकू सेवन का चलन बढ़ेगा और देश का स्वास्थ्य बिगड़ेगा।

इन्हीं सब दलीलों को समझकर और उनकी सचाई मानकर आस्ट्रेलिया ने तो कानून ही बना लिया है कि कोई भी तम्बाकू कम्पनी उस देश में कोई भी खेल प्रायोजित नहीं कर सकती। लेकिन सन् बानवे का जो विश्व कप वहाँ हो रहा था उसका प्रायोजन बेन्सन एंड हेजेस कम्पनी कर रही थी जो सिगरेट बनाती है। तो अब क्या किया जाए? आस्ट्रेलिया की सरकार पर वहाँ के बोर्ड, पर्यटन विभाग, उद्योग धन्धे और टीवी कम्पनियों का इतना दवाव आया कि सरकार सोच में पड़ गई। उसे कहा गया कि यह बड़ा प्रतिष्ठापूर्ण आयोजन है। इससे मन्दी की मारी आस्ट्रेलिया की अर्थव्यवस्था को नई जान मिल सकती है। ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय आयोजन को सिर्फ इसलिए रोक नहीं देना चाहिए कि इसकी प्रायोजक एक तम्बाकू कम्पनी है।

आस्ट्रेलिया में लोक स्वास्थ्य, पर्यावरण और प्रकृति के सन्तुलन की ऐसी जागरूकता है कि अपने सरीखे भारतीय तो चकित रह जाएँ। आस्ट्रेलिया अपने आपमें एक महाद्वीप है और भारत की तरह वहाँ रेगिस्तान भी है और बर्फ से ढँकी चोटियाँ भी। और जनसंख्या कुल उतनी है जितनी आबादी हम एक साल में बढ़ा लेते हैं। लेकिन लोकस्वास्थ्य के प्रति इतने जागरूक और चिन्तित देश ने यह नहीं कहा कि नहीं ऐसा विश्व कप नहीं होगा जिसका प्रायोजन तम्बाकू कम्पनी कर रही है। सरकार ने यह भी नहीं कहा कि आयोजन का सारा खर्च हम दे देंगे या फल का रस बेचने वाली किसी कम्पनी से प्रायोजन करवा देंगे लेकिन कानून तो रहेगा। आस्ट्रेलिया की लोकतान्त्रिक ढंग से चुनी गई संसद ने सत्र बुलाकर विश्व कप के प्रायोजन का अधिकार बेन्सन एंड हेजेस कम्पनी के पास रहने दिया। एक अपवाद करने की कानूनी व्यवस्था कर दी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यापार-व्यवसाय के निहित स्वार्थ इतने ताकतवर है कि खेल संगठन ही नहीं सरकारें भी उनके सामने झुक जाती हैं और झुकने वाली सरकारों को वही लोग वोट दे देते हैं जिनने उससे कानून बनवाए।

अब आस्ट्रेलिया जैसा देश बेन्सन एंड हेजेस कम्पनी के कारण अपने कानून में अपवाद कर सकता है तो भारत जैसा देश क्या नहीं कर सकता? अपने यहाँ तो कोई कानून नहीं है कि कोई तम्बाकू कम्पनी किसी खेल को प्रायोजित नहीं कर सकती। फिर देश का भला चाहने वाले सभी समर्थ लोग आजकल उदारीकरण के नए मन्त्र का जाप कर रहे हैं। खुले बाजार की अर्थव्यवस्था हमें सम्पन्नता और विपुलता के स्वर्ग में जीते जी ले जाएगी ऐसा समझाया जा रहा है। अप्रवासी भारतीयों को ही नहीं तमाम विदेशी कम्पनियों को छूट और सुविधाएँ दी जा रही हैं कि वे यहाँ आएँ, पैसा लगाएँ और अपना धन्धा करें। उनके लिए लाल जाजम पर पलक पाँवड़े बिछा दिए गए हैं।

जहाँ ऐसा अन्धाधुन्ध और अनाप-शनाप उदारीकरण चल रहा हो वहाँ यह कोई अचरज की बात नहीं है कि विश्व कप का आयोजन इंडियन टोबेको कम्पनी को चालीस करोड़ में दे दिया जाए। यह कम्पनी पहले इम्पीरियल टोबेको कम्पनी कहलाती थी। बहुराष्ट्रीय कम्पनी है और इसके मालिक लोग अंग्रेज हैं। भारतीय कम्पनी भारतीय लोग देखते होंगे। ऐसी कम्पनी को भला बोर्ड वाले ना क्यों और कैसे करते जबकि वह आठ मिलियन पाउंड यानी चालीस करोड़ रुपया देने को तैयार है। बोर्ड ने क्रिकेट दिखाने का पाँच साल का ठेका एक अमेरिकन टीवी कम्पनी को दे दिया जिसके पास न चैनल है, न विशेषज्ञता। लेकिन उसने दो करोड़ दिए और बोर्ड ने न अपने दूरदर्शन की चिन्ता की, न यहाँ के कानूनों की।

फिर आईटीसी अभी इस महीने न्यूजीलैंड, वेस्टइंडीज और भारत की वन डे सीरीज विल्स ट्रॉफी के लिए प्रायोजित कर चुकी है। इसके पहले चारमीनार सिगरेट बनाने वाली कम्पनी रणजी ट्रॉफी प्रायोजित कर चुकी है। और अगले हफ्ते से भारत-वेस्टइंडीज के बीच जो तीन टैस्ट खेले जाएँगे वे डायरेक्टर्स स्पेशल सीरीज कहलाएँगे जो कि एक शराब का नाम है। भारत में शराब का विज्ञापन नहीं किया जा सकता लेकिन क्रिकेट के जरिए बहुत मजे में हो रहा है। यानी लोगों को मारने वाली दोनों बड़ी चीजें तम्बाकू और शराब का प्रसार-प्रचार खेलों के जरिए शान से हो रहा है और सिवाय दो डॉक्टरों के कोई इसका विरोध नहीं करता।

सिगरेट कम्पनियों को खेलों के प्रायोजन से इसलिए अलग रखने का विचार आया कि धूम्रपान लोगों को खेलने के लायक नहीं बनाता बल्कि खेल आदमी को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
जो सेहत दे सकते हैं उसी को नष्ट करता है। इसलिए खेलों के जरिए ही धूम्रपान को प्रचार-प्रसार और बढ़ावा देने की इजाजत नहीं होनी चाहिए।

एक हाथ से तो तम्बाकू कम्पनियाँ खेलों को प्रोत्साहन देने और खिलाड़ियों को समृद्ध और सुरक्षित जीवन जीने के लिए करोड़ों रुपया देती हैं और दूसरे हाथ से वह पैसा बटोरती हैं जो लोग सेहत को बरबाद करने वाले धूम्रपान पर खर्च करते हैं। यानी खेलों में ये कम्पनियाँ जो पैसा लगाती हैं वह लोगों की सेहत बिगाड़कर ही कमाया हुआ है। कमाए गए रुपए में से दस पैसे खेल में लगा भी दिए तो इसलिए नहीं कि खेलों को बढ़ावा देना और उनसे लोगों का स्वास्थ्य सुधारना उनका धर्म है और इसके जरिए उद्योग अपनी सामाजिक जिम्मेदारी पूरी करते हैं बल्कि इसलिए कि खेलों के जरिए वे इहलोक और परलोक दोनों को साध सकते हैं।

परलोक इस तरह कि तम्बाकू बेचकर जो वे सबसे मारक वस्तु बेच रहे हैं तो मनुष्यता और भगवान के सामने पाप ही कर रहे हैं। शराब बनाने-बेचने वाले भी इस पाप या अपराधबोध से मुक्त नहीं हैं। इस पाप से कैसे मुक्त हुआ जाए ? तो अपने यहाँ कहावत है कि दिनभर ब्याज के जरिए साहूकार आदमी का खून चूसे और शाम को मन्दिर जाकर भगवान से माफी माँगे, उसे पैसा और प्रसाद चढ़ाए तो उसका पाप उतर जाता है। वैसे ही ये कम्पनियाँ अपनी कमाई बल्कि लाभ का कुछ पैसा खेलों में लगा देती हैं ताकि कुछ लोगों की सेहत अच्छी हो और उससे उस पाप की भरपाई हो जाए जो तम्बाकू और शराब से लोगों का स्वास्थ्य बिगाड़ने से इन पर आता है।

इहलोक इस तरह सुधरता है कि कम्पनियाँ खेलों में जो पैसा लगाती हैं वह दरअसल एक तरह का पूँजी-निवेश है। और इस पैसा लगाने से आय सिर्फ पुण्य या सामाजिक जिम्मेदारी या कीर्ति के रूप में ही नहीं होती। शुद्ध लाभ के नाते भी लाभ होता है क्योंकि खेलों के प्रायोजन से जो प्रचार-प्रसार मिलता है उससे सिगरेट या शराब की बिक्री बढ़ती है और जितनी बिक्री बढ़ती है उतना ही लाभ भी होता है।

अब जो लोग बड़ी कम्पनियाँ चलाते हैं या उनमें काम करते हैं वे जानते हैं कि बिक्री जमाने और बढ़ाने के लिए अपने उत्पादों का धुआँधार और कारगर प्रचार करना होता है। टीवी, अखबार और प्रचार के सभी माध्यमों का इस्तेमाल किया जाता है। इस विज्ञापन-मुहिम में काफी पैसा खर्च करना पड़ता है जो दरअसल पैसा लगाना माना जाता है क्योंकि उससे आमदनी बढ़ती है। इस तरह देखें तो खेलों का प्रायोजन भी इन कम्पनियों की मार्केटिंग स्ट्रेटेजी यानी बाजार में बिक्री बढ़ाने की रणनीति की योजना है।

खेलों के संगठनों और खिलाड़ियों को पैसा चाहिए जो सिर्फ टिकट लगाकर खेल दिखाने से नहीं मिल सकता। खेल चलते रहें इसलिए उसमें बड़े पैमाने पर पैसा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आना चाहिए क्योंकि आजकल बड़े आयोजनों में खर्च बहुत होता है और बड़े खिलाड़ी पैसा भी बहुत माँगते हैं। यह पैसा प्रायोजक और टीवी कम्पनियाँ दे सकती हैं। प्रायोजक अपनी बिक्री से दिया हुआ पैसा वसूल करता है और टीवी कम्पनियाँ विज्ञापनों से। थोड़ी बहुत आमदनी टिकट की बिक्री से भी होती है। पैसा आयोजन पर खर्च होता है, खिलाड़ियों में बँटता है और बाकी का संगठनों के बैंक खाते में जमा होता है। इस तरह खेलों का आयोजन बड़े व्यापार से हाथ मिला कर फायदे का धन्धा हो जाता है। इस धन्धे को संगठन और आयोजक बिलकुल ठीक मानते हैं क्योंकि आमदनी वापस खेल में ही तो लगती है।

अब जब तक खेल खेल रहें और उनसे स्वस्थ होड़ बढ़े, सेहत बने और लोगों का मनोरंजन हो तब तक प्रायोजन में कोई खराबी नहीं देखी जा सकती। लेकिन विश्व स्वास्थ्य संगठन ने ही कहा है कि लोगों को मारने वाली नम्बर एक चीज तम्बाकू और नम्बर दो शराब है। खेलों के जिन प्रायोजनों से इन दोनों का चलन और इनकी बिक्री बढ़ती है वे कुल मिलाकर लोगों को लत में डाल कर मारते ही हैं। इसलिए इन्हें कोई कैसे उचित ठहराएगा? फिर हमने यह भी देखा है कि प्रायोजक और टीवी कम्पनियाँ लगातार कोशिश करती हैं कि खेल दर्शनीय हो ताकि ज्यादा से ज्यादा लोग देखें और खूब विज्ञापन मिलें। दर्शनीयता बढ़ाने के लिए जिस तरह फिल्मों में एक्शन, हिंसा, बलात्कार आदि डाले जाते हैं वैसे ही खेलों में एक्शन, रोमांच और सनसनी बढ़ाई जा रही है। इससे खेल, खेल नहीं विज्ञापन के तरीके हो गए हैं। ऐसे खेल स्वस्थ होड़ और मनोरंजन नहीं करते।

मैं अपनी आवाज डॉक्टर चोपड़ा और डॉक्टर अग्रवाल की विरोधी आवाज में मिला रहा हूँ। हालाँकि मैंने भी कोई पच्चीस साल सिगरेट पीकर छोड़ी है। लेकिन हर सन्त का अतीत और हर पापी का भविष्य होता है। मेरा नहीं होगा क्या?

(13.11.94)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सफलता भी कैसी विडम्बना है

इस बार नहीं बताऊँगा कि पिछली बार कागद क्यों कारे नहीं किए। लेकिन रविवार को दिल्ली ही नहीं चंडीगढ़, कलकत्ता, बम्बई और जाने कितनी जगहों से भाई लोगों ने फोन करके पूछा कि क्या हो गया। उनकी चिन्ता और सरोकार ने मन को ऐसे छुआ कि एक बार तो आँखें-भर आई। पढ़ने वालों का जब इतना लगाव है तो मुझे न लिखने का क्या अधिकार है? वैसे लगे हाथ यह भी बता दूँ कि कुछ दिन बाद दफ्तर लौटा तो चिट्ठी से पता चला कि एक संघी भाई ने भी कॉलम को मिस किया हालाँकि मेरी गौरव-गाथा न होने से उन्हें बड़ी राहत मिली। उनके लिए भी मन में आभार उमगा।

दो साल तैंतीस हफ्तों में कुल चार बार यह कॉलम नहीं लिखा गया। इन पौने तीन वर्षों में कितने लोगों ने कैसी-कैसी चिट्ठियाँ लिखीं। एक का भी जवाब मैंने नहीं दिया। दे ही नहीं सकता था। कई के जवाब में तो एक पूरा कागद कोरा ही लिखना पड़ता। कुछ के जवाब इतने निजी होते कि पता नहीं उनसे कैसी गलतफहमियाँ होतीं। लेकिन ऐसा नहीं है कि समय या इच्छा के अभाव में जवाब नहीं दिए गए हों। मेरे मन में जमा हुआ है कि चिट्ठी-पत्री करना एक तरह की औपचारिकता निभाना है। मैं खुद अगर कुछ पढ़कर किसी को चिट्ठी लिखूँ तो उसके जवाब की उम्मीद नहीं रखूँगा। सच कहता हूँ। इसलिए सब चिट्ठियाँ हजम कर जाने के बाद भी जो कागद कारे पढ़ते हैं और पढ़कर फिर लिखते हैं, उनसे मैं कृतज्ञता में पानी-पानी हूँ। उनके कारण मेरा कागज कारे करना ही अकारथ नहीं गया। कभी कुछ करने लायक हुआ तो उनका ऋण उतारने की कोशिश करूँगा। तब तक अहसान सर माथे पर।

इस बार मन को आपके सामने जाजम की तरह खोलकर बिछाने के बजाय कुछ और बात करता हूँ। लेकिन यह टालने के लिए नहीं है। मैं सचमुच इस विडम्बना से चकित हूँ कि कैसे सफलता किसी के गुण-अवगुण या उपलब्धि की सही कसौटी नहीं होती। अब अपने अजहर मियाँ को लीजिए। वे भारतीय टैस्ट क्रिकेट इतिहास के सबसे सफल कप्तान हो गए हैं। भारत सन् बत्तीस से टैस्ट खेल रहा है। इन बासठ सालों में कोई पच्चीस खिलाड़ियों ने उसकी कप्तानी की। हेमू अधिकारी,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
पंकज राय, चन्दू बोर्डे और रवि शास्त्री जैसों को यह गौरव सिर्फ एक बार मिला। कपिल को चौंतीस बार, मंसूर अली खान पटौदी को चालीस बार और अब तक सबसे ज्यादा—सैंतालीस टैस्टों में कप्तानी की है—सुनील गावसकर ने।

भारतीय क्रिकेट के इतिहासपुरुष और पहले टैस्ट कप्तान कर्नल सीके नायडू को तो कुल चार टैस्टों में कप्तानी मिली। पहले टैस्ट में पच्चीस जून बत्तीस को जब वे लार्ड्स के मैदान में टीम लेकर उतरे तो कप्तान सिर्फ मैदान पर थे। उस पहले दौरे पर गई टीम के कप्तान एक राजा थे। उपकप्तान भी राजा। लेकिन दोनों को लगा कि हम खिलाड़ी के नाते न तो टीम में आ सकते हैं, न कप्तानी कर सकते हैं, इसलिए योग्य व्यक्ति को कमान सौंपकर अलग हो गए। अगले साल इंग्लैंड की टीम भारत आई तो उसके खिलाफ भी सीके ने कप्तानी की। लेकिन फिर राजा-महाराजाओं और अंग्रेज शासकों ने मिलकर उन्हें हटाया तो वे कभी कप्तान नहीं हो सके। सन् छत्तीस में इंग्लैंड गई टीम के कप्तान थे महाराजकुमार ऑफ विजयानगरम, जो किसी क्लब की टीम में खेलने लायक भी नहीं थे।

सीके ने कुल चार टैस्टों में कप्तानी की, एक ड्रा हुआ और तीन हारे। वह ऐसा जमाना था जिसमें राजा-महाराजा और अंग्रेज कप्तान की न सुनने के लिए खिलाड़ियों को इनाम देते थे। वह तो अंग्रेजी प्रेस और वहाँ के लोकमत का दबाव नहीं होता तो सीके भारत के प्रथम कप्तान हो ही नहीं सकते थे। चार साल बाद वे अपमानित करके टीम से निकाले गए। उसके बाद उनकी कप्तानी होलकर टीम में ही देखने को मिली। जो उनके साथ और खिलाफ खेले और जिनने उन्हें कप्तानी करते देखा वे बेहिचक कहते हैं कि सीके जैसा असरदार, रणनीतिकार, काइयाँ और रौबदार कप्तान कोई और नहीं हुआ। वैसे सीके खेले तो पैंसठ की उमर तक लेकिन उन्हें देखने वाले अब बचे कितने हैं ? यह सीके की शताब्दी का वर्ष है।

सिर्फ आँकड़े देखें तो सीके तो बहुत विफल कप्तान माने जाएँगे। लेकिन वे जन्मजात खिलाड़ी और खेल में नेतृत्व करने वाले पहाड़-पुरुष थे। सामने वाले के गुण-अवगुण तत्काल पकड़ते थे और टीम के हित में उनका इस्तेमाल कैसे किया जाए यह जैसे अपने-आप जानते थे। मैदान में उनकी उपस्थिति ही ऐसी होती कि कोई उसके असर से बच नहीं सकता था। वेस्टइंडीज को पहली बार एक टीम और महाबली बनाने वाले सर फ्रेंक वारेल भी सीके से सम्मान में झुककर बात करते थे।

लेकिन सीके अनुशासन के इतने पक्के और खेल में इतने सख्त थे कि पीठ-पीछे उनकी बुराई करने, उन्हें गाली बकने और उनके खिलाफ षड्यन्त्र करने वालों की भी कमी नहीं थी। शक्तिवान व्यक्तित्व वाले किसी भी आदमी से ऐसा बरताव करने वाले लोग आपको जीवन के हर क्षेत्र में मिल जाएँगे। सीके का खेल-जीवन में ऐसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
लोगों से हमेशा पाला पड़ा इसके बावजूद उनके व्यक्तित्व में हलकटपना नहीं आया। उनकी चाल-ढाल, बरताव और तौर-तरीके में गजब की गरिमा और गौरव था। वे अपने उदाहरण से नेतृत्व करते थे और जो खुद कर सकते थे उसी की अपेक्षा अपनी टीम के खिलाड़ी से करते थे। लेकिन वे स्वयं बहुत प्रतिभावान और अनुशासित व्यक्ति थे और उनके जैसा कर पाना हर किसी के बस में नहीं था। गेंद सीने या सिर पर भी लग जाए तो वे रुक कर उस जगह को सहलाते तक नहीं थे। वे मानते थे कि इससे नाहक गोलंदाज का हौंसला बढ़ता है। फील्डिंग में लगती तो उन्हें किसी ने चोट दिखाते नहीं देखा।

सीके रिटायर तो क्या हुए लेकिन जब साठ के हो गए तो वेस्टइंडीज के खिलाफ किसी टैस्ट में आकाशवाणी ने उन्हें एक्सपर्ट की तरह बुलाया। उस टैस्ट में बम्बई के मनोहर हार्डीकर खेल रहे थे। गिलख्रिस्ट की एक बीमर को उन्होंने हाथ से रोकने की कोशिश की जो उनके सिर पर लगी और वे क्रीज पर गिर पड़े। उन्हें स्ट्रेचर पर पेवेलियन लाया गया। आँखों-देखा हाल सुनाने वाले खौफनाक गिलख्रिस्ट और हार्डीकर को आई चोट की बातें करने के बाद सीके की तरफ मुड़े। सीके ने कहा—अगर वह ऐसी गेंद आपके सिर पर फेंकता है तो आपके हाथ में बल्ला किसलिए है। मारिए उस पर सीधा छक्का। जाहिर है कि सीके को हार्डीकर से कोई सहानुभूति नहीं थी। हार्डीकर की तरह खेलना उनकी किताब में नहीं।

कहने की क्या जरूरत कि ऐसा आदमी जनसम्पर्क और खिलाड़ियों को खुश करके रखने में विश्वास नहीं कर सकता। लेकिन ऐसे आदमी के लिए जान देने वाले खिलाड़ी भी थे और वे हमेशा कहते कि सीके महान कप्तान हैं। आजादी के पहले भारत का कोई महान कप्तान था तो कर्नल नायडू। आजादी के बाद तक खेले कई बड़े खिलाड़ी अब भी कहते हैं कि सीके जन्मजात कप्तान थे। वैसे क्रिकेट या खेल ही नहीं जीवन के दूसरे क्षेत्रों में भी नेतृत्व करने वालों का अध्ययन करने वाले मानते हैं कि आपमें नेतृत्व के गुण होते हैं या नहीं होते। नेतृत्व आप सीखते नहीं यह आपमें जन्मजात होता है।

मंसूर अली खान पटौदी में यह गुण था जबकि उनके पिता इफ्तिकार अली खान पटौदी में नहीं था। बड़े पटौदी पहले इंग्लैंड की तरफ से खेले और बाद में सन् छियालीस में इंग्लैंड गई भारतीय टीम की तीन टैस्टों में कप्तानी की। वे ज्यादा इंग्लैंड में ही खेले और रणजी और दलीपसिंह जी की तरह उन्होंने भी इंग्लैंड की ओर से आस्ट्रेलिया के खिलाफ अपने पहले टैस्ट में सेंचुरी बनाई। वह बदनाम बॉडीलाइन सीरीज थी और बड़े पटौदी इंग्लैंड के कप्तान जारडीन की बल्लेबाज के शरीर पर तेज गेंद करवाने की नीति के खिलाफ थे। इसे क्रिकेट खिलाड़ी की भलमनसाहत भी कह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
सकते हैं। लेकिन उनके इस रवैये से जारडीन खफा हो गए और फिर बड़े पटौदी को मौका नहीं मिला।

इसके कोई चौदह साल और लम्बी बीमारी के बाद बड़े पटौदी को गुलाम भारत की आखिरी टीम का इंग्लैंड में नेतृत्व करने का मौका मिला। वह भी इसलिए कि वे नवाब थे और अंग्रेज अब भी अपने देश में भारत की क्रिकेट टीम की कप्तानी किसी आम आदमी को नहीं दे सकते थे। बड़े पटौदी अपनी टीम के खिलाड़ियों को ठीक से जानते तक नहीं थे। वे खुद भी कोई खास बल्लेबाज नहीं रह गए थे। इसलिए टीम को ठीक से गुँथने और उसके हर खिलाड़ी को अपना सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करने के लिए प्रेरित नहीं कर सकते थे। फिर भी तीन में से दो टैस्ट उनकी कप्तानी में ड्रा हुए और एक उनने हारा। इस एक सीरीज़ के पहले और बाद बड़े पटौदी का भारतीय टीम को कोई योगदान रहा हो ऐसा कोई नहीं कहता।

लेकिन उनके बेटे मंसूर अली खान पटौदी क्रिकेट इतिहास के सबसे युवा कप्तान बने और वह भी बड़ी विचित्र और दुखद परिस्थिति में। भारत की टीम नरी कान्ट्रेक्टर की कप्तानी में वेस्टइंडीज के दौर पर गई थी सन् 62 में। वहाँ एक टैस्ट में कांट्रेक्टर के सिर में वेस्टइंडीज के तूफानी गेंदबाज ग्रिफिथ की गेंद लगी। कांट्रेक्टर की तो बस जान ही बची। ये अस्पताल में थे तब छोटे पटौदी को कप्तानी सौंपी गई। अब बड़े पटौदी की तरह छोटे पटौदी ने भी शुरू से क्रिकेट इंग्लैंड में ही खेला था। पटौदी ने पहले कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में और फिर काउंटी क्रिकेट खेला। एक मोटर दुर्घटना में उनकी आँख चली गई। सबने मान लिया कि बड़े होनहार खिलाड़ी का क्रिकेट जीवन समाप्त हो गया।

एक आँख से क्रिकेट और वह भी टैस्ट स्तर पर खेलना असम्भव माना जाता था। लेकिन पटौदी भारत में थे और इंग्लैंड की टीम डेक्सटर की कप्तानी में सन् 61-62 में आई हुई थी। पटौदी को भारतीय टीम में लिया गया। उन्हें दो गेंदें दिखती थीं उसमें से असली गेंद को उन्हें खेलना होता था। पर छोटे पटौदी न सिर्फ मज़े में खेले बल्कि मद्रास में आखिरी टैस्ट में उनने सेंचुरी भी मारी। इंग्लैंड की टीम के साथ आए एक बुजुर्ग क्रिकेट समीक्षक उन्हें इंग्लैंड से जानते थे और उन्हें मालूम था कि पटौदी की एक आँख नहीं है। एक बार उन्होंने बड़े प्यार से पूछा—बताओ, पैट तुम्हें कब लगा कि तुम सचमुच टैस्ट क्रिकेट खेल सकते हो ? पटौदी ने कहा—जब मैंने इंगलिश गोलंदाजी देखी।

इस उत्तर के बाद अंग्रेज समीक्षक तो चुप हो गए लेकिन इस व्यंग्य का निहितार्थ उसी साल भारतीय टीम पर छा गया। पटौदी वेस्टइंडीज के तूफानी गोलंदाजों को खेलते हुए कप्तान होकर भारत आ गए। छोटे पटौदी भी पिता की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
तरह भारतीय क्रिकेट और खिलाड़ियों से खूब परिचित नहीं थे और बड़ी विकट परिस्थिति में उन्होंने कप्तानी सँभाली थी। लेकिन इस भूमिका में वे एकदम फिट हो गए। और ऐसे वक्त जब भारतीय क्रिकेट पर से राजाओं-नवाबों का दबदबा बिलकुल उतर गया था। पटौदी एक आँख के बावजूद कवर के बेहतरीन फील्डर थे और बल्लेबाजी भी अच्छी कर लेते थे। लेकिन सबसे तेज उनका दिमाग चलता था। चाल-ढाल और बरताव में एक नैसर्गिक शानशौकत थी। भारतीय क्रिकेट को उन्होंने एक नया आत्मसम्मान ही नहीं दिया दूसरों के सामने एक सहज बराबरी और होड़दारी का अहसास भी दिया। रणनीति और साहसिकता में उनका नम्बर सीके के बाद आएगा।

लेकिन आजाद भारत में हमारा स्पिन आक्रमण अगर ब्रह्मास्त्र बना तो इसका श्रेय नवाब पटौदी को दिया जाना चाहिए। उन्हींने बल्लेबाज को घेरकर फील्डर खड़े करने और बेदी, प्रसन्ना, चन्द्रा और वेंकट को चढ़कर गोलंदाजी करने को कहा। इन धीमे स्पिन गोलंदाजों का खौफ वेस्टइंडीज के तूफानी गोलंदाजों से कम नहीं था। पटौदी की कप्तानी में न सिर्फ हमारी स्पिन में धार आई, बल्लेबाज को घेरकर खड़े रहने वाले फील्डर भी ऐसे तेज-चुस्त हो गए कि देखते-देखते गेंद लपक लेते। सोलकर, वाडेकर, आबिद अली और वेंकट—बल्ले के पास दुनिया के सर्वश्रेष्ठ फील्डर माने जाते थे। इस स्पिन गोलंदाजी और फील्डिंग की रणनीति भारतीय क्रिकेट को छोटे पटौदी की देन है। पटौदी ने चालीस टैस्टों में कप्तानी की, नौ में जीते, उन्नीस में हारे और बारह ड्रा हुए।

पटौदी के बाद कप्तानी में नम्बर आता है गावसकर का। दिमाग सुनील का भी बहुत चलता था। लेकिन ओपनिंग बल्लेबाज होने के कारण उनका रवैया सुरक्षात्मक था। फिर अपनी बल्लेबाजी को वे हमेशा कप्तानी से ऊपर मानते रहे। रणनीति बना सकते थे लेकिन उनके पास आक्रमण नहीं था। वे कप्तान बने तब स्पिन चौकड़ी ढल चुकी थी। एक ही गोलंदाज कपिल थे। स्पिन में दिलीप दोशी थे जो बेदी के कारण जवानी में आगे नहीं आ पाए। आक्रामक होना भी चाहते थे तो गावसकर के पास शस्त्र नहीं थे। वे महान बल्लेबाज लेकिन औसत कप्तान थे। काइयाँ बहुत थे, सामने वाले की खूबी-खराबी भी भाँप लेते थे, उनका प्रभामंडल भी था लेकिन वह करिश्मा नहीं था जो सीके और पटौदी में था। गावसकर ने सैंतालीस टैस्टों में कप्तानी की जिनमें से तीस ड्रा हुए, नौ उनने जीते और आठ में हारे। गावसकर को हारना कतई पसन्द नहीं था इसलिए सबसे ज्यादा टैस्ट उन्हीं की कप्तानी में ड्रा हुए।

सबसे बड़ा कप्तान कपिल को माना जाना चाहिए क्योंकि उनकी कप्तानी में भारत ने फटाफट क्रिकेट का विश्वकप जीता। लेकिन खुद सर्वश्रेष्ठ ऑल राउंडर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
होते हुए भी कपिल बड़े कप्तान नहीं थे। वे खिलाड़ियों के साथ बराबरी से खेलने वाले और यारबाज कप्तान थे। खुद अपने खेल से दूसरों को प्रेरित कर सकते थे। सब कुछ दाँव पर लगा सकते थे। लेकिन रणनीति बनाने, परिस्थिति को भाँपने और चमत्कारी पाँसा खेलने वाले कप्तान नहीं थे। वे चौंतीस टैस्टों में कप्तान रहे, चार जीते, सात हारे और बाईस टैस्ट उनकी कप्तानी में ड्रा हुए। वे स्वभाव से ही आक्रामक और चमकदार खिलाड़ी थे लेकिन इतने टैस्ट उनकी कप्तानी में ड्रा हुए।

इन सबके सामने अजहर कहाँ खड़े होंगे? लेकिन बम्बई में वेस्टइंडीज के खिलाफ पहला टैस्ट जीतकर अजहर भारतीय क्रिकेट इतिहास के सबसे सफल कप्तान हो गए हैं। पटौदी और गावसकर ने नौ-नौ टैस्ट जीते। अजहर दसवाँ जीत गए हैं। अभी वे इकतीस बरस के हैं। अट्ठाईस टैस्टों में कप्तानी की है और कुछ साल और करते रहेंगे। वन डे भी वे छियालीस जीत चुके हैं जब कि कपिल ने उनचालीस ही जीते थे।

अजहर दुनिया के सबसे कलाकार बल्लेबाज हैं और फॉर्म में हों तो सर्वश्रेष्ठ भी। बहुत भले, शरीफ और सीधे-सादे ईमानदार आदमी हैं। लेकिन कप्तान ऐसे हैं कि उनकी टीम के नए और जवान खिलाड़ी जान लगाकर नहीं खेलते तो उन्हें ध्यान से खेलने को नहीं कह सकते। सार्वजनिक रूप से उनकी आलोचना कर सकते हैं। उनके गोलंदाज ठीक से गेंद नहीं फेंकते तो उन्हें जाकर या बुला कर नहीं कहेंगे कि ऐसे गेंद करो, ऐसे नहीं। उनका कहना है कि देश की टीम में आने के बाद हर खिलाड़ी को मालूम होना चाहिए कि उसे क्या करना है। अगर ऐसा है तो कप्तान बनाने की जरूरत क्या है ?

राजनीति की कहावत है कि वह सरकार सबसे अच्छी सरकार है, जो कम से कम शासन करे। अजहर का रहस्य है कि वह कप्तान सबसे सफल कप्तान है जो सबसे कम कप्तानी करे। उन्हें देखता हूँ और मुझे लगता है कि सफलता भी कैसी विडम्बना है!

(27.11.94)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहेंगे भारतीय भोगेंगे बुखार

भले ही निराशा और उदासी में उतरा हो लेकिन राहत की साँस आई कि इस मौसम का बुखार उतरा। जानता हूँ कि बताऊँगा कि कैसा बुखार था और वह कैसी निराशा और उदासी में उतरा तो आपमें से कई लोगों को कोई सहानुभूति नहीं होगी और कुछ तो चिढ़ेंगे भी।

लेकिन एक तो ऐसा कोई बुखार नहीं होता जो आदमी की पसन्दगी का हो और उस पर उसकी मर्जी से चढ़े-उतरे। दूसरे सारे बुखार ऐसे नहीं होते जिनसे आप दुखी और परेशान ही हों। कई बुखार लग जाते हैं और आप पर ऐसी बुरी तरह सवार होते हैं कि उनमें लगे हुए भी आप चाहते हैं कि वे उतर जाएँ। जैसे आप अपने-आपसे मुक्ति चाहते हों।

ऐसे बुखार के लिए अंग्रेजी में अच्छा शब्द है—आब्सेशन। हिन्दी शब्दकोश में उसके लिए धुन, खब्त, सनक आदि शब्द दिए हुए हैं। लेकिन इनमें धुन के अलावा ऐसा कोई शब्द नहीं है जो आब्सेशन का प्रिय और सकारात्मक पहलू बताता हो। और धुन भी लग जरूर जाती है लेकिन आदमी उसमें मगन ही रहता है जबकि आब्सेशन में वह तनाव, दबाव, पीड़ा, झुँझलाहट जैसी कई भावनाओं से गुजरता है। इसलिए मैंने जानबूझकर बुखार का इस्तेमाल किया।

सर्दी के हर मौसम में मुझे क्रिकेट का बुखार चढ़ता है। क्रिकेट चल रहा हो तो दूसरा कोई काम ही नहीं, शगल भी मुझे उससे हटा नहीं सकता। आपको बताऊँ कि कैसी-कैसी परिस्थितियों में भी मेरा मन क्रिकेट में लगा रहा है तो या तो मुझे वहशी कहेंगे या पागल। ऐसे सन्निपाती लगाव को कोई सम्मान और सहानुभूति से देख ही नहीं सकता। कई बार मैं खुद इसके लिए अपने को धिक्कारता हूँ। लेकिन फिर भी ऐसा नहीं होता कि यह मुझसे छूट जाए। तभी तो कहा कि यह बुखार है।

महाभारत में दुर्योधन कहता है—जानामि धर्मम् न च मे प्रवृत्ति, जानामि अधर्मम् न च में निवृत्ति। धर्म को मैं जानता हूँ लेकिन उस ओर मेरी प्रवृत्ति नहीं है। अधर्म को भी मैं जानता हूँ लेकिन उससे मेरी निवृत्ति नहीं है। महाभारत में मनुष्य जीवन की सच्चाई बतलाने वाला इससे बेहतर शायद ही कोई श्लोक हो। अपने क्रिकेट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
बुखार को मैं इसका उपयोग करके बता सकता था। लेकिन नहीं बताया तो इसलिए कि उसे मैं अपना खेल धर्म तो मान सकता हूँ लेकिन अधर्म नहीं मान सकता।

बल्कि क्रिकेट के कारण मुझमें बच्चे जैसी जिज्ञासा और रोमांच अब भी बना हुआ है तो इसे मैं बड़ी नियामत मानता हूँ। मेरे जैसी उमर में आकर लोग अक्सर सिनिक हो जाते हैं। वे मानने लगते हैं कि जो भी जानने लायक था अपन ने जान लिया है। और ऐसी कोई स्थिति नहीं है, जो अपने को बेहद उत्तेजित और अभिभूत कर पाए। अपन सबसे गुजर चुके हैं। पत्रकारिता में जो तीन-चार दशक रह ले वह अक्सर ऐसा ही संवेदनशील बजरबट्टू हो जाता है।

मैं ऐसा नहीं हो गया इसलिए क्रिकेट का आभारी हूँ। उसने मुझे अब भी जवान होता बालक बनाए रखा है। इसकी बहुत स्पष्ट प्रतीति मुझे ऑकलैंड की उस होटल में कोई पौने तीन साल पहले हुई। विश्व कप के दौरान जो भी मैच मुझे कवर करना होता उसके एक दिन पहले जाकर मैदान, पिच, प्रेसवालों के बैठने की जगह, कॉपी भेजने की मशीन, टेलीफोन बल्कि गाड़ी पार्क करने की जगह तक मैं देख आता था।

लेकिन हेमिलटन में पानी गिरा था और भारत-जिम्बाब्वे का मैच छोटा कर दिया गया था। काम निपटाने के बाद कार से ऑकलैंड लौटा और होटल पहुँचा तो पता चला कि उस रात के लिए मेरा कमरा किसी और होटल में है। ढूँढ़ता-फिरता उस होटल में पहुँचा। चेकअप किया। कमरे में पहुँचा। कपड़े-वपड़े बदले तो बहुत रात हो गई। दूसरे दिन नौ बजे से ही ऑकलैंड में न्यूजीलैंड और वेस्टइंडीज का मैच था। नहाने-धोने, नाश्ता करने, तैयार होने और निकलने में साढ़े आठ बज गए और टैक्सी वाले ने स्टेडियम के बाहर ही छोड़ दिया। प्रेस बॉक्स में पहुँचने में इतनी भागदौड़ और चढ़ना-उतरना पड़ा कि आध घंटा और लग गया। सीट पर बैठा तो खेल पैंतालीस मिनट का हो चुका था।

मेरा दिल जोर-जोर से धड़क रहा था और आँखें मैदान पर गड़ी हुई थीं। मैं जल्दी-जल्दी समझ लेना चाहता था कि इतनी देर में क्या-क्या हो गया होगा। वहाँ हो रहा खेल कोई फिल्म की रील तो नहीं थी जिसे पीछे से घुमाकर देख लेता। लेकिन जिज्ञासा की ऐसी तीखी धार और सामने हो रहे खेल का रोमांच ऐसा थक्का बन्द कि एक दूसरे को काटते रहे। जब न्यूजीलैंड की पारी पूरी हुई और लंच हुआ और कुछ टीवी पर देखकर और कुछ पूछ-पूछ कर जब तक मैंने सब जान नहीं लिया तब तक खाना खाने भी नहीं पहुँचा। अब न मुझे तत्काल कॉपी लिखनी थी, न भेजनी थी। पहले पैंतालीस मिनट के खेल का विवरण शाम तक मजे में मिल सकता था। लेकिन मैं सचमुच बच्चों जैसा मचलता रहा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रात को जब सब कुछ निपटाकर बिस्तर में घुसा और बिजली बन्द की और आँखों के सामने पूरे दिन को घुमाने लगा तो स्टेडियम के फाटक से प्रेस बॉक्स पहुँचने और लंच तक मचलते रहने के दृश्य और वे सब भावनाएँ जिनसे होकर इस दौरान गुजरा—एक-एक कर सामने आई। क्या जरूरत थी ऐसी भागमभाग, उत्तेजना और रोमांच की ? मैच न अपनी टीम का था, न तत्काल दिल्ली कॉपी भेजनी थी। फिर क्यों ऐसा बच्चों जैसा बरताव किया ?

फिर मेरा कैमरा फ्लेश बैक लाया और मैंने अपने को सन् अड़तालीस की उस सुबह इन्दौर के यशवन्त क्लब की ओर दौड़ते और मैदान में घुसते देखा जहाँ जीवन का पहला बड़ा मैच देखा था। तब भी मेरा दिल वैसा ही धड़क रहा था जैसा इस आठ मार्च बानवे के दिन। चवालीस साल और सैकड़ों मैच भी मुझे क्रिकेट वृद्ध नहीं बना पाए। इस खेल से लगाव का अपने जीवन में यह कोई कम महत्त्वपूर्ण योगदान है?

हम हमेशा जवान बने रहना चाहते हैं। हमेशा बचपन को लौटाल लाने के लिए हिरसते रहते हैं। यह खेल कितनी आसानी से अपने को बचपन की उत्तेजना, रोमांच और जिज्ञासा में ले आता है। धन, यश, सत्ता आदि के पीछे पागल रहने वालों को तो हम वैसे मखौल से नहीं देखते जैसे क्रिकेट दिवाने या प्रेम दिवाने को देखते हैं। अगर धन, यश, सत्ता आदि आदमी को सुखी और परितृप्त करते हैं तो प्रेम और खेल की दीवानगी भी करती है। कसौटी अगर परितृप्ति है तो वह चाहे धन से मिले या यश या सत्ता या प्रेम या खेल से उसमें कोई गुणात्मक फर्क नहीं हो सकता। कोई बड़ा और कोई नाकुछ नहीं हो सकता। ठीक है ना ?

कोई तीस साल पहले मैंने पहली बार विमान से लन्दन देखा। जो दृश्य आज भी मैं हू-ब-हू उतार दे सकता हूँ वह है क्रिकेट मैदान पर होता खेल। मैं नहीं जानता कि वह लार्ड्स का मैदान था या ओवल का। और जो दृश्य मैंने देखा था वह इंग्लैंड-दक्षिण अफ्रीका के टैस्ट का था या किसी काउंटी मैच का। आप कहें तो रेकार्ड देखकर बता सकता हूँ। लेकिन वह सब बेमानी है। उसका कोई मतलब होता तो मुझे याद रहता।

नहीं है तो इसलिए कि इंग्लैंड को मैं गाँव के हरे-भरे मैदान पर होते क्रिकेट और शेक्सपियर के स्टेटफर्ड अपॉन एवन के घर के देश के नाते जानता था और पहली नजर में मुझे वही दिखा। या देखा हुआ वही मुझे याद है। हमें वही याद रहता है जो सबसे प्रिय है और उसी को हम याद रखना चाहते हैं। जैसे मैं आस्ट्रेलिया के मेलबर्न अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे पर उतरा। सामान लेकर फटाफट घरेलू हवाई अड्डे पर गया। वहाँ से विमान पकड़कर ब्रिसबेन पहुँचा। होटल में चैकइन किया। नहाया-धोया और टैक्सी पकड़कर गाबा मैदान पहुँचा। लेकिन कोई चार-पाँच घंटे के इस कार्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
व्यापार में मुझे कोई दृश्य साफ याद है तो उस गाबा मैदान का जहाँ सन् साठ में क्रिकेट इतिहास का पहला टाई टैस्ट हुआ था। यानी दोनों टीमों के स्कोर बराबर और दोनों टीमें आउट। उस टैस्ट की कमेंट्री मैंने रेडियो पर सुनी थी और उसके आखिरी ओवर का रोमांच मुझसे भूले नहीं भूलेगा। आस्ट्रेलिया में सबसे पहले वही मैदान मैं देखना चाहता था और वही मैंने देखा।

अब किसी के लिए यह सब बेकार हो सकता है। जरूर हो। मुझे कोई एतराज नहीं होगा। लेकिन मेरे लिए तो ये दृश्य जैसे वही है जिसे ढूँढ़ने मैं निकला था। आप जरा अपना आपा टटोलिए। पाएँगे कि आप भी उन्हीं स्मृतियों को सहेज कर जी रहे हैं जो आपके जीने को जीने के लायक बनाती हैं। जरूरी नहीं कि आपकी स्मृतियाँ किसी और के लिए भी वैसी ही जीवनदायी हों जैसी आपके लिए हैं। लेकिन इस कारण वे आपके लिए फिजूल तो नहीं हो जातीं।

हम सबका ऐसा ही अपना निजी संसार होता है और उसमें हम दुनिया से ज्यादा सघनता से जीते हैं। मैं सर्दियों में ऐसी सघनता से क्रिकेट में जीता हूँ। भारतीय क्रिकेट में। और अगर आप उसमें रुचि लेते रहे हों तो निश्चित ही जानते होंगे कि कई बार वह कितना दुखदायी हो सकता है। अपने चाहने वालों को भारतीय क्रिकेट जितना परेशान कर सकता है उतना तो कोई परपीड़क महबूब भी न करता होगा। इसीलिए मैंने कहा कि मुझ पर तो वह बुखार की तरह चढ़ता है। क्रिकेट को वैसे भी गौरवमयी अनिश्चितताओं का खेल कहा जाता है। भारतीय क्रिकेट तो गौरवमयी और दयनीय दोनों ही तरह की अनिश्चितताओं का खेल है।

लेकिन क्या किया जाए? यह अपने हाथ में तो नहीं था कि भारत में और भारतीय माता-पिता से नहीं जनमते। यह भी अपने हाथ में नहीं था कि उस इन्दौर में बचपन न बीतता और जवानी न आती, जिसमें होलकर टीम थी और सीके नायडू और मुश्ताक अली खेला करते थे। यह भी सच है कि अपने जैसे उस शहर में हजारों बच्चे थे और वे सब तो क्रिकेट के पीछे ऐसे पागल नहीं हुए जैसे अपन हो गए। तो यह संयोग, किस्मत, नियति चाहे जो हो जन्मजात बीमारी की तरह अपने को लग गया और ताउम्र चलेगा। कभी इसमें सौ से एक सौ पाँच डिग्री तक में रहने में आनन्द आता है तो कभी दिन-रात मनाता हूँ कि कब यह बुखार उतरे।

इस बुधवार चौदह दिसम्बर को मोहाली में सबेरे जब कफी की दूसरी गेंद पर राजू को विकेट कीपर मरे ने झेल लिया और भारत 243 रन से हार गया तो अपन उठे और कहा चलो एक मियादी बुखार उतरा। राहत की उस साँस में कितनी निराशा और उदासी थी। जो मौसम ऐसी आशा और जीत के साथ शुरू हुआ था वह कैसी ठंडी, धुन्धभरी सुबह में शर्मनाक पराजय के साथ समाप्त हुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कितनी उम्मीदों से अपन ने दो महीने तक हर दिन का खेल देखा कि कैसे अजहर की टीम अपनी जीत का रेकार्ड बनाए रखती है और कैसे वेस्टइंडीज पन्द्रह साल में खेली गई अट्ठाईस सीरीजों में अपराजित रहने का गर्वीला कीर्तिमान सुरक्षित रखती है। कैसे इस प्रतिद्वन्द्विता के बीच एक और प्रतिद्वन्द्विता में अपना ध्यान और गौरव लगा हुआ था कि लारा बड़े बल्लेबाज हैं या अपना सचिन। सीरीज न हम जीते न वे जीते। और हालाँकि लारा वन डे और पहले दो टैस्टों में बिलकुल फेल गए और सचिन का बल्ला बेहतर बना लहराता रहा लेकिन जिस आखिरी टैस्ट की दूसरी पारी पर सारा दारोमदार था उसमें लारा धुआँधार इकानवे रन बनाकर और सचिन सिर्फ दस रन बनाकर सिर लटकाए लौट आए जबकि वे भारत को जीत के उतने ही नजदीक ला सकते थे जितने वेस्टइंडीज को लारा ने ला बैठाया था। जिस तरह सीरीज ड्रा रही उसी तरह लारा और सचिन का मुकाबला भी।

जब लारा को बम्बई में खेलकर टीम को हार से बचाना था तब वे पहले ही ओवर में जीरो पर आउट हुए। और जब मोहाली में सचिन को खेलकर मैच को कम-से-कम ड्रा करवाना था तब वे तीसरे ही ओवर में सिर लटकाए लौट आए। इस बीच लारा से रन नहीं बने और सचिन ने कोई साढ़े चार सौ रन बनाए। बम्बई में सचिन ने पिच्चासी रन बनाए और ऐसे पिच पर बनाए जिस पर टिकना मुश्किल था।

लेकिन लारा के प्रशंसक सर गारफील्ड सोबर्स ने फिर भी हिचकते हुए कहा कि सचिन होनहार महान बल्लेबाज हैं। लारा को वे महान कह चुके हैं। तब से मैंने तय कर रखा था कि मोहाली में सोबर्स से पूछूँगा कि कृपया बताइए कि कोई कब तक होनहार रहता है। सचिन लारा से ज्यादा खेले हैं, ज्यादा रन और सेंचुरी बना चुके हैं। क्या कोई आपका 365 रन का रेकार्ड तोड़े तभी महान होता है? लारा ने इस साल इंग्लैंड के खिलाफ 375 रन बनाए हैं। एक डबल सेंचुरी गए साल आस्ट्रेलिया के खिलाफ और एक और सेंचुरी। लेकिन सचिन इंग्लैंड, आस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका, श्रीलंका और वेस्टइंडीज सबके खिलाफ सेंचुरी बना चुके हैं। पहली तो तब जब सत्रह साल के दुधमुँह बच्चे थे। आठ सेंचुरी और ढाई हजार रन के बाद भी सचिन होनहार हैं और लारा तो महान हो चुके। यह कैसा न्याय है सर गैरी?

लेकिन मोहाली के आखिरी टैस्ट के आखिरी दिन तीसरे ही ओवर में फिजूल की शॉट मारकर सचिन ने सब गुड़ गोबर कर दिया। लारा बड़े कि सचिन यह सवाल ही बेमतलब हो गया। जो बल्लेबाज जानता हो कि उसी पर टीम की नैया टिकी है और फिर भी वह ऐसा गैरजिम्मेदाराना खेल दिखाए और टीम हार जाए तो उसकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
महानता पर क्या इतराना? अब सचिन भविष्य में कुछ भी कर दें अपन सोबर्स से बहस करने नहीं जाएँगे।

फिर हमारे अजहर मियाँ हैं। वे रणनीति और चतुराई वाले कप्तान नहीं हैं इसलिए पाँसा पलट नहीं सकते। ऐसा अपन चार साल से कह रहे हैं। वे आगे से नेतृत्व नहीं करते। साथ में चलते हैं। इसलिए नागपुर का टैस्ट उनने मुट्ठी से निकल जाने दिया क्योंकि हार का खतरा मोल नहीं ले सकते थे। और मोहाली में तो वे न हारने के लिए ही खेल रहे थे जीतने के लिए नहीं। उन्हीं को अपने मैदानों पर अपराजेय और सबसे सफल कप्तान बने रहने का कीर्तिमान रखना था। वे यों ही हार गए। दुखी तक नहीं हुए। बल्लेबाज तो बहुत अच्छे हैं लेकिन मोहाली की दोनों पारियों में हुक मारते हुए आउट हुए जबकि आपने उन्हें कभी हुक लगाते देखा नहीं होगा। आत्मघाती। बिलकुल आत्मघाती।

जिन दो भारतीयों पर नाज था उन्हीं ने अग्नि-परीक्षा की घड़ी में अपने को खरे सोने के बजाय मोम का साबित होने दिया। लेकिन इस तरह निराश और उदास होने का यह पहला मौका नहीं था। हजारों बार इसी तरह दुखी करके भारतीय क्रिकेट ने सुख और गौरव के कुछ चुनिन्दा दिन दिए हैं। यह अपने हाथ में नहीं है कि अपन वेस्टइंडीज के हो जाएँ। रहेंगे भारतीय और भोगेंगे बुखार।

(18.12.94)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपराजेय भी पिटा

कोई तरीका ही नहीं था कि सोमवार और बुधवार की रात इस सचमुच के ऐतिहासिक टैस्ट का टीवी पर सीधा प्रसारण देख पाता। बहुत जरूरी हो तो ही भेनजी हवाई यात्रा करने पर तैयार होती हैं। और चूँकि प्रकाश भाई की बेटी रूता का विवाह और उसमें हमारा जाना महीनों पहले तय था इसलिए अहमदाबाद की यात्रा रेल से ही होनी थी। और रेल में सोमवार की रात और मंगल का आधा दिन और बुधवार का आधा दिन और पूरी रात यात्रा किए बिना अहमदाबाद आना-जाना नहीं हो सकता था।

जब रूता का सेतु से विवाह तय हुआ था तब तो आस्ट्रेलिया ने वेस्टइंडीज का दौरा भी शुरू नहीं किया था। कौन जानता था कि पहला टैस्ट आस्ट्रेलिया जीत जाएगा, दूसरा बारिश के कारण पूरा नहीं होगा, तीसरे में वेस्टइंडीज आस्ट्रेलिया को नौ विकेट से पीटकर हार का बदला लेगा और सीरीज को बराबर कर देगा और इस तरह सारा दारोमदार चौथे और आखिरी टैस्ट पर आ टिकेगा।

और कौन बता सकता था कि किंगस्टन, जमाइका में चौथे टैस्ट के पहले दिन वेस्टइंडीज दो सौ पैंसठ पर ढेर हो जाएगा, दूसरे दिन आस्ट्रेलिया चार विकेट पर तीन सौ इक्कीस रन ठोक देगा और तीसरे दिन अगर वह दो-ढाई सौ की लीड ले ले तो फिर कोई अनहोनी ही वेस्टइंडीज को अपने घर तेईस साल बाद सीरीज हारने से बचा सकती थी। अपने समय से रात साढ़े आठ बजे तीसरे दिन का खेल शुरू हो रहा था और नौ पैंतालीस पर सर्वोदय एक्सप्रेस नई दिल्ली रेलवे स्टेशन से निकल रही थी। निकलते-निकलते भी नई गेंद से एम्ब्रोस का पहला ओवर तो देख लिया जिसमें पूरी सीरीज में फ्लाप रहे ब्लूविट ने एक शानदार ड्राइव और एक पुल मारकर वैसा ही बालकोचित उत्साह दिखाया जैसा गए साल इंग्लैंड के खिलाफ अपने घरेलू मैदानों पर अपने पहले दो टैस्टों में सेंचुरी मारते हुए दिखाया था।

मेरा मन घर की बैठक में टीवी के सामने था और शरीर रेल से अहमदाबाद जा रहा था। आप जानते हैं कि क्रिकेट अपने को कैसा और कितना पागल कर देता है। इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
टैस्ट में भले ही भारत खेल न रहा हो, लेकिन यह वेस्टइंडीज की अग्नि-परीक्षा का टैस्ट था। बीस साल से छोटे-छोटे द्वीप समूह राष्ट्रों की यह टीम टैस्ट में अपराजेय थीं। विश्व क्रिकेट पर इसका बोलबाला था।

इस बीच एक बार सिर्फ एक बार पन्द्रह साल पहले यानी सन् अस्सी में न्यूजीलैंड के दौरे पर वह पहला टैस्ट और सीरीज हारी थी। नहीं तो वह जीतती रही है या सीरीज बराबर करती रही है। न्यूजीलैंड से पराजय को यह टीम स्वीकार ही नहीं कर पाई। उसके दिग्गज खिलाड़ियों ने बदतमीजी की। तूफानी गेंदबाजी होल्डिंग ने पहले टैस्ट में किक मार के स्टम्प उड़ा दिए। दूसरे टैस्ट में क्राफ्ट ने उस अम्पायर को कन्धा मार दिया. जिससे पूरी टीम खुन्दक खाए हुए थी। दुनिया ने भी नहीं माना कि वेस्टइंडीज की टीम सचमुच हारी है भले ही कहा न हो कि न्यूजीलैंड बेईमानी और अम्पायरों की मेहरबानी से जीता है।

इस बीच भारत को भी दो मौके मिले वेस्टइंडीज से सीरीज जीतने के। पहला बीस साल पहले इसी जमाइका द्वीप के इसी किंगस्टन शहर के इसी मैदान पर। भारत पहले टैस्ट में हार गया था, दूसरा उसने ड्रा किया। लेकिन तीसरे टैस्ट में चौथी पारी में चार सौ छह रन बनाकर भारत ने ब्रेडमेन की सन् अड़तालीस की सर्वविजयी आस्ट्रेलियाई टीम का भी रिकार्ड तोड़ दिया। टैस्ट इतिहास में आखिरी पारी में इतने रन बनाकर कोई टीम नहीं जीती है। इस ऐतिहासिक जीत के बाद भारत के लिए आखिरी टैस्ट जीतना मुश्किल नहीं था।

लेकिन वेस्टइंडीज के कप्तान लॉयड ने पहली बार चार तूफानी गेंदबाजों से बल्लेबाजों की पसलियों पर गेंद मारने का फारमूला आजमाया। होल्डिंग तब सबसे तूफानी गेंदबाज थे। अब तक तीनों टैस्टों में अच्छी बल्लेबाजी करने वाले भारतीयों को दूसरी पारी में ऐसी गेंदबाजी का सामना करना पड़ा था जो सन् बत्तीस की बॉडी लाइन से भी ज्यादा खतरनाक थी। पहली पारी में भारत ने तीन सौ छह रन बनाकर दाव घोषित कर दिया था। वेस्टइंडीज को कुल पिच्चासी की लीड मिली थी। लेकिन फिर होल्डिंग, डेनियल, होल्डर और जूलियन भूखे भेड़ियों की तरह भारतीयों पर टूट पड़े। पहली पारी में गायकवाड़ और पटेल चोट खाकर आउट हुए बिना ही लौट आए थे। दूसरी पारी में बेदी ने पाँच विकेट पर सत्तानवे पर ही दाव घोषित कर दिया क्योंकि पाँच बल्लेबाज घायल थे और उन्हें फिर पिटने के लिए भेजना ठीक नहीं था। वेस्टइंडीज को जीत के लिए कुल तेरह रन बनाने थे जो यों ही बन गए।

उस सीरीज में भारत के खिलाफ पहली बार लॉयड ने चार तूफानी गेंदबाजों को खेलाने और उनसे लगातार बल्लेबाजों की पसलियों तक आने या गला पकड़ने वाली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
गेंदें करवाने का प्रयोग किया। इसी फारमूले ने वेस्टइंडीज से दो दशक तक विश्व क्रिकेट पर राज करवाया। चार तेज गेंदबाजों में स्पिनर सिर्फ फेरबदल के काम का हो गया। गिब्स के बाद इसीलिए वेस्टइंडीज में कोई नामी स्पिनर नहीं हुआ जबकि तेज गेंदबाजों की क्रिकेट इतिहास की सबसे खूँखार और सफल चौकड़ियाँ इसी दौरान और वेस्टइंडीज में हुई। कैसी भी पिच हो ये गेंदबाज कामयाब होते। वेस्टइंडीज ने अपने घरू मैदानों पर तेईस साल तक कोई सीरीज नहीं हारी तो इसीलिए कि उसकी टीम में ऐसे चार तूफानी गेंदवाज हमेशा रहे हैं जिन्हें बेजान पिच भी रोक नहीं पाते।

लॉयड को भी यह प्रयोग करने की प्रेरणा या मजबूरी आस्ट्रेलिया से हुई। भारत से खेलने के पहले वे आस्ट्रेलिया गए थे जहाँ लिली और थौमसन की जानलेवा तूफानी जोड़ी ने इसी तरह की पसलियों को मारने और गला पकड़ने की गेंदबाजी करके वेस्टइंडीज को पाँच-एक से बड़ी बेरहमी से धुलाई कर दी थी। लिली और थौमसन ने वेस्टइंडीज के धाकड़ और दिग्गज बल्लेबाजों के वही हाल किए थे जो बाद के बीस साल में वेस्टइंडीज के गेंदबाजों ने दुनिया-भर के बल्लेबाजों के किए। वेस्टइंडीज वाले अगर गावसकर को दुनिया का सबसे बड़ा बल्लेवाज मानते हैं तो इसीलिए कि ऐसी तूफानी और खतरनाक गेंदबाजी के सामने वे न सिर्फ ओपनर की तरह टिके रहे बल्कि 27 टैस्ट में 2749 रन बनाए जिनमें 13 शतकें और 7 अर्ध शतक हैं। वेस्टइंडीज के खिलाफ गावसकर का औसत प्रति पारी 65.45 रन है। वेस्टइंडीज के बीस साल के विश्व साम्राज्य में उनके खिलाफ इतने रन और इतने शतक किसी ने नहीं बनाए। सिवाय गावसकर के इस गेंदबाजी का सामना कोई कर भी नहीं सका है।

लॉयड टैस्ट इतिहास के सबसे सफल कप्तान इसीलिए हुए कि उनकी टीम में हमेशा ऐसे चार तूफानी गेंदबाज होते थे जो सभी पर रोड रोलर चला सकते थे। उनके पास बल्लेबाज भी ऐसे थे जो किसी भी गेंदबाजी के धुर्रे बिखेर दें—रिचर्ड्स, ग्रीनिज, हेंस। और लॉयड की आलोचना भी खूब हुई खासकर इंग्लैंड में। चार गेंदबाजों से हमलावर शार्ट पिच गेंदबाजी करवा के लॉयड ने बल्लेबाजी को बला और कारीगरी से उतारकर जान बचाने की महारत बना दिया। क्रिकेट में एकरसता आ गई। तेज गेंदबाजों ने खेल की गति धीमी कर दी क्योंकि वे एक ओवर करने में पाँच से ज्यादा मिनट लगा देते हैं। लेकिन लॉयड को सफलता का खुल जा सिमसिम मिल गया था जो उन्होंने आखिर तक नहीं छोड़ा। रिचर्ड्स ने उसे बनाए रखा लेकिन रिचर्डसन ने टैस्ट और वन डे दोनों में उसे गँवा दिया हालाँकि अब भी वेस्टइंडीज की ओर से चार तेज गेंदबाज खेलते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
अप्रैल पचहत्तर में किंगस्टन, जमाइका में भारतीयों की जो धुनाई वेस्टइंडीज के तूफानी गेंदबाजों ने की उसकी शर्म और उसका अपमान अपने को अब भी कटारी की तरह काटता है। इस कबीलाई हिंसक क्रिकेट में कोई वेस्टइंडीज का बराबरी से जवाब दे तो कहने की जरूरत नहीं कि अपने को ऐसा सुकून मिलता है जैसे किसी अन्याय का निराकरण किया गया हो। आस्ट्रेलिया के सिवाय वेस्टइंडीज से कोई निपट नहीं सकता था क्योंकि उसके पास भी चार नहीं तो दो तूफानी गेंदबाज होती ही हैं। फिर आस्ट्रेलिया में ही ऐसे सख्त और तेज पिच होते हैं जिन पर गेंद टप्पा खाकर एकदम उछलती है और इसलिए उसके बल्लेबाजों को वैसी गेंदवाजी को खेलने का अच्छा अभ्यास होता है जो वेस्टइंडीज की मारक ताकत है।

बीस साल पहले भी आस्ट्रेलिया ने ही वेस्टइंडीज की पाँच-एक से धुलाई की थी जैसी कि फिर कभी किसी ने नहीं की। और वेस्टइंडीज को उसी के मैदानों पर आखिरी बार आस्ट्रेलिया ने ही हराया था। सन् बहत्तर में इयन चैपल की टीम ने दो-शून्य से वह सीरीज जीती थी। उसके बाद अब जाकर मार्क टेलर की टीम ने वेस्टइंडीज को दो-एक से हराया है और फैसला जमाइका, किंगस्टन के उसी मैदान में हुआ है जहाँ से बीस साल पहले वेस्टइंडीज का अश्वमेध यज्ञ भारत के खिलाफ शुरू हुआ था।

इस बीच भारत को एक और मौका मिला था कि वह न सिर्फ किंगस्टन के अपमान का बदला चुका सके बल्कि पन्द्रह साल से जिस टीम से कोई सीरीज ही न जीता हो उसे वन डे और टैस्ट दोनों में हरा दे। पिछले साल वेस्टइंडीज की जो टीम भारत आई थी उसमें न तूफानी गेंदबाज एम्ब्रोस थे न बिशप और न धाकड़ बल्लेबाज कप्तान रिचर्डसन और डेसमंड हेन्स थे। चार गेंदबाजों की चौकड़ी में सहायक की भूमिका में खेलने वाले वाल्श कप्तान थे। लारा और हूपर बल्लेबाज थे। इस टीम को भारत ने वन डे की दोनों सीरीजों में हराया—त्रिकोणीय सीरीज में भी और दोनों देशों की सीरीज में तो चार-एक से।

फिर बम्बई में खेले गए पहले टैस्ट में भारत ने वेस्टइंडीज को धो दिया। स्पिन लेते और असमान उछाल देते पिच पर तेंदुलकर ने दूसरे दाव में पिच्चासी रन बनाए। श्रीनाथ और कुम्बले ने भी हाथ दिखाए। साफ था कि वेस्टइंडीज स्पिन लेते पिच पर जीत नहीं सकता। नागपुर के दूसरे टैस्ट में अजहर की कप्तानी और रणनीति की परीक्षा थी। टैस्ट जीतकर शृंखला समाप्त करने का सकारात्मक और आक्रामक रवैया अजहर ने नहीं अपनाया। चौथे दिन दूसरी पारी में तेंदुलकर और सिद्धू तक ने ऐसी सावधानी से खेला मानो उन्हें कहा गया हो कि हमें टैस्ट हारना नहीं है। वेस्टइंडीज की गर्दन पर हमारा हाथ था पर वह छूटकर बच निकला।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीरीज का फैसला मोहाली के तीसरे टेस्ट पर जा टिका। मोहाली के उस पिच पर अब तक कोई प्रथम श्रेणी मैच भी नहीं हुआ था। उस पर घास थी और वह इतना सख्त था कि गेंद टप्पा खाने के बाद उड़ती थी। वह पिच जैसे वेस्टइंडीज को जीतकर सीरीज बराबर करने के लिए बनाया गया था। भारत अतिथि सत्कार के लिए कोई यों ही प्रसिद्ध नहीं है। वाल्श ने धन्यवाद कहा और टॉस जीतकर 443 रन बना लिए। वाल्श के पहले ही ओवर में एक गेंद ऐसी और अचानक उठी कि सिद्धू की हेलमेट से लगके गिल्ली उड़ा गई।

वेस्टइंडीज की यह पक्की रणनीति है। उसे जब जीतना ही होता है तो उसके गेंदबाज बल्लेबाज की पसलियों और गले पर गेंद करते हैं। बम्पर हो तो बल्लेबाज झुककर या हटकर छोड़ भी दें। ऐसी गेंद या तो बदन पर झेलो या बल्ले से रोकने की कोशिश में आउट होओ। भारत के बल्लेबाज ऐसी ऊँची उठती तेज गेंदबाजी खेलने के आदी नहीं होते। इसके बावजूद मोहाली का पिच ऐसी ही गेंदबाजी के लिए बनाया गया। बावजूद प्रभाकर के 120 के भारत छप्पन रन की लीड खा गया। फिर लारा, एडम्स और आर्थरटन ने ऐसा धुआँधार किया जैसा भारत को नागपुर में करना चाहिए था। देखते-देखते वेस्टइंडीज ने तीन विकेट पर 301 ठोक दिए और पारी घोषित कर दी।

फिर शुरू हुआ वही किंगस्टन जमाइका वाला खेल। पहली पारी में सेंचुरी मारने वाले प्रभाकर की हेलमेट की जाल को भेदती हुई वाल्श की एक गेंद उनकी नाक तोड़ गई। वे गिरे और उनकी नाक से खून बहने लगा। वे ऐसे ही पेवेलियन लौटे और भारतीय टीम ढेर हो गई। वेस्टइंडीज की गेंदबाजी की आग को जो आग से भिड़ा सकते थे वे तेंदुलकर भी सिर्फ दस पर वापस आ गए। यह एक मौका था जब तेंदुलकर को दिखाना था कि वे शेर बच्चे हैं। यह एक पारी थी जिसमें जमकर और सवार होकर तेंदुलकर को खेलना था। पर वे ऐसे खेले जैसे हताशा में हों। तीसरे गेंदबाज की जरूरत भी नहीं पड़ी। वाल्श और बेंजामिन ने ही पूरी टीम को निपटा दिया और दहाड़ते जीतकर चले गए। भारतीय टीम में कोई जान लड़ाने को ही तैयार नहीं था। अजहर सामने से कप्तानी नहीं करते। वे नाम के कप्तान रहना पसन्द करते हैं। मोहाली में यही दिखा। अजहर को भी घर में अपने अपराजेय रिकार्ड की रक्षा करनी थी। पर उनका और वाल्श का कोई मुकाबला ही नहीं था।

इस वेस्टइंडीज टीम को अपन उसी के मैदान पर हारते देखना चाहते थे। लेकिन जो रात देखने को मिली उस दिन खेल की छुट्टी थी। बाकी दोनों रातें रेल में कटनी थीं। इसलिए मुनमुन प्रसाद सिंह को टेलीफोन करके कहा कि वे मैच टेप करके रखें। दिल्ली आकर वेस्टइंडीज को हारते देखा लेकिन पहले से मालूम हो कि फैसला क्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ है तो आधा मजा बल्कि धुकधुकी और सनसनी तो यों ही चली जाती है। फिर भी वेस्टइंडीज को एक सीरीज को हारते देखना शार्ट पिच, पसली तोड़ू और गला पकड़ू गेंदबाजी को विकल होते देखना था। चार विकट रायफल ने लिए और चार वार्न ने और इन दोनों की गेंदबाजी खराब होते पिच पर होने वाली अहिंसक गेंदबाजी थी। वह बल्लेबाजी की कला और तकनीक की परीक्षा लेती थी, जानें बचाने की तरकीबों की नहीं।

सारी दुनिया लॉयड की कप्तानी के बारे में कहती थी कि ऐसी टीम को कप्तानी की क्या जरूरत ? वेस्टइंडीज के पास अब भी लारा, हूपर और एडम्स जैसे बल्लेबाज और एम्ब्रोस, वाल्श और बेंजामिन जैसे गेंदबाज हैं। फिर भी यह टीम आस्ट्रेलिया से आने वाली अब तक की सबसे कमजोर टीम को हरा नहीं पाई। मार्क टेलर इस वक्त सबसे कुशल कप्तान हैं और अपने अजहर मियाँ बल्लेबाज भले ही बहुत बेहतरीन हों, कप्तान तो वे पोंगे हैं।

(7.5.95)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मारने वालों के हारने का सुख

अखबारों में कपास ओटते हुए पैंतीस साल हो गए लेकिन अपने को राजनीति की प्रेत बाधा नहीं लगी। जैसे पिछले सोमवार को यूपी में मायावती ने कुनबा बढ़ाया, अदीस अबाबा में मिस्र के राष्ट्रपति की हत्या की कोशिश हुई, कराची की मारकाट में बीस जने और मारे गए और ब्रिटेन में रेडवुड नाम के मन्त्री ने मन्त्रिमंडल से इस्तीफा देकर जॉन मेजर के बुलाए चुनाव में अपनी चुनौती घुमा दी। और भी कई घटनाएँ हुई होंगी जिनमें माना जाता है कि सम्पादक को ध्यान लगाए रहना चाहिए।

लेकिन अपना ध्यान लार्ड्स में लगा हुआ था। या कहना चाहिए कि जान की चिड़िया क्रिकेट की उस काशी के किसी पेवेलियन में घोंसला बनाए बैठी थी। वहाँ भारत की टीम नहीं खेल रही थी, न किसी टीम की ओर से सचिन तेंदुलकर बल्लेबाजी करने वाले थे। इस वक्त दुनिया की सबसे मरियल और रोतली टीम इंग्लैंड से दूसरा टैस्ट भी जीतने के लिए वेस्टइंडीज को दिन-भर में सिर्फ दो सौ अट्ठाईस रन बनाने थे और लारा के होते हुए क्या नहीं हो सकता।

गुलाम भारत में बचपन बीतने के कारण हो या किसी और कारण से अपन कभी इंग्लैंड की तरफ नहीं हो पाए। पाकिस्तान भी उसके खिलाफ खेल रहा हो तो मन मनाता रहा कि कैसे भी हों जीतें तो पाकी। पिछले विश्व कप में जब सिडनी में भारत ने पाकिस्तान को हरा दिया तो वापस अपने वतन लौट जाने का मन बना रहे पाकिस्तानी रिपोर्टरों में से एक बुजुर्ग ने हम लोगों से कहा—हम तो अब चले पर आप लोग अंग्रेजों को मत जीतने देना। तब न वे जानते थे न हम में से किसी को शंका थी कि फाइनल में पाकिस्तान पहुँचेगा और अंग्रेजों को ही हराकर विश्व कप जीतेगा। लेकिन उस पाकिस्तानी पत्रकार को भारत का जीतना मंजूर था, इंग्लैंड का नहीं। अपने भी मन की यही बात है।

पर मैंने पाया कि सोमवार को मन मना रहा था कि इंग्लैंड जीत जाए। वेस्टइंडीज कोई पैंतीस साल से अपनी चहेती टीम है। फ्रेंक वॉरेल ने इसे बनाकर आस्ट्रेलिया में खड़ा किया तब से। उसी सीरीज में क्रिकेट इतिहास का पहला टाई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
टैस्ट ब्रिसबेन में हुआ यानी जब टैस्ट खत्म हुआ तो दोनों टीमों का स्कोर बराबर था। उस सीरीज में वेस्टइंडीज दो-एक से हारी थी। लेकिन मेलबर्न में आखिरी टैस्ट खेलने के बाद वॉरेल की टीम जाने लगी तो कोई पाँच लाख लोग उसे विदा करने आए।

हारने वाली किसी टीम को हराने वाले देश ने ऐसी विदाई कभी नहीं दी। इंग्लैंड की रानी को छोड़ने या आस्ट्रेलिया की ही ब्रेडमेन की सर्वविजयी सन् अड़तालीस की टीम को भी स्वदेश वापसी पर लेने इतने लोग नहीं आए थे। फ्रेंक वॉरेल ने आस्ट्रेलिया के कप्तान रिची बैनो को अपने क्रिकेट दस्ताने देते हुए कहा था–अपने स्पाइक्स (क्रिकेट के खास जूते) नहीं भेंट कर रहा क्योंकि मेरे घुटने थक कर बूढ़े हो गए। इस सीरीज के जरिए वॉरेल ने न सिर्फ वेस्टइंडीज को विश्व विजयी टीम बनाया बल्कि क्रिकेट को ही फिर से नया जीवन दिया।

तब से सिर्फ भारत के खिलाफ खेलती वेस्टइंडीज की पराजय अपन ने चाही होगी। उससे हारने के बाद भी कहा होगा कि कोई बात नहीं वेस्टइंडीज से हारे हैं ना। लेकिन यहाँ अपन मना रहे थे कि वह इंग्लैंड से भी जीत न पाए। पिछले मई महीने में वेस्टइंडीज को कोई बाईस साल बाद उसी के मैदानों पर एक सीरीज में हारने वाली आस्ट्रेलियाई टीम अभी तीन-चार दिन पहले सिडनी लौटी और उसका बड़ा स्वागत हुआ। लेकिन सिडनी मार्निंग हेरल्ड ने लिखा कि अब तो पामियों ने भी वेस्टइंडीज को हरा दिया है। इससे हमारी जीत की चमक कुछ तो उतरी है। यानी जो टीम इंग्लैंड से भी हार जाए उससे क्या जीतना। और उससे जीतने का क्या जश्न।

पॉमी आप जानते हैं कि आस्ट्रेलिया और न्यूजीलेंड में अंग्रेजों को कहा जाता है। आस्ट्रेलिया का सबसे लोकप्रिय खेल है पॉमी बैशिंग–यानी अंग्रेजों की खिंचाई। आस्ट्रेलिया के लोगों को जो मजा अंग्रेजों की धुलाई में आता है वह सचमुच उनकी मानसिक सेहत का नमूना है। आस्ट्रेलिया में उन अपराधियों के वंशज रहते हैं जिन्हें सजा देने के लिए ब्रिटेन के शासकों ने कंगारुओं के देश में भेजा यानी देशनिकाला दिया।

अपने देश में वैसा पॉमी बैशिंग नहीं होता। आस्ट्रेलिया के लोग तो अंग्रेजों की ऐसी खिंचाई करते हैं जैसे उन्हें ऊँचे ओटले से नीचे उतारकर उस धूल-धुक्कड़ में रगड़ना हो जिसमें वे खुद लथपथ हैं। अपने यहाँ अंग्रेजों से खुन्दक भी हो तो दूसरे तरह की है। हम लोग ही अलग हैं और कुछ भी कर लें कोई दो सौ साल तक हमें गुलाम बनाए रखने वाले अंग्रेजों से हमारे सम्बन्ध स्वस्थ और सामान्य नहीं हो सकते। अंग्रेजों की अकड़ धूल में मिले और अपने को बेहतर समझने का उनका दम्भ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
'झूठा साबित' हो तो हमारे घायल आत्मसम्मान को शान्ति मिलती है। शायद इसीलिए मैं मना रहा था कि वेस्टइंडीज को इंग्लैंड भी धो दे क्योंकि इससे ज्यादा शर्मनाक पराजय और क्या होगी। वेस्टइंडीज का लाड्‌र्स में इंग्लैंड से हारना उसके पराभव का फाइनल उदाहरण होगा।

इसलिए अपना ध्यान सात समन्दर पार लन्दन के उस लाड्‌र्स में लगा हुआ था जहाँ वेस्टइंडीज के लिए जीतना बाएँ हाथ का खेल होना चाहिए था लेकिन अपन चाहते थे कि वह हार जाए। जालिम स्टार टीवी वैसे तो दुनिया-भर का क्रिकेट दिखाता रहता है लेकिन उस दिन वह प्राइम स्पोर्ट्स पर विंबल्डन का पहला दिन दिखा रहा था। दूरदर्शन आजकल ऐसा कोई खेल नहीं दिखाता जिससे उसके पैसे न बनते हों। बीबीसी वर्ल्ड वाले भी क्रिकेट नहीं दिखाते क्योंकि वह चैनल सुदूर पूर्व के लिए है जहाँ क्रिकेट से पैसे नहीं बनते। बीबीसी रेडियो जरूर कमेंट्री कर रहा होगा लेकिन उसकी वेव आसानी से नहीं मिलती। इसलिए टेलीप्रिंटर पर आने वाली खबरों से काम चलाना था। चलाया।

भारत के जीतने की भी उतनी खुशी नहीं होती जितनी उस दिन लाड्‌र्स पर वेस्टइंडीज के हारने की खबर पर हुई। वेस्टइंडीज से दो सौ अट्‌ठाईस रन भी नहीं बने। लारा अड़तीस पर थे जब आखिरी दिन का खेल शुरू हुआ। तीन चव्वे और ठोककर वे चौवन पर पहुँचे और फिर स्लिप के सामने विकेट कीपर स्टुअर्ट ने उन्हें लपक लिया। लारा भले ही टैस्ट रिकार्ड 375 रन और फर्स्ट क्लास रेकार्ड 501 रन की पारियाँ गए साल खेल चुके हों और उन्हें दुनिया का सर्वश्रेष्ठ बल्लेबाज माना जाता हो, ऑफ स्टम्प के बाहर वे उतने ही कमजोर हैं जितने अपने विनोद कांबली। लारा के जाने के बाद वेस्टइंडीज को कोई बचा नहीं सकता था। क्योंकि हूपर पहले ही जा चुके थे। कप्तान रिचर्डसन और आर्थरटन और एडम्स लंगर डालकर टीम के जहाज को तूफान से बचाने वाले बल्लेबाज नहीं हैं। एडम्स ने पैडों का इस्तेमाल कर-करके भारत के स्पिनरों को भले ही रोक लिया हो। तेज गेंदबाज उनके पैडों से नहीं रुकते।

बहरहाल इंग्लैंड बहत्तर रन से जीत गया। इंग्लैंड की 'ए' टीम में पिछले मौसम भारत आए मध्यम तेज गेंदबाज डॉमीनिक कॉर्क ने सिर्फ तिरालीस रन पर सात विकेट लिए और अपने पहले टैस्ट में सात विकेट लेने वाले इस सदी के पहले अंग्रेज गेंदबाज हो गए। पहले टैस्ट में इंग्लैंड को वेस्टइंडीज ने नौ विकेट से धो दिया था। इसलिए अब सीरीज बराबर हो गई ओर चारों तरफ खेलों में हारने वाले इंग्लैंड ने एकदम अपनी सारी उम्मीदें इस नामुराद क्रिकेट टीम पर टिका दी हैं। वहाँ के अखबार अब इंगलिश क्रिकेट के पुनर्जागरण का रास्ता देख रहे हैं। लेकिन जैसा कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
आस्ट्रेलिया वाले कहेंगे इस वेस्टइंडीज को हराकर क्या कायाकल्प होगा ? पॉमी लोग जरा हमसे जीतकर बताएँ। इंग्लैंड अगर सीरीज जीत गया तो सचमुच उसे फिर धोने में आस्ट्रेलिया को जो मजा आएगा वह पिछले एशेज सीरीज में नहीं आया होगा। जब पॉमी लोग उड़ रहे हों तो उन्हें चटाक से मक्खी की तरह मारकर गिराने में आस्ट्रेलिया को जरा ज्यादा मजा आता है।

शुरू में कहा कि पैंतीस साल से वेस्टइंडीज अपनी चहेती टीम है और उसके हारने की इच्छा मन में तभी हुई जब वह भारत से खेली हो। नहीं तो अपन ने हमेशा उसकी विजय की कामना की। अब अगर चाहा कि वह इंग्लैंड से भी हार जाए तो सिर्फ इसलिए नहीं कि वह सचमुच बहुत कमजोर टीम हो गई है। कमजोर तो वह पैंतीस साल में सचमुच अब ही हुई है। लेकिन तगड़ी टीम जीते और कमजोर हारे इससे ऐसे किसी भी आदमी को कोई ऐतराज नहीं होता जो खेल में सचमुच आनन्द लेता हो। आखिर वॉरेल की कप्तानी में वेस्टइंडीज ने महानता की चढ़ाई सीरीज में हार से ही की थी। लेकिन तब आस्ट्रेलिया में इसका कोई मतलब ही नहीं था कि कौन जीता, कौन हारा।

तब मूँछ मरोड़ आस्ट्रेलिया में भी उदात्त खेल भावना ऐसी उड़ान पर थी कि एक बार हजारों दर्शकों ने अपने कप्तान रिची बैनो को ही हूट किया। एक टैस्ट में वेस्टइंडीज के बल्लेबाज (शायद सोलोमन) खेल रहे थे। बैनो उन्हें गेंद कर रहे थे। एक गेंद खेलते समय आँधी का ऐसा झोंका आया कि सोलोमन की टोपी उड़ी और डंडों पर गिर कर गिल्ली गिरा गई। बैनो ने अपील की और अम्पायर ने उन्हें आउट दे दिया। वे आउट थे भी। भले ही आँधी से उड़ी टोपी से गिरी गिल्लियों के कारण हुए हों। लेकिन जब वे पेवेलियन लौटने लगे तो आस्ट्रेलिया के ही दर्शकों ने बैनो को हूट करना शुरू किया और जब तक वे लौट नहीं गए दर्शक बैनो का मखौल उड़ाते रहे। नियम से भले ही बल्लेबाज आउट हुआ हो लेकिन वह बैनो की गेंद या आस्ट्रेलिया की फील्डिंग के कारण आउट नहीं हुआ था।

खिलाड़ियों की खेल भावना के तो हजारों उदाहरण मिल जाएँगे। दर्शकों की ऐसी उदात्त भावना की भी बीसियों मिसालें हैं। फ्रेंक वॉरेल और गैरी सोबर्स दोनों ही ऐसी खेल भावना बढ़ाने वाले कप्तान थे और इसलिए और भी महान थे। लॉयड ने आस्ट्रेलिया में लिली और थामसन की तूफानी गेंदबाजी से पाँच-एक की करारी हार खाने के बाद चार तेज़ गेंदबाज खेलाने और उनसे लगातार शार्ट पिच गेंद बल्लेबाज के बदन पर करवाने का प्रयोग किया और तेज गेंदबाजी को क्रिकेटीय आक्रमण से ज्यादा बल्लेबाज पर जानलेवा शारीरिक हमला बना दिया। जब तक वेस्टइंडीज के पास तूफानी गेंदबाज और धुआँधार बल्लेबाज रहे यह हमला सचमुच के शारीरिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खतरे से ज्यादा उसका भय ही पैदा करता रहा। लेकिन समरनीति में कहीं यह बात थी कि हम खेल के नहीं जीते तो थोबड़ा तोड़ के जीत जाएँगे।

जो भी टीम या बल्लेबाज वेस्टइंडीज की तूफानी गेंदबाजी के इस खतरनाक पहलू पर जोर देता उसे दब्बू, डरपोक और रोतला कहा जाता। सबसे ज्यादा शिकायतें अंग्रेज बल्लेबाज और उनकी टीमें ही करतीं क्योंकि काले दैत्याकार तूफानी गेंदबाज जब दनदनाते तोप के गोले दागते तो वे जान बचाते फिरते। तीन-चार दशकों से इंग्लैंड में क्रिकेट खेलना खेल या शौकिया नहीं रह गया है। क्रिकेट से वहाँ खिलाड़ी अपनी दाल-रोटी और मक्खन-केक कमाते हैं और बीयर पी-पीकर मुटियाते रहते हैं। तेज गेंदबाजी, खेलने की कला, हिम्मत और कुशलता किसी बिरले बल्लेबाज में ही रह गई है। यही इंग्लैंड वाले अपनी काउंटियों में वेस्टइंडीज के तमाम नए-पुराने खिलाड़ियों को खूब पैसा देकर खेलाते हैं। वहाँ खेल-खेलकर वेस्टइंडीज के खिलाड़ियों में भी पेशेवर और गलाकाट रवैया आ गया है। अब वे आनन्द लेने और देने के लिए नहीं खेलते। पैसे के लिए खेलते हैं और इस धन्धे में सभी हथकंडों को जायज समझते हैं।

लॉयड के लिए अपनी तूफानी गेंदबाजी लगातार इस्तेमाल और उसका खौफ ही काफी था क्योंकि उन्हें होल्डिंग से लेकर मार्शल जैसे महान तूफानी गेंदबाजों की सेवाएँ हमेशा मिलती रहीं। इन गेंदबाजों को ऐसा नहीं कि बल्लेबाज को आतंकित करने या मारने की कभी जरूरत ही न पड़ी हो या वे खेल भावना के कारण ऐसे हथकंडों से दूर रहते हों। कभी-कभार एकाध मिसाइल या तोप का गोला वे भी चला देते थे।

फिर स्वयं लॉयड और रिचर्ड्स, ग्रीनिज, हेन्स, कालीचरण आदि बल्लेबाज भी वेस्टइंडीज में थे जो जमकर बल्लेबाजी कर सकते थे और जिनमें लपककर शॉट मारने की जितनी कुशलता और दम था उतना ही समर्पण भाव से अपनी टीम को संकट से उबारने का दृढ़ निश्चय भी था।

फिर रिचर्ड्स उतने महान कप्तान भले ही न हों लॉयड तो निश्चित थे। उन्होंने चौहत्तर टैस्टों में कप्तानी की और छत्तीस जीते। किसी भी कप्तान ने इतने टैस्टों में कप्तानी नहीं की न इतने टैस्ट जीते। लोग कहते कि जैसी टीम उन्हें मिली थी और मिलती रही उसमें कप्तानी की जरूरत ही कितनी पड़ती थी। लेकिन कोई एक टीम की कप्तानी सबसे मुश्किल है तो वह वेस्टइंडीज की। वेस्टइंडीज कई द्वीप देशों के खिलाड़ियों की टीम होती है जिनकी राष्ट्रीयता, जातीयता और पृष्ठभूमियाँ अलग-अलग होती हैं। आपसी प्रतिद्वन्द्विताएँ भी बहुत हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लॉयड तो अपने आप रिटायर हुए लेकिन रिचर्ड्स को जबरन रिटायर किया गया। वे सन बानवे का विश्व कप खेलकर रिटायर होना चाहते थे लेकिन उन्हें सम्मान से हटने का मौका नहीं दिया गया और इसमें वर्तमान कप्तान रिचर्डसन का भी हाथ है। रिचड्र्स महान बल्लेबाज थे लेकिन कप्तान भी ऐसे कोई बुरे नहीं थे। उनकी कप्तानी में आखिर वेस्टइंडीज विश्वविजयी बनी रही। उनके अपने खब्त, शौक और धन्धे भी थे और वे टीम पर अनुशासन लगा सकने वाले आदमी नहीं थे। लेकिन टीम के खिलाड़ी उनका सम्मान करते थे और कप्तानी का उनका अधिकार मानते थे।

रिचड्र्स को हटाने और फिर टीम से दूर रखने में रिचड्र्सन ने प्रतिष्ठान का साथ दिया। उनसे न अब टीम एक रहती है न समरनीति विकसित कर पाते हैं न खुद अपने प्रदर्शन से क़ोई उदाहरण पेश कर सकते हैं। एक खिलाड़ी को प्रेरित और निर्देशित नहीं कर सकते। इसलिए टीम बिखर रही है। कोई अपनी जान नहीं लड़ाता न किसी में प्रदर्शन का गौरव है। हारने की खीज जरूर पूरी टीम में है। लेकिन हार से बचने के लिए वे जिस तरह के हथकंडे आजमाते हैं उनसे क्रिकेट खेल नहीं रहता लड़ाई बन जाता है। वेस्टइंडीज के गेंदबाज अब हार से बचने के लिए बल्लेबाज का विकेट लेने के बजाय उसे अस्पताल में पहुँचाने से बाज नहीं आते। मोहाली टैस्ट में पहले सिद्धू और फिर प्रभाकर को उन्होंने मारा। प्रभाकर की तो नाक से खून ही बहता रहा। आस्ट्रेलियाई बल्लेबाज वेस्टइंडीज में लगातार पिटते रहें। और अब वाल्श ने इंग्लैंड के बल्लेबाज थोर्प को पहली ही गेंद पर अस्पताल पहुँचा दिया था। और दोनों पारियों में इंग्लैंड को जमाए रहने वाले रोबिन स्मिथ के शरीर पर भी लिलाये पड़े हुए हैं। तेज गेंदबाजी का यह इस्तेमाल क्रिकेट नहीं है और इस पर उतारू टीम अगर हारती है तो वह भले ही वेस्टइंडीज हो अपने को सन्तोष मिलता है। उसे इंग्लैंड सरीखी टीम भी हरा दे तो और भी सन्तोष होता है।

मायावती के मुख्यमन्त्री बनने से तो लोकतन्त्र के किसी मूल्य की स्थापना नहीं हुई। वेस्टइंडीज की पराजय से जरूर खेल भावना को बल मिला है। इसलिए अपने क्रिकेट में अटके रहने को नेता कार्यकर्ता और पाठक माफ कर सकते हैं।

(2.7.95)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब कोई क्यों टोकता नहीं

अखबारों, रेडियो, टीवी, बाजारों, बैठकों और पानवालों—सबके यहाँ क्रिकेट की चर्चा है। ऐसी-ऐसी जगहों पर वन डे इंटरनेशनल हो रहे हैं जहाँ क्रिकेट खेलने और देखने की कोई परम्परा नहीं। जहाँ से कोई अन्तर्राष्ट्रीय क्रिकेट खिलाड़ी नहीं निकला। और जहाँ रणजी ट्रॉफी के छोटे-मोटे मैच हुए हों तो हुए हों नहीं तो जिसे क्रिकेट का बुखार कहते हैं वह उन शहरों के शरीर पर कभी चढ़ा नहीं होगा।

लेकिन लोग कहते हैं कि देश में क्रिकेट का बुखार चल रहा है। चूँकि अपने को तो यह बुखार बारहों महीने चढ़ा रहता है इसलिए अपने पर इसे नापा नहीं जा सकता। लेकिन इतना जरूर बता सकता हूँ कि जो लोग पहले उस बुखार को पागलपन बता कर हँसा करते थे वे भी अब न सिर्फ चुप हो गए हैं, बल्कि क्रिकेट की बातें करने लगे हैं और खुद जाकर नहीं देखते होंगे तो टीवी पर जरूर देख रहे हैं।

ग्यारह फरवरी को कलकत्ते में विश्व कप का उद्घाटन समारोह हुआ। उसमें करोड़ों रुपए लगे और वह समारोह मुल्लाजी की दारू की तरह खोटा निकल गया। कोई सवा लाख लोग उसे देखने आए और करोड़ों ने टीवी पर देखा होगा। लेकिन एक चिट्ठी अपने देखने में नहीं आई जिसमें शिकायत की गई हो कि क्रिकेट पर यह करोड़ों रुपए क्यों खर्च होना चाहिए, भारत गरीब देश है। लोगों को क्यों अपना समय बरबाद करना चाहिए जब कि हाड़-तोड़ मेहनत करने के बाद भी देश के आधे लोगों को दो जून रोटी नहीं मिलती। कहीं कोई पत्र छपा भी तो ज्यादा से ज्यादा इस दुख में कि उद्घाटन समारोह पर खर्च हुआ रुपया क्रिकेट के खेल की जड़ें सींचने पर लगाया जा सकता था।

क्रिकेट का ऐसा सर्वव्यापी स्वीकार शायद ही पहले कभी इस देश में हुआ होगा। जब सन् तिरासी में हमने फटाफट क्रिकेट का विश्व कप जीता तब भी नहीं और फिर सन् सत्तासी में जब हमने पाकिस्तान के साथ मिलकर विश्व कप का आयोजन किया तब भी नहीं। देश के इस तरह क्रिकेटमय हो जाने से अपने को तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुख और सन्तोष होना चाहिए था। अपना जुनून देश का जुनून बन जाए तो इससे बड़ी परितृप्ति और इससे चरम सुख क्या होगा।

लेकिन सच कहूँ? मेरे मन में कहीं उदासी और हलकी-सी निराशा है। यह इसलिए नहीं कि भारत के जीतने की सम्भावना अपने हिसाब से बहुत कम है। इसलिए भी नहीं कि जो रोमांच, जो सनसनी, जो धुकधुकी और जो उत्तेजना मन में सफेद कपड़ों, हरे मैदानों और लाल गेंद को देखते ही होती है वह रंगीन कपड़ों, सफेद गेंद और हर कहीं दिखते विज्ञापनों से नहीं होती। जो मन और स्वभाव में खेल की तरह खिला हुआ है वह सर्कस को देखकर बाग-बाग नहीं होता।

उदासी और निराशा उन कारणों से है जिन पर पहले चिढ़ और कुछ गुस्सा भी आया करता था। तीस-चालीस साल पहले आपको ऐसे बहुत से लोग मिल जाया करते थे जो लगभग पवित्र आक्रोश में कहते थे कि क्रिकेट इस देश में क्यों खेला जाना चाहिए? यह साम्राज्यवादियों और सामन्तों का खेल है। इसमें सिर्फ लोगों का वक्त बरबाद होता है। उनका भी जो खेलते हैं और उनका भी जो देखते हैं। पढ़े-लिखे लोग अंग्रेज व्यंग्यकार जॉर्ज बर्नार्ड शॉ का उद्धरण बताकर कहते थे कि क्रिकेट वह खेल है जिसे ग्यारह मूर्ख खेलते हैं और हजारों देखते हैं।

भारत में क्रिकेट को अवांछनीय बताकर इसकी भर्त्सना करने वाले ज्यादातर लोग वे होते थे जिन्हें समाजवादी और साम्यवादी कहा जाता था। वे लोग भी थे जो आजादी की लड़ाई में शामिल हुए थे या जिन्हें अंग्रेजों से लड़ी गई स्वाधीनता की लड़ाई के मूल्यों और परम्पराओं का थोड़ा बहुत अन्दाज और उन पर कुछ गर्व हुआ करता था। कुछ लोगों को भले ही क्रिकेट से खेल के नाम पर ही छड़क पड़ा करती होगी और उनके नाक-भौं सिकोड़ने में निजी नापसन्दगी बल्कि कुंठा भी होती होगी। लेकिन मोटे तौर क्रिकेट को इस देश के बदन में छूटा साम्राज्यवादी रोग वही लोग कहते थे जो कहीं न कहीं आजादी की लड़ाई से अपने को एकाकार करते थे और जिन्हें लगता था कि ऐसा करके वे अपना देशप्रेम बता रहे हैं।

यह आभास भले ही गलती से बन गया हो लेकिन बन गया था कि क्रिकेट साम्राज्यवादी अंग्रेजों का खेल है। वे इसे भारत में इसलिए लाए कि भारतीयों को गुलाम बनाए रखा जा सके। हमारे राजा-महाराजाओं ने भी उसे इसलिए अपनाया, खेले और बढ़ावा दिया ताकि अपने को अंग्रेजों के समान समझ सकें और इसके जरिए अंग्रेज शासकों से अपने सम्बन्ध बढ़ा सकें और अपने लिए उनसे सुख-सुविधाएँ, ऐश-आराम और प्रजा पर अत्याचार करने की छूट पा सकें। क्रिकेट का इस्तेमाल हमारे राजा-महाराजाओं ने अपना राजपाट बचाने और अंग्रेजों की नजरों में ऊपर उठने के लिए किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसलिए ब्रिटिश इंडिया में जो लोग अंग्रेजों से और रियासतों में राजा- महाराजाओं से आजादी के लिए लड़ रहे थे, वे क्रिकेट को गुलामी का खेल मानकर चलते रहे हों तो अचरज नहीं होना चाहिए। भारतीयता का आग्रह रखने वालों को भी क्रिकेट विदेशी और वह भी हमें गुलाम बनाने वालों का खेल लगता रहा है। भले ही सचाई यही हो कि इस सदी की शुरुआत में भी जो भारतीय टीमें बना करती थीं और जो लोग क्रिकेट खेला करते थे उनमें अंग्रेजों और राजा- महाराजाओं की गिनती एक हाथ की उँगलियों पर की जा सकती थी। ज्यादातर खेलने वाले तो गरीब और निम्न मध्य वर्ग के नौकरीपेशा लोग ही हुआ करते थे।

मुम्बई में होने वाले साम्प्रदायिक क्रिकेट टूर्नामेंट में भी जो टीम यूरोपियनों के नाम से खेलती थी उसके खिलाड़ी भारत की तरफ से नहीं खेले। और तो और क्रिकेट की दुनिया के कथा-पुरुष रणजी यानी रणजीत सिंह जी ऑफ नवानगर और उनके भतीजे दुलीप सिंह जी और नवाब मंसूर अली खाँ पटौदी के पिता बड़े नवाब पटौदी भारत की तरफ से नहीं खेले। दुलीपसिंह जी को मौका था कि वे खेलते लेकिन रणजी ने उन्हें मना कर दिया क्योंकि सौराष्ट्र की छोटी-सी रियासत के जाम साहेब चाहते थे कि उनका भतीजा इंग्लैंड की तरफ से खेले। सन् बत्तीस और छत्तीस में बड़े पटौदी भारत की कप्तानी कर सकते थे लेकिन वे इंग्लैंड की तरफ से खेले। सन् छियालीस में वे तभी इंग्लैंड में भारत के कप्तान बने जब उन्हें इंग्लैंड ने तेरह साल से खेलाया नहीं था, क्योंकि बॉडी लाइन सीरीज में वे कप्तान जारडीन से सहमत नहीं थे।

न सिर्फ भारत के पहले कप्तान सीके नायडू साधारण भारतीय थे, एक-दो को छोड़कर कोई खिलाड़ी राजघराने का नहीं था। अंग्रेजों ने भारत में क्रिकेट को बढ़ावा जरूर दिया लेकिन इंग्लिश क्रिकेट की तुलना में तो वे उसका मखौल ही उड़ाते रहे। यह भी सही है कि अंग्रेजों की देखादेखी पटियाला, बड़ौदा, होलकर आदि राजघरानों ने क्रिकेट को संरक्षण दिया लेकिन इनकी टीमों में और इनकी तरफ से खेलने वाले लगभग सभी खिलाड़ी आम जनता में से निकले साधारण लोग थे। आजादी के बाद से एक छोटे नवाब पटौदी, हनुमन्त सिंह, अंशुमान गायकवाड़ या कुछ छोटे-मोटे सामन्तों के अलावा भारत की टीम कभी भी राजा-महाराजाओं से भरी नहीं रही।

सच पूछिए तो हॉकी और फुटबॉल की तरह क्रिकेट भी खेलने के स्तर पर तो हमेशा आम लोगों का ही खेल रहा। आने को तो हॉकी और फुटबॉल भी विदेश से ही आए और अंग्रेज ही इन्हें लेकर आए। उन्हीं की छावनियों में ये खेल भी क्रिकेट की तरह ही खेले जाते रहे और वहीं से निकलकर जनता में फैले। क्रिकेट की तरह हॉकी में भी हॉकी स्टिक और गेंद की जरूरत पड़ती ही है। गोल के पाइप भी लगाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
पड़ते हैं। फुटबॉल जरूर पैर से खेला जाता है लेकिन उसमें गोल आदि की जरूरत तो पड़ती ही है। तो यह दलील भी गलत है कि क्रिकेट में इतना तामझाम लगता है कि आम और गरीब लोग खेल ही नहीं सकते। अपने कई राजघरानों ने कुश्ती को भी क्रिकेट से कोई कम बढ़ावा नहीं दिया। फिर भी आभास तो बना ही रहा कि हॉकी और फुटबॉल नहीं क्रिकेट ही विदेशी, अंग्रेजों और राजा-महाराजाओं का खेल रहा है और वही हमारे गुलाम होने की प्रक्रिया से जुड़ा रहा। आजाद भारत में जब राजा-महाराजाओं का राज नहीं रहा तो भी क्रिकेट के खिलाफ पूर्वग्रह बना रहा। अब दलील यह हो गई कि जिस खेल को दुनिया के सात देश भी नहीं खेलते, जिसे ओलम्पिक में शामिल नहीं किया गया और जिसे कोई जनवादी देश नहीं खेलता उसे आजाद और लोकतान्त्रिक भारत में इतना प्रोत्साहन क्यों मिलना चाहिए ? क्रिकेट का मौसम शुरू होते ही शिकायतें होने लगतीं बल्कि संसद में सवाल उठते कि रेडियो और फिर टीवी पर क्रिकेट को इतना समय क्यों दिया जाता है ?

क्रिकेट को साम्राज्यवादियों और सामन्तशाहों से एकाकार करने का चलन आजाद भारत में खेल संगठनों के आपसी झगड़े और प्रतिद्वन्द्विता में भी बदल गया। कहा जाता है कि भारत में हॉकी का पतन इसलिए हुआ कि गुलामी के प्रतीक क्रिकेट को बढ़ावा मिलता है। क्रिकेट बोर्ड भारत का सबसे अमीर खेल संगठन है और उसे सरकारी अनुदान की जरूरत कभी नहीं पड़ी, न उसने ली। फिर भी अज्ञान में आरोप लगता कि सारा पैसा क्रिकेट पर खर्च होता है। रेडियो, टीवी पर भी दबाव आया कि वह क्रिकेट पर टाइम कम करे और दूसरे खेलों पर बढ़ाए। जबकि असलियत यह है कि क्रिकेट को जो भी बढ़ावा, समर्थन और पैसा मिला आम जनता से मिला है। क्रिकेट देखने हॉकी और फुटबॉल से हमेशा ज्यादा लोग आए। लेकिन यह धारणा बनी रही कि क्रिकेट साँवले साहबों और सरकार की मदद से फल-फूल रहा है।

जरूरी नहीं कि क्रिकेट के विदेशी होने और भारत को गुलाम रखने वालों के खेल होने की बात करने वाले भारतीयता के झंडाबरदार देशप्रेमी ही रहे हों। इसे इस देश के प्रभुवर्ग या सत्ता प्रतिष्ठान का खेल होने का आरोप भी कोई आम जनता की तरफ से नहीं आता था। यह आरोप भी आखिर वही लोग लगाते रहे हैं जिनका सत्ता प्रतिष्ठान में पव्वा नहीं तो दखल तो रहा ही है और जो इसे जनता की ओर से होने वाली राजनीति के मुहावरे के नाते पैसे वालों या सत्ता वालों की राजनीति पर हमले के मुहावरे की तरह इस्तेमाल करते रहे हैं। यह दिखावे की जनवादी राजनीति समाजवादी, साम्यवादी और वामरंग के कांग्रेसी ही नहीं देश-भक्ति का बिल्ला लगाए घूमने वाले संघ परिवारी भी करते रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
एक खेल को लेकर सिद्धान्त और आजादी के मूल्यों की ऐसी खेल और किसी भी खेल पर नहीं हुआ। क्रिकेट के साम्राज्यवादी होने की बहस फिलहाल छोड़ भी दें और यह भी मान लें कि इसमें ज्यादा दम नहीं था फिर भी इससे इतना तो साफ है ही कि पहले ऐसे लोग काफी थे जो गुलामी के माने गए प्रतीकों और देश के संसाधन और समय को लेकर चिन्तित होते थे और इसलिए क्रिकेट का विरोध करते थे। उन्हें बड़े आदमियों के शगल के गरीब लोगों में लोकप्रिय होने से बुरा भी लगता था।

अब इनमें से कोई नहीं बोल रहा। देश में जो पायजामा क्रिकेट चल रहा है और जिसका बड़े पैमाने पर बाजारीकरण हो गया है उसके खिलाफ कहीं कोई आवाज सुनाई नहीं देती। कोई नहीं कह रहा कि एक साम्राज्यवादी खेल बाजार की ताकतों के रथ पर चढ़ा दिग्विजय कर रहा है और इस गरीब देश के लोग अपना पैसा और वक्त बरबाद कर रहे हैं। कहाँ गए वो सब लोग जो क्रिकेट की लोकप्रियता को आजादी के मूल्य और गुलामी के प्रतीक के नाते देखकर उत्तेजित होते थे और उसकी भर्त्सना करते थे। क्या देश के लोगों में उन प्रतीकों से विद्रोह और उन मूल्यों की चाहत नहीं रह गई है ?

क्रिकेट को जो लोग पहले पूँजीवादियों और साम्राज्यवादियों का खेल कहा करते थे वे उदाहरण देते थे रूस और चीन का। लेकिन भूल जाते थे कि घनघोर पूँजीवादी देश अमरीका में भी क्रिकेट नहीं खेला जाता। अब क्रिकेट अंग्रेजों के भूतपूर्व उपनिवेशों में ही नहीं खेला जाता। वह हालैंड में भी खेला जाता है और उसकी टीम इस विश्व कप में आई है। संयुक्त अरब अमीरात की टीम आई है तो केन्या की भी। जिम्बाब्वे की टीम भी खेल रही है। और कम-से-कम आधे दर्जन देश ऐसे हैं जो अगले विश्व कप में आएँगे।

सही है कि फटाफट क्रिकेट उन्नीसवीं सदी और बीसवीं सदी के पहले पचास साल वाला खेल नहीं है। यह कृषि सभ्यता का आराम से खेला जाने वाला खेल नहीं है। सिर्फ दिन-भर चलता है और फैसला भी हो जाता है। इसीलिए फैल रहा है और लोकप्रिय भी हो रहा है। लेकिन मेरी उदासी और निराशा इसलिए भी है कि यह टीवी पर देखा जाने वाला वीडियो गेम हो गया है। कितने ही दर्शक ऐसे हैं जो जानते नहीं कि मैदान में खेल कैसा होता है। जो खेल खेलने की इच्छा न बढ़ाए और लोगों को खेल के मैदान में खेलने में न लगाए वह खेल नहीं हो सकता, दिमागी मनोरंजन हो सकता है। खेलने वाले को अगर इसका दुख हो तो गलत है।

(25.2.96)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईडन गार्डंस से खुद ही निकाले गए हम लोग

ऐसा सदमा है कि दो दिन हो गए पर अब भी सुन्न और गुम खड़ा हूँ।

इस बीच ईडन गार्डंस से अपने दफ्तर आकर, रात एक बजे तक लिखकर, सिर्फ दो घंटे सोकर और सवेरे जहाज से दिल्ली और दिल्ली से कार में सीधे मोहाली आकर छठे विश्व कप का सबसे रोमांचकारी और काँटे का मुकाबला देखने और उस पर लिखने के बाद खूब सोकर उठा हूँ। फिर भी अपने में लौटता हूँ तो खुद को उतना ही गुम और सुन्न पाता हूँ बल्कि लगता है कि डामर जैसी उदासी कुछ और गाढ़ी हो गई है।

अपने को ईडन गार्डंस के मुख्य द्वार पर एक हाथ से धोती सँभालते और दूसरे से माथे का पसीना पोंछते देखता हूँ। फिर वही पुलिस वाला बड़े उजड्डपन से मुझे वहाँ से हटने को कहता है और मैं उससे लगभग भीख माँगते हुए कहता हूँ—देखने दो भाई, देखूँगा नहीं तो लिखूँगा क्या? अखबार वाला हूँ।

और वह पुलिस वाला जैसे माफी माँगते हुए कहता है—"आप बुजुर्ग हैं, कहीं दंगे में न फँस जाएँ, इसलिए कह रहा हूँ।" और वह सचमुच मुझे वहीं पुलिस वालों के बीच छोड़कर वॉकी टॉकी पर बात करने लगा। मेरे अन्दर जो हो रहा था उसमें दंगे में भी फँस जाता तो बचकर निकलने की इच्छा नहीं होती।

सामने द्वार के आगे के ओटले पर सुनील गावसकर बैठे थे। कुछ देर पहले ही उनने मुझे कहा था—अब कहने को रह ही क्या गया है। भारतीय क्रिकेट के इन्हीं गौरव पुरुष गावसकर का इसी कलकत्ता के इसी ईडन गार्डंस के दर्शकों ने बदतमीजी की थी। तब गावसकर ने प्रतिज्ञा की थी कि जहाँ उनकी पत्नी और उनका ऐसा अपमान हुआ वहाँ वे फिर नहीं खेलेंगे और संन्यास लेने तक खेले भी नहीं!

वही गावसकर बैठे देख रहे थे कि सुरक्षा के कैसे कड़े इन्तजाम में ठीक द्वार के बाहर लगाई गई बस में छुपाकर बैठाए गए भारतीय खिलाड़ियों को ले जाया गया। पुलिस ने भीड़ को भगा दिया था फिर भी कुछ नारेबाजी तो हुई। सबसे पहले मैनेजर वाडेकर और आखिर में कप्तान अजहर को बस में बैठते देखा। वे निश्चित ही चेहरा ढँककर नहीं आए थे लेकिन मुझे तब भी और अब भी लगता है कि उनके चेहरे काले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
कपड़ों से ढँके थे। कमांडो और पुलिस पायलट गाड़ियों और जवानों की रक्षा के साथ वह बस गई।

थोड़ी देर बाद वैसी ही सुरक्षा में श्रीलंका के खिलाड़ी निकले। उनके स्वागत में दो लोग श्रीलंकाई झंडा लहरा रहे थे। कुछ भारतीयों ने भी उन्हें तालियाँ बजाकर विदा किया। ऐसा नहीं लगा कि वे खुशियों से कोई उछले पड़ रहे थे। उनकी बस रवाना हुई तो झंडे फिर लहराए और विदाई हुई। खिड़की के पास बैठे सनत जयसूरिया को मैंने थम्स अप करते देखा। श्रीलंकाई खिलाड़ियों की रक्षा में पुलिस ने कोई कसर नहीं छोड़ी। उनकी बस पर कुछ नहीं फेंका गया।

दुनिया के सबसे बड़े और शानदार कहे जाने वाले क्रिकेट स्टेडियम के दरवाजे से विश्व कप के सेमीफाइनल की विजित और विजेता टीमों को इस तरह बुर्कों में लपेटकर ले जाना पड़े इससे बड़ी शर्म क्या होगी! जो महानगर अपने को खेलप्रेमी होने के गौरव से लपेटे रखता है वह उस रात कलंकित होकर जैसे मुँह छुपाए बैठा था।

आठ घंटे पहले गार्डियन लन्दन के क्रिकेट लेखक को मैं गर्व से कह रहा था, "मैंने लाड्र्स में मैच देखे हैं, मेलबर्न क्रिकेट ग्राउंड पर भी फाइनल देखा है लेकिन ईडन गार्डंस की बात अलग है।" और वह अंग्रेज मुझसे एकदम सहमत था। अब मैं, मेरा देश और मेरी टीम और इन सबके साथ क्रिकेट इसी ईडन गार्डंस से बड़े बेआबरू होकर निकाल दिए गए थे। मैंने कहा कि दरवाजे पर मैं सुन्न और गुम खड़ा था शर्म और पराजय में। पराजय क्रिकेट और श्रीलंका से नहीं। हार अपने-आपसे और शर्म अपने ऐसे होने पर।

गुरुवार को सवेरे हवाई अड्डे जाते हुए सूनी सड़कों और सिर झुकाए खड़े मकानों में कलकत्ता मुझे अपनी ही तरह सुन्न, गुम और उदास लगा। ऐसी ही सुबह होती है जिसकी धूप मैली और मरी हुई लगती है। अपने दिल में दुनिया का सबसे बड़ा और शानदार क्रिकेट मैदान रखने वाला यह कलकत्ता जैसे अपने कलंकित सिर को चादर से ढँके रखना चाहता था। सभी चीजों की चमक जैसे उतर गई थी और धरती-आसमान दोनों पर कालिख की परत पथराई हुई थी।

विमान में बैठने के पहले एक जवान क्रिकेट रिपोर्टर ने मुझसे पूछा, "आपको क्या ज्यादा शर्मनाक लगता है ? अपना खेलना या खेल बीच में बन्द करवाना"? खेल रुकवाना। महज इसलिए कि आप हार रहे हैं बोतलें, ईंट, पत्थर आदि फेंककर खेल ही न होने दें तो खराब खेलने से यह ज्यादा शर्मनाक है। अगर आप विजय में विनम्र और पराजय में धीरज नहीं रख सकते तो आप महान क्या अच्छे देश भी नहीं हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
सकते। खेल तो आखिर खेल है लेकिन लड़ाई में भी जो लोग विजय में विनम्रता और पराजय में धीरज नहीं खोते वही युद्ध जीतते हैं और जीतते रहते हैं। मुझे आज एक भारतीय और क्रिकेट प्रेमी होने की शर्म है! क्या तो हम लोग हैं और क्या हमारा क्रिकेट! सच मैं पातक में हूँ। मेरे जीने का गर्व जैसे आज शवशैया पर पड़ा है। मैं नहीं जानता कि यह उठकर फिर कभी स्वस्थ होगा।

गला भर आया और रुलाई आने लगी। मैं चुप हो गया। उस जवान रिपोर्टर की मेहरबानी कि अकेला छोड़कर वह चुपचाप अपनी सीट पर चला गया। मुझे इसकी फिकर नहीं कि ईडन गार्डंस में जो कुछ हुआ उसे सारी दुनिया टीवी पर देख रही थी। इसकी भी नहीं कि सब थू-थू करेंगे और अब हमें कोई अन्तर्राष्ट्रीय आयोजन क्यों मिलेगा? कल हम बँगलूर में हुई पराजय से बौखलाए और पागल हुए पाकिस्तान पर हँस रहे थे। ईडन गार्डंस की उस काली रात के बाद हम अपने आपसे क्या कहेंगे?

दुनिया की नजरों में गिरने से पहले व्यक्ति और देश अपनी नजरों में गिरता है। जो लोग हारता हुआ मैच उपद्रव करके रुकवाते हैं वे भयभीत लोग हैं जो मानते हैं कि हारे तो दुनिया ही खत्म हो जाएगी। ऐसे लोगों की जीवनी शक्ति और आत्मगौरव संकट में है। यह कमजोरी क्रिकेट के खेल में नहीं—राष्ट्र के जीवन में चारित्रिक शक्तिहीनता की लक्षण है। देश खेलों में जीतकर और इन विजयों पर गर्व करके नहीं जीते। देश अपनी चारित्रिक शक्ति और आत्मगौरव से जीते हैं क्योंकि इनके बिना किसी खेल में कोई जीत नहीं सकता।

ईडन गार्डंस के बाहर गुम और सुन्न मैं इसलिए खड़ा था कि वहाँ जो हुआ उसने मुझे अपने राष्ट्रीय जीवन की वास्तविकता से साक्षात्कार करा दिया। कहीं यह भी बताया कि इस कमजोरी के लिए मैं भी जिम्मेदार हूँ और यह मुझमें भी है। बताने को तो मैं भी बता सकता हूँ कि लोगों ने अचानक पानी की बोतलें, ईंट, पत्थर, सड़े फल और जो भी हाथ में आया वही फेंकना क्यों शुरू कर दिया और नेताओं और प्रशासकों और कलकत्ता की झूठी शान रखने वालों की तरह कह सकता हूँ कि उपद्रवी आखिर गिनती के लोग थे।

सही है कि श्रीलंका को 251 पर रोककर भारत ने आधा मैच जीत लिया था। यह भी सही है कि सिर्फ सिद्धू का एक विकेट खोकर तेईसवें ओवर में 98 रन बना लेने वाले सचिन तेंदुलकर और संजय मांजरेकर भारत को आसान जीत दिलवाते लग रहे थे। 164 गेंदों पर 154 रन बनाने थे जो नौ विकेट रहते मजे में बन जाने थे। तभी तेंदुलकर स्टम्प आउट हुए। छह गेंदों के बाद कप्तान अजहर लड्डू कैच देकर अंडे पर गए। फिर सिर्फ एक रन जोड़कर मांजरेकर बोल्ड हो गए। लप्पेबाजी करके खेल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में आए दबाव को दूर करने भेजे गए श्रीनाथ रन आउट हो गए। फिर कानपुर और बँगलूर के हीरो जाडेजा भी अंडे पर डंडे उड़वा के चल दिए। और तो और नयन मोंगिया और आशीष कपूर भी लल्लू जैसे लड्डू कैच देकर लौट गए।

तेईसवें ओवर में 98 रनों पर एक से 35वें ओवर में सिर्फ 120 पर आठ विकेट हो जाना भारत का ऐसा ढेर होना था जो अगर दर्शकों की समझ से बाहर था तो उनके आक्रोश का फूट पड़ना स्वाभाविक ही कहा जाएगा। बिना किसी संघर्ष और कारण के भारतीय खिलाड़ियों का ऐसा समर्पण दर्शकों की समझ से तो बाहर था ही उनकी उम्मीदों और अब तक के खेल से बने जीत के भरोसे से बिलकुल विपरीत था। तेंदुलकर के जाने के बाद सात बल्लेबाजों ने 75 गेंदों पर सिर्फ 22 रन बनाए और वे भी ऐसे दबकर जैसे उन पर पहाड़ टूट पड़ा हो। काम्बली, कुम्बले और प्रसाद 15 ओवर में 132 रन नहीं बना सकते थे और इसलिए शान से जीतते भारत की शर्मनाक पराजय निश्चित थी।

दर्शकों की निराशा समझ में आ सकती है। कई लोग तो जाडेजा के आउट होते ही जाने भी लगे थे। लेकिन वहाँ एक लाख दस हजार से ज्यादा लोग थे और उनका गुस्सा अपने उन्हीं खिलाड़ियों पर था जो घंटे-भर पहले तक उनके हीरो थे। यह निराशा और गुस्सा वे खेल पर ही निकाल सकते थे और उनने निकाला। अपनी टीम के दयनीय प्रदर्शन और हार के सामने खड़े दर्शकों की हताशा और उनका गुस्सा चाहे जितना स्वाभाविक हो, उनने जो किया वह बिलकुल गलत, निन्दनीय, शर्मनाक और दयनीय था।

यह न पहली बार भारत की बल्लेबाजी इस तरह ढेर हुई थी, न पहली बार कलकत्ता में भारत हार रहा था। जून 83 में हम वेस्टइंडीज में विश्व कप जीतकर आए थे। छह महीने बाद इसी ईडन गार्डंस के मैदान पर हमें वेस्टइंडीज ने टैस्ट में एक पारी और 46 रन और वन डे में भी बुरी तरह धो दिया था। उसके बाद से भारत ईडन गार्डंस में कई बार हारा है और उसकी बल्लेबाजी ढेर हुई है। वैसे भी भारत कुल मिलाकर और ईडन गार्डंस में भी जीतने से ज्यादा तो हारता ही रहा है। इसलिए दर्शकों की हताशा और आक्रोश के फूट पड़ने का कोई खास उत्तेजक क्रिकेटीय कारण नहीं होना चाहिए।

इस बार बँगलूर में पाकिस्तान पर विजय ने जरूर भारतीय टीम से बहुत उम्मीदें बढ़वा दी थीं। जो-जो बहुराष्ट्रीय और राष्ट्रीय कम्पनियाँ विश्व कप का इस्तेमाल अपने प्रचार के लिए कर रही थीं उन्होंने भी विज्ञापनों से उम्मीदों का झनझनाता संसार बनाया था। टीवी और रेडियो और अखबारों ने भी ढिंढोरा पीटने और वन डे क्रिकेट को करोड़ों लोगों तक पहुँचाने में हाथ बँटाया था। विश्व कप महज फटाफट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

क्रिकेट का टूर्नामेंट न होकर एक तरह की अन्तर्राष्ट्रीय घटना हो गई थी और इसमें Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri राष्ट्रभक्ति को उकसाने के व्यापारिक प्रयास भी किए गए थे।

ऐसे वातावरण में भारतीय टीम का श्रीलंका के हाथों दुबारा पिटना कलकत्ता के खेल पागल दर्शकों को खटक रहा हो और खिलाड़ी से महानायक बने सितारों का खाक होकर मिटना सहन न हुआ हो तो भी क्रिकेट के खेल, अपने शहर और बंगालियों के खेल प्रेम पर बट्टा लगाने का उन्हें कोई अधिकार नहीं था। गरीब और तृप्ति के दूसरे साधनों के अभाव से ग्रस्त लोगों के समाज में विज्ञापन का तिलिस्म किस तरह का झूठा संसार बनाता है और उसके टीन-टप्पर उखड़ने से कैसी हताशा फैलती है इस मनोवैज्ञानिक तथ्य को भी आप चाहे जितना फैला लें बुधवार की रात कलकत्ता के दर्शकों ने जो किया वह अनुचित था।

खेल दुबारा शुरू करने की कोशिश को दर्शकों ने जिस तरह फेल किया उससे साफ है कि वे मैच को पूरा होने ही नहीं देना चाहते थे। मैच रेफरी क्लाइव लॉयड और अम्पायरों ने काफी कोशिश की कि मैच फिर शुरू हो सके। रोते हुए काम्बली और कुम्बले का लौटना भी बताता है कि भारतीय खिलाड़ी मैच को रद्द नहीं करवाना चाहते थे। लेकिन दर्शक आमादा थे कि मैच नहीं होगा। अगर वे गिनती के थे और तमाम दर्शकों की भावनाओं को अभिव्यक्त नहीं कर रहे थे तो उन्हें रोका बल्कि निकाल बाहर किया जा सकता था। पर उन्हें हजारों तथाकथित खेलप्रेमियों ने नहीं रोका, न ऐसा निश्चय दिखाया कि खेल बिगाड़ने वालों की हिम्मत ही नहीं होती।

यह भी शायद सही हो कि ज्यादातर गैलरियों में पीने के पानी का भी इन्तजाम नहीं था। चूँकि कोकाकोला विश्व कप के आधिकारिक प्रायोजक हैं इसलिए इस पेय के अलावा स्टेडियम में और कोई पेय बिक नहीं सकता था। जब ऐसी गर्मी और उमस में पीने के पानी और शीतल पेयों का भी ठीक से इन्तजाम न हो तो दर्शकों को गुस्सा आ सकता है और वह खेल पर निकल भी सकता है। लेकिन कलकत्ता में आयोजकों ने कब दर्शकों के लिए सब इन्तजाम किए हैं? प्रेस बॉक्स तक में तो ठीक से प्रबन्ध नहीं किया जाता।

पानी की, पेशाबघरों की, खाने की चीजों की दिक्कत होगी इसे मैच देखने वाले सब लोग जानते हैं। खासकर कलकत्ता के दर्शक तो जानते ही हैं इसलिए वे अपना इंतजाम करके साथ लेके जाते हैं। अपने यहाँ सवा लाख दर्शकों के लिए बुनियादी जरूरतों की सेवाएँ सुलभ करवाने की इच्छा और क्षमता ज्यादातर आयोजकों में नहीं होती। क्रिकेटवालों को जब अपने खिलाड़ियों की ही खास चिन्ता नहीं होती तो साधारण दर्शक तो भगवान या अपने भरोसे होता ही है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दर्शकों ने यह सब खूब देखा-भाला है इसलिए इससे नाराज होकर दंगा करने को आमादा वे नहीं होते। जब हमारी सरकारें ही लोगों के लिए बुनियादी जरूरतों की व्यवस्था नहीं करतीं और लोग सरकार माई-बाप के भरोसे नहीं अपने पराक्रम या सहनशक्ति पर जीवनयापन करते हैं तो वे एक मैच सिर्फ इसलिए नहीं रोक देंगे कि पीने के पानी का इन्तजाम नहीं था। जो अपने खेलप्रेमी होने पर गर्व करते हैं वे तो ऐसा कभी कर ही नहीं सकते।

कहा गया कि ईडन गार्डंस के स्टेडियम में ज्यादा से ज्यादा लोगों को बैठा सकने और इस तरह उसकी क्षमता दुनिया के किसी भी क्रिकेट स्टेडियम से बढ़ाने के लालच में कुर्सियाँ छोटी रखी गई हैं। उनके बीच इतनी जगह भी नहीं छोड़ी गई है कि लोग आराम से और एक-दूसरे पर अतिक्रमण का आभास दिए बिना बैठ सकें। सीटों की कतारों के बीच सुरक्षा और पुलिस प्रबन्ध के लिए भी पर्याप्त जगह और सुभीता नहीं छोड़ी गई है। इसलिए जब वह स्टेडियम पूरा भर जाता है तो देखने वाले भले ही वाह-वाह करते हों, बैठने वालों को तो लगता है कि वे ढोरों की तरह बाड़े में भर दिए गए हैं।

यह दलील सही हो सकती है। लेकिन कलकत्ता की आबादी सवा करोड़ से ज्यादा है। जिस महानगर में लोगों को रहने की जगह नहीं और घरों तक में वे एक-दूसरे पर टूटे पड़ते हैं—वहाँ छोटी सीटों और उनके बीच पर्याप्त जगह न होने की दलील ही वाहियात है। जो शहर हर कहीं और हमेशा भीड़ होने का आभास देता है और जहाँ सबसे ज्यादा लोग सबसे कम जगह में रहते और घुसकर सोते हैं—वहाँ स्टेडियम सीटों की साइज और उनके बीच की जगह की शिकायत दंगे का कारण नहीं हो सकती। अगर आप कलकत्ता में रहते हैं और उसके जीवन से अभ्यस्त हो चुके हैं तो ऐसी शिकायतें नहीं करेंगे।

आयोजकों, पुलिस, प्रशासकों और मन्त्रियों—बल्कि वहाँ उपस्थित मुख्यमन्त्री ने भी कुछ नहीं किया—इसे नोट किया जा सकता है। लेकिन भूलिए मत कोई तीस साल पहले इसी ईडन गार्डंस में टैस्ट मैच में दंगा हुआ था और मैच रद्द होते-होते बचा था। वेस्टइंडीज की टीम में यही क्लाइव लॉयड तब बच्चे थे और जान हथेली पर लेकर मैदान से भागे थे। एक फुटबाल मैच के दौरान पुलिस दौड़ाने और लाठीचार्ज करवाने से कैसी भगदड़ मची थी और कितने लोग मरे थे इसे भी याद रखिए। सवा लाख लोगों की भीड़ में पुलिस कार्रवाई से हालत और बिगड़ती है इसे हम सब जानते हैं।

इसलिए ये सब बेकार की बातें हैं कि भारतीय बल्लेबाज अच्छा नहीं खेले और भारत हारने लगा इसलिए खेल-प्रेमियों का आक्रोश फूट पड़ा। इन बातों का भी कोई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
मतलब नहीं कि टिकट बहुत महंगे थे, बड़ी मुश्किल में मिले, ईडन गार्डंस तक आने के पर्याप्त साधन नहीं थे इसलिए लोग नाराज थे। बैठने की सीटें छोटी थीं, उनके बीच जगह नहीं थी, पीने का पानी, खाने का सामान और दूसरी सुविधाएँ इफरात में नहीं थीं इसलिए लोग हताशा में थे। आयोजकों, पुलिस- प्रशासकों और मुख्यमन्त्री तक ने दंगाइयों को रोकने-समझाने की कोई कोशिश नहीं की तो यह बताइए कि इन लोगों के रोकने से कौन-सा उपद्रव आमतौर पर इस देश में रुकता है।

इन बहानों को छोड़िए और अपने खेलप्रेम की असलियत समझिए। यह भी मान लीजिए कि ईडन गार्डंस में उस रात हमने धाँधली और उपद्रव करके मैच रुकवाया क्योंकि हम हार रहे थे और पाकिस्तान से जीतने के चार दिन बार श्रीलंका से हार कर विश्व कप से बाहर होना हम बर्दाश्त नहीं कर सकते। इसलिए भले ही मैच श्रीलंका को मिल जाए पर हमारा खेल और देशप्रेम इतना जबरदस्त है कि हम भारत को हारते नहीं देख सकते थे।

जो लोग साक्षात पराजय का सामना करने के बजाय हार को ऐसी धाँधली और दंगाई से टालते हैं वे हार से डरकर टूट जाने के भय में जीने वाले लोग हैं। हम पाकिस्तान को खेल में बेईमानी, धोखाधड़ी और चालबाजी करने के लिए हिकारत से देखते हैं। भारत से हारने पर पाकिस्तान में होने वाली प्रतिक्रिया और पागलपन का हम मखौल उड़ाते हैं। कहते हैं कि वह भारत से हारने से इसलिए डरता है कि एक राष्ट्र के नाते बिखर जाने का खतरा उसे हमेशा रहता है क्योंकि वह भारत को तोड़कर बनाया गया एक नकली और नया देश है।

श्रीलंका के अखबार भारत के दर्शकों को उपदेश दे रहे हैं कि पराजय में कैसा सम्मानजनक बरताव करना चाहिए, हम बताते हैं। श्रीलंका के तमिलों और सिंहलियों के अतिरेकी स्वभाव को हम सब जानते हैं। आखिर हमारे यहाँ से गए लोगों का ही वह देश है। क्रिकेट के पीछे लंकाइयों के पागलपन में भी एक विकृति है इसे खुद श्रीलंका वाले जानते हैं। इस विश्व कप ने इस उपमहाद्वीप के तीनों देशों के खेल प्रेम का भंडाफोड़ कर दिया है। बँगलूर की पराजय पाकिस्तान को, कलकत्ता की निश्चित हार भारतीयों को और अगर लाहौर में आज आस्ट्रेलिया ने श्रीलंका को हरा दिया तो उस देश को भी हताशा के गर्त में पहुँचा देगी।

मैं सुन्न और गुम हूँ क्योंकि मेरा विश्वास है कि हम बहुत पुराने और संस्कृतिवान देश हैं जिसने कई जय और पराजय देखी हैं और जो अस्तित्व को बनाए रखने का अमृतत्त्व जानता है। फिर क्यों हमने कलकत्ता में रोनटाली की और उपद्रव करके शर्म अपने मस्तक पर पोत ली? खेल को अगर हम खेल नहीं समझ सकते तो जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
को लीला समझने की हमारी धारणा का क्या मतलब? ईडन गार्डंस में बुधवार की रात हमने अपनी आस्थाओं में पलीता लगा लिया। हम जो अपने को एक महान देश और संस्कृति मानते हैं—अब अपने को इतिहास, सभ्यता और संस्कृतिविहीन भीड़ या बाजार बना रहे हैं। मैं सदमे में हूँ इसलिए नहीं कि क्रिकेट के पीछे पागल हूँ इसलिए कि मैं अपने देश पर गर्व किए बिना जिऊँ कैसे? अपने लोगों पर मुझे शर्म आए तो अपना मस्तक मैं कैसे ऊँचा कर सकता हूँ। बताइए? गालिब साब कह गए हैं—"निकलना खुल्द से आदम का सुनते आए थे लेकिन, बहुत बेआबरू होकर तेरे कूचे से हम निकले।" यहाँ तो कूचा भी अपना ही है। और हमीं ने अपने को अपनी पंचवटी से निकाल बाहर किया है।

(17.3.96)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

144430

दहशत में वे वहशत में हम

इसके पहले कि आपको लन्दन में पाकिस्तानियों के दंगाई बर्ताव़ और बच्चे खिलाड़ियों के साथ उनकी धौंस डपट और बदतमीजी पर बहस में डालूँ, एक दृश्य बता दूँ जिसने मेरी आँखों में खुशी और गर्व के आँसू भर दिए।

दक्षिण अफ्रीका के खिलाफ हॉफ सेंचुरी बनाने और जीत की शॉट मारने वाले मोहम्मद कैफ को एक मोटा ताजा दर्शक विकेट से कन्धे पर बैठाकर पेवेलियन ला रहा था। एक और दर्शक दौड़ता आया और उसने बिना डंडे का तिरंगा कैफ को थमा दिया। कैफ ने उसे दोनों हाथों से फैलाकर सिर पर कर लिया। कुछ और भी दर्शक कैफ की इस सवारी में शामिल हो गए। नाचती, खुशियाँ मनाती और भारत को जिन्दाबाद करती यह सवारी जब पेवेलियन के पास पहुँची तो पगड़ी पर इंडिया कैप लगाए एक सिख लड़के ने उसकी अगवानी की। यह रीतेन्दर सोढ़ी भारतीय टीम का कप्तान था। वह पन्द्रह अगस्त का दिन था।

भारत को जिताने वाला एक मुसलमान लड़का उसे मैदान से कन्धे पर बैठा कर लाने और तिरंगा पकड़ाने वाला हिन्दू और अंग्रेज़ धरती पर जीत की इस सवारी की अगवानी करने वाला एक सिख जो विजयी टीम का कप्तान भी है। जिन अंग्रेजों ने हमारे समाज को धर्म-सम्प्रदायों में बाँटा और आपस में लड़वाया, धर्म के नाम पर देश के टुकड़े किए और लगातार प्रचार किया कि यह राष्ट्र कई राष्ट्रीयताओं में बँटकर टूट जाएगा—उन्हीं की धरती पर आजादी की पचासवीं सालगिरह पर यह नजारा दिखाया पन्द्रह बरस से छोटे लड़कों ने।

यह भारत में ही हो सकता है कि कप्तान सिख, जिताने वाला बल्लेबाज मुसलमान और उन्हें कन्धों पर बैठाकर जीत की खुशी मनाने वाले हिन्दू। हमने बावजूद गरीबी, बेरोजगारी, गैरबराबरी और आपसी झगड़ों के ऐसा भारत बनाया। क्या यह गर्व करने और खुशी के आँसू रोने का गौरवशाली कारण नहीं है।

यही दृश्य दुबारा देखने के लिए बाईस अगस्त को टीवी के सामने बैठा था। फाइनल में पाकिस्तान पर जीत के लिए विक्रम महाजन ने लेग में गेंद मारी और आखिरी रन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
बनाने वह और सोढ़ी भागे और भागते चले गए जैसे जान बचाने को भाग रहे हों। वे सचमुच ही जान बचाने को भागे क्योंकि क्रिकेट की काशी कहे जाने वाले लाड्र्स के उस मैदान पर पाकिस्तानी दर्शक जैसे उन्हें मारने को उनके पीछे भाग रहे थे। उस दिन मैदान पर यह उनका चौथा हमला था। पन्द्रह बरस से छोटे बच्चों के क्रिकेट मैच में भी पाकिस्तानी दर्शक अपने देश की टीम को हारते हुए देख नहीं सकते थे। और जैसे उन्हें हराने वाले बच्चों से बदला लेने के लिए उनके पीछे भाग रहे थे।

फिर तेरह साल बाद भारत उसी मैदान पर विश्व कप जीता था लेकिन जिताने वाले खुशियाँ मनाने के बजाय जान बचाने भागे। बाद में जब कप्तान रीतेन्दर सोढ़ी को विश्व कप दिया गया तो तालियाँ बजाने वालों के साथ हो-हल्ला मचाने और गाली-गलौच करने वाले भी थे। पाकिस्तानी दर्शक आखिर तक पचा नहीं पा रहे थे कि पाकिस्तान को हराकर भारत जीत गया है और पुलिस ने जब केन चार्ज करके चार लोगों को गिरफ्तार किया तभी वे हटे, दो जने घायल भी हुए।

पवित्र माने जाने वाले इस ऐतिहासिक मैदान पर अपनी तरह की यह पहली शर्मनाक घटना थी। क्रिकेट इतिहास की स्मृतियों से सजे लाड्र्स के लाग रूम में पहली बार एक दर्शक को मुर्गा बनाकर फुदकाया गया। पुलिस को बल प्रयोग की ऐसी कार्रवाई करनी पड़ी जैसी इस मैदान में पहले कभी नहीं की गई थी। और वहाँ था क्या। पन्द्रह साल से छोटे दस देशों के बच्चों का विश्व कप। इतना अच्छा और कामयाब टूर्नामेंट हुआ लेकिन उसके फाइनल में ऐसी बदमजगी और शर्मनाक वारदातें हुईं क्योंकि पाकिस्तानी दर्शक बच्चों के खेल में भी भारत के हाथों हार बरदाश्त नहीं कर सकते। पन्द्रह दिन लाड्र्स में क्रिकेट का भविष्य देखने को मिला। लेकिन उसे फलता-फूलता देखने के बजाय पाकिस्तानी दर्शक हार की दहशत से बिगड़ी अपनी बीमार मानसिकता के शिकार हो गए और उन्होंने सारा मजा किरकिरा कर दिया।

लेकिन हार की दहशत में उधड़ी बीमार पाकिस्तानी मानसिकता को समझने और बताने के पहले उस भारतीय मानसिकता को देखिए जो जीत की वहशत में बल्ले-बल्ले उछल रही है। अब हिन्दुस्तान का हर अखबार ऐसी खबरों से पन्ने रँग रहा है और बता रहा है कि कैसे हमारे बच्चे खिलाड़ी विश्व कप जीते और कैसे तीन बार खेल चलते हुए और फिर मैच खत्म हो जाने पर पाकिस्तानी दर्शकों ने मैदान पर हल्ला बोला कैसी-कैसी मारे, बच्चे खिलाड़ियों को गालियाँ दीं और कैसे हमारे बच्चे बल्लेबाज इस अग्नि परीक्षा में भी खरे उतरे। कैसे वे विश्व कप और भारत के लिए गौरव लेकर आए और किस तरह हमारी सरकार और अफसरों ने बच्चों के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रिकेट पर कोई ध्यान नहीं दिया है। विश्व कप जीत गए तो अब सब बधाइयाँ दे रहे हैं और श्रेय ले रहे हैं लेकिन करने-धरने के नाम पर किसने क्या किया है ?

टीम के मैनेजर सरकार तलवार और स्कूल खेल महासंघ के अध्यक्ष और टीम के मुखिया नेगी कह रहे हैं कि बच्चों को ट्रॉफी की अनुकृति के अलावा कुछ नहीं मिला है। इनाम की रकम और खिलाड़ियों को भेंट आदि की बातें बेकार हैं। इंग्लैंड के भारतीय व्यापारियों ने जरूर थोड़ा बहुत दिया है। कपिलदेव ने ढाई लाख दिए और कुछ मदद रिलायंस उद्योग ने की है। हम दो साल से इस विश्व कप की तैयारी कर रहे थे। हमें खुशी है कि बच्चों को खेलने और अपनी प्रतिभा दिखाने का मौका मिला। वे लाड्र्स में खेले और विश्व कप जीते। यही सबसे बड़ी बात है। यह सब कहने में कहीं कसक है कि हम तो विश्व कप जिता लाए लेकिन देश ने इन बच्चों, क्रिकेट और हमारे लिए क्या किया।

सच जिस दिन भारत लाड्र्स में पाकिस्तान से फाइनल खेला और पाकिस्तानी दर्शकों के बावजूद जीत गया उस रात न दूरदर्शन पर खबर थी, न आज तक में, न न्यूज टू नाइट में। दूसरे दिन भी दिल्ली में छपने और बँटने वाले अखबारों में से सिर्फ हिन्दू में खेल पेज पर छोटी-सी खबर थी। बाकी किसी भी अखबार में भारत के विश्व कप जीतने की कोई खबर नहीं थी। हमारी समाचार एजेंसियों—पीटीआई और यूएनआई और उनकी हिन्दी सहयोगियों भाषा और वार्त्ता ने भी कोई खबर जारी नहीं की थी। अगर आप सिर्फ भारतीय अखबार पढ़ते और दूरदर्शन देखते रहे हों तो आपको मालूम भी नहीं हुआ होगा कि लोम्बार्ड वित्तीय कम्पनी पन्द्रह साल से छोटे बच्चों का विश्व कप इंग्लैंड में करवा रही है और इसमें दस देश भाग ले रहे हैं और भारत की टीम उसमें अच्छा प्रदर्शन कर रही है।

थोड़ी बहुत जानकारी और उत्सुकता स्टार स्पोर्ट्स के कारण बढ़ी जब ब्रिटेन के स्काई स्पोर्ट्स ने इस विश्व कप के सेमी फाइनल का सीधा प्रसारण दिखाने का निश्चय किया। ब्रिटेन में सीधा प्रसारण देखा गया। अपने यहाँ स्टार ने दो दिन बाद दिन में साढ़े दस बजे से रेकॉर्ड किए गए मैच दिखाए। तब तक भी अपने अखबारों में और टीवी पर कुछ नहीं था। पहला सेमी फाइनल भारत और दक्षिण अफ्रीका के बीच और दूसरा पाकिस्तान और इंग्लैंड के बीच खेला गया। भारत और पाकिस्तान जीतकर फाइनल में पहुँचे। फाइनल का भी स्टार स्पोर्ट्स ने सीधा प्रसारण नहीं किया।

अगर पाकिस्तानी दर्शक लाड्र्स के मैदान पर हुड़दंग और हंगामा नहीं करते और इस कारण लन्दन टाइम्स पहले पेज पर और दूसरे अखबार खेल पेजों पर इसे उछालकर नहीं छापते तो अपने देश में तो यह फाइनल छोटी खबर भी नहीं बनता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो साल से इसकी तैयारी चल रही थी फिर भी सही माने में राष्ट्रीय टीम चुनी जाने की कोई कोशिश हुई हो ऐसा नहीं लगता। ज्यादातर खिलाड़ी पंजाब, हरियाणा, हिमाचल, दिल्ली के थे यानी नार्थ जोन की टीम थी। नेगी और मैनेजर सरकार तलवार का कहना है कि दूसरे राज्यों ने कोई रुचि नहीं ली। इस देश के पन्द्रह साल से छोटे बच्चों के लिए बाकायदा टूर्नामेंट चलता है। फिर दूसरे राज्यों की उदासीनता की बात कैसे ठीक है और अगर ठीक है तो विश्व कप में सचमुच की राष्ट्रीय टीम न भेजने या उसकी प्रक्रिया न चलाने के लिए कौन जिम्मेदार है?

ये सब सवाल नहीं पूछे जाएँगे। पन्द्रह बरस से छोटे बच्चों के क्रिकेट में देश के क्रिकेट प्रशासकों की इस रुचिहीनता पर उनकी खबर नहीं ली जाएगी। बच्चे विश्व कप जीत लाए हैं तो उनका बड़ा स्वागत होगा। मानव संसाधन विकास मन्त्री पहले ही बधाई दे चुके हैं। अब टीम का राष्ट्रपति भवन, प्रधानमन्त्री निवास आदि में अभिनन्दन होगा। रीतेन्दर सोढ़ी हीरो हो जाएँगे। कुछ दिन जश्न चलेगा और जीत की वहशत उतर जाएगी। जैसे इस देश की घरेलू क्रिकेट रणजी ट्रॉफी, दिलीप ट्रॉफी, देवधर ट्रॉफी, सीके नायडू ट्रॉफी आदि में रुचि नहीं है वैसे ही विश्व कप विजेता बच्चों की टीम को भी भुला दिया जाएगा।

जिस तरह हम भारतीयों को जीत की वहशत चढ़ती है वैसी ही पाकिस्तानियों में हार की दहशत बैठी हुई है खासकर भारत से। ज्यादातर पाकिस्तानियों को लगता है कि अगर भारत से हार गए तो न सिर्फ हमारी आन, बान और शान जाती रहेगी एक अलग और मजबूत देश के रूप में हमारा अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा। पाकिस्तान आखिर भारत से अलग होकर बना हुआ राष्ट्र है। कहीं न कहीं उसकी मानसिकता में बैठा हुआ है कि अपन स्वाभाविक और पारम्परिक अंग तो भारत के ही हैं। हमारी विलग राष्ट्रीयता ऐसी है जब तक भारत से तन कर अलग नहीं रहेंगे वह साबुत नहीं रहेगी। हारने वाला और प्यार करने वाला तन कर अलग नहीं रह सकता। इसलिए पाकिस्तान भारत से हार बर्दाश्त नहीं कर सकता और न वह भारत से अपने सम्बन्धों को सामान्य होने दे सकता है। हमारे दोस्त कुलदीप नैयर आजादी के पचासवें साल की शुरुआत की रात वागा सीमा पर मोमबत्ती जलाकर खड़े होते हैं लेकिन भारतीय दोस्तों से आ मिलने के लिए पाकिस्तान की तरफ से कोई नहीं आता।

भले ही अंग्रेजों ने हमें भारत-पाकिस्तान किया हो वे पाकिस्तानियों की मानसिकता नहीं समझते, इसलिए यह जानते हुए भी कि फाइनल देखने एशियाई दर्शक उमड़ पड़ेंगे। लार्ड्स के प्रशासकों ने न तो स्वयंसेवक मैदान पर तैनात किए थे, न वहाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुलिस वालों को बुलाया था। आखिर इंग्लैंड की टीम का भी सेमीफाइनल पाकिस्तान से हुआ था लेकिन वहाँ इतने अंग्रेज नहीं आए और जो आए भी थे उनने पाकिस्तान के हाथों हार का ऐसा बुरा नहीं माना कि सॉकर के दर्शकों की तरह हिंसक होकर दंगा करने लगें। पाकिस्तानियों के बरताव और उनकी दंगई से लाड्र्स के प्रशासक हतप्रभ रह गए। वे माथा पकड़कर पछताते रहे कि यह सब कैसे हो गया।

लन्दन के अखबार लिखते हैं कि वहाँ सिर्फ आठ हजार दर्शक थे लेकिन वे जो शोर कर रहे थे उतना तो अस्सी हजार दर्शक भी नहीं करते। खेल के चलते हुए दर्शक मैदान पर हल्ला बोलते हुए इस तरह नहीं जाते। पहली बार जब पाकिस्तानी दर्शक टूट पड़े तब भारत का पाँचवाँ विकेट—भुवन चन्द्र गिरा था। दर्शकों ने आकर पाकिस्तानी खिलाड़ियों का उत्साह बढ़ाया कि शाबास ऐसे ही खेलते जाओ। फिर जब छठा विकेट गिरा तो वे फिर मैदान में भागे चले आए और अपने खिलाड़ियों से कहा कि तुम जीत रहे हो। ऐसे ही खेलते जाओ तो इंडिया को हरा दोगे। दोनों बार दूसरे सिरे पर रीतेन्दर सोढ़ी खड़े हमले में अपना आपा रखे रहे।

लेकिन जब सातवाँ विकेट गिरा ही नहीं और सोढ़ी और महाजन भारत को जीत के छह रन नजदीक ले आए तो सवेरे से बैठे और पाकिस्तान जिन्दाबाद का लगातार नारा लगाते आ रहे पाक़िस्तानी दर्शकों का धीरज टूट गया। इस बार वे मैदान पर खेल रुकवाने के लिए टूट पड़े थे। उन्होंने भारतीय खिलाड़ियों को धमकाया और गालियाँ दीं और स्टम्प उखाड़कर ले गए। ऐसी अफरातफरी मची कि खिलाड़ी और अम्पायर सब पेवेलियन लौट आए। अगर पुलिस और दूसरे स्वयंसेवक आकर हालात नहीं सँभालते तो वे पाकिस्तानी खेल पूरा ही नहीं होने देते। वे पाकिस्तान को भारत से हारता देख नहीं सकते थे। इस अफरातफरी में ही दो लोग घायल हुए। पुलिस ने देखा कि एक दर्शक लाठी भाँज रहा है। उसे काबू में करके हिरासत में पहुँचाया गया।

जब हालत सुधरी तो अम्पायर और टीमें लौटीं और सोढ़ी और महाजन ने जीतने के लिए जरूरी छह रन आसानी से बना लिए और जान बचाकर भागे और पेवेलियन में शरण ली। वे न कन्धों पर बैठाए जाकर तिरंगा लहराते हुए लौटने की सोच सकते थे, न विजय के बाद जुलूस में मैदान में घूम सकते थे। बावजूद भारतीय दर्शकों के यह हो नहीं सकता था। इसलिए कप देने का समारोह वहीं और उसी गैलरी में हुआ जहाँ तेरह साल पहले कपिल ने प्रूडेशियल कप लिया था। इतने अच्छे खेल और इतना अच्छा टूर्नामेंट खेलने वाले बच्चों का हौंसला बढ़ाने का एक तत्काल कार्यक्रम भी नहीं हुआ। स्काई स्पोर्ट्स विवाद से बचने के लिए जल्द ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
कैमरा हटाकर चल दिया हालाँकि कमेंटरी के लिए उसने सबसे अच्छे खिलाड़ियों को बोलने पर लगाया था।

लन्दन में कुछ भारतीय दर्शकों ने आरोप लगाया कि पाकिस्तानी दर्शक हारने पर इसी तरह दंगई करते हैं। दो साल पहले इमरान खान के कैंसर अस्पताल के लिए पैसा उगाहने के लिए क्रिस्टल पैलेस मैदान पर ऐसा ही मैच हो रहा था। भारत जीतने लगा तो पाकिस्तानियों ने हमला कर दिया और फिर वह मैच खेला ही नहीं जा सका। ये पाकिस्तानी इसी तरह दंगा करते हैं और क्रिकेट जैसे खेल को बदनाम करते हैं। सही है। लेकिन हमें इसी साल मार्च की वह रात भी याद रखनी चाहिए जब कलकत्ता में विश्व कप का सेमी फाइनल हो रहा था। भारत जब श्रीलंका से हारने लगा तो वहाँ भी दर्शकों ने जो हाथ में आया मैदान पर फेंकना शुरू किया। और यह फेंका-फेंकी खेल रुकवाने तक चलती रही। मैच पूरा नहीं हुआ और रेफरी क्लाइव लॉयड ने श्रीलंका को विजयी घोषित कर दिया। कलकत्ता में दर्शक मैदान में नहीं घुस सके क्योंकि इंतजाम बहुत तगड़ा था।

पर कलकत्ता के भारतीय और लन्दन के पाकिस्तानी दर्शकों की मंशा एक ही थी। वे अपनी टीम को हारते हुए नहीं देख सकते थे। कलकत्ता में जो हुआ वह बीस अगस्त को लार्ड्स में हुई वारदात से कोई कम शर्मनाक नहीं था। फिर भारतीय और पाकिस्तानी भाई-भाई करने से क्यों घबराते हैं। वे हार की दहशत में जीते हैं और हम जीत की वहशत में पगलाते हैं। ये एक ही प्रवृत्ति, एक ही मानसिकता के दो पहलू हैं। इसलिए न भारत की जीत में ज्यादा सत्व है, न पाकिस्तान की पराजय में। हम दो देश भले ही क्रिकेट की महाशक्तियाँ हों हम जीत और हार को उस समदृष्टि से नहीं देख सकते जिसके बिना हम महान खेल राष्ट्र नहीं हो सकते। ओलम्पिक में भारत के शर्मनाक प्रदर्शन का रोना अब भी चल रहा है।

बच्चों को विश्व कप जीतने पर बधाई नहीं दीजिएगा !

(25.8.96)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भेड़ों का बब्बर शेर होना

आजकल श्रीलंकाई वन डे में बिलकुल वैसे ही खेल रहे हैं जैसे वेस्टइंडियाई पन्द्रह-बीस साल पहले खेलते थे। शान से चमत्कार करते हुए और जन्मजात विजेता की तरह। इसलिए कोई अचरज नहीं कि कल वे सिंगर कप जीत गए और साथ में कोई तीस लाख रुपए के इनाम!

लेकिन सिंगर कप और इतना सारा पैसा जीतने से भी ज्यादा सुख और सन्तोष उन्हें इस बात से मिला होगा कि अपने लोगों के सामने उनने आस्ट्रेलिया को रगड़-रगड़कर मारा। एक नहीं दो बार और दोनों बार कहीं ऐसा नहीं लगा कि आस्ट्रेलिया को जीतने का मौका है। आस्ट्रेलिया के मूँछ मरोड़ और खम ठोकू खिलाड़ी ही चिढ़े, चिल्लाए और कुढ़-कुढ़ के खेलते रहे। कभी भी ऐसा नहीं लगा कि लंकाई अपना आपा खो रहे हैं।

वैसे हराने को तो इसी साल मार्च में श्रीलंका ने आस्ट्रेलिया को लाहौर में विश्व कप के फाइनल में हराया ही था। उस टीम में तो उनके दिग्गज स्पिनर शेन वार्न, कप्तान टेलर और तूफानी गेंदबाज मेकडरमट भी थे जो फिट न होने के कारण सिंगर कप की टीम में नहीं थे। विश्व कप की जीत और किसी भी कप में कैसी ही धमाकेदार जीत से ज्यादा बड़ी और महत्त्वपूर्ण होती है। माना।

लेकिन वह जीत लाहौर में हुई थी और हालाँकि पाकिस्तानी दर्शक सभी लंकाई टीम का हौसला बढ़ा रहे थे और श्रीलंका से काफी दर्शक वहाँ फाइनल देखने पहुँचे थे—लाहौर कोलम्बो नहीं है। यह भी सही है कि श्रीलंका को टैस्ट खेलने वाली टीम का दर्जा दिलवाने और उसका वर्तमान विजयी अभियान शुरू करवाने में पाकिस्तान का काफी बड़ा हाथ है। फिर भी अपना घर, अपनी परिस्थितियाँ और अपने दर्शक अपने ही होते हैं और उनके सामने एक ऐसी टीम से जीतने का मजा ही अलग है, जो अपने को बड़ी तीसमारखाँ मानती हो और डेढ़ दो साल से जिससे आपकी बड़ी खुन्नस चल रही हो। भारत को जीत का जो मजा पाकिस्तान को बँगलूर में हराकर आया। वह सिडनी या मेलबर्न में थोड़े आया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
श्रीलंका की आस्ट्रेलिया से खुन्नस हो जाना और दोनों टीमों की ऐसी खटपट चलने लग जाना जैसी भारत की पाकिस्तान से, इंग्लैंड की आस्ट्रेलिया से और आस्ट्रेलिया की न्यूजीलैंड से चलती है जरा अनहोनी बात है। कहाँ श्रीलंका और कहाँ आस्ट्रेलिया! न दोनों पड़ोसी, न दोनों में दूसरे कारणों से पुश्तैनी खुन्दक, न क्रिकेट में दोनों की टकराहट! श्रीलंका को टैस्ट दर्जा मिले अभी कुछ साल ही हुए हैं और आस्ट्रेलिया में पहला टैस्ट एक सौ सत्रह साल पहले हो चुका है। खेल में आस्ट्रेलिया का दर्जा भी लंका से कहीं ऊँचा रहा है और बावजूद वन डे अब भी है।

लेकिन हुआ यह कि गए साल श्रीलंका टीम पाकिस्तान खेलने गई और वहाँ उसने उस समय के विश्वविजेता पाकिस्तान को वन डे और टैस्ट दोनों में हरा दिया। यह न सिर्फ श्रीलंका की पाकिस्तान में पाकिस्तान पर जीत थी, कोई भी टीम बरसों बाद पाकिस्तान में पाकिस्तान को हराकर निकली थी। इसके पहले सिर्फ क्लाइव लॉयड की विश्वविजेता टीम ही पाकिस्तान में पाकिस्तान को हरा पाई थी। आस्ट्रेलिया की टीम दो साल पहले श्रीलंका में सिंगर कप खेलकर पाकिस्तान गई थी और वहाँ आपसी झगड़ों और रिश्वतखोरी-जुआँबाजी आदि के आरोपों से बेहद बिखरी और दबी-पिटी होने के बावजूद पाकिस्तान ने उसे हरा दिया था। इसी सीरीज के दौरान शेनवार्न, टिम मे और मार्क वॉ ने पाकिस्तानी खिलाड़ियों पर जुआँ खिलवाने वालों से रिश्वत लेकर इन खिलाड़ियों को मैच हारने के पैसे देने के आरोप लगाए थे।

न ये आरोप ठीक से जाँचे गए न इनकी पाकिस्तानी बोर्ड और आईसीसी से ठीक से छानबीन करके मुकदमे चलाए। बल्कि जिस सलीम मलिक पर सीधे आरोप लगाए गए थे उनको एक पाकिस्तानी जज ने झूठमूठ की जाँच से बरी भी कर दिया था। यही पाकिस्तानी टीम गए साल आस्ट्रेलिया खेलने गई थी और वहाँ दोनों टीम के बीच बड़ा तनाव चला और अखबारों और टीवी वालों ने मजा लिया। पाकिस्तान वन डे और टैस्ट दोनों में ही आस्ट्रेलिया से हार गया।

जो खुन्दक पाकिस्तानी और आस्ट्रेलियाई खिलाड़ियों में निकलनी थी, वह पाकिस्तान के बाद आस्ट्रेलिया के दौरे पर आई श्रीलंका की टीम के खिलाड़ियों और आस्ट्रेलियाई खिलाड़ियों में ठन गई। पहले तो लंकाई ऑफ स्पिनर मुरलीधरन को आस्ट्रेलिया के अम्पायर डैरिल हेयर ने 'चकर' यानी गेंद करने के बजाय फेंकने का अपराधी पाकर बार-बार नो बाल देकर अपमानित किया। मुरली का अन्तर्राष्ट्रीय कैरियर ही लगभग खत्म हो गया था। वह तो श्रीलंका टीम ने उसका भरपूर साथ देकर उसे बचा लिया नहीं तो टैस्टों में कोई अस्सी से ज्यादा विकेट ले चुके मुरली धोखाधड़ी से ही इतने टैस्ट खेलकर इतने विकेट लेने वाला खिलाड़ी करार दे दिया जाता। फिर अपने को तेज गेंदवाजी के 'दादा' समझने वाले मेकडरमट और मेकग्रा-कालूवितर्णा और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जयसूर्या पर बुरी तरह पिटा सब। इन दोनों ने कई बार श्रीलंका के वन डे के इन विस्फोटक ओपनिंग बल्लेबाजों के हाथों ऐसी मार खाई कि आस्ट्रेलिया की पिचों पर वेस्टइंडीज वाले भी उन्हें ऐसी बेरहमी से पीट नहीं पाए थे। मेकडरमट और मेकग्रा ही नहीं आस्ट्रेलिया के सभी खिलाड़ी कालू और जयसूर्या से गाली-गलौच करते और बार-बार अपमानित करते। आस्ट्रेलियाई खिलाड़ियों का लंका की पूरी टीम से ही ऐसा अपमान का बरताव होता जो समान स्तर पर खेलने वाली दो क्रिकेट टीमों का हो ही नहीं सकता। और हालाँकि श्रीलंका वहाँ तीनों टैस्ट हार गया और वेस्टइंडीज, श्रीलंका और आस्ट्रेलिया के बीच हुई बेंसन एंड हेजेस वन डे सीरीज में वेस्टइंडीज को खिसकाने के बाद भी तीन में से दोनों फाइनलों में बुरी तरह हारा—आस्ट्रेलिया में लंकाई बल्लेबाजों की धुआँधार और धूमधड़ाका बल्लेबाजी का ऐसा सिक्का जमा कि दर्शक दूर-दूर से उन्हें खेलते देखने और मेकडरमट, मेकग्रा और शेन वार्न की मोगरी से पिटाई देखने आते।

गए साल के अन्त और इस साल के प्रारम्भ में आस्ट्रेलिया में खेलते हुए श्रीलंकाई टीम के खिलाड़ियों को बार-बार लगा कि उन्हें दोयम दर्जे का खिलाड़ी और तीसरे दर्जे का आदमी माना जाता है। उन्हें न सिर्फ अभ्यास करने और खेलने की सम्मानजनक सुविधाएँ नहीं दी जातीं उन्हें बेईमान और धोखाधड़ी से खेलनेवाला भी माना जाता है। जब कालू या जयसूर्या या गुरुसिंघा या रणतुंगा या डिसिल्वा तूफानी गेंदबाजों की दत्त से धुलाई कर देते तो वे ऐसा बताते जैसे उन्हें धोखे से लँगड़ी लगाकर दच्च से चित कर दिया हो।

आस्ट्रेलियाई खिलाड़ियों और बोर्ड के भी बरताव से श्रीलंका की टीम के प्रत्येक खिलाड़ी ने अपने को बुरी तरह अपमानित महसूस किया। इसी चोट से वे टीम में गुँथे और आक्रामक खेल में महारत हासिल करने लगे और उसी में से जयसूर्या और कालूवितर्णा की विस्फोटक जोड़ी निकली जो पहले पन्द्रह ओवरों में ऐसी अन्धड़ चलाती है कि सभी टीमें औंधी पड़ी मिलती हैं।

आस्ट्रेलिया वाले जानते थे कि उनने श्रीलंका के खिलाड़ियों से कैसा बरताव किया है और उन्हें डर था कि जब वे श्रीलंका जाएँगे तो उनके खिलाड़ी और दर्शक जमकर बदला चुकाएँगे। कोलम्बो में मुक्ति चीतों का किया बम विस्फोट तो बहाना था। आस्ट्रेलिया ने विश्व कप में श्रीलंका जाकर अपना मैच इसीलिए नहीं खेला कि उसके खिलाड़ियों के मन में चोर था और वे डर रहे थे कि तमिल आतंकवादी नहीं वहाँ के सिंहली दर्शक ही कहीं उनका भुर्ता न बना दें। वेस्टइंडीज को भी श्रीलंका के हाथों वन डे सीरीज में पिटना गले नहीं उतरा था। उसके खिलाड़ियों ने भी बदतमीजी और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
अपमान करने में कसर नहीं छोड़ी थी और इसलिए वे भी आस्ट्रेलिया के साथ श्रीलंका का बायकाट करने में शामिल हो गए।

आस्ट्रेलिया में श्रीलंका के खिलाड़ियों ने अपमान और गलाजत के जो कड़ुवे घूँट पिए थे उन्हीं का जबरदस्त सकारात्मक उलट प्रदर्शन उनने विश्व कप के दौरान अपने सभी मैचों में किया। उनकी बल्लेबाजी तो धुआँधार और अभेद्य थी ही, फील्डिंग भी उनने शानदार की और गेंदबाजी भी ऐसी कि कोई बल्लेबाज उसकी पिटाई नहीं कर पाया। दिल्ली में भारत ने 272 बना डाले तो जयसूर्या और कालू ने चार ओवर में ही पचास कर दिए थे।

विधि का विधान देखिए कि फाइनल में श्रीलंका का सामना उसी आस्ट्रेलिया से हुआ जिसने कोलम्बो जाकर खेलने से ही इन्कार कर दिया था। इस फाइनल में जैसा कि आप सभी जानते हैं श्रीलंका ने आस्ट्रेलिया को सात विकेट से हराया था और डिसिल्वा ने शानदार शतक मारा थी। छह विश्व कप फाइनलों में अब तक तीन ही शतकें मारी गई हैं। पहली, पहले विश्व कप में वेस्टइंडीज के कप्तान लॉयड ने, दूसरी दूसरे विश्व कप के फाइनल में विवियन रिचर्ड्स ने और तीसरी आस्ट्रेलिया के खिलाफ लाहौर में डिसिल्वा ने मारी। जयसूर्या और कालू जल्दी आउट हो गए थे तो अरविन्द और अर्जुन ने मैदान जीता।

तब विश्वविजेता बनी श्रीलंका ने आस्ट्रेलिया में जो भुगता और सहन किया था उसका शानदार बदला चुका दिया था। लेकिन यह लाहौर में हुआ था। सिंगर कप खेलने आस्ट्रेलिया आखिर श्रीलंका आई थी और अब श्रीलंकाई टीम को मौका मिला था कि वह कंगारू दादाओं के जख्मों में नमक रगड़े और फिर बताए कि वन डे कैसे खेला जाता है और अपनी प्रतिद्वन्द्वी टीम के साथ समानता का कैसा बरताव करना चाहिए। अर्जुन रणतुंगा की विश्वविजेता टीम ने आस्ट्रेलिया से सिंगर कप में दो मैच खेले और दोनों में ही उसे मजे में पीटकर यह बता दिया। ऐसा करने में कोई दादागिरी नहीं दिखाई कोई बदतमीजी नहीं की और किसी भी खिलाड़ी ने अपना आपा नहीं खोया। खोया तो दोनों मैचों में आस्ट्रेलिया के खिलाड़ियों ने ही। और वह भी उसके सबसे अनुभवी और धुरन्धर खिलाड़ी स्टीव वॉ ने। जुड़वा वॉ भाइयों में स्टीव इतने ठंडे मिजाज के माने जाते हैं कि उन्हें आइसबर्ग कहा है। उन्हीं ने दोनों बार कहासुनी की और उन्होंने कीमत चुकाई।

यह हो सकता है कि आस्ट्रेलियाई टीम की सुरक्षा का जो इन्तजाम किया गया था वह इतना सख्त था कि उसके खिलाड़ी परदेस में अपने को जेल काटते महसूस करते हों। ऐसा महसूस करने ने उनको सहज और भरपूर खुलकर खेलने के लायक न छोड़ा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

हो और इसलिए वे अपने को [illegible] श्रीलंका के खिलाफ खिंचा-खिंचा महसूस करते हों। एक तरफ तो वे श्रीलंकाई सुरक्षा की कैद में थे और मैदान में जैसे उसके खिलाड़ियों से घिरे हुए हों। टूर्नामेंट की सबसे कमजोर टीम जिम्बाब्वे के अलावा आस्ट्रेलिया भारत के खिलाफ भी ठीक से खेल नहीं पाई हालाँकि हमारे मूरखपन से जीती वही।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर श्रीलंकाई दर्शकों की भी हदस आस्ट्रेलियाई खिलाड़ियों के मन में बैठ गई होगी। इंग्लैंड की तरह या दूसरे गोरे देशों के दर्शकों जैसे श्रीलंका के दर्शक शान्ति से बैठे उबासियाँ लेते मैच नहीं देखते हैं। वे वेस्टइंडीज के दर्शकों की तरह बैंड बाजे लेकर आते हैं और नाचते-गाते मैच देखते हैं। इतना शोर करते हैं जितना भारतीय और पाकिस्तानी दर्शक भी नहीं करते। वे सचमुच अखाड़ों की तरह घूमते हुए मैच देखते हैं। अगर आपके मन में चोर हो (जैसा कि आस्ट्रेलियाई खिलाड़ियों के मन में निश्चित ही था) तो ऐसे दर्शकों से भरे स्टेडियम में आप दबकर ही खेलेंगे। आस्ट्रेलिया की टीम तो भारत से भी ज्यादा दबी-दबी लग रही थी।

सब कह रहे थे कि यह बदला चुकाने का टूर्नामेंट है। आस्ट्रेलिया के कमेंटेटर और लेखक ही नहीं खिलाड़ी भी। लेकिन श्रीलंका की टीम वालों ने नहीं कहा कि हमें जो आस्ट्रेलिया में मिला है अब उसे ब्याज समेत वापस करेंगे। हाँ, उनके खेल में ऐसी धार और कसावट जरूर थी जैसी आस्ट्रेलिया में आस्ट्रेलिया की टीम में भी नहीं होती। धुआँधार बल्लेबाजी ही नहीं, गेंदबाजी ही नहीं फील्डिंग और कैच पकड़ने में भी श्रीलंकाई खिलाड़ी आस्ट्रेलिया से बेहतर साबित हुए। अर्जुन रणतुंगा की कप्तानी और डिसिल्वा की पूरे टूर्नामेंट में अजेय बल्लेबाजी का आस्ट्रेलिया के पास कोई जवाब नहीं था। डिसिल्वा तो चारों मैचों में चार पारियाँ खेले और कुल 334 रन बनाकर चारों बार अजेय रहे। उन्हीं को टूर्नामेंट के खिलाड़ी होने पर गाड़ी मिली। जयसूर्या और कालू ने धुआँधार भले ही किया हो टूर्नामेंट तो डिसिल्वा ने जिताया जैसा कि विश्व कप भी जिताया था।

सिंगर कप जीतकर श्रीलंका ने फिर अपने वन डे के विश्वविजेता होने की मुहर पक्की की है। लेकिन सिंगर कप तो दो साल पहले भारत भी जीत लाया था। सबसे बड़ी बात यह है कि श्रीलंका विश्वविजेता की तरह खेलता है। कल तक जो विश्व क्रिकेट की गरीब भेड़ें थीं वे अब शेरों की तरह खेलकर सचमुच बब्बर शेर बन गई हैं। श्रीलंका को खेलते देखना सत्तर से अस्सी तक की विश्वविजेता वेस्टइंडीज को देखना है। टैस्ट क्रिकेट की परीक्षा जरूर अभी श्रीलंका ने नहीं दी है। दे देंगे।

(8.11.96)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सब खेलों से बड़े खेल में

गए तो थे माता पूजने और दशहरा मनाने। लेकिन जिस शहर ने आपको क्रिकेट से जानलेवा लगाव और उससे होने वाला रोमांच दिया हो वहाँ कोई अन्तर्राष्ट्रीय मैच हो रहा हो और आप घर में बैठे टीवी पर देखें या कहें कि बहुत देख लिए और दुनिया-भर में देख लिए तो इसका मतलब है कि आप बूढ़े हो चले हैं।

सीके (नायडू) साब पैंसठ के हो गए तब भी जिमखाना मैदान के विशाल साइट स्क्रीन के पीछे अपनी काली गाड़ी खड़ी करके गोल्फ की डंडीनुमा कुर्सी पर बैठे कॉलेज के लड़कों का मैच देखते रहते थे और कोई गलती करता था तो वहीं से चिल्लाते थे। फिर लंच या टी में आकर डाँट पिलाते थे। वे इस देश की पहली टैस्ट टीम के कप्तान थे और पचास से ज्यादा साल खेल चुके थे।

जहाँ यह मैच हो रहा था वह स्टेडियम उस जिमखाना मैदान की बगल में है और सीके के नाम पर होना चाहिए था लेकिन नेहरू के नाम पर है। इसके बाहर लेट कट मारते सीके की प्रतिमा जरूर लगी है। लेकिन जिस कलाकार डीजे जोशी ने यह बनाई, वे क्रिकेट के जानकार नहीं थे इसलिए उस मूर्ति में सीके अपनी मशहूर लेट कट के बजाय कोई अनगढ़ वन डे शाट मारते दिखते हैं। जो हाल कलाकार जोशी ने सीके की लेट कट का किया है वही इन्दौर ने उनकी स्मृति का।

बहरहाल सीके साब बहत्तर साल की उमर में मरते दम भी बूढ़े नहीं हुए क्योंकि उन्हें सभी खेलों से प्रेम था और कई खेल वे खेलते थे। पाकिस्तान की टीम सन् साठ में जब इन्दौर खेलने आई तो वे घरू टीम की तरफ से खेलना चाहते थे। तब सिर्फ पैंसठ बरस के थे लेकिन फिट थे और पाकिस्तानियों को एक-दो हाथ दिखा देना चाहते थे। अपना आखिरी फर्स्ट क्लास मैच वे अड़सठ की उम्र में खेले और उनसे लम्बा क्रिकेट के कैरियर दुनिया में किसी भी खिलाड़ी का नहीं रहा। क्रिकेट के पितामह डब्लूजी ग्रेस भी चालीस साल खेले। सीके अड़तालीस साल। तब क्रिकेट में पैसा नहीं था जो खिलाड़ी खेलता ही रहे। लेकिन सीके खेलते नहीं तो जीते कैसे?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
उन सीके की नगरी के होते हुए उसी शहर में होता आस्ट्रेलिया-दक्षिण अफ्रीका मैच देखने न जाएँ यह अपने से हो नहीं सकता था। दिल्ली टैस्ट के दौरान ही जब इस मैच को कवर करने वाले पत्रकार पास के लिए अपने फोटू दे रहे थे तभी अपन ने भी अपनी सीट रिजर्व करवा ली थी। जिस शहर से खेलों पर लिखना शुरू किया और इतने मनोयोग से छत्तीस साल से लिखते ही चले आ रहे हैं वहाँ के प्रेस बाक्स में एक छोटी-सी जगह पर तो अपना कुछ अधिकार हो ही सकता है। जब शुरू किया था तब हिन्दी के किसी भी अखबार में खेल पर पूरा पेज नहीं होता था। जगह होती तो एक-दो खबरें भर दी जाती थीं। अब कम से कम क्रिकेट वर्ल्ड कप कवर करने तो हिन्दी के पत्रकार चले ही जाते हैं।

लेकिन मैच के एक दिन पहले पासों के लिए जो मारामारी देखी और सुना कि कुछ अखबारवाले तक मैच का बायकाट करेंगे, क्योंकि उन्हें ठीक से और सम्मानजनक पास नहीं दिए जा रहे तो लगा कि कहीं ऐसा तो नहीं होगा कि अपन गए और अपमान हो जाए और किसी जागरूक अखबार में छप जाए कि आयोजकों ने अपने मेहमानों को प्रेस बाक्स में भर दिया। आखिर प्रेस बाक्स का पास उसी को दिया जा रहा था जो मैच कवर करने वाला था। ऐसा सब जगह होता है। जो खेल पत्रकार कवर नहीं करते उन्हें पास तो मिलता है लेकिन प्रेस बाक्स का नहीं। और जिसे कवर करना हो उसे पहले से बताकर बाकायदा अपने फोटो देने पड़ते हैं और पास लेकर आना होता है। ऐसा इन्दौर में भी हो रहा था और यह काफी पत्रकारों को रास नहीं आ रहा था।

पास पाना और उन्हें रौब के साथ बाँटना या कहीं-कहीं तो बेच तक देना पत्रकारों को अपने व्यावसायिक आचार का साधारण अधिकार लगता है। खेल पत्रकारों को ऐसे मौके दूसरे पत्रकारों की तुलना में बहुत कम मिलते हैं। जब कोई टैस्ट या अन्तर्राष्ट्रीय वन डे हो रहा हो और उनमें नामी या फैशनेबल टीमें खेल रही हों तो मालिकों-सम्पादकों को ही नहीं उनके परिवारों और रिश्तेदारों को भी पास की तलब होती है। तब अचानक खेल पत्रकार के भाव बढ़ जाते हैं और जो जितने ज्यादा और अच्छा पास ला सके और खिलाड़ियों से मिला सके वह उतना ही अच्छा और पावरफुल पत्रकार माना जाता है। खेल कितना अच्छा समझता है या उस पर लिख कितना अच्छा सकता है यह कसौटी हिन्दी के ही नहीं अंग्रेजी के खेल संवाददाताओं पर भी लागू नहीं होती है।

बेचारा खेल पत्रकार ऐसे मौकों पर अपने संस्थान में अपनी कुछ पूछ-परख बढ़वाता है और कुछ रुतबा भी। नहीं तो सालों-साल वे घिसते-खटते रहते हैं और मालिक, सम्पादक उन्हें पहचानते तक नहीं। अखबार में अपने को सबसे उपेक्षित खेल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
पत्रकार पाता है और सबसे महत्त्वपूर्ण राजनीतिक संवाददाता या समीक्षक। ऐसा नहीं कि यह अपने हिन्दी के फड़तूस अखबारों में होता है। जी नहीं, अंग्रेजी के बड़े और भारतीय अखबारों में ही नहीं इंग्लैंड और अमेरिका में भी यही हकीकत है। अपन ने देखी भुगती है इसलिए आपको बता रहे हैं।

हिन्दी में हाल और भी बुरे हैं। खेल पेज तो डेली हो गया। फीचर भी खेल पर छपने लगे। पहले पेज पर भी खेल के लिए जगह निकलने लगी लेकिन बाकायदा खेल सम्पादक रखना, कुछ उप-सम्पादकों और संवाददाताओं से नियमित खेल पेज पर काम करवाना और उन्हें ज्यादा नहीं तो उतना ही महत्त्व देना जितना अखबार निकालने वाले दूसरे पत्रकारों को मिलता है शायद ही किसी अखबार में होता हो। माना जाता है कि खेल पत्रकारिता पार्ट टाइम काम है। इसलिए कोई पुराना खिलाड़ी, कोई अध्यापक या कहीं और छोटी-मोटी नौकरी करने वाले को लगा लिया जाता है। उसे शौक होता है इसलिए खटता है और कुछ पैसा भी मिल जाता है। अब प्रायोजकों का जमाना आ गया है इसलिए कुछ और सुविधाएँ और लाभ मिल जाते हैं।

ऐसे अंशकालिक पत्रकार न तो अपने खेल पर ठीक से लिखने और लगातार बेहतर लिखने की कोशिश करते रह सकते हैं, न पत्रकारिता के दूसरे ज्यादा हरे-भरे क्षेत्रों में जा पाते हैं। इसलिए खेल संगठनों और खेल पत्रकार संघों पर अपनी पकड़ बनाने और मौका पड़ने पर उनका इस्तेमाल करने की जुगाड़ में लगे रहते हैं। अक्सर यह जुगाड़ इतनी बढ़ जाती है कि खेल और पत्रकारिता सबसे महत्त्वपूर्ण काम और शौक नहीं बचते। राजनीति और पव्वा ही सब कुछ हो जाता है।

जिन खेलों में सामाजिक प्रतिष्ठा और पैसा आ गया है उसमें राजनेताओं की रुचि भी पिछले बीस-तीस साल में बढ़ गई है। खेलों को चलाने, टूर्नामेंट आदि करवाने के लिए सरकारी ढाँचे और संरक्षण की जरूरत होती है और राजनीतिक लाभ पाए बिना कोई राजनेता इनका लाभ किसी खेल या पुण्य या धर्म कार्य के लिए भी नहीं देता। मैंने आज तक ऐसा खेलप्रेमी राजनेता नहीं देखा जिसके लिए खेल राजनीति से ऊपर हो या जो खेल के इलाके को पवित्र मानकर राजनीति से उसे अलग रखे। क्रिकेट में राजनीति अंग्रेजों ने शुरू की क्योंकि इसके जरिए वे अपनी सभ्यता और राज दोनों ही भारत में चलाना चाहते थे। हमारे राजनेताओं ने अंग्रेजों की परम्परा को न सिर्फ कायम रखा है उसमें देसी ताकत और तरकीब भी मिला दी है।

अपने एक राजनेता हैं एनकेपी साल्वे। कल तक केन्द्रीय मन्त्री हुआ करते थे। नागपुर के हैं जहाँ सीके जन्मे थे और कॉलेज क्रिकेट खेले थे। साल्वे साब बोर्ड के चेयरमैन और वर्ल्ड कप आयोजन समितिं के कर्ताधर्ता रह चुके हैं। उन्हीं को सीके नायडू शताब्दी मनाने का जिम्मा बोर्ड ने सौंपा था। सीके की जन्म शताब्दी के दिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(31 अक्तूबर, 95) नागपुर में उनकी मूर्ति पर फूल चढ़ाने पाँच लोग भी नहीं आए। समारोह की तो कोई क्या कहे। लेकिन इस साल मार्च में नागपुर में साल्वे साब का अमृत महोत्सव मनाया गया।

संयोग से अपने को वह देखना पड़ा और उस दिन यह भी समझ में आया कि साल-भर पीछे पड़ने के बावजूद साल्वे साब ने सीके की शताब्दी के लिए क्यों कुछ नहीं किया। सीके के कारण किसी की राजनीति नहीं चलती, न उनकी शताब्दी मनवाकर कोई अपनी राजनीति को आगे बढ़ा सकता है। इसलिए साल्वे साब का तो अमृत महोत्सव भी दिग्दिगन्त को गुंजाने वाला हो सकता है लेकिन भारतीय क्रिकेट के प्रथम पुरुष सीके को उनकी जन्मस्थली में उनकी शताब्दी के दिन भी कोई पूछने वाला नहीं होता। राजनेता अतीत से भी उसी को खोजकर लाता है जो उसका भविष्य बना सके। आप क्या समझते हैं कि राजीव-संजय गांधी आदि की ही नहीं सोनिया और प्रियंका-राहुल की भी लोग यों ही जय-जयकार करते हैं।

राजनेताओं के कारण सिर्फ खेलों में ही राजनीति नहीं आई है, खेल राजनीति और धन्धे को बढ़ाने के जरिए हो गए हैं। जो खेल समाज में जितना ज्यादा प्रतिष्ठित और लोकप्रिय है उसमें उतनी ही ज्यादा दखलन्दाजी राजनेताओं की है। खेल, खिलाड़ियों, प्रशिक्षकों और उनके प्रेमियों के भरोसे नहीं छोड़े जाते। हर संघ/महासंघ में ऊपर राजनेता बैठा है जिसके बिना खेल चल नहीं सकता। और वह खेल तभी चलने देगा जब खिलाड़ी खेल संघ और खेल पत्रकार उसकी जयजयकार करते रहें और कहें कि खेलों में अगर हम कहीं हैं तो फलाँ जी या साब के कारण हैं। हर बार हम विश्व प्रतियोगिताओं से खाली हाथ मुँह लटकाए लौटते हैं लेकिन राजनेताओं का क्या बनता-बिगड़ता है? वे खिलाड़ियों को कोस कर हट जाते हैं।

राजनेताओं के कारण नौकरशाही और सरकारी अमले का भी खेल में दखल अपने आप हो जाता है। जैसे इन्दौर के मैच के लिए कलेक्टर, कमिश्नर, एसपी, आईजी आदि सबने खूब पास माँगे और आनाकानी करने पर कहा कि ठीक है तो हम अपनी फोर्स हटा लेंगे। एक अफसर ने मध्यप्रदेश क्रिकेट एसोसिएशन के सचिव को चपरासी की तरह डाँट दिया। फिर नेहरू स्टेडियम नगर निगम का है और निगम अब निर्वाचित है। वहाँ से भी सैकड़ों पास की माँग औपचारिक रूप से और हजारों की माँग चुपचाप की गई। फिर भी मेयर को लगा कि उन्हें सम्मान से बैठने की जगह नहीं दी गई इसलिए वे बहिष्कार करके चले गए। उनके साथ कुछ पार्षद भी। यह भी कहा गया कि स्टेडियम हमारा है तो फिर ये लोग कौन हैं मैच करवाने वाले।

आप शायद जानते हों कि दुनिया का सबसे महँगा इलाका माना जाता है मुम्बई का नारीमन पाइंट। इसी के मेरिन ड्राइव पर बिलकुल पास-पास हैं दो स्टेडियम—ब्रेबोर्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
और वानखेड़े स्टेडियम। दोनों क्रिकेट के लिए हैं। जहाँ जमीन कौड़ी के मोल मिलती हो वहाँ भी आपको दो स्टेडियम ऐसे नजदीक नहीं मिलेंगे। लेकिन मुम्बई में हैं और इसके पीछे ऐसे ही पासों का झगड़ा है। क्रिकेट क्लब आफ इंडिया यानी सीसीआई शुरू से ब्रेबोर्न स्टेडियम पर क्रिकेट चलाती रही है। वही बम्बई क्रिकेट और एक तरह से भारतीय क्रिकेट का घर रहा है। लेकिन उसके फ्री पासों को लेकर मन्त्री वानखेड़े और विजय मर्चन्ट में चिकचिक हुई।

अब मर्चन्ट महान भारतीय खिलाड़ियों में से एक थे और बड़े उद्योगपति भी। उन्हें मुफ्तखोरी अच्छी नहीं लगती थी। लेकिन वानखेड़े ने रेकार्ड टाइम में अलग स्टेडियम बनवाकर अपने नाम करवा लिया। अब जो क्रिकेट परम्पराओं का घर है—वह ब्रेबोर्न स्टेडियम तो सूना पड़ा रहता है और वानखेड़े पर टैस्ट, वन डे, रणजी सभी खेले जाते हैं। मुम्बई में ब्रेबोर्न के नाम पर स्टेडियम है जो कि अंग्रेज गवर्नर थे। वानखेड़े के नाम पर है जो कि एक मन्त्रिमंडल में मन्त्री थे। विजय मर्चन्ट के नाम पर नहीं है जब कि बम्बई क्रिकेट के प्रतिनिधि और गौरव पुरुष कोई थे तो विजय मर्चन्ट। एक मन्त्री वानखेडे ने विजय मर्चन्ट को धूल चटा दी क्योंकि बोर्ड और सत्ता उनके साथ थी। ब्रेबोर्न और वानखेड़े स्टेडियम अपने देश में एक खिलाड़ी और एक राजनेता की हैसियत के उदाहरण हैं।

दुनिया में शायद ही ऐसा कहीं होता हो कि घरू टीम न खेले तो भी स्टेडियम भरा हो। इन्दौर का नेहरू स्टेडियम आस्ट्रेलिया-दक्षिण अफ्रीका के मैच के दिन खचाखच भरा था और विदेशी भी इन्दौर के इस क्रिकेट-प्रेम से चकित थे। लेकिन उस समय से आधे फोकटे थे और क्रिकेट से ज्यादा एक मैच में सम्मान के पास पर आए थे। क्रिकेट की परम्परा इन्दौर में है बहुत लम्बी। लेकिन मध्यप्रदेश में गौरव का स्थान ग्वालियर को है क्योंकि माधवराव सिन्धिया का राजनीतिक पव्वा मध्यप्रदेश के किसी और नेता से बड़ा है। विश्व कप का मैच वहीं हुआ। वहीं रात/दिन का मैच होने की व्यवस्था है। हालाँकि वहाँ न क्रिकेट खेला जाता है न कोई क्रिकेटर निकला है।

इन्दौर के अखबार इस मैच में इतने दर्शक और मैच की खासियत से ज्यादा आयोजकों के घोटाले और प्रेस बॉक्स की भीड़ से भरे थे। खेल में किसे रुचि है? जिसे हो वह इन्दौर क्रिकेट पर मर्सिया लिखे और गाए। जिन्हें क्रिकेट अपना रुतबा दिखाने और खेल जमाने का खेल लगता है वे अब भी और हमेशा अपने खेल में लगे रहेंगे। और नरेन्द्र हिरवानी इन्दौर छोड़कर खेलने के लिए कलकत्ता चले जाएँगे। चले जाएँ। खिलाड़ी होने से क्या होता है? स्टेडियम होना चाहिए। सही है न?

(27.10.96)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आखिर खेल तो मन का है

दशहरे के पहले आस्ट्रेलिया से गावसकर-बॉर्डर ट्रॉफी और दिवाली के पहले दक्षिण अफ्रीका से टाइटन कप जीतकर सचिन तेंदुलकर ने देश का दशहरा और दिवाली दोनों मनवा दिए हैं।

आस्ट्रेलिया इस वक्त टैस्ट की विश्वविजेता टीम है और श्रीलंका ने विश्व कप जरूर जीता है लेकिन वन डे की सबसे सन्तुलित और तगड़ी टीम दक्षिण अफ्रीका ही मानी जाती है। टैस्ट में उसे और टाइटन कप में इसे पीटकर सचिन ने लोगों को खुश होने के लिए सचमुच कुछ दिया है।

नहीं तो राजनीतिक और सार्वजनिक जीवन् में तो ऐसा कुछ दिखता नहीं है जो हमारे दीये की लौ को बनाए रखने के लिए तेल दे सके। शायद इसीलिए जहाँ भारतीय टीम नहीं खेली वहाँ भी लोग हजारों की गिनती में मैच देखने आए। विदेशी कमेंट्रीकार कहते हैं कि भारत में क्रिकेट जैसे जीवन पद्धति है। वे नहीं जानते कि देश में हर जगह इतना अँधेरा है कि लोग दीयों की तलाश में कहाँ-कहाँ नहीं जाते।

क्रिकेट एक राष्ट्रीय मनोरंजन भी है, तमाशा भी है और राष्ट्रीय पलायन भी। उसके जरिए आप खेलने वाले देश का चरित्र, उसके लोगों की ताकत और कमजोरियाँ समझ सकते हैं। अपन तो दरअसल खेल को सिर्फ खेल मानकर कभी खेलते और देखते ही नहीं। सारे खेल अपने को खेलने वालों और उनके देश को समझने में मदद करते हैं। इसलिए साहित्य और ज्ञान-विज्ञान से खेल को अपन ने कभी छोटा नहीं माना। क्रिकेट, टेनिस आदि खेलों से पागलपन की हद तक अपने लगाव की लोग चाहे जितनी हँसी उड़ाएँ अपने को कभी नहीं लगा कि अपन कोई अवांछनीय कर रहे हैं।

जैसे टाइटन कप मैचों के दौरान मैं समझने की कोशिश करता रहा कि जो आस्ट्रेलियाई खिलाड़ी अपने देश और इंग्लैंड में मूँछ-मरोडू खमठोकू दादाओं की तरह बरताव करते हैं वे भारत में ऐसे खीजे हुए और उदासीन क्यों हो जाते हैं? वे यहाँ अपना सब कुछ दाँव पर लगाकर आखिरी दम तक संघर्ष क्यों नहीं करते?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने उन्हें अपने देश में और इंग्लैंड में खेलते देखा है और अब सेटेलाइट टीवी की मेहरबानी से सभी जगह खेलते देखता हूँ। वे इंग्लैंड को अपना सबसे बड़ा प्रतिद्वन्द्वी मानते हैं और न सिर्फ उसे हराने का मौका नहीं छोड़ते उसे गरियाने और गरियाते रहना जैसे आस्ट्रेलिया का राष्ट्रीय खेल है। इंग्लैंड के बाद नम्बर आता है न्यूजीलैंड का जो उनका पड़ोसी है और पड़ोसियों से तो सभी की खटकती रहती है।

आस्ट्रेलिया वेस्टइंडीज को उतनी बड़ी चुनौती नहीं मानता था। लेकिन जब वेस्टइंडीज विश्वविजेता हो गया और पन्द्रह-बीस साल बना रहा तब वह निश्चित ही उसे हराने को अपनी ताकत के लिए चुनौती मानता रहा। आखिर गए साल आस्ट्रेलिया ने वेस्टइंडीज में वेस्टइंडीज को टैस्ट सीरीज में हराया और उसकी टीम जब लौटकर आई तो स्वागत-सत्कार राष्ट्रीय विजेता की तरह ही हुआ।

भारत में आस्ट्रेलिया अपने गर्व को दाँव पर लगा हुआ नहीं मानता। यहाँ उसे नहीं लगता कि अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़नी है और दोनों देशों के बीच ऐसा कुछ है जिसे जीतकर लाना है। आस्ट्रेलियाई टीम के रवैये से ऐसा लगता है कि जैसे भारत वह रणक्षेत्र नहीं है जहाँ उसे पराक्रम करना है। इस पिच और इस मैदान को वह ऐसी कसौटी नहीं मानती जहाँ उसे अपने को साबित करना ही होगा। आस्ट्रेलियाई टीम जब देखती है कि चीजें उसकी मुट्ठी में नहीं आ रही हैं तो वह उन्हें छोड़ देती है। ऐसा वह इंग्लैंड और न्यूजीलैंड के खिलाफ नहीं करती।

ऐसा कोई टीम और देश तभी करता है जब मानता है कि इस जगह अपने को साबित करके उसका होना सफल और सार्थक नहीं होगा। यह वह दुनिया ही नहीं है जहाँ अपनी छाप होनी चाहिए। आप जब आस्ट्रेलिया जाएँ या पाकिस्तान या श्रीलंका जाएँ तो उसे वह यों ही जीतकर नहीं आने देगा क्योंकि अपने लोगों के सामने वह दिखने नहीं देगा कि अपने में कोई दम नहीं है और कोई भी अपने को हराके जा सकता है।

यह रवैया दरअसल वही अपने बेहतर होने का साम्राज्यवादी रवैया है जो दूसरे विश्व युद्ध के पहले अंग्रेजों का हम लोगों के प्रति हुआ करता था। हम लोगों में पाकिस्तान और श्रीलंका को भी मैं शामिल करता हूँ। आस्ट्रेलिया भले ही इंग्लैंड से देशबदर किए गए अपराधियों ने बसाया हो और उन्हीं की सन्तानों का देश हो लेकिन हैं तो वे पुराने अंग्रेज। चूँकि इंग्लैंड के अंग्रेज उन्हें हेय दृष्टि से देखते रहे इसलिए उनसे आस्ट्रेलियाई खुन्दक खाते हैं। उन्हीं के खिलाफ अपने को साबित करने को अपना सार्थक और सफल होना मानते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
भारत उन्हें हरा भी दे तो वे कहेंगे कि प्रदूषण, मच्छर, तिलचट्टों और धीमे विकेटों वाले देश में जीतना भी कोई जीतना है। पाकिस्तानियों को वे धोखेबाज मानते हैं और श्रीलंकाई जब उन्हें आस्ट्रेलिया में हराने लगे तो उनके साथ कैसा बरताव किया गया वह आपको बता ही चुका हूँ। आस्ट्रेलिया का यह रवैया ही खेल में उसके जुझारू चरित्र के पतन का कारण है। स्वयं इंग्लैंड अब अपने उस गौरवशाली अतीत में नहीं रह सकता इसलिए उसका गर्व जीवन के सभी क्षेत्रों में गायब हो रहा है।

आस्ट्रेलियाई टीम जब भारत में खेल रही थी दोनों देशों की मैत्री और सहयोग का उत्सव भी मन रहा था। उसके लिए क्रिकेट इतिहास के सबसे बड़े बल्लेबाज डॉन ब्रेडमेन ने एक सन्देश भेजा जिसमें भारतीय दर्शक और खिलाड़ियों की बड़ी तारीफ की गई है। ब्रेडमेन के लिए अपने मन में बड़ा सम्मान है।

लेकिन जब टीवी पर उनका सन्देश पढ़ा गया तो मैं याद किए बिना नहीं रह सका कि जब हम गुलाम थे और आस्ट्रेलियाई टीम पानी के जहाज से इंग्लैंड के दौरे पर जाती हुई अरब सागर में मुम्बई के पास रुकी थी तो ब्रेडमेन को अभिनन्दन के लिए बुलाने हमारे बोर्ड के अधिकारी और खिलाड़ी नाव से गए थे। ब्रेडमेन नहीं आए क्योंकि मुम्बई में तब बड़ी माता के फैले होने की अफवाह थी। ब्रेडमेन खतरा नहीं उठाना चाहते थे क्योंकि वे इंग्लैंड में खेलने जा रहे थे। उन्हें लगभग भगवान मानने वाले भारतीय क्रिकेट दर्शकों, खिलाड़ियों और प्रशासकों के लिए उनके मन में इतना ही सम्मान या कृतज्ञता थी।

आस्ट्रेलिया के भारत में टैस्ट और वन डे दोनों में पिट जाने के बाद उसके बोर्ड के एक अधिकारी ने अभी वहाँ दौरे पर आई वेस्टइंडीज टीम को चेतावनी दी कि यह मत समझ लेना कि हम कमजोर पड़ गए हैं। भारत में खेलना वैसे भी कठिन होता है और फिर हमारी टीम पूरी ताकत में नहीं थी। यानी घातक गेंदबाज वार्न और तेज गेंदबाज मेकडरमट तो गए ही नहीं थे। आस्ट्रेलिया को अब अपने को अपने घर में वेस्टइंडीज के खिलाफ साबित करना है इसलिए उसके खिलाड़ी यहाँ जान मारी क्यों करते? और फिर भारत में हार जाने से क्या बनता-बिगड़ता है। इंग्लैंड की रस्सी के भी बल जल गए लेकिन अभी ऐंठ निकलना बाकी है। भारत में टैस्ट और वन डे दोनों में आस्ट्रेलिया के हारने का अपना यही निष्कर्ष है।

दूसरी टीम दक्षिण अफ्रीका की है। टाइटन कप में छहों लीग मैच जीतने के बाद वह फाइनल खेलने मुम्बई पहुँची। देश के सारे अखबार और विशेषज्ञ ही नहीं, आम दर्शक भी मानकर चल रहे थे कि वही जीतेगी। भारत की जो टीम आस्ट्रेलिया से दो मैच हारते-हारते जीती और दक्षिण अफ्रीका से तीनों बुरी तरह हारी वह जीत सकती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है यह कहने को भी लोग तैयार नहीं थे। मुम्बई में सारे सट्टेबाज दक्षिण अफ्रीका की जीत पर पैसा लगाए हुए थे।

लेकिन आप भी मानेंगे कि मुम्बई का फाइनल लगभग एकतरफा हुआ। लोग समझ रहे थे कि दक्षिण अफ्रीका के पक्ष में एकतरफा होगा। वह भारत के पक्ष में एकतरफा हो गया। भारतीय टीम अगर सत्ताईसवें ओवर और सिर्फ छियानवे रन पर सातवें विकेट के गिरने के बाद जीत को पक्का मानकर ढीली नहीं हो जाती तो मैच और भी एकतरफा होता। रिचर्डसन और सिमकॉक्स सैंतालीसवें ओवर तक खींच ले गए तो इसलिए कि भारतीय टीम ही नहीं विदेशी विशेषज्ञ भी मान चुके थे कि भारत जीत गया।

अन्तर्राष्ट्रीय क्रिकेट में कोई बीस-बाईस साल बाद लौटने पर यह तीसरा बड़ा कप है जो दक्षिण अफ्रीका ने निश्चित जीतने वाली टीम की तरह खेलने के बाद ऐन आखिरी मौके पर गंवाया है। तीनों बार सब मानते थे कि सबसे तगड़ी टीम यही है और वह जीत भी रही थी लेकिन किस्मत की बात देखिए टूटी कहाँ कमन्द, दो-चार हाथ जबकि लबे बाम रह गया।

दक्षिण अफ्रीका की वापसी इकानवे में हुई और बानवे में आस्ट्रेलिया-न्यूजीलैंड में विश्व कप खेला गया। इस टीम ने ऐसी धाक जमाई कि सबको लगा कि विश्व विजेता यही होगी। सबको पीटती-पाटती वह सेमीफाइनल में पहुँच भी गई। सिडनी में उसका मुकाबला इंग्लैंड से हुआ। दिन-रात के इस मैच में वह मजे में जीत रही थी कि बारिश होने लगी। जब थमी और हिसाब लगाया गया तो लक्ष्य तय हुआ कि उसे जीतने के लिए एक गेंद पर बाईस रन बनाने होंगे।

वाहियात बात थी क्योंकि एक गेंद पर ज्यादा से ज्यादा छह रन बन सकते हैं। अगर तीन नो बाल होती और तीनों पर छक्के लगते तो भी चौथी गेंद पर चव्वा लगता तभी दक्षिण अफ्रीका जीत सकता था। तीन लगातार नो बाल तो आज की दुनिया में अनहोनी है और फिर तीन छक्के और एक चव्वा भी लाख में एक बार ही लग सकता है। दक्षिण अफ्रीका हार गया और सिडनी के मैदान पर दुर्भाग्य और उदासी बर्फ की तरह गिरकर जम गई। यह बदकिस्मती, सरासर बदकिस्मती थी।

फिर इस साल मार्च में भारत-पाकिस्तान-श्रीलंका में विश्व कप हुआ। क्वार्टर-फाइनल तक पहुँचने में और सब टीमें एकाध मैच हारीं (श्रीलंका के दो मैच नहीं हुए इसलिए उसे छोड़ देना चाहिए।) लेकिन दक्षिण अफ्रीका ने सबको पीट दिया। उसके ओपनिंग बल्लेबाज गैरी करस्टन ने 188 रन का विवियन रिचर्ड्स का रेकार्ड भी तोड़ा। क्या फील्डिंग, क्या बोलिंग, क्या बल्लेबाजी, क्या टीम भावना और क्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रणनीति—सबमें दक्षिण अफ्रीका सबसे आगे, सबसे तगड़ी और सबसे अजित लग रही थी।

क्वार्टर फाइनल में भी उसका मुकाबला वेस्टइंडीज से था जो कि केन्या तक से हार चुकी थी। लेकिन जो ब्रायन लारा पूरे विश्व कप में लगभग फेल थे वे इसी मैच में अपनी वाली पर आए और उनने सिर्फ तिरानवे गेंदों पर एक सौ ग्यारह रन ठोक दिए। सबसे किफायती गेंदबाज सिमकॉक्स को लारा ने एक ओवर में पाँच चव्वे जड़ दिए। फिर भी वेस्टइंडीज के 264 रन ही बने थे जो कि दक्षिण अफ्रीका की बल्लेबाजी को देखते हुए कोई बहुत नहीं थे और वेस्टइंडीज की गेंदबाजी में—खासकर कराची के उस पिच पर क्रिकेट कोई धार भी नहीं थी। स्पिनर सिर्फ एक हार्पर थे जो उतार पर हैं और मामूली हैं।

चूँकि इस उपमहाद्वीप के पिचों पर स्पिनर ही चलते हैं इसलिए स्पिन होने के पहले ही उन्हें स्वीप मार-मारकर खत्म करने की रणनीति दक्षिण अफ्रीका ने अपनाई थी और मुश्ताक अहमद तक की धुनाई कर दी थी। हार्पर को स्वीप करना उलटे हाथ का काम था। लेकिन हार्पर और एडम्स (जो कि तब तक किसी मैच में गेंदबाजी करने भी नहीं लगाए गए थे) ने ऐसी गेंदबाजी की कि स्वीप नहीं चला और दक्षिण अफ्रीका विश्व कप से बाहर हो गया।

कराची में तो कोई बदकिस्मती नहीं थी। लारा और एडम्स ने दक्षिण अफ्रीका को हेड़ कर रख दिया। उनकी सारी योजनाएँ और रेकार्ड धरे रह गए। ऐन मौके पर दक्षिण अफ्रीका से कील नहीं ठुकी और हथौड़ा उलटकर उसी का सिर फोड़ गया। टाइटन कप के फाइनल में भी टॉस हारने को सबसे बड़ी बात कहा गया है। टॉस किस्मत की बात है। सचिन नहीं जीतते और दक्षिण अफ्रीका पहले बल्लेबाजी करता तो भी गेंद तो उतनी ही घूम रही थी। फिर दिन में और सूखी गेंद स्पिनरों की पकड़ में बेहतर आती और भारतीय स्पिनर तो दक्षिण अफ्रीका से बेहतर हैं ही।

नहीं, यह मामला क़िस्मत का नहीं है। दक्षिण अफ्रीका की टीम में ऐसा कुछ है कि जब कसौटी पर चढ़ाई जाए तो टूट जाती है। अग्नि-परीक्षा का क्षण उसके इस्पात को लकड़ी बना देता है। गोरे दक्षिण अफ्रीकियों की टीम में कहीं ये बैठ गया है कि हम कुछ भी करें आखिर विजयश्री हमारे हाथ से निकल जाएगी। क्या रंगभेद चलाने वाले लोगों के हाथ से सत्ता चली जाने का यह नतीजा है? जरा सोचिए!

और भारत? उसके बारे में तो अपन सब जानते ही हैं।

(10.11.96)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विलाप और सन्निपात में झूलना

अब राष्ट्रीय विलाप का मौसम है और लगता है कि अगले चार-पाँच महीने चलता रहेगा। दक्षिण अफ्रीका के बाद भारत को वेस्टइंडीज जाकर पाँच टैस्ट खेलने हैं। बीच में हमारी टीम ने कुछ विश्राम करने और घर लौटकर वापस जाने की इच्छा प्रकट की थी लेकिन खेल और खिलाड़ियों से ज्यादा डॉलर का ध्यान रखने वाले बोर्ड ने दो दौरों के बीच बरमुडा में मैत्री कप के दो वन डे रखे हुए हैं। बोर्ड को मैत्री और उसके मन्त्री जगमोहन डालमिया को अन्तर्राष्ट्रीय क्रिकेट सम्मेलन के सहायक सदस्यों के वोट चाहिए ताकि अगली बार वे सम्मेलन के अध्यक्ष हो सकें इसलिए बरमुडा में मैच तो होंगे भले ही खेलकर, हार कर और थक कर सचिन की टीम चूर हो गई हो। खेल का यह कैलेंडर अपनी टीम को घावों पर मरहम लगाने, टूटी-मुड़ी मांसपेशियों को ठीक होने और अपने को अपनी राख से उठाकर फिर संगठित होने का मौका नहीं देगा ? इसलिए पराजयों का सिलसिला चलता रहेगा और राष्ट्रीय विलाप होता रहेगा। माँग होने लगेगी कि सचिन तेंदुलकर के युवा कन्धों पर कप्तानी का बोझ भारी पड़ने लगा है और टीम ने अपना सबसे अच्छा बल्लेबाज खो दिया है। उन्हें फिर बल्लेबाज की तरह खेलने दो और कप्तानी फिर अजहर को दे दो।

विलाप में आँसू पोंछते लोग भूल जाएँगे कि गए साल ही अजहर से अपमानजनक परिस्थितियों में कप्तानी छीनी गई थी और वे कड़वे घूँट पीकर संगीता बिजलानी से शादी करने के बाद आजाद पंछी की तरह बल्लेबाजी करने लगे थे। कोई कहेगा कुम्बले को ट्राई करो आखिर वे कर्नाटक के कप्तान हैं और वहाँ से न सिर्फ पाँच-छह खिलाड़ी टैस्ट टीम में हैं—देश के गरीब किसान प्रधानमन्त्री भी उसी राज्य के हैं। उत्तर से माँग उठेगी कि मनोज प्रभाकर को वापस लाओ और कप्तान बनाओ। दक्षिण से कहा जाएगा कि वुरकेरी रामन सबसे अनुभवी और समझदार खिलाड़ी हैं। भले ही टीम में उनकी जगह पक्की न हो पर कप्तान तो वे पक्के हो ही सकते हैं। फिर उन्हें कप्तान बनाने का कोई नुकसान नहीं होगा क्योंकि इससे न उनकी बल्लेबाजी प्रभावित होगी न फील्डिंग न कभी-कभी काम आने वाली गेंदबाजी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
गनीमत यही है कि बंगाल का कोई खिलाड़ी कप्तानी का उम्मीदवार नहीं है। सौरभ गांगुली गए साल इंग्लैंड में दो टैस्टों में दो शतक बनाकर—बंगाल टाइगर और बंगालियों के राष्ट्रीय हीरो हुए बैठे हैं। लेकिन भारत में हुए चार टैस्ट और टाइटन कप और अभी तक दक्षिण अफ्रीका के दौरे पर उनसे कुछ बना नहीं है। मौका मिलेगा इसलिए सबा करीम बंगाल से खेलने लगे हैं जैसे इन्दौर, मध्यप्रदेश छोड़कर नरेन्द्र हिरवानी भी डालमिया की छत्रछाया में पहुँचे हैं। हिरवानी को इसका इनाम भी मिला और भारत में दो टैस्ट वे खेले भी। लेकिन दक्षिण अफ्रीका और वेस्टइंडीज के दौरों पर उनके जैसे स्पिनर की जरूरत नहीं होती इसलिए पीछे छूट गए हैं। ये तीनों ही कप्तानी के दावेदार नहीं हो सकते नहीं तो डालमिया इनमें से किसी एक को बनवा देते।

कप्तानी विलाप का लोकप्रिय और नम्बर वन कारण होगा जो सख्त, तेज और गेंद को उछाल देने वाले पिचों पर भारतीय बल्लेबाजों का तेज गेंदबाजी न खेल पाना दूसरे पायदान पर कहा जाएगा कि लालची बोर्ड पैसा कमाने और भारत की जनता को मूर्ख बनाने के लिए घरेलू मैदानों पर डिजाइनर-पिच बनवाता है ताकि हमारे स्पिन गेंदबाज धड़ाधड़ विकेट लेकर सामने वाली टीम को फटाफट उड़ा सकें। हमारे बल्लेबाज निडर होकर रन बना सकें क्योंकि गेंद टप्पा खाने के बाद आधी तेजी खो देती है और घुटनों से ऊपर नहीं उठती। ऐसे पिचों पर जीतकर हमें गलतफहमी तो होती ही है हमारे खिलाड़ी फोकट के हीरो हो जाते हैं। जब वे बाहर खेलने जाते हैं तो सब हवा निकल जाती है और हम शर्मनाक हार पर हार खाकर लौट आते हैं। टीम को फिर उठाने के लिए फिर घरेलू मैदानों पर पिच बनाए जाएँगे क्योंकि जीतेंगे नहीं तो लोग क्रिकेट के पीछे दीवाने क्यों होंगे ?

कप्तानी के साथ खेल करना, टीम चुनने में राष्ट्रीय हितों के बजाय क्षेत्रीय और अधिकारियों के हितों का ख्याल रखना स्पिन को मदद करने वाले पिच बनाना और बाहर जाने पर तेज गेंदबाजी के सामने लड़खड़ाना और ऐसे डरपोक और बेकार हो जाना कि अपने पिचों पर भी तेज गेंदबाजी न खेल पाना और सबसे ऊपर बोर्ड का लालची होना और खेल और खिलाड़ियों के बजाय कमाई और दुनिया में फोकटी वाह-वाह पाने के लिए यस्स करते रहना, भारतीय क्रिकेट के सबसे बड़े दोष बताए जा रहे हैं। राष्ट्रीय विलाप में इनमें से हर एक दोष का नाम ले-लेकर छाती कूटी जाएगी।

अपन सन् अड़तालीस से क्रिकेट के लाइलाज दीवाने हैं और सन् बत्तीस में खेले गए पहले टैस्ट से ही नहीं पिछली सदी से भारतीय क्रिकेट के इतिहास को कई बार पढ़ चुके हैं। भरोसा कीजिए, राष्ट्रीय विलाप के वे सारे कारण जो आज दक्षिण अफ्रीका में अपने हारने पर बताए जा रहे हैं—शुरू से हमारे क्रिकेट और उसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
संचालन और उसके प्रशासकों में मौजूद रहे हैं। एक भी नया दोष नहीं है जो सचिन तेंदुलकर के कप्तान बनने के बाद इक्कीसवीं सदी की हमारी टीम में आ गया हो। न विलाप नया है, न उसके कारण नए हैं।

सही है कि पहले सोने का अंडा देने वाले वन-डे नहीं थे जिनके कारण कहते हैं कि हमारे बल्लेबाज टिककर नहीं खेलते। वे फटाफट करने के इतने आदी हो गए हैं कि टैस्ट मैच भी वन डे की तरह खेलते हैं। लेकिन क्या इसके पहले हमारे बल्लेबाज बहुत जमकर और लम्बी-लम्बी पारियाँ खेलते थे? भारत के किसी भी बल्लेबाज के किसी भी टीम के खिलाफ सबसे ज्यादा रन 236 हैं जो सुनील गावसकर ने वेस्टइंडीज के खिलाफ सन् 83-84 की सीरीज में मद्रास (अब चेन्नई) में बनाए थे। आस्ट्रेलिया वेस्टइंडीज, इंग्लैंड और तो और पाकिस्तान के भी हनीफ मोहम्मद ने टैस्ट में तिहरे शतक बनाए हैं। टैस्ट क्रिकेट की सबसे लम्बी और धीमी पारी भी एक पाकिस्तानी ने खेली है।

और ऐसा भी नहीं है कि फटाफट क्रिकेट ज्यादा खेलने के कारण हम उसमें उस्ताद हो गए हों। सन् तिरासी में हमने विश्व कप जरूर जीता लेकिन उसके बाद से हमारा रेकार्ड क्या है? जिम्बाब्वे, न्यूजीलैंड और श्रीलंका से ही हम हारने से ज्यादा वन डे जीते हैं। अब श्रीलंका से भी शायद पिछड़ रहे हैं। सन् तिरासी में ही जिम्बाब्वे के खिलाफ कपिल ने तूफानी 175 बनाए थे। लेकिन फिर विवियन रिचर्ड्स ने 188 और फिर 189 ठोंक दिए। दक्षिण अफ्रीका के करस्टन ने पिछले विश्व कप में 188 रन बना दिए थे हालाँकि कहाँ किंग रिचर्ड्स और कहाँ करस्टन तैली। वन डे में सबसे तेज सेंचुरी श्रीलंका के जयसूरिया ने पाकिस्तान के खिलाफ सिंगापुर में गए साल मारी थी। पाकिस्तान के ही बिलकुल नए आए गेंदबाज शाहिद आफरीदी ने सिर्फ 37 गेंदों पर नैरोबी में श्रीलंका के ही खिलाफ सेंचुरी मारकर यह धुआँधार रेकार्ड तोड़ दिया। हमारे अजहर ने 68 गेंदों पर सेंचुरी मारी है। बहुत धुआँधार सचिन कर सकते थे, लेकिन उनसे ओपन करवाके अब कहा गया है कि वन डे पचास ओवर का होता है पन्द्रह ओवर का नहीं। और फिर तुम जाओगे तो पूरी टीम ढह जाएगी और तुम अब कप्तान हो।

वन डे में सिर्फ एक बार हमने पचास ओवर में तीन सौ से ज्यादा रन बनाए हैं। सबसे ज्यादा रन अजहर के हैं लेकिन शतकें—दस सचिन की हैं। सचिन के रन भी चार हजार से ऊपर हो गए हैं। लेकिन वन डे में सबसे ज्यादा रन डेसमंड हेन्स के हैं और उन्हीं की सबसे ज्यादा शतक हैं—सोलह। वेस्टइंडीज के ही ग्रीनिज और रिचर्ड्स और पाकिस्तान के मियाँदाद वन डे के सबसे सँभले बल्लेबाज हैं। कभी वन डे में सबसे ज्यादा विकेट अपने कपिल के हुआ करते थे। अब यह रेकार्ड तोड़कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वसीम अकरम तीन सौ से ज्यादा विकेट ले चुके हैं। वन डे में गेंदबाजी अब वेस्टइंडीज से बेहतर पाकिस्तान की है। बल्लेबाजी आस्ट्रेलिया, श्रीलंका, भारत आदि की भी बेहतर हो सकती है। लेकिन फील्डिंग तो बेशक दक्षिण अफ्रीका की सबसे अच्छी है। फिर आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड।

तो इतने ज्यादा वन डे खेलने और बोर्ड का उन पर सबसे ज्यादा जोर होने के बावजूद ऐसा नहीं कि हम फटाफट क्रिकेट बादशाह हो गए हैं। पिछले साल श्रीलंका ने विश्व कप जीता, उसके पहले सन बानवे में पाकिस्तान ने जीता था। दोनों की जीत धुप्पल नहीं मानी गई जबकि हम जब सन् तिरासी में जीते थे तो माना गया कि विश्वविजेता तो फिर भी वेस्टइंडीज ही है जिसे उस विश्व कप में हमने फाइनल में ही नहीं उसके पहले लीग मैच में भी हराया था। उसके बाद सन् सत्तासी और छियानवे के विश्व कपों में हम सेमीफाइनल भी खेले लेकिन कुल मिलाकर भारत की टीम वन डे की चैम्पियन टीम नहीं मानी जाती। वन डे में अपने दिन कोई भी टीम जीत सकती है और हम अपने दिन जीत सकते हैं। वन डे ने हमारी क्रिकेट प्रतिष्ठा को बढ़ाया नहीं है।

लेकिन यह मानना गलत है कि वन डे से टैस्ट क्रिकेट की क्षमता घटती है। आप देखिए कि वन डे के सबसे सफल बल्लेबाज, गेंदबाज और फील्डर वही हैं जो टैस्ट क्रिकेट के भी सिरमौर हैं। कोई दो दशक तक वेस्टइंडीज दुनिया की सबसे ताकतवर टीम थी। सन् 76 से 96 तक वे एक भी सीरीज नहीं हारे। दो बार विश्व कप जीतने वाली टीम भी वेस्टइंडीज की है। श्रीलंका जरूर टैस्ट क्रिकेट की विश्वविजेता टीम नहीं है। लेकिन वन डे में भी उसका वर्चस्व भारतीय उपमहाद्वीप की परिस्थितियों के कारण है। टैस्ट या पारम्परिक क्रिकेट में दक्षता प्राप्त किए बिना कोई भी वन डे की उस्ताद टीम नहीं हो सकती।

खेल की बुनियादी तकनीक और कौशल तो पारम्परिक क्रिकेट में ही सीखा जा सकता है। वन डे टैस्ट क्रिकेट का उप-उत्पाद-बाई प्राडक्ट है। अगर आपकी तकनीक और बुनियाद ठीक नहीं है तो आप वन डे के उस्ताद खिलाड़ी या टीम नहीं हो सकते। वन डे भले ही ज्यादा लोकप्रिय और कमाऊ हो वह टैस्ट क्रिकेट का स्थान नहीं ले सकता। सोने का अंडा देने वाली मुर्गी को मार दीजिए तो कल सोने का क्या, अंडा भी नहीं मिलेगा। वन डे का रोमांच धुआँधार बल्लेबाजी में है। जिसकी तकनीकी ठीक नहीं होगी वह धुआँधार भी लगातार और जब जरूरत हो तब नहीं कर सकता। पहले भी वन डे के अग्रणी बल्लेबाज और गेंदबाज वही थे जो टैस्ट क्रिकेट में भी सबसे ऊपर थे। आज भी जो टैस्ट क्रिकेट में भी सबसे ऊपर थे। आज भी जो टैस्ट क्रिकेट में आगे हैं उन्हीं का वर्चस्व वन डे में भी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसलिए इस रोने में ज्यादा सार नहीं है कि हम वन डे इतने खेल रहे हैं कि हमारा टैस्ट क्रिकेट बिगड़ रहा है। सच्चाई यह है कि न हम वन डे में अव्वल हैं, न टैस्ट क्रिकेट में। और यह कोई आज भी स्थिति नहीं है। पहला टैस्ट हमने सन् बत्तीस में इंग्लैंड में खेला। कोई बीस साल बाद पहला टैस्ट इंग्लैंड से मद्रास में जीते। बाहर से पहली सीरीज न्यूजीलैंड से जीतकर आए पैंतीस साल बाद। न्यूजीलैंड तब दुनिया की सबसे कमजोर टीम थी। वेस्टइंडीज से पहली बार सीरीज जीते सन् 71 में और उसी साल इंग्लैंड से भी जीतकर आए। आस्ट्रेलिया, पाकिस्तान और दक्षिण अफ्रीका से अभी हम उनके मैदानों पर सीरीज जीतकर नहीं आए हैं। वन डे में जैसा कि मैं बता चुका हूँ हम जीते कम और हारे ज्यादा हैं। चूँकि वन डे में मैच ड्रा नहीं होते इसलिए टैस्ट क्रिकेट से यहाँ हमारा रेकार्ड और भी खराब है। टैस्ट हमने हारने-जीतने से ज्यादा ड्रा करवाए हैं।

अपना यह रेकार्ड ध्यान में रखें और यह भी जानें कि हमारा बोर्ड क्रिकेट के जरिए ब्रिटिश साम्राज्य की शान बढ़ाने के लिए बनाया गया था। वह आज भी अपनी ऐतिहासिक भूमिका निभा रहा है। क्रिकेट से कमाई ने कोढ़ में खुजली का काम और जोड़ दिया है। सन् बत्तीस में पहले टैस्ट की कप्तानी सीके नायडू ने की जो दौरे पर गई टीम के कप्तान नहीं थे। उन्हें खूब अपमानित कर खेलाया गया और हटाया गया। तब से एक कप्तान ऐसा नहीं हुआ जो अपमानित करके निकाला न गया हो। अपने-अपने जोन के खिलाड़ियों को टीम में घुसेड़ना और पर्यटक की तरह दौरे पर भिजवाने की परम्परा पहले दौरे यानी सन् बत्तीस से चली आ रही है। स्पिन लेने वाली पिच सन् तैंतीस में आई, पहली एमसीसी के वक्त से बन रहे हैं और तेज गेंदबाजी के सामने हम पहले टैस्ट से ढेर हो रहे हैं। हार पर विलाप और जीत पर सन्निपात हमारे राष्ट्रीय गुण-दोष हैं।

और यह सब इसलिए नहीं कि हमारे यहाँ प्रतिभा नहीं है और हम खेलना नहीं जानते। सबसे घातक तेज गेंदबाजी के खिलाफ सबसे ज्यादा रन बनाने वाले गावसकर और सबसे ज्यादा विकेट लेने वाले तेज गेंदबाज कपिलदेव—आखिर दोनों ही भारतीय हैं। हम अपने खेल, अपनी ताकत और कमजोरी को अपने मानदंडों से नाप कर अपनी नजर से नहीं देखते। हम हीनता में गुलामों की तरह खेलते हैं। विलाप और सन्निपात में झूलते हैं।

(5.11.97)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किस मिट्टी के होते हैं चैम्पियन?

अब आपके सामने मंजूर करने में अपने को क्या शरम हो सकती है कि यह एक तरह की बीमारी है। सवेरे साढ़े पाँच बजे से शुरू होता था साल का पहला ग्रेंड स्लेम–आस्ट्रेलियन ओपन–मेलबर्न में। फिर आस्ट्रेलिया और वेस्टइंडीज के बीच टैस्ट हो तो सवेरे लगभग इसी वक्त उसका भी प्रसारण शुरू होता। दिन और रात में खेला जाने वाला वन डे हो तो उसकी शुरुआत सवेरे नौ बजे। खेलने वाली टीमें–वेस्टइंडीज, पाकिस्तान और आस्ट्रेलिया की। फिर अपने यहाँ के दो बजते-बजते दक्षिण अफ्रीका में भारत और दक्षिण अफ्रीका के बीच टैस्ट शुरू हो जाता तो रात के नौ बजे तक चलता।

यानी सवेरे पाँच बजे उठकर टहलने जाने के बजाय टीवी देखने बैठना और रात को नौ बजे तक देखते ही रहना। सोलह घंटे लगातार। जब खेल में लंच, टी आदि हो तो नित्य कर्म से निपटना। जो ऐसा करे और सारे समय उसी में खोया रहे उसे आप बीमार नहीं कहेंगे तो क्या कहेंगे? लेकिन मैं जनवरी के दूसरे सोमवार से लेकर इस महीने के आखिर तक यही करता रहा। जिस दिन यह सब खत्म हुआ और तैयार होकर दफ्तर गया तो वहाँ सुमन्त भट्टाचार्य ने कहा 'आपको तेजी से सीढ़ियाँ चढ़ते देखकर लगा कि अब आपकी तबीयत एकदम अच्छी है।' उसे सही लगा था क्योंकि उसी दिन जैसे एक बीमारी से अच्छा होकर आया था। हालाँकि उसे असली बीमारी मालूम नहीं थी।

बीमारी का एक लक्षण और होता है कि उससे आप जानते हुए भी मुक्त नहीं हो सकते। मैं जानता हूँ कि टेनिस और क्रिकेट भले ही खेल हों उन्हें देखते रहने के लिए ऐसी निष्क्रियता से बैठे रहना और ठंड से बचने के लिए रजाई ओढ़े रहना कोई सक्रियता नहीं है। बल्कि एक तरह की पेसिविटी–निष्क्रियता है जो खेलों को ऐसे पागलपन से देखने वाले में भी क्षमा नहीं की जा सकती। कोई बच्चा होता तो उसके माँ-बाप उसे दो झापड़ रसीद करते और पढ़ने या खेलने भिजवा देते। लेकिन अपने को कौन उठाए? उठाता भी तो क्या अपन मान जाते?

किसी अवस्था को बीमारी मानना और फिर ऐसा रस लेते हुए उसका वर्णन करना भी कोई स्वास्थ्य का लक्षण नहीं है। यह समझकर भी आपको सब बता रहा हूँ तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसलिए कि ऐसा होते और करते हुए भी मैं एक तत्त्व की तलाश में था, जो मिल गया तो ऐसी बीमारी को भी माफ किया जा सकता है। तलाश यह थी आखिर वह कौन-सी और कैसी मिट्टी होती है जिससे चैम्पियन बनते हैं। खेलने को तो बहुत लोग खेलते हैं। कई उनमें से अच्छे भी होते हैं। लेकिन सच्चे चैम्पियन तो उनमें से भी एक-दो ही होते हैं। ऐसे जो लाखों में एक होते हैं—वे किस मिट्टी के बने होते हैं?

यह समझने के लिए साल का ग्रेंड स्लेम और टैस्ट और वन डे की ऐसी सीरीज जिनमें आस्ट्रेलिया, पाकिस्तान, वेस्टइंडीज, दक्षिण अफ्रीका और भारत खेल रहे हों अच्छा मौका होता है। साल का आखिरी ग्रेंड स्लेम अमेरिकन ओपन होता है जो अगस्त में खेला जाता है। उसके बाद सुस्ताने और अगले साल की तैयारी करने के लिए चार महीने मिल जाते हैं। फिर आस्ट्रेलियन ओपन हार्ड कोर्ट पर खेला जाता है जिसमें घास और मिट्टी के कोर्ट के गुण दोष नहीं होते। इसलिए मान लेना चाहिए कि उस पर किसी चैम्पियन की मिट्टी देखी और समझी जा सकती है।

क्रिकेट पर कोई बीस साल तक एकछत्र राज करने के बाद वेस्टइंडीज कोई टैस्ट सीरीज सन् पिचानबे में आस्ट्रेलिया से हारी। वेस्टइंडियाई क्रिकेट को पतन से उबारने के लिए रिची रिचर्डसन को गए साल विश्व कप के दौरान ही रिटायर होने के लिए मजबूर किया गया। वेसली हाल और एंडी राबर्ट्स जैसे अनुभवी मैनेजर और कोच की छुट्टी कर दी गई। रिचर्डसन की जगह कप्तान बनाए गए वाल्श और वेस्टइंडीज के सबसे सफल कप्तान रहे लायड को मैनेजर और सबसे सफल तेज गेंदबाज मार्शल को कोच बनाया गया। इन परिवर्तनों से उम्मीद थी कि धाकड़ बल्लेबाज लारा, आल राउंडर हूपर, तूफानी गेंदबाज एम्ब्रोस और बाकी खिलाड़ियों की भी शिकायतें दूर होंगी और वेस्टइंडीज फिर विश्वविजयी टीम हो जाएगी।

आस्ट्रेलिया और पाकिस्तान को नए सिरे से अपना वर्चस्व स्थापित करना था। आस्ट्रेलियाई टीम गए साल लाहौर में विश्व कप का फाइनल श्रीलंका से हारी। फिर भारत में टाइटन कप के मैचों के दक्षिण अफ्रीका और भारत दोनों ने ही उसे हराया। दिल्ली में एक अकेले टैस्ट में उसे भारत ने बुरी तरह पराजित किया। पाकिस्तान इस विश्व कप में सेमी फाइनल तक भी नहीं पहुँचा। उसे बँगलूर में भारत ने पहले ही हरा दिया। फिर वह न्यूजीलैंड और जिम्बाब्वे जैसी टीमों से तो जीत गया लेकिन बड़ी टीमों के सामने उसे फिर से अपना दबदबा जमाना था। विश्व कप के बाद उसने इंग्लैंड जाकर इंग्लैंड को हरा दिया था लेकिन इंग्लैंड भी आखिर जिम्बाब्वे और न्यूजीलैंड से बेहतर तो नहीं है। आस्ट्रेलिया में उसे वन डे आस्ट्रेलिया और पुनर्जीवन की ओर बढ़ती वेस्टइंडीज से खेलने थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
इधर दक्षिण अफ्रीका में दक्षिण अफ्रीका, भारत से हारकर लौटी थी। क्रिकेट में वापसी के छह साल बाद वह पहली बार सीरीज हारी थी। भारत अब दक्षिण अफ्रीका के दौरे पर था। दक्षिण अफ्रीका को साबित करना था कि भारत के धीमे और स्पिन लेने वाले पिचों पर उसकी टीम भले ही हार गई हो अपने सख्त और गेंद को उछाल देने वाले पिचों पर वह दुनिया की सर्वश्रेष्ठ टीम है। फिर भारत सचिन तेंदुलकर की कप्तानी में नए खिलाड़ियों की ताकतवर बनती टीम थी और घरेलू मैदानों पर जीतने के बाद उसे साबित करना था कि वह अपनी गली में शेर होने वाली नहीं किसी भी गली में दहाड़ने और जीतने वाली टीम बन रही है। उसमें नया आत्मविश्वास, नई ताकत और नई दिशा आ गई है। अब वह पहले वाली बाहर से पिटकर आने वाली टीम नहीं है। उसका कायाकल्प हो गया है।

आस्ट्रेलियाई ओपन में इस बार गए साल की विजेता मोनिका सेलेस चोट के कारण नहीं खेली और आंद्रे अगासी, क्रोइजेक, कफालनिकोव जैसे खिलाड़ी भी अपने-अपने कारणों से बाहर रहे। लेकिन महिलाओं में ग्राफ तो थी ही, सोलह साल की सनसनी मार्टिना हिंगिस भी थीं जिनने गए साल कहीं ग्राफ तो कहीं सेलेस तो कहीं सांचेच विकारियो को हराया था और इस ग्रेंड स्लेम में उन्हें सिंहासन पर अपने आने की चेतावनी देनी थी। फिर पीट सम्प्रास आठ ग्रेंड स्लेम जीतकर लेंडल और कोनर्स के बराबर हो गए थे।

लेकिन जिन्हें बोर्ग के ग्यारह खिताब की ओर बढ़ना था यानी अच्छे खिलाड़ियों को बताना था कि वे महान हैं।

टक्कर काँटे की थी और चुनौतियाँ जोरदार थीं। सब कसौटी पर थे और ऐसा अग्नि-परीक्षा में ही पतो चल सकता है कि कौन किस मिट्टी का बना है? आप टेनिस और क्रिकेट में रुचि लेने वाले हैं तो नतीजे सब आपको मालूम हैं। अखबारों में उन पर काफी छप चुका है इसलिए उन्हें दुहराकर आपका समय बरबाद नहीं करूँगा। बता दूँ कि सम्प्रास और हिंगिस के जीतने से अपने को सन्तोष है। वेस्टइंडीज के वन डे में पाकिस्तान से और टैस्ट सीरीज में आस्ट्रेलिया से हारने को भी इन टीमों की सही ताकत का पैमाना अपन मानते हैं। दक्षिण अफ्रीका अपनी गली का शेर है जैसा कि भारत भी है।

दक्षिण अफ्रीका ने कलकत्ता में दूसरा टैस्ट जीत लिया था, हम तीसरा टैस्ट नहीं जीत सके क्योंकि बरसात और अम्पायरों ने इतना वक्त नहीं दिया। नहीं तो भारत में भारत दो-एक से जीता था दक्षिण अफ्रीका में भी दक्षिण अफ्रीका दो-एक से जीतता। भारत वहाँ के तेज, सख्त और गेंद को ऊँची उछाल देने वाले पिचों पर ठीक से खेल नहीं पाता। दक्षिण अफ्रीका हमारे धीमे और स्पिन होने वाले पिचों पर टिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
नहीं पाता। सिर्फ फील्डिंग में दक्षिण अफ्रीका भारत से बहुत बेहतर है। हम कोशिश भी करें तो हमारे मैदान दक्षिण अफ्रीका और आस्ट्रेलिया की तरह ऐसे हरे-भरे नहीं हो सकते कि उन पर वैसी फील्डिंग सम्भव हो।

लेकिन आस्ट्रेलिया से वेस्टइंडीज और दक्षिण अफ्रीका से भारत सीरीज सिर्फ इसलिए नहीं हारा कि वे ऐसी परिस्थितियों में खेल रहे थे जो उनके सामने वालों को ज्यादा रास आ रही थी। इनकी पराजय का कारण यह भी है कि जो इनके चैम्पियन खिलाड़ी माने जाते हैं और जिन पर इनकी टीम का दारोमदार है वे निर्णायक मोड़ और क्षणों में वैसा नहीं खेल पाए जैसा कि उनकी टीम के लिए जरूरी था। चैम्पियन सचमुच वह है जिसके होते अव्वल तो टीम संकट में पड़े ही नहीं और पड़ जाए तो वह ऐसा खेले कि हार को हर बार जीत में नहीं बदल सके तो कम से कम पराजय को तो टाल ही दे।

वेस्टइंडीज में लारा हैं और भारत में तेंदुलकर। दोनों में दुनिया का सबसे बड़ा बल्लेबाज कौन है इसका फैसला आपकी निजी पसन्दगी पर है नहीं तो हैं दोनों ही धाकड़ बल्लेबाज। लारा के नाम टैस्ट और प्रथम श्रेणी के खेल में सबसे बड़ी पारियों के रिकार्ड हैं लेकिन तेंदुलकर की टैस्ट और वन डे में उनसे ज्यादा शतकें हैं। दोनों ही अपने दिन दुनिया के किसी भी और घातक से घातक आक्रमण के धुर्रे बिखेर सकते हैं। लेकिन क्रिकेट अकेले खिलाड़ी को अपनी प्रतिभा दिखाने का मौका देता है तो वह टीम गेम भी है। सच्चा चैम्पियन वही है जो टीम के काम आने वाला निजी प्रदर्शन कर सके।

लारा को ही लीजिए। आजकल उनके बुरे दिन चल रहे हैं जैसे कि हर खिलाड़ी के आते हैं। लेकिन लारा उनसे निकलकर पहले वन डे में आस्ट्रेलिया और पाकिस्तान के खिलाफ शतकें और फिर आस्ट्रेलिया के खिलाफ नब्बे रन बनाकर टीम को त्रिकोणीय श्रृंखला के फाइनल में ले गए। फिर पाकिस्तान से फाइनल शुरू हुए। तीन में से दोनों फाइनल वेस्टइंडीज हार गया क्योंकि दोनों में लारा बल्लेबाजी में फेल हो गए। पहली बारी में फेल कोई भी हो सकता है लेकिन दूसरी में भी फेल होना और वह भी तब जब टीम को अपने योगदान की सख्त जरूरत हो—चैम्पियन का खेल नहीं हो सकता।

फिर चौथे टैस्ट में वेस्टइंडीज जीतता नहीं तो उसे ड्रा करना तो उसके लिए अनिवार्य था। इसके बिना वह वॉरेल ट्रॉफी में हारने से बच नहीं सकता था। आखिरी टैस्ट पर्थ में होना था जहाँ वेस्टइंडीज हमेशा जीतता रहा है और इस बार भी जीतकर सीरीज दो-दो से ड्रा कर सकता था। एडीलेड, ओवल में पहले वेस्टइंडीज ने बल्लेबाजी की। लारा से अपेक्षा ही नहीं, यह उनकी जिम्मेदारी थी कि वे जमकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खेलते और पहली पारी में टीम को ऐसा टोटल तो देते कि वह मैच में टिकी रहे। लेकिन लारा ने वार्न की गेंद पर बेहद गैर जिम्मेदार और बोदी शॉट मारी और सस्ते में गए। सारी टीम 130 पर ढेर हो गई। दूसरी पारी में वे जरूर थोड़े ठीक खेले लेकिन तब तक टैस्ट वेस्टइंडीज के हाथ से निकल गया था। लारा, रिचर्ड्स या लॉयड या सोबर्स जैसे चैम्पियन नहीं हैं जो संकट में अपनी टीम को या तो जाने नहीं दें या चली जाए तो अकेले बूते पर निकाल लाएँ। लारा के लिए टीम और उसकी स्थिति अपने खेलने से ज्यादा महत्त्वपूर्ण और ऊपर नहीं हैं कि वे उसके अनुसार खेलें।

यही हाल अपने राजकुमार तेंदुलकर के हैं। दक्षिण अफ्रीका के खिलाफ दूसरे टैस्ट में अद्‌भुत 169 ठोक कर उनने फालोऑन बचाया। लेकिन भारत को हार से बचाने के लिए यह काफी नहीं था। पाँचवें दिन उन्हें एक सिरे पर दिन-भर जमे रहना था और ट्रैस्ट ड्रा करवाना था ताकि आखिरी टैस्ट में जीत की उम्मीद करके सीरीज को बराबर किया जा सके। लेकिन सवेरे आते ही मेकमिलन की गेंद पर उनने इतना वाहियात और गैर जिम्मेदार पुल मारा कि लड्डू जैसा कैच उड़ गया। उनके बाद आए अजहर जिनसे भी बहुत उम्मीदें थीं लेकिन वे तो और भी उस्ताद हो गए हैं। टीम उनके लिए जैसे है ही नहीं। वे अपने लिए और धुआँधार करने को खेलते हैं। पहली पारी में अजहर और तेंदुलकर की अद्‌भुत पारियों के बावजूद भारत 280 से ज्यादा रनों से हार गया। हार से तेंदुलकर ही बचा सकते थे पर उनने जमकर खेलना जरूरी नहीं माना। वे कप्तान हैं इसके बावजूद टीम के लिए मर मिटने वाली बल्लेबाजी करने को तैयार नहीं हैं।

सचिन तेंदुलकर और ब्रायन लारा बेहद प्रतिभाशाली बल्लेबाज हैं लेकिन टीम को अगर अपने से बड़ी मानकर उसकी जरूरत के मुताबिक नहीं खेल सकते तो चैम्पियन नहीं हो सकते। बाजार ने उन्हें हीरो बना दिया है और इस हीरोगिरी ने उन्हें टीम के बजाय अपनी इमेज के लिए खेलने में लगा दिया है। तेंदुलकर समझदार हैं इसलिए लारा की तरह फालतू के विवादों में नहीं पड़ते। लेकिन ये दोनों ही आज तो बेडमन, रिचर्ड्स और गावसकर की तरह सर्वकालिक चैम्पियन बनते नहीं दिखते। लेकिन पीट सम्प्रास और हिंगिस चैम्पियन हैं क्योंकि वे जब जरूरत हो तब विनर मार सकते हैं और लगातार बचाव भी कर सकते हैं भले ही कितना ही दबाव हो। सम्प्रास बाजार के चक्कर में चौंधियाए नहीं हैं और इसलिए सार्वकालिक महानता की ओर बढ़ गए हैं। हिंगिस ने अभी एक कदम ही उठाया है। टेनिस जब कि हीरोगिरी और बाजार का ज्यादा बड़ा शिकार है।

(2.2.97)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जितने दिल उतनी ट्रॉफी जीतो

"दक्षिण अफ्रीका ने ट्रॉफी जीती और भारत ने दिल"—आपके अखबार ने आपसे कहा होगा। लेकिन मैं जो अच्छा खेलने और दिल जीतने को ही खेलने की प्रेरणा और लक्ष्य मानता हूँ—गुरुवार की रात तीन बजे सोया तो तय किया था कि अब कभी भारत के जीतने पर अपनी भावनाएँ इतने बड़े दाँव पर नहीं लगाऊँगा। इतना उत्तेजित और फिर इतना निराश होना स्वास्थ्य के लिए तो घातक है ही जीने के लिए जो मनोबल चाहिए उसका भी कबाड़ा कर देता है। ऐसी टीम से जीतने की इतनी उम्मीदें क्या बाँधना जो जानती ही नहीं कि जीता कैसे जाता है। भाड़ में जाए।

लेकिन आप जानते हैं और मैं भी कि यह हार के मैदान में उपजा श्मशान वैराग्य था। भारत ने इस रात किंग्समीड, डरबन में न सिर्फ दिल जीते बल्कि उस पूँछ मरोड़ और खमठोकू दक्षिणी अफ्रीकी तेज गेंदबाजी में भुस भी भर दिया जिसने इसी मैदान पर कोई पौने दो महीने पहले, भारतीय बल्लेबाजी के धुर्रे बिखेर दिए थे। यहीं पहले टैस्ट में हम पहली पारी में सौ और दूसरी में छाछठ पर ढेर हो गए थे।

इसी मैदान पर डोनाल्ड को चार ओवर में उनचालीस, पोलक को चार ओवर में बत्तीस और ब्रायसन को दो में बीस रन ठोक दिए गए। दुनिया में सबसे तेज माने जाने वाले डोनाल्ड तब गरुड़ की तरह तैर रहे थे। अब सचिन और द्रविड़ से भी छक्का पड़ने के बाद वे मरियल साँप की तरह जहर उगल रहे थे। डोनाल्ड दक्षिण अफ्रीका की शान हैं। उन्हें भारतीय बल्ले से पिटने के बाद नपुंसक क्रोध में तिलमिलाते देखना एक तरह से छाती ठंडी करना था। उन्हें अपनी तूफानी गेंदबाजी पर बड़ा नाज है और कहते हैं वह दुनिया में सबसे ज्यादा मारक हैं। लेकिन गुरुवार की रात तेंदुलकर और द्रविड़ ने जैसे उनकी गेंद की सीवन उधेड़ कर उसमें भुस भर दिया था।

कहते हैं दक्षिण अफ्रीका की तेज गेंदबाजी और उनकी शानदार फील्डिंग के सामने हर ओवर में पाँच रन का औसत पाना भी लगभग असम्भव है। लेकिन उस रात भारत ने पहले सात ओवर में पचास, तेरह में सौ, बाईस में डेढ़ सौ और तीस में 193 रन बना लिए थे। यानी औसत हमेशा छह से ऊपर थी और ऐसा कोई पाँच

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छह ओवरों में नहीं तीस ओवरों तक लगातार चलाया गया। जीतने के लिए मिले चालीस में से जब आखिरी दस शुरू हुए तो भारत को साठ गेंदों पर सत्तावन रन बनाने थे। आपके मेरे जैसे भारतीय ही नहीं दक्षिणी अफ्रीकी कमेंट्रीकार भी स्तब्ध थे और जब तेंदुलकर और द्रविड़ का धुआँधार चल रहा था तो एक ने कहा भी कि ऐसा उनने अपने जीवन में होते कभी देखा नहीं।

लेकिन फिर क्या हुआ? फिर जडेजा, द्रविड़, रोबिन सिंह और सबा करीम जमकर जीत के हिसाब से खेलने के बजाय धुआँधार करते हुए लौट आए और उन्हीं डोनाल्ड ने दो गेंदों पर सबा करीम और अंकोला के डंडे उड़ाकर भारत को जीत की देहरी पर दे मारा। हम सोलह रन से हार गए। खेलने को अभी चार गेंदें और बची थीं जिन पर तीन छक्के या चार चौके लगाकर जीता जा सकता था। लेकिन जो मार सकते थे वे अपनी टूटी तलवारों की मूठ सहलाते पेवेलियन में बैठे थे। जिन श्रीनाथ की लप्पेबाजी पर भारतीय टीम को बहुत भरोसा है वही आखिरी ओवर में डोनाल्ड के सामने थे। श्रीनाथ ने जमकर हाथ दिखाने का निश्चय नहीं हड़बड़ाहट में बल्ला चलाने की बेवकूफी दिखाई।

जो टीम तीसवें ओवर तक सिंह की तरह गरजती वार कर रही थी वह बाद के ओवरों में रेत की तरह बिखर गई जब कि वन डे में टीमें तभी अपनी वाली पर आती हैं। चालीस ओवर में 6.30 रन की औसत से जीतने के लिए 252 रन बनाने का लक्ष्य ही लगभग असम्भव था और जो उसे पाने की महानायकी को इतनी दूर तक ले आए वह निश्चित ही सबका दिल जीत लेती है। लेकिन जो इतनी पास आकर ऐसी बुरी तरह फिसल जाए उस टीम के निश्चय, स्वभाव और बुद्धि के बारे में क्या कहिएगा। जो डोनाल्ड, पोलक, क्लूजनर और कप्तान क्रोनिए सुधबुध खोए खड़े थे वही आखिर में बल्ले-बल्ले उछलने लगे।

वे कहेंगे कि ठीक है आपने दिल जीते तो जीते हुए दिल अपने पास रखिए। हमने ट्रॉफी जीती है हम ट्रॉफी अपने पास रखते हैं। भारत, जिम्बाब्वे और दक्षिण अफ्रीका के बीच यह सीरीज दिलों के लिए नहीं ट्रॉफी के लिए खेली गई थी। ट्रॉफी हमने जीती क्योंकि ऐसे धुआँधार हमले के बावजूद हमने अपना आपा नहीं खोया। हमारी फील्डिंग वैसी ही शानदार रही। असम्भव कैच पकड़े गए और सीधे थ्रो से रन आउट किए गए। आपके हमले में धार भले कितनी हो दम नहीं था कि आखिर जीतते हमारी फील्डिंग में दम था कि इतने दबाव में भी बिखरी नहीं। आप हारे हम जीते। अन्तिम विजय अगर सत्य की होती है तो सत्य का नाम दम और दिमाग है। सिर्फ दिल नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
मैं जानता हूँ कि आज की खेल दुनिया में खेल खेलने और दिल जीतने के लिए नहीं खेले जाते। इसलिए नहीं कि खेलों का बुरी तरह व्यापारीकरण हो गया है और उनमें इतना पैसा आ गया है कि किसी भी कीमत पर और किसी भी तरह जीतना सबसे बड़ी बात हो गई है। अब यह पुराने जमाने की बात मानी जाती है कि खेल अच्छा खेलने के लिए है। हार-जीत उतनी महत्त्वपूर्ण नहीं है जितना अच्छा खेलना। भलमनसाहत और सामने वाले को बराबरी का पूरा मौका देते हुए खेलना और ऐसे खेलते हुए हार भी जाना तो कोई दुख न मनाना। बल्कि बुरा तब मानना जब सामने वाले को छल से धोखे से या जब किसी भीतरी-बाहरी कारण से वह कमजोर पड़ गया हो तब हराया गया हो। ऐसी जीत दो कौड़ी की और वैसी हार भी हीरे-पन्ने की होती है।

जिस जमाने में खेलों में ऐसे मूल्य और ऐसे मानदंड चलते थे वह उन्नीसवीं सदी और बीसवीं सदी के दो महायुद्धों के पहले का आदर्शवादी जमाना था। आज की दुनिया में सफलता ही सब कुछ है, जीतना ही सब कुछ है। जो सफल नहीं होता, जो जीतता नहीं उसको आज की दुनिया नहीं मानती। आप लाख अच्छा खेलने वाले और खेल भावना से उफनते आदमी हों अगर आप जीत नहीं सके तो आप किस काम के? यह धारणा इएसपीएन जैसी टीवी की खेल चैनल की नहीं है जो दिन में कई बार कहती है कि अगर जीतना नहीं है तो खेलना ही क्यों? और फिर वह खेल दिखाने की दुनिया में अपने को विजेता घोषित करते हुए कहती है कि सवेरे, दोपहर, शाम और भरी रात में जाने कब क्या हो जाए इसलिए इएसपीएन देखते रहिए। यह जीवन दर्शन अमेरिका का है जो कि दुनिया का सबसे शक्तिशाली लोकतन्त्र है और आज की दुनिया का अकेला महाबली भी। उसे टुच्ची दादागिरी में कभी शर्म नहीं लगती।

तो इस दुनिया में उस भारत के लिए क्या जगह होगी जो जीतते-जीतते हारने का आदी हो गया है? और जो अच्छा खेले तो हार में भी शान समझता है। और जिसके महापुरुषों में से एक महापुरुष गौतम बुद्ध तीरन्दाजी की होड़ में भाग लेते और हमेशा निशाने पर तीर मारते लेकिन जब विजेता घोषित किया जाना हो तब जानबूझकर गलत तीर मार देते थे। जो घुड़सवारी की प्रतियोगिता में भाग लेते और सबसे आगे होते। लेकिन जब विजय स्तम्भ को पार करने का पल आता तो घोड़ा रोक लेते और दूसरों को आगे निकल जाने देते। जो सर्वश्रेष्ठ और विजेता होते हुए भी ऐसे घोषित और स्थापित किए जाने के क्षण में स्वेच्छा से विजय को छोड़ देते वही तो आगे चलकर अहिंसा और करुणा को सबसे रचनात्मक और मानवीय मानने वाले बौद्ध धर्म के प्रणेता हो सकते थे। दुनिया में ईसाइयत के बाद सबसे ज्यादा लोग बौद्ध धर्म को मानने वाले हैं। फिर भी आज की दुनिया में विजय और सफलता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
ही सबसे बड़े मूल्य हैं। और इन्हें साधने के लिए माना जाता है कि दम और दिमाग को साधना बहुत जरूरी है और रवैये में अटूट आक्रामकता होनी चाहिए।

भारत अगर जीतता नहीं और सफलता के पीछे लगातार दौड़ता नहीं लगता तो क्या इसका कारण भारतीयों की मानसिक बनावट है? वीर सावरकर और उनकी हिन्दुत्ववादी वीर सन्तानें कहेंगी कि यह गलत है। भारत तो वेदों के जमाने से जीत और सफलता को सबसे महत्त्वपूर्ण मानता रहा है। वे किसी वेद में से कोई श्लोक निकालकर बता देंगे कि देखिए भारत तो दुनिया में सबसे पहले जीत और सफलता की सबसे बड़ी उपलब्धि मानता रहा है। भगवान बुद्ध और महात्मा गांधी और इनके बीच के विचारकों ने जो गड़बड़ की है उसे आम लोगों ने कभी नहीं माना। जो एक हजार साल की गुलामी भारत ने काटी उसमें बुद्ध की अहिंसा और करुणा का कोई कम योगदान नहीं है। लेकिन कोई बात नहीं। संघ परिवार के मौलिक विचारक सुदर्शन कहेंगे कि छह दिसम्बर को बावरी मस्जिद के ध्वंस से सांस्कृतिक क्रान्ति का सूत्रपात हो गया है। अब भारत भी सफलता और जीत को सबसे बड़े मूल्य मानकर इक्कीसवीं सदी का सिरमौर राष्ट्र हो जाएगा।

सुनील गावसकर कहते हैं कि विजय के इतने पास पहुँचकर भी भारत डरबन में जीत नहीं पाया तो इसका कारण यह है कि हमारे खिलाड़ियों में हीरोगिरी का बड़ा शौक है। बताइए जब जीतने के लिए सिर्फ साठ गेंदों पर सत्तावन रन बनाने थे तब लम्बे, ऊँचे और खतरनाक शॉट मारने की क्या जरूरत थी। मजे में एक-एक, दो-दो रन लेकर भी हर ओवर में छह रन बनाए जा सकते थे। ये रन लेने में भी जानलेवा सिंगल दौड़ने की जरूरत नहीं थी। अच्छी गेंद पर रन नहीं भी बने तो कोई बात नहीं ओवर में चव्वा मारने लायक एक बोदी गेंद तो मिल ही जाती। गावसकर ने नाम नहीं लिए लेकिन वे पूछते कि बताइए जडेजा को कवर पर छक्का मारने की कोशिश करने की क्या जरूरत थी? इतना अच्छा खेल रहे द्रविड़ को ऑफ में इतनी दूर जाकर लेग में ऊँचा फिलक क्यों करना चाहिए था? रोबिन सिंह को आत्मघाती रन नहीं लेना चाहिए था। इनके जाने के बाद भारत जीता जिताया मैच हार गया।

सही है कि ये सब हीरोगिरी के शॉट थे और इनके बिना भी हम मजे में जीत सकते थे। लेकिन जब आठ रन की औसत चल रही थी तब भी तेंदुलकर और द्रविड़ हीरोगिरी ही कर रहे थे। गावसकर भारत के सबसे सफल क्रिकेट खिलाड़ी ही नहीं जो भी काम करते हैं उसमें सफल होने वाले प्राणी हैं। उनकी समझदारी और उनके अनुभव को यों ही उड़ाया नहीं जा सकता। लेकिन भारतीय स्वभाव में हीरोगिरी की इस ललक को ही इंग्लैंड के एक भूतपूर्व टैस्ट खिलाड़ी लेखक और कमेंट्रीकार ने विश्व कप में भारत की जीत का कारण बताया था। टोनी लुइस ने लिखा था कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
असम्भव कर गुजरने के लिए मन में यह विश्वास होना चाहिए कि अनहोनी को होनी किया जा सकता है। भारत में सबसे ज्यादा फिल्में बनती हैं और सबसे बड़ा फिल्म उद्योग है तो नाहक नहीं है। यहाँ सपनों के सौदागर और उनके खरीदार सबसे ज्यादा हैं। भारतीयों के मन में महानायक बनने की एक सहज-स्वाभाविक इच्छा रहती है। नहीं तो कौन मान सकता था कि जो देश वन डे में ऐसा फिसड्डी हो वह विश्व कप के फाइनल में वेस्टइंडीज को हरा देगा?

गावसकर और लुइस बुनियादी बात पर एक हैं—भारतीयों में हीरोगिरी के लिए बड़ी ललक है। गावसकर कहते हैं कि इस कारण हम कई बार जीतते हुए हार जाते हैं और लुइस कहते हैं कि इस कारण हम असम्भव कर गुजरते हैं। आखिर दूसरी पारी में सबसे ज्यादा रन बनाकर टैस्ट हमीं ने जीता है और वह भी वेस्टइंडीज के खिलाफ वेस्टइंडीज में। इस टैस्ट में गावसकर ने 102 और विश्वनाथ ने 112 रन बनाए थे और कोई नहीं कहेगा कि ये हीरोगिरी में बल्लेबाजी करते थे। दुनिया में पहली बार टैस्ट में दस हजार रन गावसकर ने बनाए। सबसे ज्यादा शतकें भी उन्हीं की हैं। टैस्ट इतिहास में सबसे ज्यादा विकेट हमारे कपिलदेव के हैं। यह सब महानायकों के काम हैं। असम्भव कर गुजरने के सपने के बिना कोई असम्भव नहीं कर सकता। यही हीरोगिरी की ललक है। लेकिन जिसमें यह ललक होगी वह सफलता और विजय के पीछे एक क्रूर बौद्धिकता के साथ नहीं लगेगा। इसलिए जीतते-जीतते हारेगा और सफल होने में जो हिसाबीपन है उसे रूमानियत से बिगाड़ देगा?

क्या एक सचिन तेंदुलकर इस राष्ट्रीय स्वभाव को बदल सकता है? अपनी अद्‌भुत प्रतिभा और मासूम आक्रामकता से तेंदुलकर खुद तो अनहोने पराक्रम कर सकते हैं लेकिन वे अकेले और हमेशा अपनी टीम को जिता नहीं सकते। जैसे गुरुवार की रात राहुल द्रविड़ ने अद्‌भुत पारी खेली वैसी अनहोनी पारियाँ खेलने की आदत टीम के दूसरे खिलाड़ियों में भी डालनी पड़ेगी। क्रिकेट आखिर टीम का खेल है और टीम के लिए कुरबानी करने की तमन्ना भी हर खिलाड़ी में पैदा करनी होगी। टीम बड़ी है क्योंकि सभी मिलकर कोशिश करेंगे तो टीम जीतती रहेगी। दक्षिण अफ्रीका में सहज और अद्‌भुत प्रतिभा का एक भी खिलाड़ी नहीं है फिर भी टीम जीतती है क्योंकि सभी अपना-अपना योगदान करते हैं। एक-दो की हीरोगिरी से कभी-कभी तो जीत सकते हैं जीतने की आदत नहीं डाल सकते।

हम दिल जीतें यह तो जरूरी है क्योंकि इसके बिना भारतीयों का खेल भारतीय नहीं होगा। लेकिन ट्रॉफी नहीं जीतेंगे तो दिल जीतने का ज्यादा अर्थ नहीं रहेगा। दिल तो जीतना ही है और ट्रॉफी भी। दोनों के बिना हम विजेता नहीं हो सकते।

(16.2.97)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खिलाड़ी हैं या बलि के बकरे?

इसे आप चाहें तो अपकीर्तिमान कह लीजिए। पर है यह एक तरह का कीर्तिमान ही। दुनिया की किसी टीम को विदेश में अपने ही देश के आप्रवासी दर्शकों ने ऐसे नहीं धिक्कारा होगा जैसे शारजाह में वेस्टइंडीज से हारने के बाद भारतीय टीम को वहाँ रहने और मैच देखने आए भारतीयों ने कोसा।

पुरस्कार समारोह में बुलाए गए सचिन तेंदुलकर को इन भारतीयों ने ही हूट किया। किसी ने कहा—'अगले विश्व कप में लड़कियों की टीम भिजवा देना।' किसी ने तख्ती लिख के लगाई—'मुझे मेरा पैसा वापस चाहिए।' किसी ने हाँक दी—'प्रभाकर, तुम ग़लत नहीं कहते हो।' यानी भारतीय खिलाड़ी पैसे खाकर मैच हार जाते हैं। ऐसा शायद ही कोई अपमान होगा जो इन भारतीयों ने अपनी टीम पर पत्थर की तरह मारा न हो। फिर भी तेंदुलकर ने बड़े साहस से कहा कि वे इन दर्शकों की निराशा समझ सकते हैं। उनने अनकहा छोड़ दिया कि हमारा खेल था ही इस लायक।

हार के तो पाकिस्तानी भी शारजाह से चुपचाप गए। लेकिन पाकिस्तानियों ने अपनी टीम के साथ ऐसा बरताव नहीं किया। पाकिस्तान से भले ही पुराने तेज गेंदबाज सरफराज नवाज ने बयान दिया हो कि कप्तान वसीम अकरम पैसे खाकर मैच हार गए। लेकिन शारजाह में रहने वाले उत्साही और पूँछ मरोड़ू पाकिस्तानियों ने अपनी टीम पर लानत नहीं फेंकी।

पाकिस्तानी अपनी टीम को लेकर जरा ज्यादा ही ताता थैया करने वाले लोग हैं। वैसे ही उनके जैसे फोकटे मूँछ मरोड़ू दुनिया में कम ही होंगे। पर वे पाकिस्तान की हार का उतना बुरा नहीं मानते जितने शारजाह के भारतीय क्योंकि पाकिस्तानी टीम वहाँ लगभग हमेशा जीतती रहती है और दस साल से तो भारतीय टीम शर्मनाक ढंग से लगातार हारती आ रही है।

इस बार भी हम इंग्लैंड और पाकिस्तान से पहले ही हार चुके थे। लेकिन वेस्टइंडीज से अगर हम जीतते और उनसे बेहतर रन रेट कर लेते तो सीधे फाइनल में पहुँच जाते। वेस्टइंडीज के आजकल जो हाल चल रहे हैं उसे देखते हुए यह कोई मुश्किल काम था भी नहीं। वेस्टइंडीज को हमने 229 पर बाँध भी दिया था और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
फाइनल में पहुंचने के लिए हमें 45 ओवरों में 230 रन बनाने थे। 5.11 की औसत से ये रन बनाना आसान नहीं तो असम्भव भी नहीं था।

सिद्धू के बजाय गांगुली के साथ सचिन ओपन करते तो पहले 15 ओवरों में रन कूटकर औसत सुधारना आसान होता। लेकिन आजकल टीम चुनने वाले पाँच बुद्धिमान सिर्फ टीम नहीं चुनते वे यह भी बताते हैं कि कौन किस नम्बर पर बल्लेबाजी करेगा। इन बुद्धिमानों ने कुछ 'जानकारों' की माँग पर सचिन तेंदुलकर को कह दिया है कि वे ओपन न करें। उनके जल्दी आउट होने से पूरी टीम दबाव में आ जाती है और चूँकि वे टीम के सबसे अच्छे बल्लेबाज हैं इसलिए उन्हें चौथे या पाँचवें नम्बर पर आना चाहिए ताकि फालतू का खतरा न रहे। इसलिए सिद्धू ने ओपन किया और 25 रन बनाने में 43 गेंदें खा गए।

लेकिन सामने गांगुली थे जो ठीक खेल रहे थे हालाँकि सिद्धू के कारण तेजी से रन बनाने की जिम्मेदारी उन्हीं पर थी। अब गांगुली बंगाल टाइगर हैं और कलकत्ता के ब्रिटिश राज वातावरण के महाराज हैं। वे शान से चव्वा या छक्का मारना पसन्द करते हैं। एक-एक दो-दो रन भागना उनकी शान के विपरीत है। फिर सिद्धू के साथ रन भागना यों भी कम खतरनाक नहीं है। वे भी भागकर रन बनाने के बजाय चौके-छक्के में रन बनाना चाहते हैं। तो तेज रन भागकर नहीं बन सकते थे और शुरू की गलतियों के बाद वेस्टइंडीज के गेंदबाज गांगुली को ऑफ स्टम्प के बाहर गेंद देने के बजाय पाँवों पर दे रहे थे। लेग में गांगुली उतने अच्छे नहीं खेलते जितने ऑफ में खेलते हैं। ऑफ में वाल्श ने छह फील्डर लगा दिए थे।

फिर भी गांगुली और सिद्धू ने मिलकर 80 से ज्यादा रन बना लिए थे। लुइस की गेंद पर सिद्धू जब लड्डू जैसा कैच देकर आउट हुए तो भारत जीतता लग रहा था। इस वक्त भी अगर सचिन तेंदुलकर बल्लेबाजी करने आ जाते तो गांगुली पर भी दबाव घटता और रन भी तेजी से बनते। लेकिन चयनकर्ताओं के हुक्म पर द्रविड़ ही आए। द्रविड़ को पहले के दो मैचों में नहीं खेलाया गया था और उन्हें तेज खेलने वाला वन डे खिलाड़ी नहीं माना जाता हालाँकि गांगुली से तो वे तेज ही खेलते हैं और एक-एक दो-दो बनाते रहते हैं जिससे एक ही बल्लेबाज गेंदबाजी के सामने नहीं रहता। लेकिन सही है कि द्रविड़ उस तरह चार्ज नहीं ले सकते जैसे तेंदुलकर ले सकते हैं। फिर भी द्रविड़ सिद्धू और गांगुली दोनों से कम गेंदों पर ज्यादा रन बना रहे थे।

फिर भी रन रेट घट रही थी। गांगुली को बाँधकर रखने के तरीकों में वाल्श सफल हो रहे थे। लुइस से बाएँ हाथ के गांगुली जैसे निपट सकते थे स्वीप मारने वाले द्रविड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
भी उतने कामयाब नहीं हो पा रहे थे। लेकिन गांगुली के लेग में गिने-चुने स्ट्रोक होते हैं और उन्हें रोकने के लिए वाल्श ने फील्डर लगा दिए थे। गांगुली धैर्य खोकर हूपर को ऊँचा मारने के लिए बाहर कूदे और हूपर ने गेंद सीधी और उनसे दूर फेंक दी। गांगुली आसानी से स्टम्प कर दिए गए। फिर भी 90 गेंदों पर वे 70 रन बना चुके थे। टीम का टोटल 126 था यानी जीतने के लिए 104 रन ही चाहिए थे।

रन रेट बढ़ गई थी लेकिन अभी छह पर नहीं पहुँची थी और द्रविड़ और तेंदुलकर और उनके बाद अजहर और जडेजा बचे हुए ओवरों में 104 रन मजे में बना सकते थे। लेकिन सचिन ने दूसरी ही गेंद पर लेग में पुश की और दूसरे रन के लिए ऐसे भागे मानो आखिरी ओवर में खेल रहे हों। लुइस के थ्रो पर उन्हें विकेट कीपर ने रन आउट कर दिया। सचिन आए ही थे और उनके पाँव अभी तेज नहीं चल सकते थे। पर उनमें ऐसी हताशा दिखाई दी मानो मैच उनसे जीता नहीं जाएगा और फेल होते दिखने के बजाय रन आउट की आत्महत्या करना बेहतर होगा।

अब सचिन भीषण प्रतिभावान बल्लेबाज हैं और दो-तीन-साल से तो लारा से बेहतर ही चल रहे हैं। उनमें आत्मविश्वास की ऐसी कमी और आत्महत्या की ऐसी दबी-कुचली इच्छा देखना उनकी प्रतिभा और हैसियत से मजाक करना है। लेकिन सच, जिस स्थिति में मैच था और उन पर जो जिम्मेदारी थी और उनसे जो उम्मीद थी—उन सबको देखते हुए उनका दूसरे रन के लिए भागना आत्महत्या के सिवाय कुछ नहीं था। आँख जम जाने और पैरों के ठीक से चलने के बाद तो छह रन प्रति ओवर वे अकेले ही बना सकते थे। लेकिन वे जैसे हताश थे और उन्हें लगता था कि 106 रन की चुनौती उनके और उनकी टीम के बूते के बाहर की बात थी। जमकर खेलना तो तभी सम्भव था जब उन्हें विश्वास होता कि दो-चार गेंद बिना रन के भी खेल ली तो कुछ बिगड़ नहीं जाएगा।

लेकिन सचिन से और भी हद कर दी अजहर ने। वे भारतीय उपमहाद्वीप के वन डे के सबसे अनुभवी और सबसे ज्यादा रन बनाने वाले बल्लेबाज हैं। पुराने कप्तान ही नहीं, टीम के सबसे पुराने और जिम्मेदार खिलाड़ी हैं। विकेट के बीच सबसे तेज भागने वाले और गेंद को खाली जगह में मारने के उस्ताद माने जाते हैं। सचिन और गांगुली के जाने के बाद मैच जिताना उन्हीं की जिम्मेदारी थी पर वे तो आते ही ऐसे खेलने लगे जैसे वन डे कभी खेले न हों और उन्हें पाँच मिनट में जहाज पकड़ना हो। वे कुल जमा आठ गेंद खेले और चार रन बनाने में इतनी बार और ऐसे अटपटे दौड़े कि कभी भी आउट हो जाते। एक असम्भव रन के लिए वे द्रविड़ के बुलाए बिना दौड़े और इतनी दूर पहुँच गए कि वापस आए तो हूपर डंडे उड़ा चुके थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
सचिन तेंदुलकर ने अगर आत्महत्या की तो अजहर ने तो जिम्मेदारी लेने से ही जैसे इन्कार किया और आ बैल मुझे मार करते हुए पिट कर आ गए। उनके रवैये से लगता था जैसे नाहक इस टीम को जिताने की तोहमत क्यों उठाई जाए। यह कोशिश और मेहनत और जद्दोजहद करने लायक नहीं है। कोई अफसाना बनाकर बदगुमा हो जाइए। वे रन आउट होकर चले आए। जब सचिन ने कुछ नहीं किया तो अजहर क्यों करे। अरे भाई टीम में और भी बल्लेबाज हैं। क्या उनका फर्ज नहीं है कि रन बनाएँ और टीम को जिताएँ। और जब हमें गैरजिम्मेदारी के आरोप में कप्तानी से हटाया गया तो अब जिम्मेदारी की उम्मीद क्यों की जाए? लो हम तो ये आउट होकर चले और अजहर भी चले आए।

द्रविड़ और नए आए जडेजा फिर भी तय कर सकते थे कि 230 रन अगर 45 ओवरों में नहीं बन सकते तो हम उन्हें 50 ओवर में बनाएँगे। न पहुँचे फाइनल में पर जीत तो जाएँगे। कम-से-कम एक मैच जीतकर अपने आत्मसम्मान और गर्व को तो स्थापित करेंगे। द्रविड़ और जडेजा दोनों ही ऐसे निश्चय और संकल्प के योग्य हैं। लेकिन उनके कन्धे गिरे हुए अैर सिर लटका हुआ था। न हालचाल से ऐसा लगता था कि वे संघर्ष और जीत की कोशिश करने को तैयार हैं। इसके ठीक उलट लगता था जैसे उनकी टीम हार गई है और वे बलि के बकरे हैं जो ज्यादा देर खैर नहीं मना सकते। पर पराजयवादी रवैया दोनों के ही चरित्र और अब तक के प्रदर्शन से मेल नहीं खाता। लेकिन शॉट मारने, दौड़ने और मैदान को देखने का उनका ढंग कहीं बताता नहीं था कि वे जूझने और जीतने आए हैं।

दोनों ही हूपर की गेंद डंडी पर खाकर बलि हुए बकरों की तरह लौट आए। द्रविड़ ने 45 गेंदें खेलीं और जडेजा ने 21 लेकिन एक पर भी वे ऐसा झपट्टा मारते नहीं दिखे जैसे कि हमेशा मारा करते हैं। जडेजा तो हारी हुई पारियों में जिताने वाले खिलाड़ी हैं। लेकिन उन्हें भी जैसे अजहर और सचिन की छूत लग गई थी। द्रविड़ दुनिया भुलाकर दत्तचित्त खेलने वाले बल्लेबाज हैं लेकिन उस रात जैसे उनका ध्यान ही कहीं लगने को तैयार नहीं था। सचिन जिम्मेदारी के और अजहर गैरजिम्मेदारी के मारे हुए थे। लेकिन द्रविड़ और जडेजा तो ऐसे सभी दबावों से मुक्त थे और इसलिए फाइनल में नहीं तो विजय में तो अपनी टीम को पहुँचा ही सकते थे। लेकिन इतना भी निश्चय और आत्मगौरव द्रविड़ और जड़ेजा में भी नहीं बचा था।

उनके बाद तो सबा करीम, कुम्बले, श्रीनाथ, चौहान और वेंकटेश चन्दरपाल की गेंद के शिकार हो गए। इससे ज्यादा की उम्मीद उनसे की भी नहीं जा सकती थी। वे आखिर तक लड़ने वाले योद्धा यों भी नहीं हैं। उनके एक-दो वार खाली जाएँ तो मरकर शहीद होने के लिए वे हमेशा तैयार रहते हैं। श्रीनाथ, कुम्बले और प्रसाद तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गेंदबाजी करते हुए भी पिटने लगें तो ऐसी गेंदें फेंकने लगते हैं जो और पिटें और उन्हें गेंदबाजी से हटा लिया जाए। उलटकर वार करने और सामने वाले का जीना हराम कर देने वाले ये गेंदबाज भी नहीं हैं बल्लेबाजी की तो बात छोड़िए। और सबा करीम समरन बेनर्जी की कृपा पर टीम में जगह पाते हैं या डालमिया की, इस गुत्थी को शायद सचिन भी सुलझा न पाएँ।

बहरहाल हमारी टीम वे 45 ओवर भी नहीं खेली जिसमें हम उससे 230 रन बनाने की उम्मीद बाँधे बैठे थे। 42.2 ओवर में 188 रनों पर हम ढेर हो गए। धारदार गेंदबाजी और शानदार फील्डिंग के सामने हमारी कुछ न चलती और जी जान लगाकर जूझते हुए हम हारते तो भी शारजाह के भारतीयों और भारत के भारतीयों को उतना बुरा नहीं लगता। शर्म इस बात की है कि हमारे खिलाड़ियों में कोई आत्मसम्मान और खिलाड़ी होने का वर्ग नहीं दिखता। वे संकट और निर्णायक घड़ियों में जान लगाकर आरपार की लड़ाई लड़ते नहीं लगते। ऐसा लगता है जैसे वे बिके हुए बलि के बकरे हों और हर मैच में उन्हें बड़ी बेरहमी से कत्ल कर दिया जाता हो।

ऐसे खिलाड़ियों पर अपनी उम्मीदें, पाकिस्तान से बेहतर दिखने की इच्छा और भारतीय होने का गर्व दाँव पर लगाने वाले शारजाह के भारतीय क्या फूलों की वर्षा करते? क्या अपने खिलाड़ियों से कोई इतनी भी उम्मीद नहीं करे कि वे संघर्ष करेंगे और जी-जान लगाकर खेलेंगे? क्या हमारे खिलाड़ी अपने देश के लिए नहीं–पेप्सी, कोक, एमआरएफ, विल्स, रीबॉक, फोरस्क्वेयर और किंगफिशर आदि के लिए खेलते हैं? अगर वे भारत के लिए नहीं खेलते तो उन्हें तिरंगे झंडे में लिपटाया क्यों जाता है? क्यों करोड़ों भारतीयों की भावनाओं से खेला जाता है?

मेरा दुख लेकिन शारजाह के भारतीयों से भिन्न है। मैं शर्त लगा सकता हूँ कि हमारे सचिन, अजहर, गांगुली, द्रविड़, जडेजा आदि दुनिया के सबसे प्रतिभावान बल्लेबाजों में से हैं? फिर उनकी ये हालत कौन कर रहा है? चुनने वाले? बोर्ड? या बाजार की ताकतें? इस लोकतान्त्रिक देश में आखिर कोई जिम्मेदार है या नहीं? इसका आत्मसम्मान और आत्मगौरव है या नहीं? किससे पूछें?

(21.12.97)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक नई आक्रामकता जिता रही है

अब आप देखिए कि कोई पचास साल से तो मैं ही देख, सुन और पढ़ रहा हूँ। लेकिन इसके पहले के सोलह साल यानी सन् बत्तीस में लार्ड्स में पहला टैस्ट खेलने से लेकर सन् अड़तालीस में जब बम्बई में हम वेस्टइंडीज से गिनती के कुछ रनों से जीत नहीं पाए। छाछठ साल का हमारा क्रिकेट इतिहास ऐसे ही मौकों की कहानी सुनाता है जब हमारे देखते-देखते सामने वाले हमारे हाथ से मैच छीन ले गए और हम हाथ मलते फील्डिंग करते रहे। कितनी बार जीत की दिव्य मणि हमारी मुट्ठी में आई और ऐसे फिसल गई जैसे तेल लगे हाथों से नागिन निकल जाती है।

एक घिसा-पिटा सालिगरामी वाक्य हमारे बारे में चल निकला कि हम भारतीयों में किलर इंस्टिंक्ट नहीं है इसलिए जीत के लिए जो नाक आउट पंच यानी आखिरी वार करना जरूरी होता है वह हमसे होता नहीं। हम हारते-हारते तो हारते हैं जीतते-जीतते भी अक्सर हारते हैं क्योंकि या तो हमें मौकों की पहचान नहीं है या हम मौकों को अपने लिए जीत में बदलना जानते नहीं। हमारी कमन्द अक्सर तभी टूटती है जबकि लबे बाम दो-चार हाथ दूर रह जाता है।

निराशाओं, हताशाओं और सरासर बेवकूफियों से हमारे सभी खेलों का इतिहास भरा पड़ा है। क्रिकेट में यह प्रवृत्ति कुछ ज्यादा ही देखी गई है क्योंकि गौरवशाली अनिश्चितताओं के इस खेल में विफलताओं को भी महिमामंडित करने की परम्परा है और क्रिकेट भले ही हमारे देश में न जन्मा हो इसकी कई परम्पराएँ हमारे स्वभाव से बहुत मेल खाती हैं। इसीलिए बावजूद तमाम पूर्वाग्रहों के क्रिकेट हमारे देश का सबसे लोकप्रिय खेल है। राष्ट्रीय भी क्योंकि भारतीयों की कमजोरियों, खामियों, दुर्बलताओं और गौरव भावना को जितनी अच्छी तरह यह खेल प्रकट करता है दूसरा कोई नहीं करता।

पाकिस्तान हमीं में से निकला। लेकिन अपनी पहली सीरीज से अब तक जीत-हार का उसका रेकार्ड हमसे बेहतर है। जब आसन्न पराजय सामने हो तो उसके खिलाड़ी ऐसे टूटकर पड़ते हैं कि मरना तो है ही फिर कुछ लोगों को मारकर ही क्यों न मरें और ऐसा करने में वे अक्सर हार के मुँह से जीत निकाल लाते हैं। दबकर नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
खेलते और हारते भी हैं तो उनके रवैये से लगता है जैसे भाग्य ने उनके साथ ज्यादती की हो और उनके साथ जो हो रहा है वे कतई उसके योग्य नहीं है। लड़ते हुए मर मिटने की यह मानसिकता और जीतने की अपनी योग्यता में अपना यह अमिट विश्वास पाकिस्तानी खिलाड़ियों को भारतीय खिलाड़ियों से अलग करके खड़ा कर देता है।

सही है कि इमरान खान ने न उतने विकेट लिए जितने कपिल ने, न उनसे उतने रन बने जितने कपिल ने बनाए। जावेद मियाँदाद रन और सेंचुरियाँ बनाने में सुनील गावसकर के आसपास भी नहीं हैं। फिर भी दुनिया पाकिस्तानी टीम और उसके खिलाड़ियों को हमसे ऊपर रखती है। उनके क्रिकेट में पॉलिटिक्स हमसे ज्यादा ही है और खिलाड़ियों के साथ बरताव भी हमारे यहाँ से बदतर ही किया जाता है। फिर भी जब पाकिस्तानी खिलाड़ी खेलने उतरता है तो उसकी जानमारी में रत्ती-भर भी कसर दिखाई नहीं देती। वह प्राकृतिक प्रतिभा और योग्यता में हमारे खिलाड़ी से कमतर हो सकता है। लेकिन अपनी सारी कमी वह आखिरी साँस तक जूझने की अपनी इच्छा से पूरी करने की कोशिश करता है। पाकिस्तान के कई अन्तर्राष्ट्रीय खिलाड़ी अंग्रेजी नहीं बोल सकते। कहाँ कैसा व्यवहार किया जाता है इसका भी उन्हें शऊर नहीं होता। लेकिन खेलते ऐसा हैं कि मैच ऑफ द मैच हो सकें।

पाकिस्तानी खिलाड़ियों को सरफरोशी की यह तमन्ना कोई इसलाम से नहीं मिलती है। आखिर अजहर, सबा करीम, किरमानी आदि हमारी टीम में खेलते ही रहे हैं। कुछ ऐसा है भारतीय रवैये में जो हमें आक्रामक बने रहने और अपनी आक्रामकता को फलदायी बनने से रोकती है। जितनी सहजता से हम पराजय स्वीकार कर लेते हैं उतनी आसानी से विजय को नहीं लेते। सन् इकहत्तर यानी टैस्ट क्रिकेट में आने के कोई उनचालीस साल बाद हमने इंग्लैंड को इंग्लैंड में पहली बार ओवल के मैदान में हराया। उस जीत के कीर्तिस्तम्भ की तरह इन्दौर में सीमेंट कंक्रीट का एक विशाल विजयी बल्ला बनाया गया जिस पर उस टीम के सभी खिलाड़ियों के हस्ताक्षर भी बनाए गए। साल-भर बाद हमारी टीम इंग्लैंड से सभी टैस्ट हार गई तो किसी ने जाकर विजय के उस कीर्तिस्तम्भ पर डामर पोत दिया और उसे तोड़ा-फोड़ा भी। बाद में वह ठीक कर दिया गया।

कुछ साल बाद इंग्लैंड की टीम भारत आई और खेलने इन्दौर भी गई। वहाँ इंगलिश विकेट कीपर एलन नॉट को ले जाकर किसी ने वह बल्ला दिखाया। नॉट ने कहा कि हम अगर ओवल जैसी हमारी विजयों पर बल्ले खड़े करते जाते तो इंग्लैंड पूरा ऐसे बल्लों से ही भर जाता। ठीक है कि इंग्लैंड छोटा-सा द्वीप देश है और कभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीतता रहा होगा, आजकल तो अक्सर हारता ही है। लेकिन सवाल यहाँ तथ्य का नहीं रवैये का है। हम भारतीय इतने बड़े और इतने पुराने देश होते हुए भी विजय को सहज भाव से नहीं ले पाते। हार-जीत सबकी होती है लेकिन हम शायद हारे ज्यादा और जीत अनहोनी हो गई हैं। जय-विजय को दर्शन शास्त्र ही नहीं गीता जैसे ग्रन्थ में भी समान भाव से लेने की बात सिखाई गई है। लेकिन जब तक हारना आपको दंश नहीं मारेगा तब तक जीत की कोशिश में जोरदार कशिश पैदा नहीं होगी।

जिसे हम किलर इंस्टिंक्ट कट की कमी आदि कहते हैं वह दरअसल कोई जैविक खामी नहीं है। हमारे यहाँ आक्रामकता को सम्मान की नजर से नहीं देखा जाता। यह तो माना जाता है कि सहज आक्रामकता के बिना कुछ भी किया नहीं जा सकता लेकिन साथ ही लगातार यह कोशिश भी की जाती है कि आक्रामक वृत्ति को परिष्कार से सुसंस्कार में बदला जाए। आक्रामकता बचकाना बड़बोलापन नहीं लगे। पट धीरता के गुण में बदल जाए। पश्चिम में जिस पाशविक आक्रामकता को सहज मानकर स्वीकार किया जाता है और जिसे खुलकर अभिव्यक्त होने के अवसर दिए जाते हैं उसे हम मनुष्य की शोभा से थोड़ा नीचा मानते हैं। हम चाहते हैं कि जो वीर हो वह अपनी आक्रामकता को म्यान में तलवार की तरह रखे उसे यों ही चमकाता नहीं फिरे। आक्रामकता पर इस सांस्कृतिक अंकुश ने हमारे वीर लोगों को भी खुलकर खेलने से रोका है। इसलिए कई बार वे अपनी आक्रामकता को इतना खुलकर खेलने को मौका नहीं देते कि विजय दिलाने वाला अन्तिम और निर्मम प्रहार हो सके। इसलिए कई बार हमारे वीर लोग अपनी आक्रामकता के बजाय अपने संयम की प्रशंसा से ज्यादा सन्तुष्ट होते हैं। यह संयम अक्सर विजय के आड़े आता है।

इसलिए उस दिन चेन्नई में पहले टैस्ट के सबसे निर्णायक खिलाड़ी होने का पुरस्कार लेते हुए सचिन तेंदुलकर ने कहा कि मैं एक आक्रामक बल्लेबाज हूँ और शेन वार्न एक आक्रामक गेंदबाज। मैं अगर उन पर टूट कर आक्रमण नहीं करता तो वे अपनी गेंदबाजी से हमारी बल्लेबाजी को बिखेर देते। इसलिए मुझे तो हमला बोलना ही था। सचिन ने यह इयन चैपल को कहा जो खुद आस्ट्रेलिया के परम आक्रामक बल्लेबाज और कप्तान रह चुके हैं और जिनकी कमेंट्री से साफ समझ आता है कि वे जानते हैं कि कहाँ किस खिलाड़ी के क्या करने से मैच ने निर्णायक मोड़ लिया। दरअसल वही पहले टैस्ट के निर्णय के बहुत पहले से कह रहे थे कि भारत अगर जीतने की हालत में है तो इसका श्रेय सचिन की बल्लेबाजी को है जिनने आस्ट्रेलियाई गेंदबाजी पर चौतरफा हमला करके इतनी तेजी से इतने रन बना दिए कि भारतीय गेंदबाज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
आस्ट्रेलियाई बल्लेबाजों को आउट कर सकें। टेस्ट के चौथे दिन जब सचिन आस्ट्रेलिया के एक-एक गेंदबाज की धुनाई कर रहे थे तो यह बताने वाले भी चैपल ही थे कि इस हमले से तेंदुलकर यह टैस्ट आस्ट्रेलिया की पकड़ से निकालकर ले जा रहे हैं।

फिर भी सचिन का जवाब सुनकर मुझे लगा कि यह सब कहने की जरूरत क्या थी। सचिन ने करके दिखा दिया था और उसे अपने पराक्रम का पुरस्कार भी मिल ही रहा था। बखान की क्या जरूरत थी कि हाँ मैंने सोच-समझकर हमला किया। वह तो सबने देखा ही। सचिन में अभी कुछ बचपना रह गया है। उसे कहना चाहिए था कि हाँ मुझसे जो बन पड़ा मैंने किया। किस्मत अच्छी थी कि धुआँधार कर सका। और सच मानिए मैं उन लोगों में से हूँ जो सचिन की सहज आक्रामकता के कायल हैं। सोमवार को जब सचिन आस्ट्रेलियाई गेंदबाज का कत्लेआम कर रहे थे तो मैं सब कुछ छोड़-छुड़ा कर उसका आनन्द ले रहा था। बल्कि चाय के बाद जब सचिन कुछ धीमे पड़ गए और आक्रमण की लगाम अजहर को थमा कर एक-एक दो-दो रन लेने लगे तो मुझे कुछ जमा नहीं। सचिन थके हुए लग रहे थे और धुनाई लगाने की बजाय वे गेंद को खाली जगहों में से निकाल रहे थे। मुझे लगा कि इतने जवान खिलाड़ी को इतनी जल्दी थकना नहीं चाहिए। लेकिन सचिन ने पहले अजहर और फिर गांगुली को खेलने दिया और खुद जैसे निश्चित करते रहे कि भारत के पास काफी रन और काफी समय हो ताकि मैच जीता जा सके। वे आखिर तक नाबाद रहे।

सचिन तेंदुलकर की यह परिपक्वता मुझे लगा कि उनके बयान में भी दिखनी चाहिए थी। शेन वार्न भारत आए उसके दूसरे दिन ही उनने बयान दे दिया था कि सचिन तेंदुलकर महान बल्लेबाज हैं और उन्हें गेंद करने में मजा आएगा। यानी उनका मेरा मुकाबला है। भारत-आस्ट्रेलिया शृंखला दो देशों के मुकाबले के साथ-साथ एक महान स्पिन गेंदबाज और एक महान बल्लेबाज के बीच मुकाबला भी है यह तो सभी जानते और कहते हैं। लेकिन उनमें से कोई एक यह बात खुद कहे तो इसका मतलब होता है कि उसने चुनौती दी है। सचिन ने वार्न के बयान का जवाब उसी भाषा में नहीं दिया। बल्कि खाँटी भारतीय परम्परा में कहा कि शेन वार्न एक महान गेंदबाज हैं। लेकिन कहीं से भी उनके जवाब से यह नहीं लगता था कि मैं उनके धुर्रे बिखेर दूँगा। लेकिन जब मुम्बई के मैच में दोनों का मुकाबला हुआ तो सचिन ने वार्न की धुलाई करते हुए चार घंटे में ही दो सौ रन ठोक दिए। वह प्रथम श्रेणी क्रिकेट ही नहीं किसी अन्तर्राष्ट्रीय टीम के खिलाफ सचिन की पहली डबल सेंचुरी थी। सचिन ने बोलने के बजाय करके बता दिया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक वार्न ही नहीं आस्ट्रेलिया की टीम में जुड़वाँ भाई स्टीव और मार्क वॉ भी हैं जिनकी गिनती सचिन और लारा की तरह दुनिया के सर्वश्रेष्ठ बल्लेबाजों में होती है। वार्न की तरह सचिन का मुकाबला इन वॉ बन्धुओं से भी है। कई लोग मानते हैं कि स्टीव वॉ दुनिया के सर्वश्रेष्ठ बल्लेबाज हैं क्योंकि वे हर तरह के पिचों पर हर तरह की गेंदबाजी के सामने पिछले कुछ वर्षों में सबसे ज्यादा रन बना चुके हैं। लोग यह भी कहते हैं कि मार्क वॉ जब टीम को सबसे ज्यादा जरूरत हो और स्थिति सबसे विकट हो तभी रन बनाते हैं इसलिए उनका स्थान सबसे ऊपर होना चाहिए। इसलिए इस शृंखला में फैसला सिर्फ यही नहीं होना है कि वार्न बड़े गेंदबाज हैं या सचिन तेंदुलकर। यह भी साबित होना है कि तेंदुलकर वॉ बन्धुओं से महान बल्लेबाज हैं।

तीन साल पहले तक लोग, खास कर वेस्टइंडीज, इंग्लैंड और आस्ट्रेलिया के जानकार मानते नहीं थे कि सचिन लारा से बड़े बल्लेबाज हैं। अब गैरी सोबर्स और ग्रेग चैपल ने मान लिया है कि सचिन तेंदुलकर महान हैं। इयन चैपल, बॉयकॉट, गावसकर आदि पहले से ही कहते रहे हैं कि सचिन अपने जमाने के सबसे महान बल्लेबाज हैं। सचिन में कप्तानी छिनने के बाद से जो खुन्दक और परिपक्वता आई है वह उन्हें प्रेरित कर रही है कि वे अपनी सबसे उत्तम आक्रामकता में खेलें। इससे चेन्नई में उनने जो पारी खेली है वह उन्हें सीके नायडू से लेकर अजहर तक से ऊपर रखती है। आज भी सचिन की लारा और वॉ बन्धुओं से ज्यादा शतकें और ज्यादा रन हैं। लेकिन लारा की तरह 375 रन की टैस्ट पारी और 501 रन की प्रथम श्रेणी पारी अभी सचिन को खेलनी है। उन्हें वॉ बन्धुओं की तरह यह भी करके दिखाना है कि वे अपने अकेले बल्ले से टीम को जिता सकते हैं। ढाका के वन डे टूर्नामेंट और चेन्नई के टैस्ट में सचिन ने यह कहकर दिखाया।

सचिन अगले महीने पच्चीस के होंगे। दस साल भी अगर और खेले तो उनके सामने कोई शिखर नहीं बचेगा। वह भारतीय आक्रामकता की नई विजय होगी। जैसे सचिन के कारण सिद्धू, अजहर, गांगुली, द्रविड़ आदि की आक्रामकता खुल और खिल जाती है वैसे उम्मीद कीजिए कि भारतीय चरित्र में भी एक मानवीय और दैविक आक्रामकता आएगी। तब अपन मानेंगे कि भारत बदल रहा है।

(15.3.98)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुक करके और डक करके भी

कहने को तो कहूँगा कि बिजली चली गई थी। लेकिन आपसे क्या छुप सकता है? सचाई यही है कि बिजली जाने के मिनट-भर पहले टीवी बन्द करके बैठक से उठकर बाथरूम में आ गया था। जहाँ जाने के लिए नहा-धोकर तैयार होना था वह कार्यक्रम अभी ढाई घंटे बाद शुरू होना था। तैयार होने का आधा घंटा और रास्ते का आधा घंटा दोनों मिलाकर भी कुल एक घंटा लगना था। यानी डेढ़ घंटे बैठकर मजे में खेल देख सकता था। लेकिन सिर्फ सात रन पर दो विकेट गिरने और उनमें भी एक राहुल द्रविड़ के जाने से खेल असहनीय हो गया। भारत की कैसी-कैसी शर्मनाक और दम उड़ा देने वाली पराजयें देखी हैं! लेकिन अब सहन नहीं होता। टीवी बन्द किया और अपने बाथरूम में आकर अपने को भी बन्द कर लिया।

बिजली गई तब मैं दाढ़ी बनाने के लिए ब्रश पर साबुन लगा रहा था। बिजली जाने से राहत भी मिल सकती है ऐसा पहली बार लगा और मैं निश्चिंतता से दाढ़ी पर ब्रश घुमाने लगा। अब जब तक बिजली नहीं आती मुझे बाहर निकलकर बैठक में टीवी देखकर दुखी, परेशान और हताश नहीं होना था। कानपुर में ग्रीन पार्क पर जो भी हो रहा हो अपने कमरे के बाथरूम की रेत में गहरे तक सिर गड़ाए मैं शुतुरमुर्ग सुरक्षित दाढ़ी बना रहा था। अपने से ज्यादा कौन जानता है कि शुतुरमुर्ग के रेत में सिर गड़ाने से रेगिस्तानी अन्धड़ थमता नहीं। मरता वही है जो सिर गड़ा कर आँधी से बचने की कोशिश करता है। तेज से तेज और भयंकर रेतीली आँधी से बच वही सकता है जिसकी जड़ें रेत के नीचे की जमीन में गहरे उतरी हों। क्या करेगी आँधी? ज्यादा से ज्यादा पत्ते उड़ा ले जाएगी। कुछ नई, हरी और लचीली डालों को झुमा-झुमा कर तोड़ देगी। लेकिन रेत के नीचे की जमीन और जमीन के नीचे भी पत्थरों की परत की चट्टानों की दरारों में जड़ों को पहुँचाकर खड़ा रहने वाला पेड़ आँधियों से नहीं डरता। उनसे उसका सामना होता रहता है।

बच तो घास भी जाती है लेकिन वह आँधी से जूझती नहीं। उसे अपने पर से गुजर जाने देती है। बाउंसर को झुककर ऊपर से निकल जाने देना भी तूफानी गेंदबाज को हराना है और थोड़ा बगल में हट कर गेंद को हुक कर देना भी आग को आग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से बुझाना है। यही है कि डक करने वाला आउट नहीं होता और हुक मारने वाला कहीं न कहीं झिल सकता है। डक करने वाला भी तूफानी गेंदबाज का मनोबल गिराता है और हुक करके छक्का मारने वाला भी। आँधी को पराजित करने के यही दो तरीके हैं। बल्लेबाज अपने स्वभाव से खेलता है। विवियन रिचर्ड्स हुक मार देते थे। वे भी महान बल्लेबाज हुए और सुनील गावसकर डक करते थे वे भी महान हुए। सुनील गावसकर ने रिचर्ड्स से ज्यादा रन, ज्यादा शतकें बनाईं और ज्यादा और लम्बी पारियाँ भी खेलीं लेकिन विवियन रिचर्ड्स जैसा बोलबाला उनका कभी नहीं रहा। लेकिन गावसकर ने तूफानी गेंदबाजों का जितना सामना किया और उन्हें थका कर जितना पराजित किया रिचर्ड्स ने नहीं किया। आग से आग थोड़ी देर दबती है लेकिन बुझती वह पानी से ही है। लेकिन डक करना या हुक करना आपकी बनत, स्वभाव और चरित्र में है। पारी शुरू करने के पहले आप जो गार्ड लेते हैं यानी खेलने की अपनी जगह तय करते हैं तभी तय हो जाता है कि आप क्या करने वाले हैं और क्या कर सकते हैं।

आपने देख ही लिया होगा कि गरम रेत में सिर गड़ाए मैं शाम के कार्यक्रम की तैयारी में लग गया था। क्रिकेट से जीवन और जीवन से क्रिकेट में आने-जाने से ठीक समझना-बूझना और बोलना हो सकता है। जो समझते हैं कि क्रिकेट सिर्फ एक खेल है और वाहियात खेल है वे नहीं जानते कि जीवन भी आखिर एक खेल ही है। आप उसे वाहियात कहें या साम्राज्यवादी शगल कहें उससे वह जीवन विरोधी नहीं हो जाता। घोर से घोर जनवादी भी आखिर क्रिकेट ही खेलता है। जितना अच्छा खेलता है उतना ही जनवादी होता है क्योंकि क्रिकेट खेलना और जीवन जीना आखिर आपकी बनत, स्वभाव चरित्र और विचार का ही उद्‌घोष है। आपके हाथ का बल्ला कभी बन्दूक, कभी कलम, कभी कूची, कभी फावड़ा और कभी कम्प्यूटर का कीबोर्ड हो जाता है। जैसे बाथरूम में तैयार होने में लगना और शाम के कार्यक्रम के बारे में सोचना कानपुर से आती आँधी या सिर पर आती बाउंसर पर मेरा डक करना ही था। डक करते हुए ही जब मैं कुरता पहन रहा था तो बाहर टेलीफोन की घंटी बजी। और बजती रही क्योंकि फोन उठाने वाली भेनजी या लाड़ी शायद सो गई होगी और रामसिंह ऊपर अपने कमरे में होगा। आखिर मैं ही बाहर आया और फोन उठाया।

सोऽऽ यू हैव वन—केबिन रेफर्टी ने बात शुरू की।

हेव उई? मेरे मुँह से निकल गया। यस, बाय, एट विकेट्स? तेंदुलकर एंड गांधी डिड इट। मेरी इच्छा हुई कि फोन रख दूँ और टीवी खोल कर देखूँ—शायद अवार्ड सिरेमनी अभी चल रही हो। फिर याद आया कि बिजली तो है नहीं देखूँगा क्या। फोन पर बात करता रहा। केविन ने फोन मुझे मैच के बारे में बताने के लिए नहीं किया था। वह होटल में बैठा प्रधानमन्त्री के दफ्तर से फोन आने का रास्ता देख रहा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
होगा और वक्त काटने के लिए मैच देखता रहा होगा। यार्कशायर का यह अपना दोस्त केविन रेफर्टी यार्कशायर के ही कल के ठोस बल्लेबाज और अब के कमेंट्रीकार जेफरी बॉयकॉट जैसा बोलता है। बॉयकॉट आक्सफर्ड के क्वीन्स कॉलेज में पढ़कर एमए नहीं कर पाए। इंग्लैंड में रोजी के लिए क्रिकेट खेलने वाले कॉलेज नहीं जाते। लेकिन आप आक्सफर्ड में पढ़ें या केम्ब्रिज में जेएनयू में पढ़ें या भागलपुर में मातृभाषा बोलने का आपका लहजा नहीं बदलता। इसलिए केविन से बात करते हुए मुझे अक्सर लगता है कि बॉयकॉट से बात कर रहे हैं। दोनों ही अपने जीवन में समान रूप से अस्थिर और मुँहफट हैं और इसलिए कुछ जगहों पर बिलकुल अस्वीकार और बाकी की जगहों पर सहन किए जाते हैं।

मैंने जब टीवी बन्द किया तो बॉयकॉट ही उस पर बोल रहे थे। अपने खाँटी यार्कशायरी सुर और लहजे में कह रहे थे कि मैंने भारत को कई बार जीतते हुए हारते और हारते हुए जीतते देखा है। कुछ भी हो सकता है। फिर भी बयासी का स्कोर कोई इतना बड़ा नहीं है कि भारत बना नहीं पाए। फिर थोड़ी देर बाद उन्होंने कहा कि मुझे अचरज है कि विश्व क्रिकेट में उन्नीस बार चौथी पारी में जीतने के लिए बयासी रन बनाने में टीमें फेल हुइ हैं। और भारत ही दो साल पहले बारबेडॉस में बयासी से कम में आउट हुआ था हालाँकि तब भी लक्ष्य बयासी का नहीं एक सौ बीस का था। बारबेडॉस की उस पराजय का जिक्र आते ही जैसे उन सब हारों के भूत जाग गए थे जिनकी कब्रें मेरे भीतर बनी हुई हैं। वेस्टइंडीज के उस दौरे पर उस टैस्ट में जीतकर हम सीरीज जीत सकते थे। सिर्फ एक सौ बीस रन बनाने थे। हमारी टीम में तेंदुलकर, द्रविड़, गांगुली के अलावा बड़े अनुभवी अजहर और सिद्धू भी थे। तेंदुलकर कप्तान थे। लेकिन पूरी टीम बड़ी दयनीयता में देखते-देखते अस्सी-बयासी पर ढेर हो गई। वाल्श और एम्ब्रोस को जैसे खेलना ही असम्भव था। यह वही टैस्ट, वही पारी और वही पराजय थी जिसके दौरान भारत के सबसे अनुभवी बल्लेबाज अजहर ने पिच पर से चौबीस बरस के कप्तान सचिन से पुछवाया था कि वे रक्षात्मक ढंग से खेलें या हमलावर रुख अपनाएँ? ये वही अजहर थे जो सन् नब्बे में कप्तान बनने के बाद से लगातार कहते रहे थे कि जो भारत की टीम में लिए जाने लायक हों उसे यह भी मालूम होना चाहिए कि कब कैसा खेलना चाहिए। मैं किसी को क्या कहूँ? अचरज नहीं कि हम बुरी तरह हारे। कहते हैं तेंदुलकर ने कमरे में जाकर अन्दर से ताला लगा लिया और लाख बुलाने पर भी बाहर नहीं आए।

बॉयकॉट ने कहा कि तब वे वारबेडॉस में थे और कमेंट्री कर रहे थे। वह टैस्ट मैंने भी देखा था बॉल बाय बॉल और उस दिन मैंने बहुत चाहा था कि धरती फट जाए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और उसमें मैं दफन हो जाऊँ। एक भारतीय होने की शर्म उस दिन सहन नहीं हो रही थी। सही है कि क्रिकेट आखिर एक खेल है और भारत ने सैकड़ों टैस्ट खेले हैं और उनमें ज्यादातर हारा ही है। लेकिन जो देश जीत के इतने नजदीक आकर भी जीत न पाए उसकी बनावट में कहीं न कहीं कोई बुनियादी गड़बड़ है और उसे ढूँढ़कर दूर न कर पाना उससे भी बड़ी गड़बड़ है। अपने को अँधेरी और अन्धी सुरंग में पाने और उससे निकल बाहर होने का रास्ता न बना पाने की स्थिति सिर्फ क्रिकेट में नहीं है। आप पाएँगे कि यह स्थिति हर जगह है क्रिकेट में जो पराजय में दिखाई-भर देती है। जो कहते हैं कि हममें किलर इंस्टिंक्ट यानी शिकार को पकड़कर मार देने की क्षमता नहीं है वे कही-कहाई और रटी-रटाई बात करते हैं। पशुवत शिकार वृत्ति भारतीयों में वैसी ही है जैसी दूसरे लोगों में। हममें कोई जैविक कमी नहीं है। हमारे मानस में जरूर कोई अंधा धब्बा है जो विषधर सर्प को पकड़कर उसका जहरीला दाँत निकालते समय हमारी आँखों के सामने आ जाता है और हम ठिठकते हैं। और उस घातक ठिठक का फायदा उठाकर सर्प हमारी मुट्ठी से निकलकर हमें डंक मार जाता है। इस अंधे धब्बे को पकड़कर अपने मानस में से खरोंच डालने की कोई कोशिश हम करते नहीं। जहाँ करते हैं वहाँ वह सफल होती दिखती नहीं है। बॉयकॉट रमेश के आउट होने और द्रविड़ के आते समय कह रहे थे कि इस स्थिति के लिए सबसे उपयुक्त वही एक बल्लेबाज हैं। वे सचिन की तरह प्रतिभाशाली और महान न हों लेकिन ठोस और स्थितप्रज्ञ स्वभाव के खिलाड़ी हैं। सचिन जम जाएँ तो दो मिनट में दुनिया जीत सकते हैं लेकिन पहली गेंद पर जा भी सकते हैं। द्रविड़ इंच दर इंच फासला तय करने वाले सही और धीरजवान बल्लेबाज हैं। बॉयकॉट का बखान अभी चल ही रहा था कि द्रविड़ एलबीडब्लू होकर लौटने लगे। 'अभी चाय बनाने में मत लगिए, अभी बहुत कुछ होना है'—बॉयकॉट ऐसा कह रहे थे कि मैं टीवी बन्द करके उठ गया था।

लेकिन बाद में उसी टीवी पर सचिन को धुआँधार करते हुए भारत को न्यूजीलैंड से जिताते हुए देखा। मोहाली के पहले टैस्ट में भी भारत को जीत की हालत में लाने वाले सचिन तेंदुलकर एक सौ छब्बीस पर अविजित रहे थे। लेकिन उनकी वह पारी कप्तान की पारी थी जो एक सिरा थामे खड़े थे और द्रविड़ और गांगुली आगे बढ़कर भारत का पहाड़ खड़ा कर रहे थे। सचिन पर जैसे दो बन्धन थे—एक कप्तान होने का और दूसरा रीढ़ की हड्डी से पीठ की मांसपेशियों में आई चोट का। दोनों उन्हें खुलकर खेलने से रोक रहे थे। लेकिन कानपुर की दूसरी पारी में भारत को जिताने के लिए सचिन ने चढ़कर बल्लेबाजी की और बयासी का जो लक्ष्य आठ सौ बीस बन रहा था उसे नौ दो ग्यारह कर दिया। ये वही सचिन तेंदुलकर हैं जिनके बारे में महीने-भर पहले ही कहा जा रहा था कि रीढ़ की हड्डी उनके महान कैरियर को बीच

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में ही तोड़ रही है। अब वे रुककर और बीच में आराम कर करके ही खेल सकेंगे। और ऐसे बन्धन के बाद क्या खाक वह सब कर पाएँगे जिसकी उम्मीद उनसे दस साल से हों रही है ? लेकिन लगता है कि रीढ़ की हड्डी उनकी पीठ की मांसपेशियों को ज्यादा चोट न पहुँचा पाए इसलिए सचिन ने सँभलकर खेलना शुरू किया है। इससे वह उतावलापन और दुस्साहसिकता उनकी बल्लेबाजी से घट गई है जो अक्सर उसके पतन का कारण बनती रही है। इससे भले ही वे वैसे धुआँधारी बल्लेबाज न बन पाएँ जैसे कि अब तक रहे हैं लेकिन संयम और अनुशासन उन्हें और भी ज्यादा बड़ा बल्लेबाज बना दे।

जैसे उनके जैसी प्रतिभावाला बल्लेबाज अब तक टैस्ट में डबल सेंचुरी नहीं बना पाया था। बरसों पहले नागपुर में वेस्टइंडीज के खिलाफ उनने एक सौ उनासी रन बनाए थे। उसके बाद दो बार एक सौ सतत्तर पर आउट हो गए। अहमदाबाद के तीसरे टैस्ट तक उनने इक्कीस अर्धशतक और इक्कीस शतक बनाए थे। यहीं पहली बार वे डबल सेंचुरी मार गए। इकहत्तर टैस्ट और एक सौ दस पारियों के बाद। बन्धन में आने के बाद बन्धनों के पार जाने की क्षमता उनने दिखा दी है। लेकिन एक भारतीय के नाते अग्नि-परीक्षा में उन्हें कुन्दन होकर निकलना है। विजय की जब सबसे बड़ी चुनौती हो तब वे सबसे शानदार बल्लेबाजी कर पाएँ। और ऐसा करके कम-से-कम क्रिकेट से वह काला धब्बा हटा दें जो भारतीय मानस पर बना हुआ है। तभी सचिन तेंदुलकर के होने की सार्थकता है।

(7.11.99)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन टीम है कहाँ?

कहा और लिखा भी था कि भारतीय क्रिकेट का अगर कोई कायाकल्प कर सकता है तो सचिन तेंदुलकर। लेकिन आस्ट्रेलिया के हाथों भारत की ऐसी धुलाई के बाद मैं नहीं जानता कि आपसे माफी माँगूँ या अपनी असाध्य आशावादिता पर शर्मिंदा होऊँ। काले से काले पल में भी सोचा नहीं था कि भारत के आस्ट्रेलिया में हवा में ही ऐसे परखचे उड़ जाएँगे और पाँव टिकाकर वह जमा भी नहीं पाएगा और सचिन तेंदुलकर दुखी और दयनीय दर्शक-भर रह जाएँगे। लेकिन यही हुआ है और मैं नहीं जानता कि उनमें वह महानता है भी या नहीं जिसकी उम्मीद गावसकर और कपिल से लेकर हम सब करते हैं।

आस्ट्रेलिया के भूतपूर्व कप्तान और क्रिकेट पर बहुत साफ सोचने और उससे भी ज्यादा साफ-साफ बोलने वाले इयन चैपल ने कहा है कि सचिन आखिर अकेले पूरी टीम नहीं हो सकते और टीम, टीम की तरह मिलकर नहीं खेले तो उनके जैसी विलक्षण प्रतिभावाला खिलाड़ी भी बहुत कुछ कर नहीं कर सकता। शायद उनकी बात ठीक हो। लेकिन मैं तो इस उम्मीद से भारतीय टीम के आस्ट्रेलियाई दौरे को देख रहा था कि सचिन अपने अकेले बल्ले, आत्मविश्वास और जुझारूपन से भारत की किस्मत बदल देंगे। वे नहीं बदल पाए। आस्ट्रेलिया के गेंदबाज ही नहीं अम्पायर तक उनके पीछे हाथ धोके पड़े हुए थे। वे छह पारियों में आउट हुए जिनमें से तीन में तो निश्चित आउट नहीं थे। पहले टैस्ट की दोनों पारियों में आस्ट्रेलियाई अम्पायर ने उन्हें गलत आउट दिया। उसके बाद सचिन के खेल में ऐसी हिचक आ गई जो पहले नहीं थी और अपने में लगभग अटूट विश्वास करने वाले उनके जैसे खिलाड़ी में आ भी नहीं सकती।

आप क्रिकेट के इतिहास के जानकार हों तो मालूम ही होगा कि इंग्लैंड ने सन् बत्तीस में बॉडी लाइन गेंदबाजी के रणनीति इसीलिए बनाई थी कि वे डॉन ब्रेडमेन को आउट ही नहीं कर पाते थे। ब्रेडमेन की तरह सचिन ने भी सन् 98 के साल में आस्ट्रेलियाई गेंदबाजी की ऐसी धुलाई की थी कि वॉर्न समेत सभी गेंदबाजों के छक्के छूट गए थे। तीन टैस्ट पाँच वन डे और शारजाह के टूर्नामेंट के सेमी फाइनल और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फाइनल में अकेले सचिन ने ही आस्ट्रेलिया को दबोच दिया था। तब के बाद वर्ल्ड कप के एक मैच के अलावा आस्ट्रेलिया को अपने घरेलू पिचों पर मौका मिला था और तेंदुलकर एक जवान टीम को जमाने की कप्तानी जिम्मेदारी के दबाव में थे। इस बार सचिन रक्षात्मक थे और आस्ट्रेलिया आक्रामक।

पाकिस्तान के साथ इसके पहले खेले और जीते गए तीनों टैस्टों की प्रत्येक गेंद देखने के बाद मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा था कि नाजुक और निर्णायक क्षण में अम्पायर सन्देह का लाभ आस्ट्रेलिया के बल्लेबाज को देते हैं और ऐसे ही क्षण में पाकिस्तान बल्लेबाज को देते हैं और ऐसे ही क्षण में पाकिस्तानी बल्लेबाज हों तो सन्देह का लाभ गेंदबाज को देते हैं। तीनों टैस्टों में आस्ट्रेलिया की तरफ से जो लम्बी-लम्बी भागीदारियाँ हुईं उनमें अम्पायरों का अच्छा खासा सहयोग मिला। लेकिन ऐसा ही सहयोग एक बार भी किसी पाकिस्तानी भागीदार को नहीं मिला। जाहिर है कि इससे आस्ट्रेलिया तीनों टैस्ट जीत गया, आस्ट्रेलिया की टीम पाकिस्तान से बहुत बेहतर और तगड़ी है। लेकिन कहना पड़ेगा कि आस्ट्रेलिया में पाकिस्तान के साथ न्याय नहीं हुआ। वैसे पाकिस्तान और आस्ट्रेलिया दोनों ही मूँछमरोड़ खमठोकू टीमें हैं और मर्दानगी के नाम पर दादागिरी करती हैं। उन्हें किसी बल्लेबाज को झूठ से आउट करवाने में शर्म नहीं आती और उनके बल्लेबाज आउट होते हुए भी दिए न जाने पर खेलते रहने में खिसियाते नहीं।

इसलिए जब एडीलेड के पहले टैस्ट में भारत ने अपनी आदत के मुताबिक आस्ट्रेलिया की गर्दन छप्पन पर चार विकेट के बाद पकड़ से छोड़ दी और वॉ और पोंटिंग ने पहाड़ खड़ा कर दिया और भारत के तीन विकेट देखते-देखते उड़ गए और सचिन और गांगुली की भागीदारी जमने लगी और वे फालोऑन को टालने की कगार पर आ गए तो मेरी चिन्ता यह नहीं थी कि कहीं सचिन या गांगुली बहक न जाएँ। चिन्ता यह थी कि इस भागीदारी को अम्पायर न तोड़ दें। चिन्ता सही निकली। सचिन अर्धशतक पूरा करके आगे बढ़ रहे थे कि आस्ट्रेलियाई अम्पायर ने उन्हें शेन वॉर्न की गेंद पर शार्ट लेग में कैच आउट दे दिया। आस्ट्रेलिया की टीवी कम्पनी-चैनल नाईन के बाद दर्जन-भर कैमरे भी दिखा नहीं पाए कि गेंद सचिन के बल्ले से कहाँ लगी। सचिन के आउट दिए जाने के बाद गांगुली ने भी साठ किए और पुछल्ले बल्लेबाजों की मदद से फालोऑन टाला। आस्ट्रेलिया ने फिर तेजी से रन बनाए और भारत हार टालने की मुद्रा में दूसरी पारी में उतरा। इसी में सचिन मेकग्रा की शार्ट गेंद की उछाल से हटने के लिए झुके और गेंद ज्यादा न उछलकर उनके बाजू पर लगी। मेकग्रा और दूसरे फील्डरों की अपील पर इसी आस्ट्रेलियाई अम्पायर ने सचिन को फिर आउट दे दिया एसबीडब्ल्यू—यानी शोल्डर बिफोर द विकेट। वह गेंद डंडे पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
लग सकती थी इसको भी तय करना मुश्किल था, लगती ही वह तो बीस बार देखने के बाद भी निश्चित नहीं कहा जा सकता। लेकिन उस ठोस अम्पायर ने सन्देह का लाभ बल्लेबाज को दिया जाए—इस नियम का पालन नहीं किया। उसे कोई संदेह था ही नहीं। वह आस्ट्रेलियाई अम्पायर था जिसे आस्ट्रेलियाई टीम की अपील सभी निर्णायक क्षणों में सही लगती है।

पहला टैस्ट और उससे भी ज्यादा सचिन तेंदुलकर के सहज आत्मविश्वास और उनकी आक्रामकता को आस्ट्रेलिया ने अपने अम्पायर की मदद से निपटा दिया। आस्ट्रेलियाई बाहर की टीम के आते ही उसके खिलाफ मनोवैज्ञानिक युद्ध छेड़ देते हैं और उसके मन में आत्मसन्देह पैदा करके उसके मनोबल को तोड़ते हैं। इसका सही जवाब कोई पन्द्रह साल तक वेस्टइंडीज ने दिया। अब वेस्टइंडीज के भारत से भी बुरे दिन चल रहे हैं लेकिन जब वे विश्वविजेता थे तब भी मूँछ मरोड़ने, खम ठोकने और दंभी बड़बोलेपन से बोलने वाले खिलाड़ी नहीं थे। आस्ट्रेलियाई, न्यूजीलैंड और अंग्रेज (दक्षिण अफ्रीका और ब्रिटेन दोनों के) खिलाड़ियों की तरह गाली-गलौच भी नहीं करते थे। वे खेल के बताते थे। दुर्भाग्य से न हमारे खिलाड़ी खेल के जवाब दे रहे थे न कपिल और सचिन जैसे सहज आक्रामक और प्रतिभावान खिलाड़ी मीडिया के जरिए जवाबी आक्रमण कर रहे थे। पाकिस्तानी कप्तान वसीम अकरम और इमरान खान ने तो फिर भी दोनों अम्पायरों के तटस्थ होने की माँग की। भारत ने ऐसा कुछ कहकर उन अम्पायरों में अविश्वास भी नहीं बताया। हम आसानी से मैदान पर उसके बाहर आस्ट्रेलियाई दादागिरी के शिकार हो गए।

सचिन की सच्ची अग्नि-परीक्षा दूसरे टैस्ट में मेलबर्न में थी। पहले दाँव में उनने शानदार 116 रन बनाकर भारत को फालोआन से बचा लिया था। पाँचवें दिन भारत को दिन-भर खेलकर मैच ड्रा करवाना था ताकि सिडनी का आखिरी टैस्ट जीतकर वह सीरीज को बराबर कर सके। प्राप्त परिस्थितियों और भारत की कमजोरियों को देखते-समझते हुए यह सबसे अच्छा नतीजा होता। रमेश अँगूठे की चोट के कारण रिटायर हुए, लक्ष्मण, द्रविड़ और गांगुली फिर जम न सके। फिर पूरी जिम्मेदारी सचिन पर आई और वे भले ही थोड़े रक्षात्मक लेकिन ठीक खेल रहे थे। उनका साथ देने के लिए कानिटकर, प्रसाद, आगरकर और कुम्बले थे जो ज्यादा नहीं तो बीस-बस रन बनाने के लायक हैं ही। भले ही आस्ट्रेलिया में अपनी बल्लेबाजी क्षमता में उनने कोई नया विश्वास न जगाया हो। लेकिन ब्लुइट की मामूली गेंद पर ऐन मौके पर गांगुली लापरवाही में बोल्ड हुए। इसके बाद यह देखे बिना कि कानिटकर ठीक खेल रहे हैं सचिन अपना स्वभाव, विश्वास और स्वधर्म भूल कर खोल में चले गए और बेहद रक्षात्मक खेलने लगे। लगभग वैसा ही जैसा कि पहले टैस्ट के दूसरे दिन शाम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को द्रविड़ के साथ खेले थे। उनके खोल में जाने से वार्न, ली और मेकग्रा चढ़ बैठे और सचिन की रक्षात्मकता उन्हें और भारत को ले डूबी। वार्न की जिस गेंद पर अंग्रेज अम्पायर डेविड शेपर्ड ने सचिन को एलबीडब्ल्यू, करार दिया उस पर खेलूँ कि न खेलूँ की दुविधा में उनने पैड अड़ा कर बल्ला ऊपर कर दिया था। उन्हें आउट दिया ही जाना था।

लेकिन वही दिन और वही समय सचिन के आखिर तक जमे रहने और शतक बनाने का था। और ऐसा वे अपने सहज स्वाभाविक ढंग से खेलकर ही कर सकते थे। जैसा कि उनके आउट होने के बावजूद कानिटकर ने कर दिखाया। उन्हें सामने खेलने वाले भागीदारों की मदद मिलती रहती। कानिटकर ने आखिर 45 रन बनाए ही प्रसाद और कुम्बले भी खड़े रहे। सचिन के बिना वे मैच बचा नहीं सकते थे। लेकिन सचिन के खेलते रहते दूसरा टैस्ट बच सकता था और इसका मतलब होता कि भारत सिडनी में हारे बिना हारेगा नहीं। सिडनी में तब भारत के जीतने की अच्छी सम्भावना थी और हम सीरीज बराबर कर सकते थे। लेकिन सचिन के दुविधा में पड़ने और अपना स्वाभाविक खेल न खेलने के कारण दूसरा टैस्ट हार कर हम सीरीज हार गए और सिडनी में खेलने के लिए हमारे पास सिर्फ हमारा गर्व और गौरव ही था। हम कई बार बता चुके हैं कि उनके लिए हम नहीं खेलते और वह हममें है भी नहीं। आस्ट्रेलिया के लिए सीरीज का सबसे निर्णायक क्षण अगर एडीलेड में सचिन का 61 पर कैच आउट दिया जाना था तो भारत की वापसी का सबसे सम्भावित वही समय था जब लक्ष्मण, द्रविड़, रमेश और गांगुली के बाद सचिन का विकेट पर अकेले रह जाना था। तब अगर सचिन खोल में जाने के बजाय पाँव आगे बढ़ाकर मारते तो न सिर्फ दोनों दाँवों में सेंचुरी ठोकते, भारत टैस्ट ड्रा करता और तीसरा टैस्ट जीतने का आत्मविश्वास आता। हम खोई हुई बिसात फिर जमा सकते थे।

वह सचिन की अग्नि-परीक्षा थी और उसमें वे बल्लेबाज और कप्तान दोनों के नाते खरे होकर नहीं निकले। वे तब ऊँचाई पर नहीं चढ़ पाए जब फिसलन सबसे ज्यादा और खतरनाक थी। कहने को तो कहा और सन्तोष किया जा सकता है कि बाडीलाइन की सीरीज ब्रेडमेन भी कहाँ बचा पाए थे और तब उनसे एक ही सेंचुरी बनी थी और उनकी औसत पचपन के आसपास थी। औसत तो सचिन की भी पैंतालीस के आसपास है और एक सेंचुरी भी। वह पाँच टैस्टों की सीरीज थी यह तीन की। लेकिन ये सब मन बहलाने की बातें हैं। सचाई यही है कि जब सचिन तेंदुलकर महानता की कसौटी पर चढ़ाए गए तो उस पर खरे नहीं उतरे। ब्रेडमेन बाडीलाइन की सीरीज में चौबीस के थे और सचिन इस सीरीज में छब्बीस के। ब्रेडमेन तब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कप्तान नहीं थे सौरभ है। इस सीरीज में सचिन के होते हुए भारत की 3-0 से ऐसी दयनीय धुलाई से इस देश के लोग निश्चित ही बेहद निराश हुए हैं और अपने महानायक के मिट्टी के पाँव भी उनने देख लिए हैं। क्या अब भी वे एक व्यक्ति पर ऐसी बुरी तरह निर्भर करने और किसी एक खिलाड़ी की उपलब्धि पर गौरव कर कुल टीम दयनीय विफलता का दंश याद नहीं रखेंगे ? कोई एक खिलाड़ी पूरी टीम के लिए नहीं खेल सकता वह चाहे जितना बड़ा और महान हो इस ठंडी और नंगी सचाई को हम कब समझेंगे? या समझ भी लेंगे तो कर कुछ नहीं पाएँगे क्योंकि टीम बनकर एक दूसरे के लिए खेल नहीं सकते।

उस दिन सचिन तेंदुलकर को वार्न की गेंद पर पैड अड़ाते और आउट होते देखकर मेरे अन्दर कुछ टूट गया। तीसरा टैस्ट थोड़े टुकड़ों में देखा। लक्ष्मण की वह पारी भी पूरी नहीं देखी जो सचिन की पारी से भी बेहतर बताई जा रही है। उस दिन से मैं अपने से लगातार पूछ रहा हूँ कि क्यों पचास साल से किसी खिलाड़ी के व्यक्तिगत प्रदर्शन से टीम की हार और विफलता की चोट और शर्म को कम करके मन बहलाता रहा? क्यों किसी हजारे, मांजरेकर, सरदेसाई, गावसकर, पाटील, वेंगसरकर, विश्वनाथ और कपिल के प्रदर्शन में गर्व और गौरव करता रहा और याद भी नहीं रख पाया कि बाहर हमने कितने टैस्ट, कितनी सीरीज और टूर्नामेंट हारे? क्यों हमारे ग्यारह खिलाड़ियों का योग 111 होने के बजाय दो भी नहीं रहता? क्यों हम चाहते हैं कि हमारा एक खिलाड़ी खेल बदल दे और बाकी की टीम बैठी ताली बजाती रहे? हम क्यों अपने सामूहिक राष्ट्रीय गौरव में व्यक्तियों को अपनी निजता गला कर अपनी टीम का पराक्रम दिखाने पर बाध्य नहीं करते? मैं क्यों इतने साल से गर्व करता रहा कि गावसकर की संसार में सबसे ज्यादा टैस्ट सेंचुरियाँ हैं, कपिल के सबसे ज्यादा विकेट और तेंदुलकर जैसी अद्‌भुत प्रतिभा का एक भी खिलाड़ी दुनिया में नहीं है और वे सबके रेकार्ड तोड़ देंगे ब्रेडमेन को छोड़कर। इन बेशक महान खिलाड़ियों के बावजूद भारत इसीलिए हारता रहा ना कि अकेले चने से भाड़ नहीं फूटता। जब तक टीम के सबके सब खिलाड़ी अपनी पूरी जान लगाकर न खेलें और प्रत्येक खेल में टीम के प्रत्येक खिलाड़ी का निजी और सामूहिक योगदान न हो तब तक टीम बन नहीं सकती और महान खिलाड़ियों के बावजूद टीम विफल और नाकाम हो सकती है लेकिन टीम महान हो तो मामूली खिलाड़ी भी बड़ा हो जाता है।

(9.1.2000)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीतने के फायदे हारने के सबक

अब अपन फिर से अपनी टीम को खेलते हुए देख सकते हैं। दक्षिण अफ्रीका से भारत के वन डे सीरीज जीतने ने यह सम्भव किया। लेकिन जीतना और जीतते रहना ही अपने देखते रहने की प्रेरणा कभी नहीं रही। अपने को जिस जमाने में क्रिकेट खेलने-देखने की लत लगी उसमें जीतना ही क्रिकेट का अन्तिम लक्ष्य नहीं था। अच्छा खेलना और अच्छी तरह खेलना जीत-हार से बेहतर समझा जाता था क्योंकि खेल में जीतना-हारना तो चलता ही है इसलिए कौन बेहतर खेला और अच्छा खेलते हुए भी हार गया लेकिन किसी भी कीमत पर जीतने को उतारू नहीं हुआ यह जीत से बड़ा मूल्य माना जाता था। तब सिर्फ टैस्ट ही होते थे जो जीते हारे या ड्रा किए जा सकते थे। फिर सन् इकहत्तर में वन डे शुरू हुए जिनमें सिर्फ हारा या जीता जा सकता है। यह होड़ वाले बाजार का क्रिकेट पर असर था। इसने खेल में से खिलाड़ी भावना और अच्छे खेलने की उत्कृष्ट प्रेरणा को लगभग बाहर कर दिया। इससे मेरे जैसे खेल के शास्त्रीय और वैभवप्रिय दर्शकों का भारत को दयनीय तरीके से हारते देखते रहना मुश्किल हो गया। संघियों की तरह अपन देशभक्ति को काली टोपी की तरह माथे पर नहीं पहनते। कहीं अपने को देश के साथ खड़ा देखता हूँ तो युद्ध या क्रिकेट के मैदान में। लेकिन क्रिकेट को युद्ध का मैदान नहीं मानता।

बावन साल में पहली बार जानबूझकर क्रिकेट देखना छोड़ा तो पिछले साल आस्ट्रेलिया के खिलाफ पहले टैस्ट के बाद। इसमें भारत फॉलोऑन उतारकर जब आस्ट्रेलिया के बराबर आने की कोशिश कर रहा था तब सचिन को शेन वॉर्न की गेंद पर आस्ट्रेलियाई अम्पायर ने गलत आउट दिया। चैनल नाइन के सभी कैमरों ने सभी कोणों पर स्निकोमीटर से दिखाया कि गेंद कहीं भी सचिन के बल्ले से नहीं लगी थी। सचिन और गांगुली की जोड़ी टूटी और भारत लीड खा गया। दूसरे दाँव में इसी अम्पायर ने मेकग्रा की गेंद झुके हुए सचिन के बाएँ कन्धे पर लगते ही उन्हें एलबीडब्ल्यू आउट दे दिया। भारत हार गया। तब मुझे विश्वास हो गया कि आस्ट्रेलिया अपने अम्पायरों की मदद से जीता है। उन्हें निश्चित ही किसी ने निर्देश नहीं दिए होंगे। लेकिन आस्ट्रेलिया में यह आम भावना थी कि भारत को हराकर दो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साल पहले भारत में हारने का बदला लेना है। आस्ट्रेलियाई मानते थे कि कप्तान सचिन तेंदुलकर का मनोबल गिराना और उन्हें आउट करना जीत पक्की करना है। इसलिए वे पहले मीडिया में सचिन पर हमला करके दबाव बनाते गए और फिर पहले ही टैस्ट में आस्ट्रेलियाई अम्पायर ने उनके साथ यह किया। इस टैस्ट के पहले पाकिस्तान से खेले गए तीनों टैस्ट मैंने देखे थे। हर बार कोई न कोई बड़ी भागीदारी आस्ट्रेलिया को जीत की हालत में लाती रही। हर बार इस आस्ट्रेलियाई भागीदारी के खिलाफ एक-दो निर्णय ऐसे गए जो बल्लेबाज को सन्देह का लाभ देने और अम्पायर की सचमुच की गलती में गिने जा सकते हैं। लेकिन होबार्ट के दूसरे टैस्ट में जब पाकिस्तान जीत की हालत में आने के लिए बल्लेबाजी कर रहा था तो उसके बल्लेबाजों को सन्देह का यह लाभ नहीं मिला जबकि मैच जिताने में लगे लेंगर और गिलक्रिस्ट दोनों को ही ऐसे लाभ और अम्पायरी चूक का फायदा मिला। यह टैस्ट काँटे का था और इसमें जीतने के बाद आस्ट्रेलिया सीरीज जीत गया और पाकिस्तान का मनोबल टूट गया।

पाकिस्तान के खिलाफ उन तीन टैस्टों और भारत के विरुद्ध पहला टैस्ट देखने के बाद मैंने निष्कर्ष निकाल लिया कि आस्ट्रेलिया भले ही बड़ा खेलप्रिय देश हो वह जीतने को सबसे बड़ा प्रयोजन मानता है और कैसे जीत हासिल की गई इसकी फिकर नहीं करता। उसके अम्पायर सन्देह का लाभ देते हैं लेकिन तभी जब बल्लेबाज आस्ट्रेलियाई हों नहीं तो सन्देह का लाभ गेंदबाज को जाता है क्योंकि वह आस्ट्रेलियाई है। पाकिस्तान ने तो माँग की ही कि टैस्ट में दोनों अम्पायर तटस्थ यानी विदेशी होने चाहिए। भारतीय कोच और प्रबन्धन ने भी ऐसी बातें कहीं जिनके जवाब में आस्ट्रेलियाई अम्पायरों के संघ को कहना पड़ा कि उन पर नस्ल विरोधी होने का आरोप नहीं लग सकता। आखिर इन्हीं अम्पायरों ने संसार के सबसे अच्छे श्रीलंकाई ऑफ स्पिनर मुरलीधरन को गेंद फेंकने के आरोप में घसीटा था। दुनिया के और किसी भी अम्पायर ने मुरली की गेंद फेंकने के आरोप में नो बॉल नहीं की थी। सिर्फ आस्ट्रेलिया के दो अम्पायरों ने ही ऐसा किया। मैं इस दुखद निष्कर्ष पर पहुँचने पर मजबूर था कि आस्ट्रेलिया के मीडिया, खिलाड़ियों और अम्पायरों ने योजनाबद्ध तरीके से सचिन तेंदुलकर का मनोबल गिराने और उन्हें ब्रेडमेन की बराबरी से उतारने की कोशिश की है। अपनी टीम की अनुभवहीनता और बोर्ड के टुच्चे खेलों से परेशान सचिन तेंदुलकर आस्ट्रेलिया में अपने सहज स्वाभाविक आक्रामक रूप में आ ही नहीं पाए। वहाँ वे कप्तानी और बल्लेबाजी की अग्नि-परीक्षा में खरे नहीं उतरे क्योंकि उन पर हर दिशा से हमला हुआ और वे कप्तानी के बोझ में दब गए। भारत आते ही बोर्ड ने अपने वही पुराने खेल खेले और सचिन को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कप्तानी से इस्तीफा देने की घोषणा करनी पड़ी। जिस स्थिति में दक्षिण अफ्रीका से टैस्ट खेले गए उनमें भारत जीत नहीं सकता था। तेरह साल बाद अपने ही देश में टैस्ट सीरीज हारने की शर्म भी सचिन की कप्तानी को ही झेलनी पड़ी।

सचिन की हुई इस गति ने भारतीय क्रिकेट से मन उचटा दिया। वैसे भी अपनी टीमों का प्रदर्शन ऐसा रहता है कि हम किसी एक खिलाड़ी के प्रदर्शन में गौरव करके टीम की पराजय का गम गलत करने के आदी हो जाते हैं। भारतीय हॉकी के शुरुआती वर्षों की विजयें कोई याद नहीं रखता। ध्यानचन्द का जादू सब पर अब भी चढ़ा रहता है। गावसकर और कपिलदेव की उपलब्धियों पर देश जीता है उन अनगिनत पराजयों को याद नहीं रखता तो उनके होते हुए भी और उनके बावजूद टीम ने झेलीं। यह हम भारतीयों की व्यक्ति-पूजा की प्रवृत्ति नहीं है टीम भावना और टीम प्रदर्शन न होने के कारण व्यक्तियों के प्रदर्शन में मुँह छुपाने की मजबूरी है। आखिर व्यक्तियों और राष्ट्रों को जीने के लिए गौरव के प्रतीक चाहिए। जब वे टीम से या हमारी सामूहिक उपलब्धि से नहीं मिलते तो हम व्यक्तियों के प्रदर्शन में सन्तोष लेने लगते हैं। लेकिन सिर्फ इस कारण ही अपन सचिन के खेल और उपलब्धियों से नहीं जुड़ गए थे। आखिर दस साल से वे खेल रह हैं और एक भी खिलाड़ी दुनिया में ऐसा नहीं है जो उनकी प्रतिभा को अनन्य न बता चुका हो। ब्रेडमेन तक ने कहा कि सचिन उन्हीं की तरह खेलते हैं।

ब्रेडमेन ने सोबर्स, रिचड्र्स, लारा, चैपल और वॉ बन्धुओं को भी खेलते देखा है। सभी पारखियों ने सचिन को सबसे बड़ा और अमूल्य रत्न बताया है। ऐसी प्रतिभा के खिलाड़ी को जब एक देश गैर खिलाड़ीय तरीकों से तोड़े, एक बोर्ड टुच्चे और ओछे व्यापारिक खेलों से मारे और टीम उसका साथ न दे तो आप खेल कैसे देखते रह सकते हैं? आप कोई विज्ञापन एजेंसी या व्यापारिक कम्पनी तो नहीं हैं जो क्रिकेट से धंधा कर रहे हों। सचिन आपका राष्ट्रीय और क्रीड़ा गौरव है पैसा कमाने का जरिया नहीं है और किसी गौरव प्रतीक पर धंधा नहीं किया जा सकता। यह सचिन आस्ट्रेलिया में खेले गए आठ और भारत में दक्षिण अफ्रीका से खेले गए तीन वन डे मैचों में शतक नहीं बना सका था न किसी में अपनी टीम को जिता पाया था। परसों चौथे वन डे में शतक मारकर आखिर उसने अपनी टीम को जिता कर शृंखला भी जितवा दी। अब उनके वन डे में पच्चीस शतक हो गए हैं जो पाकिस्तान के सईद अनवर से आठ ज्यादा हैं। सईद से सचिन चार साल छोटे हैं। पीठ जवाब नहीं दे गई तो अभी वे दस साल और खेलेंगे यानी हो सकता है कि पचास शतकों का आँकड़ा वे पार कर जाएँ। टैस्ट में अभी उनके बाईस शतक हैं। अगर टैस्ट में भी वे पचास के आसपास पहुँच जाएँ तो सौ अन्तर्राष्ट्रीय शतकों का रेकार्ड कायम कर देंगे जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी और बल्लेबाज से शायद ही कभी टूटे। गावसकर के टैस्ट में चौंतीस शतक हैं जबकि ब्रेडमेन के उन्तीस थे। गावसकर का ही आकलन और अंकगणित है कि सचिन ऐसा कर सकते हैं।

लेकिन क्या कारण है कि जिसकी ऐसी अद्भुत प्रतिभा और उपलब्धि हो वह कप्तानी के बोझ से ऐसा दब जाए कि अपनी सहज आक्रामकता ही भूल जाए? क्या कप्तान बनते ही सचिन बचाव की मानसिकता में आ जाते हैं ? क्या वे अपने से और अपनी टीम से ऐसी अपेक्षाएँ करने लगते हैं जो अति मानवीय हैं और जब वे पूरी नहीं होतीं तो अपने को और अपने साथियों को कोड़े मारने लगते हैं? क्या इसी कारण वे कप्तानी में असहज और उनकी कप्तानी में टीम के दूसरे खिलाड़ी मनोबलहीन हो जाते हैं? पता नहीं। लेकिन सचिन की कप्तानी ऐसी प्रेरणाविहीन और ठस क्यों हो जाती है जबकि बल्लेबाजी में वे इतने आक्रामक, कल्पनाशील और प्रेरक लगते हैं। जिस खिलाड़ी के पास हर गेंद पर खेलने के लिए दो या तीन स्ट्रोक हैं वह कप्तानी में ऐसा विकल्पविहीन क्यों हो जाता है? बल्लेबाजी में जो व्यक्ति अपना सिक्का जमाने में इतना सहज और स्वाभाविक है वह कप्तानी में ऐसा प्रभावहीन क्यों हो जाता है? इन सवालों के जवाब शायद खुद सचिन तेंदुलकर भी नहीं दे सकते लेकिन किसी को तो किसी दिन देने ही होंगे। क्योंकि कप्तानी जैसे सचिन को दबाती है वैसे ही उसने गांगुली को खोलकर जरा ज्यादा ही आक्रामक बना दिया है। दक्षिण अफ्रीका के खिलाफ वे चार बार सचिन के साथ पारी की शुरुआत करने आए और चारों ही बार वे उनसे आगे निकल गए। वन डे मैचों में सचिन का स्ट्राइक रेट यानी प्रत्येक गेंद पर रन बनाने की गति गांगुली से कहीं अधिक है। लेकिन कप्तानी के इन चार मैचों में गांगुली ने जितनी गेंदें खेलीं उनसे ज्यादा रन बनाए हैं और सचिन ने कम। गांगुली की बल्लेबाजी का तो पट्टा ही जैसे कप्तानी ने खोल दिया है हालाँकि यही आक्रामकता उनकी फील्डिंग की जमावट और गेंदबाजों को लगाने में नहीं दिखाई देती। उनकी टिप्पणियों में भी आक्रामकता और एक तरह का दंभी छिछलापन है। इसलिए उनकी कप्तानी के बारे में कोई बात कहना अभी जल्दबाजी होगी। बिशन सिंह बेदी ने भी कुछ नहीं कहा सिवाय इसके कि उनकी कप्तानी ने भाग्य को जरूर भारत पर चमका दिया है। ऐसे ही किस्मत के सिकन्दर अजहर थे जो कोई दस साल कप्तानी कर सके और कप्तान न होते हुए भी भारत के सबसे सफल कप्तान बने। गांगुली अजहर के रास्ते नहीं चल रहे हैं। अजहर स्वभाव से इतने आक्रामक और वाचाल कभी नहीं रहे।

लेकिन गांगुली की कप्तान के नाते सफलता और बल्लेबाजी सचिन की कप्तानी के बारे में निश्चित ही कुछ नए सवाल खड़े करती है। क्या सचिन बल्लेबाज के नाते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुरू से ही परिपक्व और समझदार थे और अभी आदमी के नाते जवान नहीं हुए हैं जो कप्तानी का बोझ आते ही अपने को चमत्कारी बालक की तरह दबाव में ले आते हैं ? एक मान्यता है कि जब तक पिता जीवित रहते हैं पुत्र अपने को बच्चा ही मानता रहता है। सचिन के पिता गए साल जून में नहीं रहे लेकिन सौरभ गांगुली के पिता जिन्दा ही नहीं इतने प्रसन्न हैं कि पुत्र की जीवनी लिखने वाले हैं। सचिन को अधिक पुरुष और सौरभ को अधिक पुत्रवत महसूस करना चाहिए। लेकिन आप देखते हैं कि हुआ इससे उलटा है। कप्तानी ने पुत्र सौरभ गांगुली को खोलकर ज्यादा आग्रही बनाया है और पिता सचिन को बाँध कर दबाया है। कप्तानी के इन दो विपरीत प्रभावों का अध्ययन किया जाना चाहिए। लेकिन तब तक सन्तोष करना चाहिए कि सौरभ गांगुली की कप्तानी में टीम जीत रही है भले ही घरेलू मैदानों पर जीत रही हो। ऐसा भी लगता है कि एक कप्तान के मुखर और आग्रही होने के कारण टीम के दूसरे खिलाड़ी भी अपने को असर्ट कर रहे हैं और उनका मनोबल गिरा हुआ नहीं लगता हालाँकि जब टीम जीत रही होती है तब उसमें इसी तरह का उत्साह और जोश रहता है और सफल कप्तान की कप्तानी बड़ी कारगर दिखाई देती है। हालाँकि टीम की इस भावना और सौरभ की कप्तानी की परीक्षा इसी महीने शारजाह में होगी। लेकिन वहाँ भी सचमुच की अग्नि-परीक्षा नहीं है। भारतीय खिलाड़ियों की अग्नि-परीक्षा तो सख्त और ऊँची उछाल देने वाले तेज पिचों पर ही होती है। ऐसे पिच आस्ट्रेलिया और दक्षिण अफ्रीका में हैं और वेस्टइंडीज में हुआ करते थे। जब तक हमारी ऐसी अग्नि-परीक्षा नहीं होती तब तक भाग्य के भरोसे जीतने में भी कोई हर्ज नहीं है। जीत ही आखिर खिलाड़ियों का आत्मविश्वास बढ़ाती है और आत्मविश्वास भी खेल को बेहतर बनाता है। सबसे बड़ी बात यह कि जीतते-हारते रहने से हार बरदाश्त करने लायक और खेल देखते रहने लायक बना रहता है।

(19.3.2000)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रिकेट क्या सट्टेबाजी में डूब जाएगा?

पाकिस्तान या भारत का कोई खिलाड़ी होता तो शक में वजन मान लिया जाता। लेकिन हांसी क्रोनिए पर तो कोई उँगली भी नहीं उठा सकता। अन्तर्राष्ट्रीय क्रिकेट में दक्षिण अफ्रीका का वापसी के बाद से क्रोनिए पहले खिलाड़ी की तरह और फिर कप्तान के रूप में जिस तरह से खेल रहे हैं उससे उनका दुश्मन और बुरा से बुरा प्रतिद्वन्द्वी भी आसानी से मानेगा नहीं कि वे पैसा लेकर मैच हार सकते हैं।

लेकिन दिल्ली पुलिस की अपराध शाखा के अधिकारी न सिर्फ काफी सबूत होने का दावा कर रहे हैं उनने हांसी क्रोनिए और उनके साथी हर्शल गिब्स, निकी बोईए, पीटर स्ट्रायडम और हेनरी विलियम्स के खिलाफ दफा 420 और 120 ब के तहत धोखाधड़ी और आपराधिक साजिश के मामले भी दर्ज कर लिए हैं। अनिवासी भारतीय संजय चावला लन्दन भाग गए हैं लेकिन कालरा पकड़ लिए गए हैं और पूछताछ के लिए पुलिस हिरासत में हैं। ये वे दो भारतीय सट्टेबाज हैं जिनके जरिए दिल्ली पुलिस एक ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय रैकेट के भंडाफोड़ का दावा कर रही है जो क्रिकेट संसार को ध्वस्त कर सकता है।

दिल्ली पुलिस ने संजय चावला और हांसी क्रोनिए के बीच सेल्यूलर फोन पर हुई बातचीत का जो हूबहू ब्योरा जारी किया है उसको पढ़कर लगता है कि दक्षिण अफ्रीकी कप्तान ने न सिर्फ अपने लिए सौदेबाजी की उनने अपनी टीम के दूसरे चार खिलाड़ियों को भी इस धन्धे में शामिल किया और उनके लिए भी रकम तय की। गिब्स को कितने रन पर आउट हो जाना चाहिए और अगर भारत ने पहले बल्लेबाजी की और इतने रन बनाए तो क्या होगा और ये खिलाड़ी क्या करेंगे इसकी भी बातें हुईं। जब फरीदाबाद में खेले गए तीसरे वन डे के लिए दक्षिण अफ्रीकी टीम दिल्ली आई और होटल ताज पैलेस में रुकी तो चौदह मार्च को कमरा नम्बर 346 में संजय चावला हांसी क्रोनिए से मिले भी। फिर वे लन्दन चले गए और वहाँ से उनने क्रोनिए से उस सेल्यूलर फोन पर बात की जो उन्हें राजेश कालरा ने दिया था। पूछताछ के दौरान कालरा ने कबूल किया कि वह फोन लेकर उनने क्रोनिए को दिया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
दिल्ली पुलिस का कहना है कि उसे मुखबिर से खबर मिली थी कि कुछ लोग दक्षिण अफ्रीकी खिलाड़ियों से लगातार सम्पर्क में हैं और पैसे देकर मैचों और सीरीज का फैसला पहले से तय कर रहे हैं। इस खबर के आधार पर उसने टेलीफोन सुनने की इजाजत माँगी और मिलने पर फोन सुने और टेप किए। अपराध शाखा ने बातचीत का जो ब्योरा प्रेस को जारी किया वह इसी फोन टेपिंग का नतीजा है। पुलिस का मानना है कि जिन दो भारतीयों पर आरोप है और एक पकड़ा गया है वे तो छोटे-मोटे एजेंट हैं। सट्टेबाजी के अन्तर्राष्ट्रीय गिरोह के असली और बड़े खिलाड़ी तो बाहर बैठे हुए हैं। वही कठपुतलियों को नचाते हैं। भारत में खेले जाने वाले एक मैच पर सट्टे में कोई दस हजार करोड़ का वारा-न्यारा होता है। एजेंटों और खिलाड़ियों को तो उसमें चिल्लर जितने ही पैसे मिलते हैं। पुलिस के अधिकारी जिस विश्वास और आक्रामकता से बातें कर रहे हैं उससे लगता है कि जैसे वे सब जानते और जानते रहे हैं और अपराधियों को कटघरे में खड़ा करने में उन्हें कोई दिक्कत नहीं होगी। इससे क्रिकेट खेल और करोड़ों के महानायक खिलाड़ियों का क्या होगा, इसकी कोई चिन्ता इन अधिकारियों में दिखाई नहीं देती। उनमें बल्कि एक ऐसी खुन्नस है जो अपराध को असहाय से देखने और फिर सबूत हाथ लग जाने के बाद उसे साबित करने पर उतारू पुलिस अफसर में होती है। जो वे दावा कर रहे हैं उसमें से थोड़ा भी अगर साबित हो गया तो क्रिकेट नूरा कुश्ती में बदल जाएगा। न लोग उसे ऐसे पागलपन से देखेंगे, न प्रायोजक पैसे लगाएँगे, न खिलाड़ी महानायक बन सकेंगे।

सचमुच यह बड़े सदमे और सुन्न कर देने वाला मामला है। पाकिस्तान के खिलाड़ियों के बारे में तो बार-बार उछलता रहा है कि वे पैसे खाकर मैच हारते और जीतते रहे हैं। आस्ट्रेलिया के दो नामी और प्रतिष्ठित खिलाड़ियों शेन वार्न और मार्क वॉ ने तो साफ कहा ही था कि पाकिस्तानी कप्तान सलीम मलिक ने कुछ हजार डालर लेकर मैच हारने की पेशकश की थी। इन आस्ट्रेलियाई खिलाड़ियों ने कुछ जानकारी देकर भारतीय सट्टेबाज से पैसा लेने की बात भी मानी थी और आस्ट्रेलियाई क्रिकेट बोर्ड ने उन पर जुर्माना भी किया था हालाँकि इस मामले को वहाँ के बोर्ड ने कुछ साल दबाकर रखा था। पाकिस्तानी बोर्ड ने एक जज से सलीम मलिक की जाँच भी करवाई थी और आस्ट्रेलियाई खिलाड़ियों ने उसके सामने गवाही भी दी थी। लेकिन इस न्यायिक जाँच में जज ने कुछ नहीं पाया और सलीम मलिक गए साल विश्व कप में पाकिस्तान की तरफ से खेले भी। पाकिस्तान के भूतपूर्व विकेट कीपर और कप्तान रशीद और बल्लेबाज बासित अली ने भी वसीम अकरम समेत पाँच-छह खिलाड़ियों पर पैसा खाकर मैच हारने के आरोप लगाए थे। विश्व कप के फाइनल में हारने के बाद पाकिस्तान के कई खिलाड़ियों पर पैसा खाकर विश्व कप हारने के आरोप पाकिस्तान में ही लगे। लम्बी-चौड़ी जाँच हुई। वसीम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकरम, इजाज अहमद, सलीम मलिक, मुश्ताक मोहम्मद आदि के खिलाफ जाँच खूब चली। माना जाता था कि वसीम को रिटायर होने का मौका दिया जाएगा ताकि वे इज्जत बचा सकें। वे अब भी खेल रहे हैं।

भारत में भी मनोज प्रभाकर ने कुछ भारतीय खिलाड़ियों पर पैसा खाने और मैच हारने के आरोप लगाए थे। वे खुद भी शक के घेरे में थे। वेस्टइंडीज के खिलाफ कानपुर में मनोज प्रभाकर और नयन मोंगिया ने आखिरी के लप्पेबाजी के ओवरों में रन कूटने के बजाय धीमे बल्लेबाजी की थी जैसे मैच ड्रा करवा रहे हों। लेकिन मनोज प्रभाकर ने पैसे खाकर टीम और देश के साथ गद्दारी करने वाले खिलाड़ियों के नाम नहीं बताए थे क्योंकि मानहानि का मुकदमा हो सकता था और उनके पास ऐसे सबूत नहीं थे कि अदालत में मामला साबित हो सके। चूँकि देश में आम धारणा थी कि क्रिकेट को लेकर सट्टा बड़े पैमाने पर होता है और कुछ खिलाड़ी भी उसमें शामिल रहते हैं इसलिए बोर्ड ने अपने सर्वोच्च न्यायालय के रिटायर मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति चन्द्रचूड़ से जाँच करवाई। न्यायमूर्ति चन्द्रचूड़ का निष्कर्ष था कि हमारे खिलाड़ी सट्टेबाजी में शामिल नहीं हैं। फिर भी यह धारणा बनी रही कि न्यायमूर्ति चन्द्रचूड़ ने वैसी ही लीपापोती की है जैसी पाकिस्तान के न्यायमूर्तियों ने की। बोर्ड क्रिकेट और खिलाड़ियों को बचाने के लिए जानबूझकर मामले को रफादफा करते हैं। आखिर आस्ट्रेलिया के बोर्ड ने तब वार्न और मार्क वॉ पर जुर्माना किया तब किसी को बताया नहीं और बरसों बाद घोषणा की। खिलाड़ियों का कहना है कि सट्टेबाज धन्धा करते हैं और लोग पैसा लगाते हैं। जब वे पैसा हार जाते हैं तो खिलाड़ियों को बदनाम करते हैं और अपनी टीम के प्रदर्शन से दुखी और निराश दर्शक भरोसा कर लेते हैं। लेकिन भारत और पाकिस्तान में साबित कुछ भी न होने पर भी यह धारणा बनी रही कि क्रिकेट पर बड़ी सट्टेबाजी होती है और कुछ खिलाड़ी सट्टेबाजों से मिले रहते हैं। कुछ पुराने और बड़े खिलाड़ियों ने भी कहा कि ऐसा हो सकता है कि अन्तर्राष्ट्रीय क्रिकेट सम्मेलन को कुछ करना चाहिए। इस पर उसने एक समिति सट्टेबाजी और मैच का फैसला पहले से तय करने पर नजर रखने के लिए बनाई।

लेकिन तमाम आरोपों और जाँचों के बावजूद यह पहला मौका है कि किसी देश की पुलिस ने दो सट्टेबाजों और पाँच खिलाड़ियों के खिलाफ धोखाधड़ी और आपराधिक साजिश का बाकायदा मामला दर्ज किया है। टेप की गई बातचीत का ब्योरा प्रेस के लिए जारी किया है और इंटरपोल की सहायता की भी बात कही है। और यह मामला कोई बदनाम टीम या खिलाड़ी के खिलाफ नहीं सबसे विश्वसनीय टीम और सबसे सख्त होड़ देने वाले भले कप्तान के खिलाफ है। जिन लोगों ने पिछले नौ वर्षों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में दक्षिण अफ्रीका का खेल देखा है, वे मानते हैं कि बल्लेबाजी, गेंदबाजी तो ठीक है फील्डिंग में एक रन बचाने में भी दक्षिण अफ्रीकी खिलाड़ी जैसी जान लड़ा देते हैं वैसी कोई नहीं लड़ाता। दक्षिण अफ्रीका दुनिया की सबसे शानदार और जानदार फील्डिंग टीम है। दुनिया का सबसे फुर्तीला और जानलेवा फील्डर जोंटी रोड्स है और दूसरे नम्बर का महान फील्डर हर्शल गिब्स भी दक्षिण अफ्रीकी है। दुनिया की कोई टीम वैसी टीम भावना और जान लड़ाकर नहीं खेलती है जैसी कि दक्षिण अफ्रीकी टीम निश्चित हार का सामना हो फिर भी यह टीम आखिरी गेंद तक जान लड़ाकर संघर्ष करती है और हार के भी हार नहीं मानती। उस टीम में न तो सचिन और लारा जैसा कोई भीषण प्रतिभाशाली बल्लेबाज है न शेन वार्न, वसीम अकरम, शोएब अख्तर, वकार यूनुस और मेकग्रा जैसा गेंदबाज। एक भी सुपर स्टार नहीं है फिर भी पूरी टीम सुपर स्टार है। बिना किसी के शतक बनाए वे तीन सौ रन ठोक देते हैं और कोई पाँच विकेट नहीं लेता लेकिन सामने की टीम ढेर हो जाती है। इस टीम का प्रत्येक खिलाड़ी तीन में से दो विधाओं में पारंगत होता है। यानी पूरी टीम ही आल राउंडरों की टीम है।

ऐसी टीम का कोई खिलाड़ी और हांसी क्रोनिए जैसा कप्तान सट्टेबाजों से पैसे लेकर मैच हार जाएगा इस पर सहज विश्वास नहीं होता। कोई एक टीम अपने प्रदर्शन में सबसे ज्यादा गर्व करने और गौरव मनाने के योग्य है तो वह दक्षिण अफ्रीका है। फिर दक्षिण अफ्रीका खेल में गर्व और गौरव करने वाला देश है। वहाँ का बोर्ड और खेल संगठन किसी खिलाड़ी के नाम और कीर्ति पर नहीं जाता। वह शुद्ध प्रदर्शन और उसके सदाचार पर खिलाड़ी को राष्ट्रीय टीम के लिए चुनता है। जिस किसी खिलाड़ी के बारे में थोड़ी भी ऊँची-नीची रपट आई उसे चुपचाप हट जाने के लिए कह दिया जाता है। ब्रायन मेकमिलन, पैट सिमकॉक्स मरवापा नितनी जैसे कई खिलाड़ी रंगभेद बरतने या दुराचार करने के आरोप में बाहर बैठाए गए। वहाँ खिलाड़ी सालों साल खेलते नहीं रहते, न टीम पुराने खिलाड़ियों को ढोती है। सम्मानजनक और समुचित व्यवहार करने के लिए वहाँ के खेल संगठन और खिलाड़ी दोनों मशहूर हैं। मैदान पर सख्त से सख्त होड़ करने और कड़ी से कड़ी टक्कर देने में वे कोई कसर नहीं छोड़ते लेकिन मैदान के बाहर उनके जैसा दोस्त और भलामानस ढूँढ़े नहीं मिलेगा। होड़ करने और टक्कर देने में आस्ट्रेलिया भी कोई कम नहीं है लेकिन उसकी छवि अच्छी टीम होने की नहीं है। सन् बानवे के विश्व कप में एक वाहियात नियम ने दक्षिण अफ्रीका को एक गेंद पर बाईस रन बनाने का लक्ष्य दिया। वह सेमी फाइनल में इस कारण जीतते-जीतते हार गई। सन् निन्यानवे के विश्व कप के फाइनल से वह इसलिए बाहर हो गई कि आस्ट्रेलिया से उसका सेमीफाइनल बराबरी पर खत्म हुआ था। दक्षिण अफ्रीका ने कोई शिकायत नहीं की,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
न कोई राँड रोना। इस तरह हार के गई टीम का दक्षिण अफ्रीका ने जोरदार स्वागत किया। डोनाल्ड जैसे गेंदबाज को आप मैदान पर बदमिजाज कह सकते हैं। लेकिन दक्षिण अफ्रीकी टीम और खिलाड़ी, खिलाड़ी भावना नहीं छोड़ते।

ऐसी टीम, ऐसे खिलाड़ियों और ऐसे कप्तान के खिलाफ धोखाधड़ी और आपराधिक षड्यन्त्र के आरोप लगाकर दिल्ली पुलिस ने बड़ा जोखिम उठाया है। अगर ये आरोप साबित नहीं हुए तो भारतीय क्रिकेट ही नहीं, भारतीय पुलिस, प्रशासन और राष्ट्र दुनिया-भर में बदनाम होगा और उस पर झूठा आरोप लगाकर दूसरों को बदनाम करने का लांछन लगेगा। हांसी क्रोनिए ने आरोप को बकवास बताया है और दक्षिण अफ्रीकी बोर्ड ने अपने कप्तान से बात करने के बाद सारे आरोप रद्द कर दिए हैं। इसके अलावा उनसे कोई अपेक्षा भी नहीं की जा सकती थी। कोई शक नहीं कि दिल्ली पुलिस को गलत और झूठी साबित करने में दक्षिण अफ्रीका, उसका क्रिकेट बोर्ड और उसके खिलाड़ी कोई कसर नहीं छोड़ेंगे। यह उनके आत्मगौरव और प्रतिष्ठा का सवाल है।

फिर यह भी याद रखना चाहिए कि अगला विश्व कप दक्षिण अफ्रीका में होना है। बहुत कोशिश करके उसने यह आयोजन करने का अधिकार पाया है। अगर साबित हो गया कि दक्षिण अफ्रीकी खिलाड़ी पैसे लेकर मैच हारते हैं तो उनका विश्व कप तो टाँय-टाँय फिस्स हो जाएगा। कौन तो उसमें पैसे लगाएगा और कौन उसके मैच गम्भीरता से देखने जाएगा। सब जानते हैं कि व्यापारीकरण और खुले बाजार के इस जमाने में ऐसे विश्व खेल आयोजन न सिर्फ करोड़ों की लागत बल्कि देश की प्रतिष्ठा और गौरव की कसौटी होते हैं। दक्षिण अफ्रीका को यह कभी मंजूर नहीं होगा कि उसकी इज्जत धूल में मिल जाए। फिर दिल्ली पुलिस जो दावा कर रही है उसका एक मंशा भी साबित हो जाए तो एक अन्तर्राष्ट्रीय खेल के नाते क्रिकेट समाप्त हो जाएगा क्योंकि लोग विश्वास नहीं करेंगे कि जो वे देख रहे हैं वह सचमुच काँटे की टक्कर है और नूरा कुश्ती या मिलीभगत नहीं है। क्रिकेट की सारी प्रतिष्ठा उसके भलेमानुस का खेल होने की है। वह सट्टेबाजों का खेल मान लिया जाएगा और अगर उसमें लोगों का भरोसा नहीं रहेगा तो बड़े व्यावसायिक प्रतिष्ठान उसमें क्यों पैसा लगाएँगे और खिलाड़ियों को महानायक बनाकर क्यों पेश किया जाएगा? दिल्ली पुलिस कुछ भी साबित कर पाई तो क्रिकेट वह नहीं बचेगा जो आज तक है या था। कैरी पैकर के सर्कस में सिर्फ भारतीय टीम ही अपने बोर्ड से विद्रोह करके पैसे के लिए खेलने नहीं गई थी। भारत में क्रिकेट धर्म है। क्या यहीं से उसकी समाप्ति की शुरुआत होगी? करोड़ों लोगों को कोई डेढ़ सौ साल से आनन्द लेने वाले खेल का यह हश्र क्यों होना चाहिए?

(9.4.2000)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम क्या झूठे और बेईमान हैं?

यह सवाल हम लोग पूछ रहे हैं और पूछ कर अपने से ही दुखी और निराश हो रहे हैं कि हमारे खिलाड़ी दक्षिण अफ्रीकी खिलाड़ियों की तरह मंजूर क्यों नहीं करते कि हाँ हमने फलाँ-फलाँ सट्टाखोर से फलाँ मैच हारने के इतने पैसे लिए और हमारी इस रिश्वतखोरी में हमारी टीम के ये खिलाड़ी शामिल थे। हमारे खिलाड़ी झूठ बोल-बोल कर ऐसे अपराध को छुपाने की दयनीय कोशिश क्यों करते हैं जो सब मानते हैं कि उनने किए हैं। रिश्वत खाने के बाद भी दक्षिण अफ्रीकी खिलाड़ियों में अपराध स्वीकार करने की इतनी ताकत और सच्चाई क्यों हैं कि किंग जाँच आयोग के सामने बयान दे रहे हैं। और हमारे खिलाड़ी पोल खुलने के बाद भी सच बोलने की हिम्मत क्यों नहीं करते? वे निजी बातचीत में कुछ और सार्वजनिक बयानों में कुछ और क्यों कहते हैं? क्या हम झूठे और पाखंडी लोग हैं? भारत के लोगों की नजर में हमारे अपने खिलाड़ी क्यों गिर गए हैं और दक्षिण अफ्रीकी खिलाड़ी क्यों ऊँचे उठ गए हैं जबकि दोनों के अपराध एक जैसे हैं। सिर्फ इसलिए कि वे अपने अपराध कबूल करते हैं और हमारे खिलाड़ी बेशरम से ना करते चले आ रहे हैं?

इन सवालों के पीछे धारणा यह है कि जिस तरह दक्षिण अफ्रीकी खिलाड़ियों ने सट्टाखोरों से पैसे खाए वैसे ही हमारे खिलाड़ी भी मैच हारने, जल्दी आउट होने और खराब गेंदबाजी करने की रिश्वत लेते रहे हैं। यह कबूल करने या अदालत में साबित होने के पहले ही किसी को अपराधी मानने की इच्छा या प्रवृत्ति से पैदा हुई अवधारणा है। फिर हम यह भी भूल रहे हैं कि हांसी क्रोनिए ने भी तभी पैसे खाना कबूल किया जब दिल्ली पुलिस ने उनके खिलाफ मुकदमा दायर किया और उसके पास भूतपूर्व दक्षिण अफ्रीकी कप्तान के सट्टाखोरी में शामिल होने के ठोस सबूत थे। फिर यह भी याद रखिए कि दिल्ली पुलिस के मुकदमा दायर करने के बाद भी दो दिन तक क्रोनिए इन आरोपों को बकवास बताते रहे और अभी जो अली बाखर महज शक पर सबको नंगा करते घूम रहे हैं वे भी अपने कप्तान का बचाव करने में लगे हुए थे। कूटनीतिक रास्ते से बटोरी गई जानकारी से जब यह साफ हो गया कि क्रोनिए का बचना सम्भव नहीं है तभी उनकी ईसाई आत्मा जागृत हुई और उनने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने पादरी के पास जाकर अपना अपराध कबूल किया। जैसे अपने यहाँ गंगा में जाकर डुबकी लगाने से पाप धुल जाते हैं वैसे ही ईसाइयत में पादरी के सामने जाकर सब कुछ कबूल कर लेने से पाप से मुक्ति हो जाती है। क्रोनिए के कबूल करने के बाद हर्शल गिब्स, विलियम्स, स्ट्रायडम आदि के लिए भी सच-सच बता देने के अलावा कोई रास्ता नहीं था। चूँकि क्रोनिए कबूल कर चुके थे कि उनने रिश्वत खाई है इसलिए उन्हें कप्तानी से हटाना आसान हो गया और क्रोनिए की पेशकश मंजूर करने वाले गिब्स को भी टीम से बाहर करना उचित हो गया। दक्षिण अफ्रीका के किसी भी राजा हरिश्चन्द्र खिलाड़ी की आत्मा खुद होकर नहीं बोली थी। सबूत के सामने वे मजबूर थे। खुद क्रोनिए ने कहा है कि सट्‌टेबाजी और रिश्वतखोरी पर वे लगातार झूठ बोलते आ रहे थे।

अपने यहाँ सबसे बड़ी समस्या और पाखंड के लिए गुंजाइश इसलिए है कि किसी के भी खिलाफ कोई सबूत नहीं है। सट्‌टेबाजी और रिश्वतखोरी के धन्धे में इतने लोग लगे हुए हैं और उनके ऐसे राजनीतिक और आर्थिक पव्वे हैं कि दिल्ली पुलिस का किसी के खिलाफ पूरी जाँच करना, सबूत इकट्‌ठे करना और अदालत में केस दायर करना लगभग असम्भव है। दिल्ली पुलिस भी माफिया सरदारों की आपराधिक गतिविधियों का पीछा करते हुए क्रोनिए के मामले को पकड़ पाई और चूँकि दिल्ली पुलिस में क्रोनिए का कोई पव्वा नहीं था और दक्षिण अफ्रीकी सरकार अपने कप्तान के खिलाफ जाँच को दबाने में सक्रिय नहीं थी इसलिए दिल्ली पुलिस जाँच को ऐसे सिरे तक ले जा सकी कि ठोस सबूत मिल जाएँ और मुकदमा दायर हो सके। माफिया सरदारों की ऐसी ही गतिविधियों की जाँच कुछ साल पहले मुम्बई पुलिस भी कर रही थी। इस जाँच के दौरान उसने भी पाया कि माफिया सरदार क्रिकेट में सट्‌टेखोरी के धन्धे में भी लगे हुए हैं। सट्‌टेबाजों से क्रिकेट खिलाड़ियों के भी सम्बन्ध हैं और वे उनके एजेंट, मुखबिर, आदि के काम करते रहते हैं। तब भी सट्‌टेबाजों और माफिया सरदारों के फोन टेप किए गए थे और उन टेपों के आधार पर ही कपिल, अजहर, जडेजा और मोंगिया के नाम बाहर आए थे। एक पुलिस अधिकारी ने कहा ही है कि सट्‌टाखोरी तब से चल रही है जब सुनील गावसकर कप्तान थे। उनके बाद कपिल और अजहर की कप्तानी में यह कला के स्तर तक बढ़ाई गई। यह भी कहा गया कि इन टेपों से मिली जानकारी एक अफसर ने माधवराव सिन्धिया तक भी पहुँचाई जो उस समय क्रिकेट बोर्ड के अध्यक्ष थे और मन्त्री तो थे ही। लेकिन माधवराव सिन्धिया ने कहा कि ऐसी कोई जानकारी उन्हें कभी नहीं मिली। आउटलुक पत्रिका ने इन टेपों से निकली जानकारी प्रकाशित भी की। लेकिन अब कहा जा रहा है कि ऐसे कोई टेप नहीं है जिनमें भारतीय खिलाड़ियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के सट्टेबाजी और रिश्वतखोरी में लगे लोगों की जानकारी वाले जिन टेपों ने क्रोनिए को अपराध कबूल करने को मजबूर किया उनमें भी एक भारतीय खिलाड़ी के शामिल होने का नाम उड़ते-उड़ते आता है। लेकिन वह कौन है और सट्टेबाजी में लिप्त है भी या नहीं इसकी कोई जानकारी दिल्ली पुलिस ने नहीं दी जबकि हांसी क्रोनिए को रँगे हाथ पकड़ने और एक अन्तर्राष्ट्रीय सट्टाखोरी रैकेट का भंडाफोड़ करके दुनिया-भर में तहलका मचा देने वाला पराक्रम इसी दिल्ली पुलिस ने किया है।

यह कि भारतीय क्रिकेट में सट्टेबाजी जमके चलती है और हमारे कई खिलाड़ी सट्टाखोरी में पड़े हुए हैं—यह जानकारी देश को पुलिस से नहीं सट्टेबाजी में लगे लोगों की जानकारी रखने वाले साधारण लोगों से मिलती रही है। लेकिन वह हमेशा अफवाह और चोरी-छुपे की जाने वाली गप की तरह चलती रही है। आम लोग अपने-अपने ढंग से मैच प्रत्यक्ष या टीवी पर देखकर निष्कर्ष निकालते रहे हैं कि कौन सट्टा खाता होगा और कौन टीम को दगा दे रहा है। किसी खिलाड़ी ने रिश्वतखोरी की बात पहली बार कही तो मनोज प्रभाकर ने कही जो टीम से बाहर कर दिए गए थे। दिल्ली के ये ऑलराउंडर विश्व कप के मैच में दिल्ली में ही श्रीलंका के खिलाफ अपना आखिरी मैच खेले थे और दो ओवर में जयसूरिया ने इन्हें पीट-पाट कर बाहर कर दिया था। इसके बाद जब पक्का हो गया कि अब उन्हें खिलाया नहीं जाएगा तो उनने पहले खुसपुसाहट में और फिर आरोपों की तरह कहना शुरू किया कि बुरा खेलने के लिए उन्हें एक बार हमारे एक मशहूर खिलाड़ी ने ही पच्चीस लाख रुपए देने की पेशकश की थी। फिर एक पत्रिका आउटलुक से पैसा लेकर मनोज प्रभाकर ने अपना पूरा किस्सा बताया। लेकिन उस खिलाड़ी का नाम नहीं बताया जिसने उन्हें रिश्वत की पेशकश की थी। उनके आरोपों ने इतना दम पकड़ा कि बोर्ड को आखिर न्यायमूर्ति चन्द्रचूड़ से इस मामले को देखने को कहना पड़ा। इस जाँच से कुछ नहीं निकला क्योंकि सबूत न होने के डर से प्रभाकर ने उनको भी नाम नहीं बताया। फिर खेल पत्रकार प्रदीप मैगजीन ने वेस्टइंडीज से लिखा कि किस तरह एक सट्टेबाज ने उनसे भारतीय कप्तान की मुलाकात करवाने को कहा था। वह तो हांसी क्रोनिए पकड़े गए और उनने कबूल किया उसके बाद मनोज प्रभाकर की हिम्मत बढ़ी और कभी बोर्ड के अध्यक्ष रहे इन्दरजीत बिन्द्रा ने सीएनएन पर कहा कि प्रभाकर ने कपिल का नाम लिया है। फिर खुद मनोज प्रभाकर ने मीडिया को बुलाकर कहा कि कपिल ने कब उनसे क्या कहा था। इसके बाद प्रभाकर ने धोखाधड़ी से उन सब लोगों की निजी बातचीत कैमरे पर टेप की जो उनकी कहानी के गवाह हो सकते थे और फिर वह सब एक पाँच तारा होटल में मीडिया को दिखा दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
इस सबके बावजूद मामला यही है कि प्रभाकर और कपिल आमने-सामने खड़े हैं और एक-दूसरे पर आरोप लगा रहे हैं। प्रभाकर का दावा कपिल के खिलाफ है और कपिल की बात प्रभाकर के खिलाफ। यह कोई सबूत नहीं है। यह जानकर ही मनोज प्रभाकर ने उन लोगों से बातचीत टेप की जो गवाह हो सकते थे—जैसे बल्लेबाज नवजोत सिंह सिद्धू जो उन्हीं के कमरे में रहते थे। मोंगिया और प्रशान्त वैद्य जो पास के कमरे में थे और जिनने प्रभाकर और कपिल का झगड़ा सुना था। तब कमेंट्री कर रहे रवि शास्त्री और सुनील गावसकर जिनको मनोज प्रभाकर ने कपिल की पेशकश के बारे में बताया था और अजित वाडेकर जो उस समय भारतीय टीम के मैनेजर थे और जिनको प्रभाकर ने रिपोर्ट किया था। इन सबसे भी प्रभाकर की धोखे से टेप की गई बातचीत साबित नहीं करती कि कपिल ने उन्हें खराब खेलने के लिए पच्चीस लाख रुपए देने की बात की थी क्योंकि कपिल और प्रभाकर की बात और झगड़ा इन लोगों में से किसी के भी सामने नहीं हुआ था। तो पारिस्थितिक साक्ष्य भी साबित नहीं करते कि कपिल ने प्रभाकर को खराब खेलने की रिश्वत देने की कोशिश की थी। प्रभाकर कुल मिलाकर यही बता पाए हैं कि भारतीय क्रिकेट में सट्टेबाजी और रिश्वतखोरी होती है और खिलाड़ी और प्रशासक प्राइवेट में कुछ कहते हैं और सार्वजनिक रूप से कुछ और। ये दोनों बातें ही पहले से आम जानकारी में हैं और इनके कारण किसी के खिलाफ मुकदमा दायर करके साबित नहीं किया जा सकता कि फलाँ ने फलाँ अपराध किया है। खुद प्रभाकर पर भी सट्टेबाजी में शामिल होने के आरोप हैं और उनके दावे को कोई नहीं मानता कि यह सब उनने क्रिकेट में सट्टेबाज की गन्दगी दूर करने के लिए किया है। सब यही मानते हैं कि प्रभाकर कपिल से खुन्दक निकाल रहे हैं।

और कपिल ने क्या किया? पहले तो बीबीसी से बात करते हुए धाड़ें मारकर रोए। उनने न कैमरे को रोका, न इंटरव्यू करने वाले से कहा कि यह प्रसारित नहीं होगा। इंटरव्यू करने वाले ने कपिल के रोने को अपने कार्यक्रम के विज्ञापन में इस्तेमाल किया। एक जैसे फोटू और एक जैसी खबरें छपीं। कपिल ने अपने रोने को अपने प्रति लोगों की सहानुभूति जगाने के काम में लिया। कोई आत्मसम्मानी सच्चा आदमी अपने आँसुओं का ऐसा उपयोग नहीं करता। कपिल ने किया। फिर प्रभाकर की मीडिया कान्फरेंस और फिल्म दिखाना हो गया तो कपिल ने भी मीडिया से बात की। कहा कि प्रभाकर सामने पड़ गया तो वे उसे ऐसा झापड़ रसीद करेंगे कि उमर-भर याद रखेगा और यह कि प्रभाकर उनके जैसा खेलकर बताए। इनसे कहीं लगता नहीं कि कपिल निर्दोष हैं और उन्हें नाहक घसीटा जा रहा है। कपिल ने आरोप लगाने वालों के खिलाफ मानहानि के मुकदमे ठोंक दिए हैं। सही है कि भारतीय क्रिकेट की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सबसे बड़ी प्रतिष्ठा को धूल में मिलाया जा रहा है लेकिन कपिल के रवैये से भी स्थापित नहीं होता कि यह प्रभाकर और दूसरे लोगों का षड्यन्त्र हैं। इसी तरह क्रोनिए ने अजहर का नाम किंग आयोग के सामने बयान में लिया है। क्रोनिए ने कहा कि अजहर ने ही उन्हें मुकेश गुप्ता नाम के सटोरिए से मिलवाया और कानपुर टैस्ट हारने के इतने डालर उसने दिए। सही है कि क्रोनिए झूठ बोलते रहे हैं और उनकी क्या विश्वसनीयता। लेकिन अपराध कबूल करके और बयान में सब बताकर क्रोनिए ने कुछ विश्वसनीयता और विश्वास अर्जित किया है। उनके ऐसा करने के कारण ही लोगों में धारणा बनी है कि दक्षिण अफ्रीकी खिलाड़ी रिश्वत लेकर भी सच्चे और ईमानदार हैं और अपने खिलाड़ी झूठे और बेईमान। अजहर ने भी हद कर दी है। वे अपने मुसलमान और काले होने की दुहाई दे रहे हैं और गावसकर, रवि शास्त्री आदि पर मुकदमा करने वाले हैं। वे क्रोनिए को झूठा और रंगभेद करने का पापी बता रहे हैं। यही गनीमत है कि उन्होंने अब तक अपने को भारतीय क्रिकेट का गौरवशाली प्रतिनिधि नहीं बताया और दावा नहीं किया कि उनका नाम लेकर क्रोनिए ने भारतीय क्रिकेट को बदनाम करने की दक्षिण अफ्रीकी साजिश की है। चूँकि भारतीय पुलिस ने क्रोनिए को रँगे हाथों पकड़कर सट्टेबाजी का भंडाफोड़ किया है इसलिए अब दक्षिण अफ्रीका भारतीय क्रिकेट की प्रतिष्ठा को ध्वस्त करने में लगा है। अजहर अपने को निर्दोष बताने के लिए दो देशों की प्रतिष्ठा तक इस बात को ले जा सकते हैं।

कपिल और अजहर के खिलाफ जब तक सबूत नहीं मिल जाते और अदालत में साबित नहीं हो जाता तब तक वे निर्दोष हैं। प्रभाकर और क्रोनिए के आरोप वे कारण नहीं हो सकते कि जो उन्हें अपराध कबूल करने पर मजबूर करें। क्रोनिए के खिलाफ दिल्ली पुलिस ने जैसे सबूत जुटाए वैसे सीबीआई को कपिल और अजहर पर सबूत जुटाने होंगे। जब तक ऐसा नहीं होता हम अपने को झूठा और बेईमान कहने को अभिशप्त हैं।

(18.6.2000)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पैसे लेने चलो शारजाह

अरुणा राय का बहुत आग्रह है कि एक टिप्पणी भारत पाकिस्तान और बांग्लादेश के बीच शारजाह में खेली जाने वाली श्रृंखला के रद्द किए जाने पर लिखूँ। एशियाई क्रिकेट फाउंडेशन ये क्रिकेट मैच गुजरात भूकम्प की राहत के लिए करवाना चाहता था। मैच आठ से ग्यारह फरवरी के बीच होने थे। भारत सरकार पाकिस्तान से क्रिकेट न खेलने के अपने निर्णय पर टिकी रही और इसलिए यह टूर्नामेंट रद्द करना पड़ा। अरुणा राय आप जानते हैं कि कोई ऐसी क्रिकेट प्रेमी नहीं हैं कि क्रिकेट के लिए भारत पाकिस्तान का आपस में खेलते रहना जरूरी मानती हों। गुजरात के भूकम्प पीड़ितों के लिए जैसे भी हो धन इकट्ठा किए जाने के लिए भी वे उत्सुक नहीं हैं। आपको अन्दाज लगाने में कोई दिक्कत नहीं हुई होगी कि अपने देश की यह प्रसिद्ध समाजसेविका भारत और पाकिस्तान के बीच सम्बन्ध सामान्य होते देखना चाहती हैं और उन्हें लगता है कि भाजपा नेतृत्व की यह गठबन्धन सरकार ऐसा नहीं होने देना चाहती इसलिए यह क्रिकेट टूर्नामेंट रद्द किया गया। ऐसा मानने वाली वे अकेली नहीं हैं। ऐसे बहुत से लोग हैं जो मानते हैं कि भारत और पाकिस्तान के बीच सम्बन्धों में से तनाव दूर करने में क्रिकेट का बड़ा योगदान हो सकता है। कूटनीति के रास्ते चलने वाले ही नहीं क्रिकेट को पसन्द करने वाले भी ऐसा मानते हैं।

इसके विपरीत राय रखने वाले भी हैं। आखिर कुछ साल पहले शिवसैनिक जाकर मुम्बई के वानखेड़े स्टेडियम का पिच खोद आए थे और उनके हिंसक प्रदर्शन को देखते हुए पाकिस्तान ने ही दौरा रद्द कर दिया था। वे लोग मानते हैं कि भारत और पाकिस्तान में मैच होते हैं तो देश भावनात्मक रूप से विभाजित हो जाता है। हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच तनाव पैदा होता है। शिव सेना और संघ सम्प्रदाय के ज्यादातर लोग मुसलमानों की देशभक्ति में सन्देह करते हैं और उन्हें लगता है कि मुसलमान पाकिस्तान की तरफदारी करते हैं और पाकिस्तान हमसे इस तरह क्रिकेट खेलता है जैसे युद्ध कर रहा हो और जब तक क्रिकेट इन दो देशों के बीच एक खेल नहीं हो जाता खेलने का कोई मतलब नहीं। वह कश्मीर में छाया युद्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बन्द नहीं करता तब तक पाकिस्तान से हमें क्रिकेट नहीं खेलना चाहिए। दो साल पहले दूसरी वाजपेयी सरकार ने पाकिस्तान का भारत दौरा होने दिया था। उसने शिवसेना प्रमुख बाला साहेब ठाकरे को राजनीतिक रूप से समझाकर काम चलाया लेकिन कारगिल के बाद वह छाछ को भी फूँक-फूँक कर पीना चाहती है। इसलिए शारजाह में एक त्रिकोणीय टूर्नामेंट गुजरात के भूकम्प पीड़ितों के लिए भी उसने मंजूर नहीं किया।

लेकिन ये कागद मैं अरुणा राय का आग्रह रखने के लिए कारे नहीं कर रहा हूँ। मैं क्रिकेट के पीछे पागल एक ऐसा आदमी हूँ जो उसे कूटनीति का अस्त्र बनाने या उसके जरिए एक पड़ोसी से हिसाब साफ करने का तरीका नहीं बनने देना चाहता। क्रिकेट के ये उपयोग हो सकते हैं। कहते हैं कि अंग्रेजों ने इस खेल का इस्तेमाल पिछली सदी में अपने साम्राज्य की जड़ें मजबूत करने में किया। किया होगा। लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि हम भी पाकिस्तान, श्रीलंका और बांग्लादेश से अपने सम्बन्धों को सुधारने के लिए क्रिकेट खेलें। यह क्रिकेट नहीं है। क्रिकेट एक खेल है और इसे खेल की तरह ही खेलना चाहिए। अगर यह भारत और पाकिस्तान के बीच खेल नहीं बना रह सकता तो यही बेहतर है कि ये दो देश आपस में न खेलें। इस नाते शारजाह में रद्द हुए टूर्नामेंट से मुझे राहत मिली है और यह लिखना मैं इसीलिए कर रहा हूँ। लेकिन टूर्नामेंट के रद्द होने का स्वागत भी मैं दूसरे कारणों से करना चाहता हूँ। ये क्रिकेटीय कारण हैं और मुझे दुख है कि इन पर कोई ध्यान नहीं दे रहा। वे भी नहीं जो आस्ट्रेलिया के इस माह होने वाले दौरे पर लिख रहे हैं और जो चाहते हैं कि भारत इस विश्वविजयी टीम को बराबरी की टक्कर दे और पन्द्रह टैस्ट लगातार जीतने के उसके अद्भुत रेकार्ड को तोड़े। हम क्रिकेट पर अपनी इतनी भावनाएँ न्यौछावर करते हैं एक धर्म की तरह उसे मानते हैं और उसमें आनन्द लेते हैं। पर अपने राष्ट्र की टीम के रूप में उसके प्रदर्शन को बेहतर करने की नहीं सोचते। टीम सच पूछिए तो बोर्ड की भी चिन्ता और प्रतिष्ठा का केन्द्र नहीं है।

इसीलिए तो देखिए कि आस्ट्रेलिया को टक्कर देने के लिए टीम की जो तैयारी करनी थी उसे पलक झपकते रद्द करके बोर्ड ने शारजाह में टूर्नामेंट खेलने का फैसला कर लिया। उसने टीम का चेन्नई में जो ट्रेनिंग कैम्प होना था और इसके बाद सभी सम्भावित खिलाड़ियों की तीन टीमों में जो चैलेंजर ट्रॉफी खेली जानी थी उस सबको ताक पर रखकर शारजाह में ये मसाला मैच खेलने का मन बना लिया था। वह तो भारत सरकार की अनुमति पर मामला अटका हुआ था नहीं तो बोर्ड तो क्रिकेट को शारजाह में धन उगाहने में लगाने को तैयार बैठा था। इस टूर्नामेंट का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
प्रस्ताव लाहौर में हुई एशियन क्रिकेट फाउंडेशन की बैठक में से निकला। पाकिस्तान का बोर्ड तैयार हो गया होगा इसलिए भारतीय बोर्ड से कहा गया। चूँकि भूकम्प भारत के गुजरात में आया था इसलिए भारत के बोर्ड ने अपनी तरफ से घोषणा कर दी कि वह शारजाह में खेलेगा। वहाँ के लिए टीम चुनने के लिए चयन समिति की बैठक भी बुला ली। भूकम्प पीड़ितों के लिए धन इकट्ठा करना बड़ा ऊँचा लक्ष्य है और संकट की घड़ी में क्रिकेट काम आए यह भी अच्छी बात है। लेकिन भारत को आस्ट्रेलिया से तीन टैस्ट और पाँच वन डे भी खेलना है। आस्ट्रेलिया पूरी तैयारी और दृढ़ निश्चय के साथ भारत को भारत में पराजित करने आ रहा है। हम इस तगड़े मुकाबले के लिए अपनी टीम को तैयार करें या मसाला मैचों से खाड़ी का कुछ धन इकट्ठा करके गुजरात में राहत के लिए दें ? बार-बार कहा जा रहा है कि पैसों की कोई कमी नहीं है। दुनिया-भर से सहायता आ रही है। साधनों की भी कोई कमी नहीं है। जरूरत लोगों तक उसे पहुँचाने की है। उसमें तो क्रिकेट खिलाड़ी कोई मदद नहीं कर सकते। यह या तो सरकारी मशीनरी को करना है या स्वैच्छिक सेवा संस्थाओं को। टूर्नामेंट करवाने से यह काम नहीं होगा। इसलिए बोर्ड और अपने क्रिकेट खिलाड़ी वही करें जो उनका काम है। बोर्ड की बहुत ही इच्छा हो तो टैस्ट सीरीज या वन डे मैचों की जो आमदनी होगी उसे गुजरात के भूकम्प पीड़ितों के लिए दे दें। सामने खड़ी क्रिकेट की स्पर्धात्मक चुनौती को छोड़कर शारजाह जाकर धन लाने की क्या जरूरत है?

लेकिन बोर्ड ने कहा कि शारजाह में टूर्नामेंट होगा और हमारे सद्भावी लोग जनरल मुशर्रफ के प्रधानमन्त्री वाजपेयी को आए टेलीफोन को आगे बढ़ाने में लग गए। पाकिस्तान के आलराउंडर वसीम अकरम ने भारत के क्रिकेट-प्रेमियों से अपील की कि वे सरकार पर दबाव डालें कि भारत-पाकिस्तान के बीच मैच हो। अकरम ने याद किया कि जनवरी निन्यानवे में वे चेन्नई में खेले गए टैस्ट को कभी नहीं भूलेंगे जब पूरे स्टेडियम ने विज़ेता पाकिस्तानी टीम का अभिवादन किया। लेकिन अकरम ने नहीं बताया कि जब कलकत्ता टैस्ट में सचिन तेंदुलकर को आउट दिया गया और चूँकि वे शोएब अख्तर से टकराने के कारण रन आउट करार दिए गए थे और खेल भावना का तकाजा था कि कप्तान अकरम अपील वापस लेकर सचिन को फिर खेलने को कहें और अकरम ने ऐसा नहीं किया तो लोगों ने किस तरह अपना विरोध जताया और लगभग खाली स्टेडियम में आखिरी दिन का खेल हुआ। अकरम को चेन्नई याद है कलकत्ता याद नहीं आता। चेन्नई में निश्चित ही लोगों ने अपनी सद्भावना दिखाई थी। लेकिन कलकत्ता में लोगों ने खेल भावना न दिखाने के कारण पाकिस्तानी टीम का विरोध भी किया था। फिर यही अकरम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
ऐसा कहने में भी नहीं हिचकते कि भारत पाकिस्तान से डरता है इसलिए नहीं खेलता और हमने भारत को सब जगह हराया है। सारी दुनिया मानती है कि सचिन तेंदुलकर दुनिया के सर्वश्रेष्ठ बल्लेबाज हैं लेकिन पाकिस्तान के पुराने तीसमार खाँ कप्तान इमरान खान नहीं मानते। वे अपने इंजमाम उल हक को सचिन से लाखों गुना अधिक प्रतिभाशाली मानते हैं। क्यों? क्योंकि कोई भारतीय किसी पाकिस्तानी से बेहतर तो हो ही नहीं सकता। पाकिस्तान के खिलाड़ी इसी उद्दंडता के साथ भारत से खेलते हैं। सब जानते हैं कि पाकिस्तानी खिलाड़ियों के लिए भारत से खेलना जेहाद में जाना है। इस कारण भारत के खिलाड़ी भी तनाव और दबाव में आते हैं। हमारे सब खिलाड़ियों ने कहा है कि पाकिस्तान से खेलने में क्यों इतना तनाव और बोझ होता है।

लेकिन अपना बोर्ड इन सब बातों को भूलकर शारजाह में टूर्नामेंट करवाने को उत्सुक था। शारजाह में पैसे का ही खेल है। सीबीआई ने मैच फिक्सिंग और रिश्वतखोरी की जाँच के दौरान पाया है कि सट्टाखोरी का सबसे बड़ा अड्डा शारजाह में है। इस रपट के कारण हमारे पाँच खिलाड़ी क्रिकेट से बाहर किए गए। लेकिन उसी शारजाह में खेलकर गुजरात के भूकम्प पीड़ितों के लिए धन लाने में बोर्ड को कोई हिचक नहीं है। क्योंकि हमारा बोर्ड क्रिकेट को खेल की तरह बढ़ाने से ज्यादा कमाई के साधन की तरह देखता है। इसीलिए वह खेल पर ध्यान नहीं देता। अपनी टीम बनाने और उसे टीम की तरह खिलाने पर उसका जोर और आग्रह नहीं होता। खेल को वह खिलाड़ियों पर छोड़ देता है और खिलाड़ियों की भी देखभाल करना, उन्हें टीम के लिए उपयोगी बनाए रखना और टीम की जरूरतों के हिसाब से क्रिकेट का प्रबन्ध करना उसकी मुख्य जिम्मेदारी नहीं है। आस्ट्रेलिया की इतनी तगड़ी टीम है। वह विश्व कप जीती और पिछले पन्द्रह टैस्ट लगातार जीतकर उसने रेकार्ड बनाया है। उसके पास आज कम-से-कम पच्चीस ऐसे खिलाड़ी हैं जो टैस्ट खेलने के योग्य हैं। वह एक नहीं दो टीम बना और भेज सकता है। फिर भी भारत के दौरे को वह चुनौती की तरह ले रहा है। कई सप्ताह पहले आस्ट्रेलियन बोर्ड ने तीन सदस्यों की टीम भारत भेजी जिसने उन सब मैदानों का मुआयना किया जहाँ टैस्ट और वन डे खेले जाने हैं। भारत की स्थितियों, मौसम, होटलों, यात्रा के साधन, भोजन आदि सबका अध्ययन किया। पिचों का स्वभाव समझा। भारत में खेलने की क्या तैयारी करनी होगी इसकी बाकायदा रपट तैयार करके दी और उसके अनुसार तैयारी करके आस्ट्रेलिया की टीम भारत खेलने आ रही है। आस्ट्रेलिया ने भारत में दो-एक से हारने का बदला गए साल भारत को तीन शून्य से पीटकर भेजकर लिया था। अब अपनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपराजेयता बनाए रखने के लिए कटिबद्ध होकर आ रही है। भारत आने वाली कोई टीम नहीं कहती कि हम भारत को हराएँगे क्योंकि भारत को हराना आसान नहीं है। पर ऐसी आस्ट्रेलिया की तैयारी और ऐसा विश्वास है। वे तेज गेंदबाज और स्पिनर दोनों ला रहे हैं। ब्रेट ली चोट खाकर बैठ गए हैं तो उनकी जगह दूसरे तेज गेंदबाज ले लिए हैं।

और हमारे बोर्ड ने क्या किया है? दुनिया जानती है कि हमारे पिचों पर हमारे स्पिनर हमें जिताते हैं और इस वक्त सिर्फ एक ही धुरंधर स्पिनर हमारे पास थे—अनिल कुम्बले। उन्हीं की गेंदबाजी पिछली बार काम आई थी। चार महीने पहले मालूम पड़ गया था कि कुम्बले के दाहिने कंधे में अन्दर चोट है। लेकिन बोर्ड ने कोई तैयारी नहीं की कि वे आस्ट्रेलिया के खिलाफ खेलने को फिट और तैयार रहें। पिछले महीने दक्षिण अफ्रीका में उनका ऑपरेशन हुआ और वे हाथ लटकाए दुख मनाते घूम रहे हैं। क्यों उनकी चिन्ता नहीं की गई? क्योंकि अपने बोर्ड के हिसाब से कुम्बले का कन्धा कुम्बले की जिम्मेदारी है। यह कि देश के एकमात्र सफल स्पिनर हैं और इसलिए उनका कन्धा राष्ट्रीय जिम्मेदारी है—ऐसा बोर्ड नहीं मानता। वैसे भी बल्लेबाजों के स्वर्ग पिचों पर वन डे खेला-खेलाकर हमने अपने स्पिनरों को खत्म कर दिया है। आस्ट्रेलिया के लिए हमारे तेज गेंदबाज श्रीनाथ और जहीर खान कोई चुनौती पेश नहीं कर सकते। हमारी ताकत हमारी स्पिन गेंदबाजी है और बोर्ड उसे मरने दे रहा है। कुम्बले के बिना भारतीय टीम का जीतना कितना मुश्किल होगा इसे सब समझदार जानते हैं। लेकिन हमारे पास दो स्पिनर ऐसे नहीं हैं जिन्हें खेलाया जा सके और जो आस्ट्रेलिया के विकेट चटकाते चले जाएँ। हमारे पास अच्छी बल्लेबाजी है। सचिन तेंदुलकर, राहुल द्रविड़ और सौरभ गांगुली आस्ट्रेलिया के सामने पहाड़ खड़ा कर सकते हैं लेकिन वे भी हमारे सामने पहाड़ खड़ा कर सकते हैं। उनकी फील्डिंग हमसे कई गुना बेहतर है। उनके जीतने की आकांक्षा हमारे खिलाड़ियों से कहीं ज्यादा पक्की और मुखर है। उनका पलड़ा हमारे घर में ही हमसे भारी है।

चूँकि हमारा बोर्ड टीम, खिलाड़ियों और खेल को सर्वोच्च महत्त्व नहीं देता और उसके पदाधिकारी लगातार अपने प्रदर्शन को बेहतर करने के उद्यम में लगे नहीं रहते, इसलिए न नीति बनती और फलती है, न बैठकर रणनीति बनती है कि हम कैसे खेलेंगे और जैसा खेलना चाहते हैं वैसी तैयारी कैसे करेंगे। इसलिए हर खिलाड़ी को अपनी और अपने खेल की चिन्ता खुद करनी होती है। जब वह करता है तो उसे स्वार्थी कहा जाता है। आरोप था कि सुनील गावसकर अपने लिए खेलते थे और सचिन की आँखें बल्लेबाजी के सारे विश्व रेकार्ड तोड़ने पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगी हुई है। हम नहीं मानते कि ये हमारे गौरव हैं। टीम कैसे बनेगी? टीम के लिए हर खिलाड़ी कैसे जान देगा? देश के लिए खेलने और मर मिटने की धन्यता कैसे आएगी?

शारजाह में पैसा इकट्ठा करने से तो नहीं होगी।

(11.2.2001)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नासिर हुसैन और बाला साहेब ठाकरे का विकेट

घूम फिरकर इंग्लैंड के क्रिकेट कप्तान नासिर हुसैन उसी विकेट पर आ गए हैं जहाँ शिवसेना प्रमुख बाला साहेब ठाकरे बरसों से बल्लेबाजी कर रहे हैं। ठाकरे साब तो इस विकेट को अब खूब अच्छी तरह से जान गए हैं क्योंकि इसी पर खेलकर साम्प्रदायिक राजनीति में उनने अपनी जगह बनाई है और भले ही भाजपा को साथ लेना पड़ा हो पर मुम्बई और दिल्ली में शिवसेना को सत्ता में पहुँचाया है। लेकिन नासिर हुसैन से इंग्लैंड के गोरे लोग भले ही खुश हो जाएँगे वहाँ रहने वाले पाकिस्तानी और भारतीय मूल के लोग तो नाराज ही होंगे। आप कह सकते हैं कि नासिर हुसैन की इंगलिश क्रिकेट में जगह पक्की तो गोरे लोग ही करवाएँगे क्योंकि लार्ड्स और एमसीसी में उन्हीं की चलती है। लेकिन उपमहाद्वीप के लोगों के चहेते बने बिना नासिर हुसैन की लोकप्रियता बढ़ेगी नहीं। और भले ही वे इंग्लैंड के कप्तान बना दिए गए हों। रहेंगे तो भारतीय ही क्योंकि भारतीय बाप के बेटे को अंग्रेज गोरा नहीं मानते भले ही गोरा रंग उसे अपनी गोरी माँ से मिला हो।

आपको याद होगा कि कुछ साल पहले यह कसौटी बाला साहेब ठाकरे लगाया करते थे। उनका आरोप था कि भारतीय मुसलमान भारतीय नहीं हैं क्योंकि जब पाकिस्तानी टीम भारत आती है तो वे मैच में भारत का नहीं पाकिस्तानी टीम का समर्थन करते हैं और मैदान और उसके बाहर उसी का हौसला बढ़ाते हैं। पाकिस्तानी टीम जीत जाए तो वे मिठाई बाँटते और पटाखे चलाते हैं। लेकिन भारत जीत जाए तो उन्हें साँप सूँघ जाता है और मातम मनाते और ताजिया निकालते घर लौट आते हैं। ठाकरे साब को मुसलमानों का यह कथित रवैया देशद्रोह की मिसाल लगता था और कहा जाता था कि जो मुसलमान पाकिस्तान का समर्थन करने और हौसला बढ़ाने मैदान में आते हैं या घर बैठ के रेडियो पर कमेंट्री सुनते या टीवी पर देखते हैं और भारतीय विकेट गिरने पर बल्लियों उछलते हैं उन्हें पाकिस्तान भेज देना चाहिए। अगर वे भारतीय हैं तो उन्हें भारतीय टीम के साथ होना चाहिए। क्रिकेट में समर्थन राष्ट्रीयता की परीक्षा है जो पाकिस्तानी टीम के साथ हों उन्हें पाकिस्तानी नागरिक मानकर पाकिस्तान भेज देना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसी आधार पर कि पाकिस्तानी टीम भारत खेलते आती है या भारतीय टीम पाकिस्तान खेलने जाती है, तो भारत में साम्प्रदायिक तनाव बहुत बढ़ जाता है। वह खेल नहीं रहता युद्ध हो जाता है। और चूँकि कश्मीर में पाकिस्तान भारत से छाया-युद्ध लड़ ही रहा है इसलिए भारत-पाकिस्तान क्रिकेट बन्द कर देना चाहिए। तीन साल पहले जब पाकिस्तान की टीम भारत आने वाली थी तो शिवसेना ने उसका विरोध किया था। दिल्ली का पिच उखाड़ दिया गया था और शिवसैनिक अपनी वीरता पर बड़े आनन्दित थे। पर भाजपा की सरकार के गृहमन्त्री लालकृष्ण आडवाणी ने मुम्बई जाकर बाला साहेब को मना लिया था और पाकिस्तान का दौरा हुआ था। लेकिन मुम्बई में शिवसैनिक पहले भी एक बार पिच खोद चुके हैं। और सत्ता में होते हुए भी शिवाजी के झंडाबरदार क्रिकेट क्लब ऑफ इंडिया—ब्रेबोर्न स्टेडियम पर हल्ला बोल के बड़े पैमाने पर तोड़फोड़ कर आए थे। अब भी शिवसेना भारत-पाक क्रिकेट के खिलाफ है और इससे समर्थित राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबन्धन की सरकार ने भारत-पाक क्रिकेट पर पाबन्दी लगा रखी है। जिस टूर्नामेंट में और भी दूसरी टीमें भाग ले रही हों उसी में भारत पाकिस्तान से खेल सकता है।

सत्ता में आने से पहले भाजपाई और संघी शिवसैनिकों की तरह ही क्रिकेट मैच में मुसलमानों के पाकिस्तानी टीम के साथ होने को उनमें देशभक्ति न होने की मिसाल बताते थे। जिन कई मामलों में संघ सम्प्रदाय को भारतीय मुसलमानों की भारतीयता में शक रहता है उनमें क्रिकेट भी एक है। शिवसेना संघ सम्प्रदाय की तुलना में जरा ज्यादा भगवी और हिन्दू राष्ट्र की निर्मात्री है और तानाशाही की भी समर्थक है। भाजपा को चूँकि सारे देश में सत्ता में आना है इसलिए वह पन्थनिरपेक्ष लोकतान्त्रिक गणराज्य और उसके संविधान को मजबूरी में मानती है। शिवसेना को ऐसी कोई झिझक नहीं है इसलिए वह खुलेआम क्रिकेट कसौटी लागू करती है और जो मुसलमान पाकिस्तानी टीम के साथ हैं उनकी भारतीय राष्ट्रीयता छीनकर उन्हें पाकिस्तान भेज देना चाहती है। भाजपा शिवसेना को यह खेल करने देना चाहती है क्योंकि वह शिवसेना की तरह नंगी तलवार चलाने और फूहड़ बोली में बोलने की बेशरमी नहीं करना चाहती। हालाँकि भाजपा की मातृ संस्था संघ के नेता बार-बार माँग करते हैं कि भारतीय मुसलमानों को राम और कृष्ण को अपना पुरखा मानकर हज के लिए मक्का मदीना जाने के बजाय भारत में ही तीर्थ यात्रा करनी चाहिए। इसलिए शिवेसना की क्रिकेट कसौटी पर संघ सम्प्रदाय को कोई ऐतराज नहीं होता।

इंग्लैंड में भी क्रिकेट कसौटी लगाने वाले एक सज्जन हुए हैं—लॉर्ड टेबिट। जब वहाँ कंजरवेटिव पार्टी का राज था तो उसकी सरकार में टेबिट साहब मन्त्री हुआ करते थे। ब्रिटेन में कंजरवेटिव पार्टी को दक्षिणपन्थी माना जाता है और वहाँ जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
नक्सलवादी होते हैं वे अकसर इसी पार्टी के समर्थक होते हैं। जिनका नस्लवाद हिटलर छाप होता है वे टोरी पार्टी में भी टिक नहीं पाते। इन लोगों के अलग संगठन और संगठित गुट हैं। इनमें से कभी भी कोई भी एशियन लोगों पर हमले कर देते हैं। ये लोग मानते हैं कि भारतीय उपमहाद्वीप से गए भारतीय, पाकिस्तानी, बांग्लादेशी और श्रीलंकाई और अफ्रीकी देशों से आए काले नीग्रो ही ब्रिटेन की गोरी नस्ल के पतन के कारण हैं। जब तक इन काले, पीले, साँवले लोगों को मारपीट के ब्रिटेन से भगाया नहीं जाएगा तब तक ब्रिटेन फिर महाबली नहीं हो सकता। लॉर्ड टेबिट ऐसे खुले नस्लवादी नहीं हैं। भाजपाइयों की तरह वे भी लोकतान्त्रिक लोकलाज मानते हैं। इसलिए कोई दस साल पहले लॉर्ड टेबिट ने क्रिकेट कसौटी सुझाई थी। उनने कहा था कि जो भी एशियाई लोग क्रिकेट मैच में इंग्लैंड के बजाय अपने मूल देश की टीम का समर्थन करते हैं उनकी वफादारी और नागरिकता सन्देह के घेरे में है। भारतीय उपमहाद्वीप से आए और ब्रिटिश नागरिक हो गए वही लोग ब्रिटिश हैं जो क्रिकेट मैच में इंग्लैंड की टीम का समर्थन करते हैं। लॉर्ड टेबिट की यही कसौटी क्रिकेट कसौटी के नाम से मशहूर और बदनाम हुई लेकिन ब्रिटेन के उदार समाज की तारीफ की जानी चाहिए कि टेबिट साहब की कसौटी आमतौर पर मानी नहीं गई।

लेकिन अब इंग्लैंड टीम के कप्तान नासिर हुसैन यह कसौटी लगाने की बात कर रहे हैं। आप जानते हैं कि वे भारतीय पिता और अंग्रेज माता के बेटे हैं। चेन्नई में जन्मे हैं। जब पाँच बरस के थे तो उनके माता-पिता ने भारत छोड़कर इंग्लैंड में बसना तय किया। नासिर ने इंग्लैंड में ही खेलना सीखा और वहीं की राष्ट्रीय टीम से खेलने का सपना देखते हुए बड़े हुए और खेले। उन्हें आखिर एक बल्लेबाज के नाते इंग्लैंड की टीम में जगह मिली और फिर कप्तान भी बना दिए गए। वे कहते हैं कि वे बच्चे थे तभी से मानते थे कि उनका देश इंग्लैंड जो भी खेल खेले उसमें जीते। क्रिकेट हो, फुटबाल हो, हाकी हो या गोल्फ हो उनकी हमेशा यही इच्छा रही कि इंग्लैंड जीते। लेकिन उन्हें यह देखकर बड़ा दुख होता है कि ब्रिटेन में जन्मे पाकिस्तानी या भारतीय मूल के लड़के अपने देश के बजाय पाकिस्तान और भारतीय टीम का समर्थन करते हैं और इंग्लैंड के खिलाफ इन्हीं देशों के खिलाड़ियों का हौसला बढ़ाते हैं। नासिर हुसैन इंग्लैंड के एक अखबार 'संडे टेलीग्राफ' में हर रविवार को एक कॉलम लिखते हैं। पिछले रविवार के कॉलम में उनने लिखा कि जब पहले टैस्ट में पाकिस्तान के खिलाफ लाड्र्स के मैदान में वे उतरे तो उनने देखा कि हरे पाकिस्तानी कमीज पहने इतने दर्शक वहाँ थे कि इंग्लैंड के गोरे दर्शक तो दिखाई ही नहीं दिए। उनके हरे कमीजों पर पाकिस्तानी खिलाड़ियों के नाम लिखे थे इंग्लैंड के खिलाड़ियों के नहीं। वह नजारा देखकर नासिर हुसैन को जून '99 में इंग्लैंड में हुए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
विश्व कप के एजबेस्टन मैच की याद ताजा हो गई। वह मैच भारत और इंग्लैंड के बीच था और बरमिंघम के उस मैदान पर भारत के समर्थकों की ऐसी भीड़ थी कि उन्हें लगा कि कहीं यह मैच भारत में तो नहीं हो रहा है।

अपने कॉलम में नासिर हुसैन ने यह भी बताया कि पाकिस्तान के खिलाफ पहले टैस्ट के पहले वे इंग्लैंड की टीम के साथ अभ्यास कर रहे थे। कोई सौ दो सौ अंग्रेज लड़के नेट प्रेक्टिस देख रहे थे। जब तक वे रहे शान्ति रही और प्रेक्टिस बराबर चलती रही। फिर पाकिस्तानी मूल के लड़के आए और शोर और हलचल होने लगी। वे नेट के पीछे खड़े हो गए और नासिर हुसैन को खेलते देखकर ताना मारने लगे। ठीक है यहाँ खेल लो लेकिन देखना वकार तुम्हारे डंडे कैसे उड़ाता है। इसी तरह के तानों से वे इंग्लैंड के खिलाड़ियों को चिढ़ाते रहे। नासिर हुसैन को यह व्यवहार खटका। उनने लिखा कि यह चल नहीं सकता। भारत और पाकिस्तान से आए माँ-बाप के ब्रिटेन में पैदा हुए बच्चों का देश इंग्लैंड है। उनके भारतीय उपमहाद्वीप से आए माँ-बाप का व्यवहार फिर भीं समझा जा सकता है। वे वहाँ जन्मे, बड़े हुए और फिर इंग्लैंड आकर बसे। लेकिन जो लड़के-लड़की ब्रिटेन में ही जन्मे हैं और वही उनका देश है उनको तो मालूम होना चाहिए कि उन्हें किसका समर्थन करना है। जो यहाँ जन्मे या मेरी तरह बचपन में ही ब्रिटेन आ गए उन्हें तो इंग्लैंड का ही समर्थन करना चाहिए और उसी के खेलने में अपना भविष्य देखना चाहिए। उन्हें वकार या वसीम की हीरोगिरी करने के बजाय डेरेन गफ और माइकल एथरटन की तरफ देखना चाहिए। ब्रिटेन में पैदा हुए लड़के जैसे-जैसे क्रिकेट में आगे आएँगे और इंग्लैंड की टीम में लिए जाएँगे तो उनका रवैया बदलेगा। उन्हें देखकर ब्रिटेन में बसे भारतीय उपमहाद्वीप के लोगों को भी अपनी वफादारी और रवैया बदलना होगा।

नासिर हुसैन की निराशा और उनका दुख समझा जा सकता है क्योंकि इंग्लैंड की तरफ से खेलते हुए और उसका नेतृत्व करते हुए वे सहज ही भारतीयों और पाकिस्तानियों से समर्थन की उम्मीद रखते होंगे क्योंकि आखिर वे उन्हीं लोगों के समाज के हैं जो भारतीय उपमहाद्वीप से आकर यहाँ बस गए हैं। इंग्लैंड की तरफ से खेलने को तो रणजी-नवानगर के जाम साहेब भी इंग्लैंड की तरफ से टैस्ट खेले हैं। इंग्लैंड में क्रिकेट के आधुनिक अवतार के लिए डब्ल्यूजी ग्रेस के साथ रणजी को भी याद किया जाता है। भारत में तो घरेलू चैम्पियनशिप ही रणजी के नाम पर रणजी ट्रॉफी कहलाती है। रणजी ने अपने भतीजे दलीपसिंह को भारत के बजाय इंग्लैंड की तरफ से खेलने को प्रोत्साहित किया और वे खेले भी। उनके नाम पर भी भारत में दिलीप ट्रॉफी खेली जाती है। नवाब इफ्तिहार अली खाँ यानी नवाब मंसूर अली खाँ के पिता भी इंग्लैंड की तरफ से ही पहले खेले फिर इंग्लैंड में भारत की कप्तानी की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
इन तीनों ने ही इंग्लैंड की तरफ से खेलते हुए अपने पहले टैस्ट में सेंचुरी मारी थी। लेकिन इन तीनों को इसकी जरूरत कभी नहीं पड़ी कि वे ब्रिटेन में बसे भारतीयों को इंग्लैंड का समर्थन करने को कहते। एक तो इनके जमाने में भारतीय मूल के इतने लोग इंग्लैंड में थे ही नहीं कि उनकी उपस्थिति ऐसी भारी पड़ती। फिर तब क्रिकेट में इंग्लैंड की हालत ऐसी खस्ता नहीं थी और अंग्रेजों को अपने खेल में अपनी टीम को खेलते देखने जाने में आनन्द आता था। धीरे-धीरे अंग्रेजों का क्रिकेट में दबदबा भी घटा और मैच देखने में उनकी रुचि भी।

अब हाल यह है कि भारतीय उपमहाद्वीप के मूल के लोग ब्रिटेन में हर कहीं आपको मिल जाएँगे। दुकानें अब ज्यादातर भारतीयों के हाथ में आ गई हैं। व्यापार-व्यवसाय में उनका अच्छा दबदबा है। स्वास्थ्य सेवा लगभग पूरी ही भारतीय और पाकिस्तानी डॉक्टरों के हाथ में है। दूसरी सेवाओं में भी उनकी अच्छी उपस्थिति है। बहुत से लोग वहाँ दो-तीन पीढ़ियों से बसे हैं और ब्रिटेन अब बहुधर्मी, बहुजातीय और बहुभाषी देश लगता है। साँवले एशियाई लोगों के साथ काले अफ्रीकी भी वहाँ कम नहीं हैं। बहुमत तो गोरे अंग्रेजों का ही है लेकिन एशियाई और अफ्रीकी लोगों की उपस्थिति भी अच्छी खासी है। भारतीयों और पाकिस्तानियों के तो वोटों की भी चिन्ता अंग्रेज राजनेताओं को काफी करनी पड़ती है। यह वह ब्रिटेन नहीं है जिसमें रणजी ने क्रिकेट को खेलने का पूर्वी मुहावरा दिया। इस ब्रिटेन की क्रिकेट टीम की कप्तानी नासिर हुसैन को मिल सकती है जो चेन्नई में जन्मे और मुसलमान हैं। नासिर हुसैन को उपमहाद्वीपीय लड़कों की वफादारी समर्थन और उत्साह की चिन्ता इसलिए है कि अगर ब्रिटेन में बसे एशियाई समाज ने इंग्लैंड की टीम के बजाय अपने-अपने मूल देशों की टीमों का समर्थन जारी रखा तो इस समाज के प्रतिभावान खिलाड़ियों को इंगलिश क्रिकेट में प्रोत्साहन नहीं मिलेगा। अंग्रेज अपने क्रिकेट का कायाकल्प करना चाहते हैं और इसके लिए वे उपमहाद्वीप के समाज को बड़े पैमाने पर क्रिकेट में लाना चाहते हैं। इसीलिए नासिर हुसैन को कप्तान बनाया गया। अंग्रेज मानते हैं कि भारतीय उपमहाद्वीप से ब्रिटेन गए लोगों में क्रिकेट के लिए जो जुनून है वह अंग्रेजों में नहीं है। यह जुनून ही वे मानते हैं कि ब्रिटिश क्रिकेट को पुनर्जीवित कर सकता है।

वे नहीं समझते कि क्रिकेट में इंग्लैंड को हराकर इस उपमहाद्वीप के लोगों की सामूहिक और ऐतिहासिक जातीय स्मृति को कितना सन्तोष मिलता है।

ब्रिटेन ने अपने साम्राज्य को क्रिकेट के खेल से जोड़ा था और जहाँ-जहाँ उसने उपनिवेश बनाए वहाँ-वहाँ वह इस खेल को ले गया। ब्रिटिश साम्राज्य ने जो जुलुम ढाए और स्थानीय लोगों को हिकारत से देखा उसका बदला वे लोग क्रिकेट में लेते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। भारतीय उपमहाद्वीप के चारों क्रिकेट खेलने वाले देश के लोग, वेस्टइंडीज के लोग, और तो और आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड और दक्षिण अफ्रीका के गोरे लोगों को भी अंग्रेजों की पिटाई लगाने में मजा आता है। इसलिए ब्रिटेन में जन्मे और भारत कभी न आने वाले भारतीय, पाकिस्तानी, बांग्लादेशी और श्रीलंकाई इंग्लैंड की टीम के साथ नहीं अपने मूल देश की टीम के साथ होते हैं। सामूहिक ऐतिहासिक जातीय स्मृति का खिंचाव आदमी पर बहुत जबरदस्त होता है। अपने भविष्य की चिन्ता में लगे नासिर हुसैन को यह समझ नहीं आएगा। लेकिन यह बाला साहेब ठाकरे को भी कहाँ समझ आता है ?

(3.6.2001)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दक्षिण अफ्रीका में खेलना

दुनिया में शायद ही किसी टीम को विदेशी दौरे पर रवाना होते समय घर में ऐसी विदाई मिली हो जैसी गांगुली की टीम को मिली है। भारतीय अखबारों ने लिखा है कि पन्द्रह खिलाड़ियों की यह टीम कत्लेआम के लिए दक्षिण अफ्रीका भेजी गई है। किसी को भी उम्मीद नहीं है कि भारतीय टीम दक्षिण अफ्रीका को हरा सकती है। यह भी कोई नहीं कहता कि हम उनका डटकर मुकाबला कर सकते हैं। क्रिकेट में जब-तब चमत्कार होते रहते हैं लेकिन निराशा का ऐसा आलम है कि हमसे कोई चमत्कार भी हो सकने की उम्मीद कोई बता नहीं रहा है।

अभी जो टीम गई है उसे वन डे खेलने हैं। दक्षिण अफ्रीका के अलावा तीसरी टीम केन्या की होगी। हमारी टीम में सचिन तेंदुलकर हैं जो वन डे के नम्बर एक ही नहीं महान बल्लेबाज माने जाते हैं। उनके ग्यारह हजार से ज्यादा रन और उन्तीस शतक हैं और वे सौ से अधिक विकेट ले चुके हैं। उनकी टक्कर का बल्लेबाज दक्षिण अफ्रीका क्या, दुनिया क्या, वन डे के खेल में ही नहीं हुआ है। कप्तान गांगुली हैं जो खुद भी वन डे के बेहतरीन खिलाड़ियों में हैं। उनने भी सत्रह शतक मारे हैं। वे और सचिन वन डे की सबसे धुआँधार ओपनिंग जोड़ी है। फिर राहुल द्रविड़ हैं जिनकी गिनती दुनिया के दस प्रमुख बल्लेबाजों में हैं। अनिल कुम्बले हैं–जिनके वन डे में पौने तीन सौ से ज्यादा विकेट हैं। श्रीनाथ भी ढाई सौ से ऊपर विकेट ले चुके हैं। वेंकटेश प्रसाद और आगरकर दोनों के सौ से ज्यादा विकेट हैं। सचिन तेंदुलकर, सौरभ गांगुली और राहुल द्रविड़ जितने रन और शतक बनाने वाला दक्षिण अफ्रीका के पास एक भी बल्लेबाज नहीं है। एलन डोनल्ड और शॉन पौलक जरूर ज्यादा तेज और खतरनाक गेंदबाज हैं। लेकिन बाकी के प्रसाद और आगरकर से कोई बीस नहीं पड़ेंगे। सही है कि दक्षिण अफ्रीका के ग्यारहों खिलाड़ी हमसे बेहतर फील्डिंग करते हैं और सबसे बड़ा फर्क यह है कि वे हमेशा एक टीम की तरह खेलते हैं और हम कभी-कभी ही टीम होकर खेल पाते हैं।

यह भी सही है कि दक्षिण अफ्रीका में खेलना और भारत में खेलना दो बिल्कुल अलग खेल खेलना है। दक्षिण अफ्रीका में मैदान हरे-भरे और घास के गद्दे जैसे होते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। भारत में मैदान ऊबड़-खाबड़ और सख्त होते हैं। दक्षिण अफ्रीकी मैदानों पर फील्डिंग करने, दौड़ने, छलाँग लगाने और फिसलने में मजा आता है। इसलिए वहाँ के बल्लेबाज हों या गेंदबाज सब अच्छे फील्डर होते हैं। अपने यहाँ के मैदानों पर जान लगाकर दौड़ना, छलाँग लगाना और फिसलना हमेशा खतरनाक होता है। इसलिए इनसे परहेज करने वाले खिलाड़ी मामूली फील्डर होते हैं। हम अक्सर अपनी फील्डिंग से मैच हार जाते हैं। दक्षिण अफ्रीका की गेंदबाजी और बल्लेबाजी फेल भी हो जाए तो वे सिर्फ अपनी फील्डिंग से मैच जीत सकते हैं। वन डे के कुल खेल में आस्ट्रेलिया भले ही नम्बर एक टीम हो पर फील्डिंग में तो दक्षिण अफ्रीका दुनिया की सबसे अच्छी टीम है।

फिर यह भी सही है कि हमारे देश के पिचों की तुलना में दक्षिण अफ्रीका के पिच बिल्कुल अलग होते हैं। अपने पिच मटमैले और टूट कर धूल होने वाले होते हैं। उन पर घास शायद ही कभी होती है। गेंद ठप्पा खाने के बाद अपने पिचों पर धीमी पड़ जाती है और घुटनों से ज्यादा नहीं उछलती। मैच के पहले दिन जब पिच के नीचे नरमाई होती है तब भले ही वह तेज गेंदबाजी को कुछ मदद दे दे नहीं तो उस पर स्पिन गेंदबाजी चलती है। स्पिन गेंदबाज अपनी कला में उस्ताद हो तो गेंद को ऐसे घुमा सकता है कि अच्छे से अच्छा बल्लेबाज गच्चा खा जाए हमारे स्पिन गेंदबाज अपने पिचों का अच्छा इस्तेमाल कर लेते हैं। बाहर के शेन वार्न जैसे महान स्पिनर भी आएँ तो बुरी तरह पिट जाते हैं। हमारे पिचों से ठीक विपरीत होते हैं दक्षिण अफ्रीका के पिच। उन पर हमेशा ही घास होती है जो पिच को बाँधकर रखती है।

ये पिच सख्त होते हैं। इन पर गेंद टप्पा खाने के बाद तेज निकलती है और खूब उछलती है। ये पाँच दिन लगातार खेलने पर भी ज्यादा बिगड़ती नहीं। गोलंदाजों के जूतों से ऐसे उखड़ते नहीं कि ऊबड़-खाबड़ चकत्ते पड़ जाएँ। चूँकि इन पिचों पर गेंद तेज आती है और खूब उछलती है इसलिए पीछे के पाँव पर आड़े बल्ले की शॉट ज्यादा खेलनी पड़ती है—जैसे कट, पुल, हुक और स्वीप। चूँकि अपने यहाँ के पिचों पर गेंद धीमी आती है और उछलती भी नहीं इसलिए ड्राइव ज्यादा लगते हैं और बल्लेबाज आगे के पाँव पर खेलते हैं। कवर से लेकर मिड क्रिकेट तक सीधे बल्ले से खेला जा सकता है। गेंद आगे टप्पा खाए तभी उछलती है और उस पर कट, पुल और हुक मारा जा सकता है मगर आराम के साथ। दक्षिण अफ्रीकी पिचों पर समय ज्यादा नहीं मिलता इसलिए कट, पुल, हुक तेजी से खेलने पड़ते हैं। इन पर गेंद स्पिन नहीं होती इसलिए पूरे दिन वहाँ तेज गेंदबाजी होती है। टीम में चार तेज गेंदबाज तो होते ही हैं। जो आलराउंडर होते हैं वे भी मध्यम तेज गेंदबाजी करते हैं। गेंद इंग्लैंड जैसी स्विंग और सीम तो नहीं होती यानी हवा में लहराती और टप्पा खाने के बाद घूमती नहीं है फिर भी घास के कारण फिसलती और कट करती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पिचों में जमीन आसमान के इस फर्क के कारण भारत और दक्षिण अफ्रीका में क्रिकेट का खेल भी भिन्न हो जाता है। दक्षिण अफ्रीका में कोई भी बल्लेबाज टिक कर और जम जाने के बाद निश्चिन्त होकर नहीं खेल सकता। लगातार तेज गेंदबाजी के कारण बल्लेबाज थकता है और उसकी दत्तचित्तता भी टूटती है। जैसे देखिए कि भारत और दक्षिण अफ्रीका में बारह टैस्ट हुए हैं जिनमें से छह उनने जीते हैं दो हमने और चार ड्रा हुए। लेकिन शतक दोनों तरफ से नौ-नौ ही बनी हैं। इनमें से सात भारत में और ग्यारह दक्षिण अफ्रीका में। सबसे ज्यादा शतक—चार अजहर की हैं—जिनमें से तीन भारत में बनी हैं। तीन दक्षिण अफ्रीका के करस्टन की हैं जिनमें दो भारत में बनी हैं। तेंदुलकर ने दोनों शतकें दक्षिण अफ्रीका में बनाई हैं। भारत का का सबसे बड़ा टोटल 410 जोहानीसबर्ग में बना है और दक्षिण अफ्रीका का 521 केपटाउन में। कोई भी टीम छह सौ का स्कोर खड़ा नहीं कर पाई है। पुराने खिलाड़ी और अब कमेंटेटर रॉबिन जैकमन का कहना है कि लारा और तेंदुलकर दोनों दक्षिण अफ्रीका में आकर चले गए लेकिन न तो बड़े स्कोर बना पाए, न लगातार शतक ठोक पाए। हमारे पिच ही ऐसे हैं कि उन पर बल्लेबाजी करना मुश्किल होता है।

इसलिए भारत में या तो धाकड़ बल्लेबाज होता है या धारदार गेंदबाज क्योंकि दोनों को खुलकर अपना-अपना खेल दिखाने का मौका मिलता है। दक्षिण अफ्रीका में एक भी ऐसा बल्लेबाज नहीं है जो खेलने उतरे तो उससे शतक की उम्मीद की जाए। न ऐसा गेंदबाज है जो ज्यादातर विकेट ले जाए। चूँकि वहाँ खेल का स्वभाव ही अलग है इसलिए गेंदबाज थोड़ी-बहुत बल्लेबाजी भी कर लेता है और बल्लेबाज गेंदबाजी भी। टीम में ग्यारह में से सिर्फ एक-दो ऐसे होते हैं जो सिर्फ गेंदबाजी या बल्लेबाजी करते हैं। जैसे अब की टीम में एक डोनल्ड या नितनी या टेलीमॉकस या एडम्स ही बल्लेबाजी नहीं करते। बाकी के ज्यादा खिलाड़ी ऑलराउंडर होते हैं। एक औसत दक्षिण अफ्रीकी टीम में सात ऑलराउंडर होते हैं—भारतीय टीम में दो भी नहीं होते। अपने यहाँ बल्लेबाजी बल्लेबाजों पर और गेंदबाजी गेंदबाजों पर छोड़ी जाती है। दक्षिण अफ्रीकी टीम में पूरा खेल ही टीम का होता है। बिना किसी के शतक बनाए तीन सौ से ज्यादा रन बन जाते हैं और बिना किसी के चार विकेट लिए सामने वाली टीम आउट हो जाती है। पूरी टीम के खेलने के कारण दक्षिण अफ्रीका वन डे की चैम्पियन टीम है वैसी टैस्ट की नहीं। प्रतिभा और कौशल में उसके खिलाड़ी आस्ट्रेलिया की टक्कर के भले न हों पर उनका कुल योग दूसरी टीमों से भारी पड़ता है। हो सकता है उनकी पूरी टीम ने उतनी शतकें न बनाई हों जितनी अकेले सचिन ने बनाई हैं लेकिन वे सब मिलकर भारत से ज्यादा रन बना लेंगे।

खेल में इस बुनियादी फर्क के कारण भारतीय टीम का दक्षिण अफ्रीका में सफल होना मुश्किल हो जाता है। एक तो गेंद तेज और उछाल ऊँची होती है। इसलिए पीछे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
के पाँव पर आड़े बल्ले से ज्यादातर स्ट्रोक खेलने होते हैं। भारतीय पिचों पर जन्मे और पले-पनपे बल्लेबाजों को ऐसी बल्लेबाजी में मुश्किल आती है। अचरज नहीं कि सचिन और द्रविड़ ही ठीक से खेल पाते हैं। अब शिवसुंदर दास भी पीछे के पाँव पर अच्छा खेलते हैं लेकिन देखना पड़ेगा कि अपने पहले दौर पर उनके पाँव जमते हैं या नहीं। ऊँची और शरीर पर तेजी से आती गेंदों को गांगुली ठीक से खेल नहीं पाते। उनके लिए यह दौरा अग्नि-परीक्षा हो सकता है। फिर लगातार तेज गेंदबाजी खेलना भी भारतीयों का स्वभाव नहीं होता क्योंकि भारत के पिचों पर तेज गेंदबाजी के लिए ज्यादा प्रोत्साहन नहीं होता। हमारे बल्लेबाज स्पिन अच्छी खेलते हैं लेकिन वहाँ उन्हें खेलने को ज्यादा स्पिन मिलेगी नहीं। इसलिए हमारी बल्लेबाजी वहाँ सचिन और द्रविड़ पर ही निर्भर करेगी और हर बार इन दो में से किसी एक को जमकर खेलना होगा ही, नहीं तो भारत के लिए ज्यादा उम्मीद नहीं होगी। वन डे में सहवाग और युवराज के लिए भी अग्नि-परीक्षा है। युवराज तो फिर भी उठती हुई गेंद को मार लेते हैं, सहवाग को जल्दी से तकनीक बदलनी होगी।

हम दो स्पिन गेंदबाज ले गए हैं—कुम्बले और हरभजन। एक लेग से गेंद घुमा कर लाता है दूसरा ऑफ से। लेकिन ये जोड़ी भारत, पाकिस्तान, श्रीलंका, बांग्लादेश जैसे उपमहाद्वीपीय देशों में ही चल सकती है। दक्षिण अफ्रीका में तो इनमें से एक ही खेल सकेगा। और उसे भी पिच से कितनी मदद मिलेगी भगवान ही जानता है। हमारी तेज गेंदबाजों के आक्रमण की अगुवाई श्रीनाथ करेंगे जो हैं तो एलन डोनल्ड की तुलना में जवान लेकिन न तो उनके जैसे तेज हैं, न दमदार। वे अक्सर बीच में ही घायल हो जाते हैं या थक जाते हैं। उनका साथ देंगे प्रसाद जो धीमे पड़ गए हैं। तीसरे होंगे आगरकर जो एकाध गेंद सबसे तेज कर देते हैं और कभी एकदम गेंद को उछाल भी देते हैं। लेकिन उनमें भी दमखम ज्यादा नहीं है। चौथे तेज गेंदबाज हैं हरविन्दर सिंह लेकिन उन्हें कितने मौके मिलेंगे कोई नहीं जानता। फिर सबसे बड़ी मुश्किल यह है कि सख्त, तेज और उछाल देने वाले पिचों पर किस लाइन और लेंग्थ पर गेंदबाजी करनी चाहिए इसका अभ्यास और अनुशासन हमारे इन गेंदबाजों को नहीं है। भारत के पिचों की लाइन और लेंग्थ यहाँ काम नहीं आएगी। हमारे गेंदबाजों को जल्दी ही दक्षिण अफ्रीकी पिचों पर कारगर हो सकने वाली लाइन लेंग्थ पकड़नी होगी, नहीं तो वे यों ही पिटते रहेंगे।

इस बार फिटनेस की काफी जाँच के बाद खिलाड़ियों को चुना गया है। फिर भी मान लेना चाहिए कि हमारे खिलाड़ियों की फिटनेस का स्तर दक्षिण अफ्रीकी फिटनेस से नीचा ही होगा। यानी हमारी फील्डिंग उनकी टक्कर की नहीं हो सकेगी। लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि मैदान में हम डब्बे होंगे। सवाल गेंद के पीछे मर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिटने का है। किसी भी हाल में जूझकर बाहर निकलने और जवाबी हमले से बाजी मारकर फिर मीर बनना जरूरी है। क्या यह जज्बा और ऐसी तमन्ना हमारी टीम में है ? इस बात पर रोने की जरूरत नहीं है कि लक्ष्मण टीम में हैं ? वैसे भी वे वन डे के कोई उस्ताद खिलाड़ी नहीं हैं। उन्हें आपको याद होगा गए साल टैस्ट के बाद आस्ट्रेलिया से लौट आना था लेकिन आखिरी टैस्ट में 167 रन की पारी खेलने के कारण रोक लिया गया। वन डे की श्रृंखला में उनसे कुछ बना ही नहीं। इस साल आस्ट्रेलिया के खिलाफ भारत में वन डे में उनकी एक शतक है बस ! जहीर और नेहरा होते तो नए और जवान तेज गेंदबाज हमारी गेंदबाजी को धार देते। लेकिन वन डे में अनुभव भी बहुत कम आता है। खासकर लप्पेबाजी के दस ओवरों में। उसके लिए प्रसाद और कुम्बले ज्यादा काम के हैं। वैसे भी दक्षिण अफ्रीका में पहले पन्द्रह ओवरों में भारतीय पिचों की तरह धुआँधार नहीं किया जा सकता। परिस्थितियाँ सावधानी से खेलने पर मजबूर करती हैं। हमारी टीम दक्षिण अफ्रीकी वातावरण में भी ज्यादा प्रतिभा और कौशलवान है। लेकिन एक तो प्रत्येक खिलाड़ी को वहाँ परिस्थितियों के अनुकूल होना है और फिर टीम की तरह खेलना है। ये दोनों ही शर्तें हम आसानी से नहीं मानते। हमारी मानसिकता कुछ-कुछ अंग्रेजों जैसी हो गई है। हम अपनी ही परिस्थितियों में खुलकर खेलते हैं। बाहर न जमे तो कोशिश भी छोड़ देते हैं। आक्रमणकारी गेंदबाजी न होने के अलावा बाहर अपने खराब प्रदर्शन का यह भी एक बड़ा कारण है। इसकी सम्भावना नहीं है कि सौरभ गांगुली स्वयं उदाहरण बन पाएँगे। उम्मीद अब भी सचिन तेंदुलकर और राहुल द्रविड़ से है। श्रीनाथ और प्रसाद और आगरकर कोई बड़ी चुनौती पेश नहीं कर पाएँगे लेकिन करके दिखाना है कुम्बले और सचिन और सहवाग और युवराज को। स्पिन अब भी दक्षिण अफ्रीका की सबसे बड़ी कमज़ोरी है। फिर भी वे हरभजन को लपेट के मार सकते हैं जैसा कि उनने मुरली को मारा है।

अपन तो भारतीय विशेषज्ञों की तरह आशा छोड़के नहीं बैठे हैं। अपन मानते हैं कि अपनी टीम अब भी दक्षिण अफ्रीका को मजे चखा सकती है। सबसे बड़ी बात अपने में विश्वास होना चाहिए। आस्ट्रेलिया को हमने मारा कि नहीं?

(30.9.2001)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डेनेस को बाहर करके

तीसरा टैस्ट हो तो रहा है लेकिन इसके बाद क्रिकेट का क्या होगा अभी कोई कह नहीं सकता। भारत और दक्षिण अफ्रीका के बोर्डों ने मिलकर क्रिकेट के संचालक संगठन—आईसीसी के नियुक्त किए गए रेफरी माइक डेनेस को बाहर कर दिया है और तीसरा टैस्ट सेंचुरियन पार्क में खेल रहे हैं। आईसीसी यानी अन्तर्राष्ट्रीय क्रिकेट सम्मेलन ने कह दिया है कि यह टैस्ट अधिकृत नहीं माना जाएगा। भारत और दक्षिण अफ्रीका के बोर्डों ने कहा है कि अधिकृत हो या अनधिकृत हम तो खेलेंगे और देखते हैं कि सम्मेलन इसे कैसे मान्य नहीं करेगा।

क्रिकेट में ऐसा पहले कभी नहीं हुआ था। चौबीस साल पहले आस्ट्रेलियाई करोड़पति टीवी मालिक कैरी पैकर ने क्रिकेट प्रतिष्ठान को चुनौती दी थी और अपनी ही विश्व सीरीज चलाई थी। लेकिन तब पूरा क्रिकेट प्रतिष्ठान एक तरफ था और कैरी पैकर दूसरी तरफ। आईसीसी के साथ क्रिकेट खेलने वाले सभी देशों के बोर्ड थे और पैकर के साथ ज्यादातर खिलाड़ी। दो-तीन साल संघर्ष चला। आखिर प्रतिष्ठान को समझौता करना पड़ा। सब खिलाड़ी वापस अपने देश की टीमों में ले लिए गए। पैकर की चैनल नाइन को आस्ट्रेलिया में क्रिकेट दिखाने का एकाधिकार मिला और अधिकृत क्रिकेट फिर प्रतिष्ठान के पास लौट आया।

टैस्ट क्रिकेट तो वैसा ही रहा लेकिन वन डे में पैकर के चलाए रंगीन कपड़े, रात्रि क्रिकेट, सफेद गेंद और दूसरे चलन मंजूर कर लिए गए। खिलाड़ियों की फ़ीस बढ़ गई, उनका रुतबा भी बढ़ गया और वे प्रतिष्ठान के सामने गरीब गऊ बनकर खड़े रहने वाले आज्ञाकारी बालक नहीं रह गए। कुल मिलाकर क्रिकेट वह नहीं रह गया जो पहले हुआ करता था। अब वह टीवी का खेल हो गया और पूरी तरह उसका व्यवसायीकरण हो गया। उसमें आईसीसी और बोर्डों से ज्यादा प्रायोजकों की चलने लगी। बड़ी पूँजी आने से खिलाड़ियों को अच्छा-खासा पैसा मिलने लगा लेकिन उसी के साथ गला काटू होड़, धोखाधड़ी और धन्धेबाजी भी आई। गए साल जिस मैच फिक्सिंग का भंडाफोड़ हुआ वह क्रिकेट में बड़ी पूँजी के आने का नतीजा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभी हम उस भंडाफोड़ की किरमिचियाँ इकट्ठी ही कर रहे थे कि यह एक और संकट फट पड़ा है। पहले तो क्रिकेट में दो अम्पायर ही होते थे और वे दोनों ही मेजबान देश के होते थे और उन्हें मेजबान देश ही मैच में खड़े करता था। फिर मेजबान देश के अम्पायरों पर पक्षपात करने के आरोप लगे और उनके दिए फैसलों पर मेहमान टीम अक्सर नाक-भौं चढ़ाकर असहमति प्रकट करती। और यह तय करना मुश्किल होता गया कि मैच का फैसला सही हुआ है या गलत। तब आईसीसी ने सब देशों से अच्छे अम्पायरों के नाम माँगे। वन डे में तो मेजबान टीम को अम्पायर रखने की छूट मिली पर टैस्ट में तीसरे देश का एक तटस्थ अम्पायर आईसीसी भेजने लगी और एक अम्पायर घरेलू टीम का होने लगा जिसका कि नाम आईसीसी की अम्पायरों की सूची में होता। इन अम्पायरों का अधिकार भी माना जाए और उनकी सत्ता को चुनौती देने वालों को सजा मिले और खेल के दौरान सब खिलाड़ियों का व्यवहार ठीक रहे इसलिए दोनों अम्पायरों और टीवी को देखकर फैसला देने वाले तीसरे अम्पायर के ऊपर एक मैच रेफरी भी बैठाया गया जो आईसीसी के दिए गए नियम और आचारसंहिता के अनुसार फैसले देने को अधिकृत होता है। जरूरी नहीं कि वह शिकायत पर ही निर्णय दे। रेफरी अपनी स्वतन्त्र बुद्धि विवेक का इस्तेमाल करके स्वयं प्रेरित निर्णय भी दे सकता है। अम्पायरों, टीवी टेक्नॉलॉजी और मैच रेफरी की यह व्यवस्था इसीलिए की गई कि अम्पायरों की सत्ता कायम की जा सके, सही फैसले हो सकें और मैच की कुल स्थिति पर कोई निर्णय ले सके। कहने की जरूरत नहीं कि खिलाड़ियों का व्यवहार, टीम की रणनीति और खेल पर बाहरी तत्त्वों का प्रभाव इतना हानिकारक हो गया था कि यह व्यवस्था करनी पड़ी। कुछ महीने बाद टैस्ट के दोनों अम्पायर ही तटस्थ होने लगेंगे, टीवी तकनीक का इस्तेमाल भी बढ़ेगा ताकि गलतियाँ न हों और खेल की न्यायकारी खिलाड़ी भावना अच्छी तरह जम सके। मैच रैफरी को फैसले करने का जो अधिकार और उनके पद को जो सत्ता दी गई है वह इसीलिए कि खेल की आत्मा को बनाए रखा जा सके और खेल को बदनामी से बचाया जा सके। इसलिए अपने फैसले में रेफरी लिखता है कि फलाँ ने ऐसा काम किया जिससे खेल बदनाम हुआ इसलिए उसे यह सजा दी जाती है। खेल के नाम की प्रतिष्ठा रखना रेफरी का खास कर्तव्य है। लेकिन अभी जो संकट खेल पर आया है उसका कारण रेफरी माइक डेनेस के फैसले ही हैं जिनसे खेल की भली आत्मा का औचित्य और उसका सुयश ही खतरे में पड़ गया है। जानकारों ने तो कहा ही है कि डेनेस ने ज्यादती की और नियमों की आत्मा समझने के बजाय उसका शब्द ही बिना सोचे-समझे लागू किया है। लेकिन भारत के करोड़ों क्रिकेट प्रेमियों में अपनी टीम के छह खिलाड़ियों को एक साथ दिए गए अन्यायकारी दंड से ऐसा आक्रोश फैला कि संसद में उनके प्रतिनिधियों ने माँग की कि अगर हम अपनी प्रतिष्ठा के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
साथ नहीं खेल सकते तो टीम को वापस बुला लेनी चाहिए। इनी-गिनी आवाजों को छोड़कर सभी ने माना कि डेनेस के निर्णय भारतीय खिलाड़ियों पर ज्यादती करते हैं और वे अन्याय और रंगभेद से निकले हैं।

आप जानते हैं कि इसी हफ्ते दक्षिण अफ्रीका के समुद्रतटीय शहर पोर्ट एलिजाबेथ में खेले गए दूसरे टैस्ट के आखिरी दिन मैच रेफरी इंग्लैंड के माइक डेनेस ने भारत के चार खिलाड़ियों—सहवाग, शिवसुंदर दास, दीप दास गुप्ता और हरभजन को ज्यादा अपील करने और अम्पायर को धमकाने के आरोप में एक टैस्ट से हटाने और उनकी फीस से पचहत्तर प्रतिशत पैसा जुर्माना लेने की सजा दी। इनमें सहवाग तो बेचारे अपने दूसरे टैस्ट में ही थे और उनकी सजा भी तत्काल लागू होनी थी यानी उन्हें इस सीरीज के तीसरे टैस्ट से ही बाहर बैठना था। सचिन तेंदुलकर को गेंदबाजी करते समय गेंद की सीवन से छेड़खानी करने के आरोप में एक टैस्ट से बाहर बैठने और पचहत्तर प्रतिशत फीस जुर्माने में देने की सजा दी गई। और कप्तान गांगुली को अपने खिलाड़ियों को नियन्त्रित न कर पाने के आरोप में एक टैस्ट और दो वन डे से बाहर बैठने की सजा हुई। ग्यारह खिलाड़ियों की भारतीय टीम के छह खिलाड़ियों को एक साथ सजा हुई जो कि आज तक किसी टीम के साथ नहीं हुआ था। सचिन बारह साल से अन्तर्राष्ट्रीय क्रिकेट खेल रहे हैं। छियासी टैस्ट और 282 वन डे खेल चुके हैं और उनके खिलाफ कभी कोई शिकायत नहीं हुई। वे न सिर्फ दुनिया के सर्वश्रेष्ठ बल्लेबाज हैं, सभी दूर आदर्श खिलाड़ी माने जाते हैं। और बेचारे सौरभ गांगुली तो पिक्चर में ही नहीं थे। वे दूर मिड ऑन या मिड ऑफ में खड़े थे जब क्रीज के पास खड़े फील्डरों ने अपील की। पर उन्हें सबसे कड़ी सजा।

अब आप सच पूछें तो किस्सा यह है कि इस टैस्ट में दक्षिण अफ्रीका के अम्पायर इयन ऑवेल पहली बार खड़े हुए थे। दक्षिण अफ्रीका के कप्तान शॉन पॉलक तेज गेंदबाज हैं। भारत की पहली पारी में उनकी एक गेंद ओपनर दास के बल्ले से लगकर पैड पर लगी। पॉलक बड़े उत्साह और विश्वास से देर तक अपील करते रहे। आखिर अम्पायर हॉवेल ने उन्हें आउट दे दिया। दास ठगे-से खड़े रह गए। बल्ले से लग जाने के बाद कोई एलबीडब्ल्यू नहीं दिया जा सकता लेकिन पॉलक की अपील के दबाव में नौसिखिया हॉवेल गलत निर्णय दे गए। फिर भारत को फॉलोऑन से बचाने वाले लक्ष्मण मैच की तीसरी सुबह शतक की ओर बढ़ रहे थे। पॉलक की लेग स्टम्प से बाहर जाती एक गेंद आगे खेलते लक्ष्मण के बाएँ पैड पर लगी। पॉलक ने जोरदार अपील की और करते रह गए जब तक कि उन्हीं अम्पायर हॉवेल ने लक्ष्मण को भी आउट नहीं दे दिया। ये दोनों उदाहरण किसी को भी समझाने के लिए काफी थे कि उत्साह और विश्वास से दूर तक अपील की जाए तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
अम्पायर हॉवेल दबाव में आते हैं और आउट दे देते हैं। अगर दक्षिण अफ्रीका के कप्तान पॉलक ने दबाव डालने की यह रणनीति अपनाकर मनचाहे निर्णय करवा लिए तो भारतीय फील्डर इस रणनीति का इस्तेमाल क्यों नहीं करें?

दक्षिण अफ्रीका की दूसरी पारी में भारतीय फील्डरों ने हरभजन और कुम्बले की गेंदबाजी पर बल्ले और पैड को लगकर उछली गेंदों को पकड़ कर ऐसी ही अपीलें कीं। इससे बेचारे हॉवेल डिपेनॉर और लांस क्लूजनर को आउट दे बैठे जबकि वे आउट नहीं थे। कॉलिस और पॉलक के बल्लेबाजी करते समय भी ऐसे ही कैचों की दो-तीन अपीलें की गईं पर अम्पायरों ने उन्हें आउट नहीं दिया। सिली पाइंट पर खड़े सहवाग दो बार ऐसे कैच पकड़कर अम्पायर को दिखाने दौड़े थे। अब एक तो सहवाग, दास, विकेट कीपर दासगुप्ता और गेंदबाज हरभजन उत्साही, विश्वासी और लम्बी अपीलें कर रहे थे तो वही कर रहे थे जो दक्षिण अफ्रीकी कप्तान पॉलक ने करके दिखाया था। दूसरे वे बल्लेबाज के ऐन सामने नजदीकी फील्डिंग कर रहे थे जहाँ कैच करने से ज्यादा पकड़ में आ जाते हैं और गेंद पकड़ में आते ही वे अम्पायर को दिखाते हैं। वे गोलंदाज कहीं अधिक नजदीक होते हैं। अब अगर इन पर ज्यादा अपील करने और अम्पायर को दबाव में लाने का आरोप लगता है तो दक्षिण अफ्रीकी कप्तान और तेज गेंदबाज शॉन पॉलक कैसे बच सकते हैं—जिनने उत्साही, विश्वासी और लम्बी अपीलें करके दास और लक्ष्मण को आउट घोषित करवाया जबकि वे दोनों ही आउट नहीं थे। अब अगर सहवाग, दास, दासगुप्ता और हरभजन को दंड दिया जाना है तो पहले पॉलक को दिया जाना चाहिए। पॉलक को साफ छोड़ दें और इन चारों को सख्त सजा दी जाए तो यह सरासर अन्याय और पक्षपात है। न्याय करने बैठाया गया कोई भी रेफरी ऐसा एकतरफा फैसला नहीं दे सकता। और देता है तो उस पर सवाल उठेगा ही और वह स्वीकार्य नहीं होगा। डेनेस ने ध्यान नहीं दिया कि उनके फैसले पर अन्यायी, एकतरफा और पक्षपाती होने का आरोप लगना अनिवार्य होगा।

फिर लीजिए सचिन तेंदुलकर का मामला। उन्हें श्रीनाथ और आगरकर के शुरुआती गेंदबाजी कर लेने के बाद गेंद करने को दी गई। मैदान में पानी गिरा था। पिच की मिट्टी और मैदान की घास गेंद की सीवन पर चिपक जाती है। ऐसी परिस्थितियों में सभी गेंदबाज गेंद साफ करते हैं। तेंदुलकर भी गेंद की सीवन साफ कर रहे थे। नियम कहता है कि ऐसा उन्हें अम्पायर को दिखाकर या अम्पायर से करवाना चाहिए। जाहिर है कि तेंदुलकर ने अम्पायर से नहीं पूछा। लेकिन गेंद की सीवन साफ करते उन्हें कितनी ही बार देखिए और दृश्य कितना ही बड़ा करके देख लीजिए। अगर आपकी नजरें तटस्थ और न्यायप्रिय रेफरी की हैं तो आप नहीं कहेंगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि वे सीवन से छेड़खानी करके उसे ज्यादा घुमाने की धोखाधड़ी में लगे थे। फिर यह भी ध्यान में रखना होगा कि तेंदुलकर नियमित गोलंदाज नहीं हैं और सीम गेंदबाजी तो कभी-कभार ही करते हैं। वे सीवन बिगाड़कर गेंद को अनुचित लाभ लेने या देने वाले नहीं थे। उनने गेंद की सीवन में उंगलियाँ फिराईं तो उन्हें चेताया जा सकता था, डाँट पिलाई जा सकती थी लेकिन उनने ऐसा कुछ नहीं किया था कि उन्हें धोखाधड़ी करने का दंड मिले। दरअसल सचिन ने जो किया वैसा ही होबर्ट, आस्ट्रेलिया में शुरू हुए दूसरे टैस्ट के पहले दिन न्यूजीलैंड के मेकमिलन करते हुए साफ देखे गए और वहाँ के रेफरी जैकी हेड्रिंक्स और डेनेस की आँखें अलग हैं और वे उसी नियम का अलग-अलग अर्थ लगाते हैं। इसी तरह खिलाड़ियों के बरताव पर आज तक किसी रेफरी ने कप्तान को कोई सजा नहीं दी। लेकिन डेनेस ने गांगुली को सबसे सख्त सजा दी। अगर दूसरे रेफरी भी ऐसा ही करते होते तो आस्ट्रेलिया के कप्तान स्टीव वॉ, दक्षिण अफ्रीका के क्रोनिए और न्यूजीलैंड के फ्लेमिंग तो मैचों के बाहर ही बैठे रहते।

सही है कि डेनेस की सजा अपराध से कहीं ज्यादा, एकतरफा और पक्षपाती थी। इसीलिए उसका इतना विरोध हुआ, जनता के गुस्से के सामने भारतीय सरकार और बोर्ड और दक्षिण अफ्रीकी सरकार और बोर्ड को झुकना पड़ा। आईसीसी को अवसर था कि वे डेनेस के किए को समझदारी से ठीक करके खेल को इज्जत के साथ चलने देती लेकिन उसने ठस अफसरशाही दिखाई और भारत की संसद के बाद बोर्ड को कहना पड़ा कि डेनेस रेफरी होंगे तो हम नहीं खेलेंगे। दक्षिण अफ्रीका अपने पर रंगभेद की तोहमत और खेल को रोकने की जिम्मेदारी लेने को तैयार नहीं था। उसने भारत का साथ दिया और दोनों ने मिलकर ऐसी स्थिति बना दी है कि अब आईसीसी को न खाते बनेगा, न उगलते। यह संकट खेल के लिए कई मुश्किलें खड़ी करेगा। लेकिन भारतीय बोर्ड ने पहली बार खिलाड़ियों के साथ खड़े होकर जो एकजुटता दिखाई है, वह अभूतपूर्व है और इससे अपनी टीम बदलेगी।

(25.11.2001)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वीप देशों में शिखर से रसातल

अपनी टीम आजकल वेस्टइंडीज पहुँची हुई है। आप जानते हैं कि वेस्टइंडीज कोई एक देश नहीं है। उत्तर और दक्षिण अमेरिकाओं के बीच अटलांटिक महासागर में बसे द्वीप देशों का समूह है। अंग्रेज इन द्वीपों में अपना राज और क्रिकेट ले गए और क्रिकेट ही इन देशों को एक करता है। इन द्वीपों पर भारतीय मूल के लोगों की भी कोई कमी नहीं है। इन्हें भी अंग्रेज ही गिरमिटिए बनाकर खेती करवाने ले गए थे। जिस विदियाधर सूरजपरसाद नॉयपाल को साहित्य का नोबेल पुरस्कार मिला है, उनके भी बाप-दादे अपने उत्तरप्रदेश के गोरखपुर जिले से खेत मजदूरों की तरह त्रिनिदाद नामक द्वीप में गए थे। नॉयपाल को अंग्रेजी साम्राज्य तो अच्छा लगता है, क्रिकेट के शौकीन वे नहीं हैं। लेकिन वेस्टइंडीज के एक महान बल्लेबाज रोहन कन्हाई उन्हीं की तरह भारतीय मूल के हैं। जिस डॉक्टर ने उनका जनम करवाया उसका नाम रोहन था। वही लड़के का रख दिया गया। पूरा नाम हुआ रोहन बाबूलाल कन्हाई। कन्हाई बना है कन्हैया से। जैसे नॉयपाल बना है नेपाल से और नेपाल नाम इसलिए पड़ा कि यह परिवार नेपाल नाम की सड़क पर रहता था।

एक सोनी रामाधीन भी हो गए हैं जो पचास के दशक में वेस्टइंडीज के लिए ऑफ स्पिन गेंदबाजी किया करते थे। नाटे से बुच्ची नाक के खुशमिजाज खिलाड़ी हुआ करते थे। पूरी बल्कि लम्बी बाँह की कमीज पहनते थे जो उनकी हथेली तक आया करती थी और बल्लेबाज को समझ नहीं पड़ता था कि गेंद इधर से घूमेगी या उधर से। अंग्रेज बल्लेबाज तो पाँव आगे निकालकर पैड से ही गेंद रोक लिया करते थे। रामाधीन ने कहा था कि जब अंग्रेज बल्लेबाज बल्ले के बजाय पाँव का इतना इस्तेमाल करते हैं तो अचरज नहीं कि वे फुटबॉल का विश्व कप जीत गए हैं। रामाधीन की काले वेलेंटाइन के साथ जोड़ी जमती थी जो बाएँ हाथ से लेग स्पिन किया करते थे। उनके लिए एक केलिप्सो गाना बन गया था—दो हैं ये यार मेरे एक जोड़ी के—रामाधीन और वेलेंटाइन। फिर वहाँ एक कालीचरण भी हुए जो वेस्टइंडीज के कप्तान होकर भारत आए थे। आल्विन कालीचरण—ठिगने-से बाएँ हाथ के शानदार बल्लेबाज। जब वेस्टइंडीज के धाकड़ और तूफानी खिलाड़ी केरी पैकर के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पैसों के लालच में अपनी टीम छोड़कर चले गए तो कप्तानी कालीचरण ने सँभाली। बाद में वे सब खिलाड़ी लौट आए और टीम में जम गए। कालीचरण को लगा होगा कि वे नाहक ठगे गए। तो कुछ साल बाद वे पैसे के लिए रंगभेदी दक्षिण अफ्रीका खेलने चले गए। वेस्टइंडीज बोर्ड उनसे ऐसा नाराज हुआ कि कालीचरण ने उसके लिए खेलना ही छोड़ दिया। आस्ट्रेलियाई कैरी पैकर का पैसा उतना खराब नहीं था जितना रंगभेदी दक्षिण अफ्रीका का।

वेस्टइंडीज क्रिकेट अपने ढंग का धूमधड़ाके का खेल रहा है। सन् साठ तक वह ऐसे शानदार खिलाड़ियों का झुंड था जो गेंद का चमड़ा उधेड़ देने में माहिर थे। फिर एक सच्चे खिलाड़ी फ्रैंक वॉरेल ने उन्हें आस्ट्रेलिया के दौरे पर टीम में गढ़ा और उस टीम ने क्रिकेट में क्रान्ति कर दी। ये वॉरेल तीन डब्लुओं की तिकड़ी—वीक्स, वॉरेल और वॉलकॉट के सबसे अनुशासित खिलाड़ी थे। शान और खूबसूरती से बल्लेबाजी करते थे और उनकी उपस्थिति में ऐसा लगता था कि मैदान बित्तेभर ऊपर उठ गया हो। वीक्स और वॉलकॉट सन् अड़तालीस में पहली बार भारत आने वाली वेस्टइंडीज टीम में थे और अपनी बालक आँखों को उन्हें खेलते देखने का सौभाग्य प्राप्त है। वॉरेल बाद में कॉमनवेल्थ टीमों के साथ और एक बार कप्तान बनकर भी आए। लेकिन महान वेस्टइंडियन खिलाड़ियों को भारत के दर्शक पहले भी देख चुके थे। लेरी कांस्टंटाइन और रॉन हेडली राजा—महाराजाओं के जमाने में अपने यहाँ आकर खेल चुके हैं। डॉन ब्रेडमेन कभी भारत आकर नहीं खेले। इंग्लैंड के हॉब्स, हेमंड, हटन आदि भी भारत आने से इनकार करते रहे। लेकिन वेस्टइंडीज के महान खिलाड़ियों को भारत आकर खेलने से कभी परहेज नहीं रहा। सर गैरी सोबर्स, रोहन कन्हाई, रिचड्र्स और लारा सभी भारत आकर चमके। रोहन कन्हाई की बल्लेबाजी का तो ऐसा जादू था कि सुनील गावसकर ने अपने क्रिकेट खिलाड़ी बेटे का नाम उन्हीं के नाम पर रोहन रखा। और जब तेरह साल पहले सचिन ने पाकिस्तान के महान लेग स्पिनर अब्दुल कादिर की एक ओवर में सत्ताईस रन की धुलाई कर दी तो कादिर ने कहा कि बच्चा रोहन कन्हाई की तरह खेलता है। भारत में टैस्ट की किसी पारी में सबसे ज्यादा रन 256 कन्हाई ने ही सन अट्ठावन में कलकत्ता में बनाए थे। उसी मैदान पर आस्ट्रेलिया के खिलाफ 281 रन बनाकर लक्ष्मण ने वह रेकार्ड तोड़ा। भारत में जो लोकप्रियता सोबर्स को मिली वैसी ही वेस्टइंडीज में अपने गावसकर को मिली हुई है। जिन बरसों में वेस्टइंडीज ने विश्व क्रिकेट पर राज किया उनमें उसके खिलाफ सबसे ज्यादा रन और शतक बनाने वाले गावसकर ही हैं। इसलिए वेस्टइंडीज वाले उन्हें अपने समय का सबसे बड़ा बल्लेबाज मानते हैं, बाकी दुनिया भले ही रिचड्र्स को मानती हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्टीव वॉ भले ही अपनी आस्ट्रेलियाई टीम को क्रिकेट इतिहास की सबसे महान टीम मानते हों, वे याद नहीं रखते कि उनकी टीम भारत और श्रीलंका दोनों से पिटी है। जबकि क्लाइव लॉयड की वेस्टइंडीज टीम घर हो या बाहर चक्रवर्ती टीम की तरह जीतती थी। मजाल है उसके सामने कोई अड़ जाए। जैसे तूफानी गेंदबाज एक साथ लॉयड की टीम में से कहर ढाते रहे वैसे तेज गेंदबाज दुनिया की किसी टीम में कभी नहीं रहे। डॉन ब्रेडमन सार्वकालिक महान बल्लेबाज जरूर हैं, लेकिन क्रिकेट-इतिहास के सबसे बड़े खिलाड़ी तो गैरी सोबर्स हैं। आठ हजार से ज्यादा रन, दो सौ पैंतीस से ज्यादा विकेट, सौ से ज्यादा कैच और कप्तानी, क्या नहीं है जो सोबर्स ने किया न हो। ग्रीनिज, हेन्स, रिचर्ड्स, लॉयड और लारा जैसे बल्लेबाज—होल्डिंग, रॉबर्ट्स, गार्नर, वाल्श, मार्शल और एमब्रोस जैसे तूफानी गेंदबाज किस टीम में एक साथ रहे हों। गोरे अंग्रेजों के साम्राज्यवादी कहे जाने वाले क्रिकेट पर जैसा काला वर्चस्व वेस्टइंडीज ने कायम किया था वैसा तो कोई टीम और देश कभी कर नहीं सका। काले और नीग्रो होने की श्रेष्ठता का गर्व अगर किसी ने दिखाया तो वह वेस्टइंडीज क्रिकेट ने। इसलिए अब उन्हें रसातल में पड़े देखना क्रिकेट-प्रेमियों के लिए सचमुच त्रासदायी है। श्रीलंका और पाकिस्तान के खिलाफ वेस्टइंडीज की टीम कितनी दयनीय और रेत के ढेर की तरह लगती थी। लारा अब भी कभी-कभी वेस्टइंडीजी बल्लेबाजी की झलक दिखा देते हैं, नहीं तो उसमें एक बल्लेबाज नहीं है तो उस काली तलवार का चमत्कार कर सकता हो। इसी टीम में अब भी कल तक कोर्टनी वाल्श थे जिनने पहली बार पाँच सौ से ज्यादा टैस्ट विकेट लिये और लारा अभी हैं जो एक टैस्ट पारी में 275 रन और प्रथम श्रेणी क्रिकेट में 501 रन की रेकार्ड पारियाँ खेल चुके हैं। लारा न हों और चन्द्रपाल और सरवन भी न हों तो वेस्टइंडीज की टीम किसी गुलाम क्लब की टीम लगती है।

वेस्टइंडीज क्रिकेट के इस पतन के कई कारण बताए जाते हैं। कहते हैं जो लम्बे-तगड़े लड़के पहले क्रिकेट खेलने आते थे, वे अब बॉस्केटबाल खेलने लगे हैं। उन्हें अमेरिका और वहाँ के डॉलरों का बड़ा आकर्षण है। वैसे भी बॉस्केटबाल में जितना पैसा है उतना क्रिकेट में तो कहीं है नहीं। भारत में भी नहीं जहाँ क्रिकेट में सबसे ज्यादा पैसा है। वेस्टइंडीज के कैरिबियाई द्वीप देश वैसे भी बहुत गरीब हैं। रोजी-रोटी के लिए भी बाहर जाने की मजबूरी होती है। पहले भी जो क्रिकेट अच्छा खेलते थे इंग्लैंड जाकर काम करते और खेलते थे। सर फ्रैंक वॉरेल भी इंग्लैंड में क्लब क्रिकेट खेल के रोजी कमाते थे। वॉरेल ने जब वेस्टइंडीज क्रिकेट को दर्शनीय ताकत बना दिया तब इंग्लैंड की सब काउंटियों ने विदेशी खिलाड़ियों के लिए अपनी टीमें खोल दीं। सारे वेस्टइंडीज खिलाड़ी वहीं जाकर खेलने लगे। उनका घरेलू क्रिकेट पहले वीरान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और फिर बंजर हो गया। नए खिलाड़ियों का आना रुक गया तो पुराने घोड़े दौड़ाते रहे। जब वे थककर बाहर बैठ गए तो नई प्रतिभाएँ उनकी जगह नहीं आईं। क्रिकेट इंग्लैंड का भी बरबाद हुआ है लेकिन जो हालत वेस्टइंडीज की हुई है वह तो भगवान किसी खेल की न करे। लेकिन इसका अकेला कारण पैसा, बॉस्केटबाल और सॉकर ही नहीं हैं। जब कैरिबियाई द्वीपों में अंग्रेजों ने क्रिकेट चलाया तब वे दुनिया की सबसे बड़ी ताकत हुआ करते थे। उन्हीं का सबसे बड़ा साम्राज्य था और वही वर्चस्व का खेल चलाते थे। दूसरे विश्वयुद्ध के बाद अमेरिका और रूस में दुनिया बँट गई। इंग्लैंड छोटा और फिर पिछलग्गू देश बनकर रह गया। उसका संसार गौरव का संसार नहीं रहा। धीरे-धीरे अंग्रेजों में भी अपने होने का गर्व नहीं रहा और अब टोनी ब्लेयर जैसे जवान प्रधानमन्त्री अमेरिकी राष्ट्रपति के सन्देशवाहक होने में ही धन्य हो रहे हैं। जिस साम्राज्य के अंग होकर कैरिबियाई द्वीप देशों में क्रिकेट के जरिए अपनी पहचान बनाने और अपनी ताकत दिखाने का रास्ता पकड़ा था वह साम्राज्य ही अब अतीत की याद हो गया है। आज की दुनिया में अमेरिका की चलती है और उस अमेरिकी संसार में पैर जमाने के लिए बॉस्केटबाल, बेसबाल और सॉकर जैसे खेल ज्यादा लुभावने हो गए हैं। वैसे भी ये द्वीप देश अमेरिका की छाया में हैं और ऐसी हालत में आप उसके चाकर ही हो सकते हैं।

कैरिबियाई द्वीपों को क्रिकेट बाँधता था, एक सामूहिक पहचान देता था और अपने होने का गर्व देता था। दुनिया बदल गई तो वहाँ का क्रिकेट भी रसातल में चला गया है। उसे उबारने में पुराने महान खिलाड़ी तो लगे ही हैं, भारतीय मूल के समाज में से भी लोग निकलकर आ रहे हैं। अभी जिन बीस-पच्चीस खिलाड़ियों को कैंप में लिया गया है, उनमें छह भारतीय मूल के हैं। चन्द्रपाल, सरवन, दीनानाथ, रामनारायण, महेन्द्र नागभट्ट, डेरेन गंगा—भारत के लोगों में से निकले नए खिलाड़ी हैं। इनमें चन्द्रपाल तो एक बार इतने अच्छे बल्लेबाज माने जाते थे कि कहने वाले कहते थे कि होंगे लारा दुनिया के सबसे अच्छे बल्लेबाज, वेस्टइंडीज के सबसे अच्छे बल्लेबाज तो चन्द्रपाल हैं। फिर चन्द्रपाल चोट खाने लगे। बाहर बैठने लगे और उनका खेल मामूली होने लगा। दिखने में अब भी भारतीय युवकों जैसे कमजोर लगते हैं। वहाँ के सबसे होनहार बल्लेबाज सरवन माने जाते हैं। सरवन यानी—अरुण कुमार। उनकी तकनीक सबसे पुख्ता और मिजाज सबसे दुरुस्त है। लारा के बाद अब टीम का दारोमदार सरवन पर ही माना जाता है। पर वहाँ भी फितरत देखिए। सोनी रामाधीन स्पिनर थे, दीनानाथ और नागभट्ट भी स्पिनर हैं। भारतीय मूल का एक तूफानी गेंदबाज वेस्टइंडीज में भी नहीं निकला। भारतीय मूल के राजनेता वहाँ प्रधानमन्त्री हो गए। लेकिन दनदनाते गोले बरसाने वाला एक भी तेज गोलंदाज पैदा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं हुआ। अपने यहाँ भी भूला-भटका ही कोई तेज गेंदबाज बनता है जबकि कैरिबियाई क्रिकेट की खास ताकत उसके तेज गेंदबाज ही रहे हैं। भारतीय क्रिकेट का आक्रमण स्पिनरों के हाथ रहा है, वेस्टइंडीज के स्पिनर भी ज्यादातर भारतीय मूल के हैं। पहले नारा का बड़ा दबदबा था और दुनिया के सर्वश्रेष्ठ बल्लेबाज वही माने जाते थे। सचिन तेंदुलकर ने वह विवाद भी समाप्त कर दिया। टीमें चूँकि अब दोनों की बोदी हैं इसलिए ध्यान और आनन्द की प्रतिद्वन्द्विता लारा और सचिन की हो गई है। क्या करें ?

सचिन और लारा की प्रतिद्वन्द्विता कुछ ऐसी ही भड़काई जा रही है जैसी सचिन और वार्न की बनाई गई थी। टीम के दो खिलाड़ियों को इस तरह भिड़ा कर बाजार दर्शकों में विशेष रुचि पैदा करता है। कतई जरूरी नहीं कि वे खिलाड़ी एक दूसरे से भिड़ने को ही मैदान में उतरते हों। अब तक जिन दो शृंखलाओं में लारा और सचिन आमने-सामने खेले हैं सचिन का पलड़ा भारी रहा है। लारा टैस्ट में एक पारी का सबसे बड़ा स्कोर और प्रथम श्रेणी के सबसे बड़े स्कोर बनाने वाले बल्लेबाज हैं। लेकिन सचिन लारा से कहीं अधिक हमेशा अच्छा खेलने वाले खिलाड़ी साबित हुए हैं। टैस्ट और वन डे दोनों में सचिन के शतक और रन लारा से ज्यादा हैं। सचिन सभी टीमों के खिलाफ समान रूप से बेहतर खेले हैं। लारा का रेकार्ड कहीं आकाश तो कहीं रसातल में है। सही है कि सचिन को वेस्टइंडीज में वेस्टइंडीज के विरुद्ध शतकें अभी बनानी हैं। पिछली बार वे दो बार चूके। लारा को भी भारत के खिलाफ अपना जोर साबित करना है। इसलिए दोनों के प्रदर्शन को बड़े गौर और उम्मीद से देखा जाएगा। पर ये दोनों ही ऐसे खिलाड़ी नहीं हैं जो एक-दूसरे से होड़ करें। लारा कह चुके हैं, कि उस पिच पर खेलना मजेदार होगा जिस पर सचिन भी खेल रहे हों, हालाँकि लारा कह चुके हैं कि सचिन दुनिया के सर्वश्रेष्ठ बल्लेबाज हैं।

(7.4.2002)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत-पाक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हारने के डर से कतराता पाकिस्तान

अब फिर सवाल है कि पाकिस्तान आएगा या नहीं। उसके बोर्ड के मन्त्री और कोषाध्यक्ष ने दुबई में संकेत दिए कि सुरक्षा कारणों से पाकिस्तान को भारत दौरा रद्द करना पड़ सकता है। बोर्ड ने अपने बोर्ड को कुछ नहीं लिखा है इसलिए ये लोग मानकर चल रहे हैं कि पाकिस्तान अपना वचन निभाएगा। लेकिन यह तो सरकारी रवैया है। पाकिस्तान पहले भी दो बार हाँ करके ऐन मौके पर मुकर चुका है। और इस बार भी मुकर जाएगा ऐसा लोगों को मन-ही-मन लग रहा है। लेकिन चूँकि उसके बोर्ड ने अधिकृत रूप से कुछ नहीं कहा है इसलिए अपने बोर्ड वाले भी अधिकृत मुद्रा प्रतीक्षा की बनाए हुए हैं। अधिकृत के भीतर अपन ने झाँक कर देखा तो कहा गया कि हम तय कर चुके हैं। जब तक पाकिस्तान यहाँ खेलने नहीं आएगा तब तक हम सिवाय विश्व कप के उसके साथ कहीं नहीं खेलेंगे। यानी वे मसाला मैच भी नहीं जो पैसे उगाने और कमाने के लिए बाहर खेले जाते हैं।

क्रिकेट में भावनाओं का जैसा उबाल भारत और पाकिस्तान के बीच आता है वैसा और किन्हीं दो टीमों के बीच नहीं आता। ताजा मिसाल है पिछले महीने लन्दन में खेले गए मैच की। वह चैरिटी मैच था। इमरान खान अपनी स्वर्गीय माता की याद में जो कैंसर अस्पताल बनवा रहे हैं उसके लिए पैसा उगाने के वास्ते। हमारे संदीप ने कहा कि पता नहीं कितना पैसा चाहिए इमरान को। जहाँ देखो झोली फैलाए खड़े रहते हैं। पाकिस्तान के एक खिलाड़ी ने कुछ इसी तरह की बात कही थी। रिटायर होने के बाद भी इमरान पाकिस्तानी क्रिकेट के सत्तारूढ़ तानाशाह हैं। उन्होंने वसीम अकरम को कप्तान और वकार युनूस को उपकप्तान बनवा कर सलीम मलिक को टीम से निकलवा दिया और जावेद मियाँदाद को उनकी जगह बता दी। पाकिस्तान में जैसी जरूरत इमरान को है पैसे की वैसी भारत में है सुनील गावसकर को। लन्दन में जो मैच हुआ वह इमरान और गावसकर ने मिलकर कराया था। उसमें पाकिस्तानी दर्शकों ने हंगामा करके मैच पूरा नहीं होने दिया। हिन्दुस्तानियों के हाथ से छीनकर तिरंगा जला दिया। इसलिए कि पाकिस्तानी खिलाड़ियों की टीम हार रही थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक चैरिटी मैच में दो देशों के खिलाड़ियों की टीमों में पाकिस्तानी खिलाड़ियों की टीम हारने लगे तो यह भी पाकिस्तानी दर्शकों को बरदाश्त नहीं हो सकता। भारत से हारने का ऐसा डर पाकिस्तानियों के मन में समाया हुआ है। और कोई भी पराजय पाकिस्तानियों को वैसी खौफनाक नहीं लगती जैसी भारत से। लेकिन भारत को भी पाकिस्तान से हारना जितना शर्मनाक लगता है उतना और किसी से भी हारना नहीं लगता। भारत और भारतीयों ने तो हार-जीत बहुत देखी है क्योंकि दुनिया के सबसे पुराने देशों में हमारी गिनती है। पाकिस्तान को बने जुम्मा-जुम्मा छियालीस साल हुए हैं। इसमें तीन बार वह हमसे लड़ चुका है। दो लड़ाइयाँ कमोबेश ड्रा हुईं यानी हार-जीत के आखिरी फैसले के बिना खत्म हुईं। तीसरी लड़ाई में जरूर पाकिस्तान बुरी तरह हारा और तब से वह खेल में भारत से हारना बरदाश्त नहीं कर सकता। क्यों? क्या इसलिए कि पाकिस्तानियों को डर है कि हारे तो खत्म हो जाएँगे?

ऐसा कोई खेल नहीं है कि जिसमें हार-जीत न होती हों। लेकिन खेल में हारने-जीतने का बुरा-भला नहीं माना जाता। ऐसा नहीं कि प्रतिद्वन्द्विता में मन खट्टा न होता हो और दूसरे देशों में खटकती ही न हो। इंग्लैंड और आस्ट्रेलिया तथा आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड के बीच क्रिकेट मैचों में तनाव हमेशा ही रहता है। फिर भी हालत वैसी कभी नहीं होती जैसी भारत और पाकिस्तान के मैच में होती है। मैच क्या सरासर युद्ध होता है। यानी खेलने वालों की होती हो या नहीं देखने और सुनने वाले भारतीयों और पाकिस्तानियों की हालत ऐसी पतली होती है कि वे इंसान नहीं बारूद के ढेर हो जाते हैं जिनमें छोटी भी चिनगारी पड़े तो भयंकर विस्फोट होता है। गए साल सिडनी में चार मार्च को विश्व कप के भारत-पाकिस्तान मैच में दर्शक कोई बहुत ज्यादा नहीं थे। लेकिन उस स्टेडियम के एक अनुभवी प्रबन्धक ने मुझे कहा कि इतने कम लोगों को इतना ज्यादा शोर मचाते मैंने कभी नहीं सुना। दूसरे दिन ही वहीं आस्ट्रेलिया और इंग्लैंड का मैच भी अपन ने देखा। क्रिकेट में इन दोनों की प्रतिद्वन्द्विता भी दुश्मनी से थोड़ी ही कम है। उस मैच में दर्शक कई गुना ज्यादा थे पर शोर कई गुना कम था। सिडनी में आस्ट्रेलियाई दर्शकों की खास कर इंग्लैंड के खिलाफ कभी हो भी नहीं सकती। फिर भी शोर और तनाव भारत-पाकिस्तान मैच जैसा नहीं था। या ऐसा मुझे लगा? आखिर पाकिस्तान के खिलाफ मैच में दर्शक मैं भी कहाँ रह पाता हूँ। भारत-पाकिस्तान मैच में खिलाड़ियों से ज्यादा तो दर्शक भिड़े और पिले पड़े रहते हैं।

इसीलिए तो भारत-पाकिस्तान के बीच क्रिकेट कभी क्रिकेट रहा ही नहीं। युद्ध में जिस तरह लड़ने वालों का जोर जीतने से ज्यादा पराजित न होने पर रहता है वैसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही हमारी टीमें हार टालने में लगी रहती हैं। भारत और पाकिस्तान के बीच सबसे ज्यादा मैच ड्रा हुए हैं। खेल के नाते वे बहुत ही साधारण मैच होते हैं लेकिन उनमें असली खेल भावनाओं का होता है। नसें तारों की तरह तनी होती हैं और उनमें जाने कितने वाल्ट की बिजली दौड़ती रहती है। क्रिकेट मैच को युद्ध में खेल नहीं परिवर्तित करता। इतिहास और ऐतिहासिक स्मृतियाँ करती हैं। पाकिस्तानी खिलाड़ी हों या दर्शक वे अपने को घोड़े पर दनदनाते आते मध्ययुगीन हमलावरों में बदल लेते हैं। किस्से बने हुए हैं कि मुट्ठी-भर इसलामी हमलावर आए और काफिरों की लम्बी-चौड़ी फौज को देखते-देखते हरा गए। पाकिस्तानियों को लगता है कि क्रिकेट मैच भी उन्हें वैसे ही जीत जाना चाहिए। जब वे पाते हैं कि जीतना मुश्किल है तो हार को टालने में लग जाते हैं। न टले तो वैसा ही करते हैं जैसा लन्दन के क्रिस्टल पार्क में इकतीस अगस्त की रात को किया।

मैंने कहा कि भारत से हारने का डर पाकिस्तानियों के मन में कहीं बहुत गहरे बैठा हुआ है। यह डर कोई छियालीस साल पुराना नहीं है। यानी इसकी जड़ें इतिहास में सैकड़ों साल पीछे जाती हैं और कई मील गहरी हैं—जब पाकिस्तान नाम का देश और पाकिस्तानी पहचान का कहीं नामोनिशान नहीं था। मुसलिम इतिहासकारों ने लिखा है कि इसलामी हमलावर कितनी आसानी से जीतते रहे और हमारे संघ परिवारी कहते हैं कि हजार साल हम उनके गुलाम रहे। अगर यह सच है तो पाकिस्तानियों के मन में जीत का सहज आत्मविश्वास होना चाहिए। बल्कि अपनी जीत की अनिवार्यता में उनका अडिग विश्वास होना चाहिए। जो हजार साल तक जीतते रहे हों और जिन्होंने राज किया हो उन्हें अपने जीतने की सम्भावना इतनी कम क्यों लगती है? खेल में हारना तो कोई हारना होता ही नहीं। फिर एक लड़ाई में भी हारना कोई युद्ध में हारना नहीं है। और युद्ध में हारना भी ऐसी कोई स्थायी और अन्तिम हार नहीं है कि उसके बाद के जीवन और उसमें विजय की आशा ही न रहे। हारने वाले देश जीते हैं और जीतने वाले देश हारे हैं। लेकिन आप पाएँगे कि पाकिस्तानियों को भारत से हारना ऐसा लगता है जैसे उसके बाद वे बचेंगे ही नहीं।

इसका कारण तो यह कहा जाता है कि पाकिस्तान का नकारात्मक अस्तित्व है। यानी अपने होने का औचित्य और प्रमाण वह अपने अन्दर से अपने आप नहीं पाता। उसे एक भारत चाहिए जिसके खिलाफ वह पाकिस्तान बना रह सके। भारत अगर न हो तो पाकिस्तान हो ही नहीं। पाकिस्तान भारत से निकलकर बना है। लेकिन यह निकलना ऐसा अन्तिम और पूर्ण नहीं हुआ कि पाकिस्तान अपने आपमें सम्पूर्ण हो जाए। उसे डर है कि या तो वह भारत में फिर मिल जाएगा या भारत उसे जीतकर अपने में मिला लेगा। भारत का हौआ न हो तो वह बिखर जाएगा जैसे बिना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रस्सी के लकड़ियाँ बिखर जाती है। भारत पाकिस्तान को एक रखने वाली ताकत है। लेकिन यह ताकत उसके लिए सकारात्मक नहीं है। भारत का डर उसे एक बनाए हुए है।

ऐसा डर आप बांग्लादेशियों में नहीं पाएँगे हालाँकि बाईस साल पहले तक वे भी पाकिस्तानी थे। छियालीस साल पहले वे भी भारत से अलग होकर पाकिस्तानी बने थे और बाईस साल पहले पाकिस्तान से भी अलग होकर बांग्लादेशी हुए। बांग्लादेशियों और हमारे बंगालियों में बड़ी समानता है। भाषा और संस्कृति की ही नहीं, स्वभाव की भी। फिर भी आप पाएँगे कि उन्हें बंगाली पंचांग अपनाने में कोई झिझक नहीं हुई। रवीन्द्रनाथ का लिखा गीत उनका राष्ट्रगीत है। उन्हें अपने को भारतीय बंगालियों से अलग बताने की वैसी जरूरत नहीं होती जैसी पाकिस्तानियों को होती है। पाकिस्तानियों को लगता है कि भारत के लिए अगर वे थोड़ा भी दरवाजा खोलेंगे तो वह ऐसे आकर बैठ जाएगा कि पाकिस्तान रहेगा ही नहीं। इसलिए भारत के अखबारों, भारतीय किताबों, फिल्मों, पत्रिकाओं सब पर पाबन्दी। दोनों में मेलजोल कम-से-कम। जितना भी लेना-देना है सरकार-से-सरकार के अमानवीय स्तर पर। पाकिस्तान के हुक्मरानों को ही नहीं वहाँ के लोगों को भी लगता है कि एक तरह की सक्रिय दुश्मनी भारत से बनाए रखना जरूरी है। कश्मीर न हो तो वे कश्मीर जैसी कोई नई समस्या खड़ी कर लेंगे। भारत से सम्बन्ध सामान्य होना पाकिस्तान को अपने अस्तित्व के लिए घातक लगता है। जो देश और जो लोग अपने को हमेशा तनाव की ऐसी अप्राकृतिक स्थिति में रखना चाहते हों उनकी मानसिकता पर तरस ही खाया जा सकता है। पाकिस्तानियों में भारत को लेकर जो अति आक्रामकता दिखाई देती है वह ताकत या अपनी ताकत का अविश्वास नहीं है। वह दरअसल ताकत की कमी और अपने कमजोर होने का डर है।

क्या भारत में भी पाकिस्तान को लेकर ऐसा डर है? सब लोगों में हो या न हो उन लोगों में तो है ही जो हुआ-हुआ जैसा हल्ला मचाकर कहते रहते हैं कि हिन्दू नहीं जागे तो पाकिस्तान भारत को निगल जाएगा। एक दूसरे स्तर पर यह डर भारत में मुसलमानों की जनसंख्या को लेकर भड़काया जाता है कि उनमें चार शादियाँ न रोकी गईं तो दस-बीस साल में इतने मुसलमान हो जाएँगे कि हिन्दू अपने ही देश में अल्पसंख्यक रह जाएँगे। चार औरतें चार अलग आदमियों से शादी करेंगी तो ज्यादा बच्चे होंगे या एक आदमी चार पत्नियाँ रखेगा तो ज्यादा बच्चे होंगे? लेकिन जिस देश में बयासी प्रतिशत हिन्दू हों और बारह-चौदह प्रतिशत मुसलमान वहाँ क्या हिन्दू कभी अल्पसंख्यक हो सकते हैं? लेकिन आप पाएँगे कि ऐसी बातें फैलाई जाती हैं और कुछ लोग हैं जो इन पर विश्वास कर लेते हैं। डर के बिना ऐसी बातें चलाई और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानी नहीं जा सकतीं। भारतीयों का यह डर भी उसी पाकिस्तानी मानसिकता में से निकला है, जिसने पाकिस्तान बनवाया और जो उसे एक स्वस्थ देश की तरह जीने नहीं देता।

लेकिन सभी ऐतिहासिक जातीय स्मृतियों की जड़ें ऐसे पारम्परिक भय में नहीं हैं। ये स्मृतियाँ मुठभेड़ों और लगातार चलते युद्धों की हैं। ये स्मृतियाँ ऐसे लोगों की हैं जो एक दूसरे से पराजय को शर्मनाक मानते रहे हैं और इसलिए पराजय को टालने में लगे रहते हैं। यह कहना गलत होगा कि ये स्मृतियाँ हमलावरों और हमले झेलने वालों की ही हैं। नहीं, इनमें हिन्दू-मुसलमान की भावना भी है। लेकिन यह मानना भी गलत है कि ये स्मृतियाँ सिर्फ हिन्दू-मुसलमान संघर्ष की हैं। आखिर हिन्दुओं और मुसलमानों के मेलजोल और हेलमेल की प्रक्रिया भी चलती ही रही है। संगीत, कला, साहित्य ही नहीं समाज, अर्थ व्यापार और राजनीति में भी इसके अनेकानेक उदाहरण हैं। भारत में इसलाम आखिर भारतीय इसलाम है और भारतीय मुसलमान चरित्र और स्वभाव से भारतीय हैं। पाकिस्तान इस भारतीयता को धोने या खरोंचकर निकाल फेंकने में लगा है। इसीलिए वह इतना कृत्रिम और असंगत हो जाता है। बांग्लादेशी इस तरह की फिजूल कोशिश में नहीं लगे रहते इसलिए उन्हें अपना बंगालीपन सहज स्वीकार्य है अपनी स्वाभाविक पहचान की तरह। पाकिस्तान की अपने को अभारतीय बनाने की वह कोशिश भारत के कुछ लोगों में तीव्र प्रतिक्रिया पैदा करती है खासकर उन लोगों में जो पंजाब और सिन्ध से विभाजन के पहले या विभाजन को भुगत कर आए हैं। इनकी मानसिकता में और भारत में रहने वाले मुसलमानों अल्पसंख्यकों की मानसिकता में ज्यादा फर्क नहीं है। ये एक-दूसरे के खिलाफ प्रतिक्रिया में पड़े रहते हैं और एक तरह का सामूहिक उन्माद पैदा करने की कोशिश करते हैं। इन लोगों के होते जातीय स्मृतियाँ बीच-बीच में बड़ी तीव्रता से जागती हैं।

इसलिए जैसा व्यवहार पाकिस्तानी दर्शक करते हैं वैसा ही बरताव भारतीय दर्शक करने लगते हैं। प्रतिक्रिया में पैदा होने वाले इस उन्माद को सबसे ज्यादा भुनाया है शारजाह में बुखारित और आसिफ़ इकबाल ने। शारजाह में सारी कमाई भारत-पाकिस्तान मैच में ही होती है। अगर भारत न खेले तो शारजाह में क्रिकेट भरभराकर बैठ जाए। अकेला भारत या अकेला पाकिस्तान खेले तो बुखातिर ने क्रिकेट के नाम पर जो धन्धा चला रखा है वह घाटे का सौदा हो जाए इसलिए भारतीय खिलाड़ियों को खूब पैसा देकर खेलने बुलाया जाता है। चूँकि पैसा और इलेक्ट्रॉनिक सामान का लालच काफी बड़ा होता है इसलिए हमारे खिलाड़ी वहाँ अपमानजनक स्थितियों में भी खेलने को तैयार हो जाते हैं। चूँकि पाकिस्तानी भारत से हारना कतई पसन्द नहीं करते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसलिए इसका इन्तजाम किया जाता है कि किसी तरह पाकिस्तान जीते। दो साल पहले यह नाटक इतना खुला हो गया कि भारत के शारजाह में खेलने का अपने यहाँ बड़ा विरोध हुआ। फिर भी बोर्ड ने फैसला नहीं किया कि भारत शारजाह नहीं जाएगा। उसे विश्वास नहीं था कि उसके खिलाड़ी लालच में नहीं पड़ेंगे। या अपने और राष्ट्र के गौरव को पेट्रो डॉलर से ऊँचा मानेंगे। लेकिन लन्दन के क्रिस्टल पार्क की शर्मनाक घटना ने बोर्ड को कुछ ताकत और सही कारण दिए हैं और इसलिए खिलाड़ियों से कहा गया है कि वे ऐसे मसाला मैचों में भाग न लें। इसी से यह निश्चय भी निकला है कि जब तक पाकिस्तान पहले भारत नहीं आएगा भारत की टीम उससे नहीं खेलेगी। भारत और पाकिस्तान के बीच क्रिकेट न हो तो यह खेल के लिए अच्छा ही है क्योंकि क्रिकेट तो वह वैसे भी होता ही नहीं है। पाकिस्तान भारत से हारने से इतना डरता है तो बैठे अपने घर।

(26.9.93)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो ब्याहों की नई दास्तान

दोनों की शादियों में सिर्फ एक समानता है। उनकी सासों का नाम अनाबेल है। लेकिन नाम के अलावा सासों में भी कोई समानता नहीं है। एक अंग्रेज है और पता नहीं प्रोटैस्टेंट है या रोमन कैथोलिक और उसने एक गुजराती भारतीय हिन्दू आनन्द मेहता से शादी की और उनकी लड़की हुई अंजलि। हिन्दू से शादी करने के लिए और करने के बाद धर्म तो नहीं बदलना पड़ता इसलिए अनाबेल मेहता का क्या धर्म है अपन नहीं जानते।

दूसरी अनाबेल यहूदी है और उसने शादी की है अंग्रेज सर जेम्स गोल्डस्मिथ से। दोनों की बेटी का नाम है जेमिमा। पता नहीं यहूदी अनाबेल को ईसाई गोल्डस्मिथ से विवाह करने के लिए धर्म बदलना पड़ा या नहीं। ब्रिटेन के अखबार वैसे तो बहुत उत्तेजित हैं और अनाप-शनाप लिख रहे हैं लेकिन कहीं उन्होंने जेमिमा की माँ का धर्म या उसके धर्म-परिवर्तन का जिक्र नहीं किया है।

लेकिन सासों का नाम छोड़ दें तो बाईस बरस के सचिन तेंदुलकर और बयालीस के इमरान खान की शादियों में कोई समानता नहीं मिलती। इमरान खान की जेमिमा से शादी ने सनसनी, विवाद, हंगामा और जाने क्या-क्या मचा रखा है। ब्रिटेन की टेबलाइड प्रेस अंग्रेजों के नस्लीय पूर्वग्रह से प्रेरित धूमधड़ाका मचाए हुए है। वहाँ के उच्चवर्ग ने शादी को चर्चा और मिर्च-मसाले के साथ स्वीकार कर लिया है। लेकिन वहाँ के आम लोग जेमिमा के भविष्य पर बड़े चिन्तित लग रहे हैं हालाँकि वे इस विवाह को कांड यानी स्कैंडल ही मान रहे हैं।

इसके विपरीत सचिन तेंदुलकर की शादी में पूरा देश जैसे आशीर्वाद देता शामिल हो गया है। अंजलि हालाँकि सचिन से कोई पाँच साल बड़ी है और उम्र में इतनी बड़ी लड़की से शादी करना अपने यहाँ आमतौर पर मान्य नहीं है और अच्छा भी नहीं माना जाता। लेकिन इस पर कोई विवाद या एतराज कहीं दिखता नहीं।

फिर सचिन ने सिर्फ बारहवीं तक पढ़ाई की है। छोटी-सी उम्र में इतने बड़े खिलाड़ी हो गए कि पढ़ने का कोई मतलब नहीं रहा और टाइम भी नहीं मिलता था इसलिए पढ़ना छोड़ दिया। लेकिन अंजलि ने डॉक्टरी पढ़ी। बाल रोग विशेषज्ञ है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
और एमडी कर रही है। अपने यहाँ आमतौर पर नहीं होता कि लड़का इतना कम पढ़ा हो और लड़की इतनी पढ़ी-लिखी। फिर भी इस पर कोई सवाल नहीं उठता क्योंकि सचिन दुनिया के सबसे धाकड़ बल्लेबाज हैं और खेल में अगर कोई डिग्री मिलती हो तो सचिन डॉक्टरेट-वाक्टरेट सब कर चुके हैं।

उम्र और पढ़ाई के इस अन्तर के बावजूद सचिन की अंजलि से शादी पर पूरे देश ने पीले चावल डाल दिए हैं। बम्बई में क्रिकेट खेलने वाले हमारे पप्पू प्रसाद सिंह का कहना है कि ऐसी भी क्या कोई शादी हुई होगी कि जिसका निमन्त्रण पाने के लिए लोगों ने चिट्ठियाँ लिखीं और फिर भी नहीं मिला। लोग सचमुच तेंदुलकर परिवार के पीछे पड़े थे कि ब्याह वानखेड़े स्टेडियम में होना चाहिए और उसमें आने के लिए सभी निमन्त्रित होने चाहिए।

लेकिन यह जो सचिन तेंदुलकर है वह है तो सिर्फ बाईस बरस का पर बहुत प्राइवेट और पारिवारिक प्राणी है। उसका परिवार भी अपने सबसे छोटे बेटे के यशस्वी और धुरन्धर होने के फोकटी रुतबे में नहीं है। मध्य वर्ग का परिवार है। पिता रमेश तेंदुलकर प्राध्यापकी से रिटायर हुए। मराठी के कवि-लेखक-आलोचक हैं। माँ एलआईसी में अब भी काम करती हैं। सबसे बड़ा भाई नितिन एयर इंडिया में परसर है यानी चालक दल का एक कर्मचारी। बहन सविता पुणे में रहती है और विवाहित है। और दूसरा भाई अजित भी एयर इंडिया में छोटी-मोटी नौकरी करता है।

सचिन इस नौकरीपेशा मध्यवर्गीय परिवार का सबसे छोटा लड़का है और कोई साढ़े पाँच साल से भारत के लिए खेल रहा है। और कोई यों ही नहीं खेल रहा है। चमत्कारी बालक की तरह आया और सारी दुनिया में क्रिकेट का सबसे छोटा और सबसे धुरंधर बल्लेबाज माना गया। कहते हैं सचिन की वार्षिक कमाई कोई दो करोड़ रुपए है। और प्रसिद्धि और यश देखा जाए तो अनमोल है। फिर भी इस शोहरत और दौलत से न तो सचिन का भेजा फटा है, न तेंदुलकर परिवार भाव खाता है। उसे अपने सचिन पर गर्व है और सचिन भी अपने परिवार को ही अपनी ताकत मानता है। इस शादी से पहले इस परिवार के किसी सदस्य ने प्रेस से कोई बात नहीं की। सचिन भी प्रेस और टीवी से बात करने में कतराता है।

ऐसे सचिन और उसके परिवार ने लग्न पारिवारियों के बीच और महाराष्ट्रीय पद्धति से ही करना तय किया। उनके लिए यह निजी और पारिवारिक मांगलिक अवसर था और लाख दबाव के बावजूद उन्होंने इसे सार्वकालिक महोत्सव बनाने से इन्कार कर दिया। अपनेपन और अपनी औकात में रहना सचिन और तेंदुलकर परिवार की आन्तरिक शक्ति, व्यक्तिमत्ता और अपनी संस्कृति में गहरी जड़ों का सहज विश्वास बताता है। बम्बई में कई शादियों के लाखों के तो मंडप ही बन जाते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं लेकिन उनमें जाने के लिए निमन्त्रण पाने के वास्ते कोई आवेदन लिखकर नहीं भेजता। आशीर्वाद समारोह हुआ और भव्य ही हुआ लेकिन लग्न तो निजी और पारिवारिक मामला ही रहा।

इमरान खान नियाजी की जेमिमा से शादी का ऐलान किया गया तो लन्दन में सनसनी फैल गई। बयालीस बरस के इमरान पहले तो शादी से पल्ला झाड़ते रहे। बल्कि कुछ ऐसा बताते रहे कि कौन पड़े इस पचड़े में। क्रिकेट खिलाड़ी तो वे महान माने गए और कई बार रिटायर होने के बाद आखिर सन् बानवे में पाकिस्तान को विश्व कप जिताकर रिटायर भी हो गए। लेकिन साथ ही वे लेडी किलर भी कहे जाते थे। पठान हैं। लम्बे, सुते हुए, कसे हुए बदन के ऐसे सुन्दर आदमी है जिन्हें देखते ही लड़कियाँ दिल लुटा देती हैं।

इमरान भी दिल फेंक रहे हैं क्योंकि ब्रिटेन के टेबलाइड अखबार ही नहीं पाकिस्तान की नियन्त्रित प्रेस भी उनकी माशूकाओं के किस्से छापती रही है। बल्कि ब्रिटेन के एक अखबार ने तो छापा भी कि सिता नाम की एक बहनजी से तो उनकी एक सन्तान भी है। उनके इश्क और उनकी माशूकाओं के किस्से ब्रिटेन और पाकिस्तान में ही नहीं, जहाँ भी वे खेलने जाते, चल निकलते थे। दबी जबान से यार लोग कहते कि जब कोई इतनी और ऐसी रंगरेलियाँ मनाता फिरता है तो शादी की जरूरत क्या।

ब्रिटेन की परिमिसिव सोसाइटी में मुक्त प्रेम और मुक्त यौन के लिए काफी गुंजाइश रहती है। फिर इमरान तो पश्चिमी पंजाब के सामन्ती पठान परिवार में जन्मे और पले पनपे। क्रिकेट कोई उनके मन का खेल नहीं था। पर उनके परिवार में क्रिकेट वैसे ही खेला जाता था जैसे ब्रिटिश राज में भारत में राजा-महाराजाओं के परिवार में। उनके परिवार के सात लोग प्रथम श्रेणी क्रिकेट खेले और दो चचेरे भाई माजिद खान और जावेद बर्की तो पाकिस्तान के कप्तान भी हुए। इसलिए इमरान भी खेलने लगे।

जब वे साढ़े अठारह बरस के थे तो इंग्लैंड के दौरे पर ले जाए गए। पहला टैस्ट खेलने के बाद वहीं स्कूल में पढ़ने लगे और फिर ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में पहुँच गए। ऑक्सफोर्ड और वूस्टरशायर की तरफ से काउंटी भी खेलने लगे। लेकिन इतना खेलते हुए भी और पाकिस्तानी क्रिकेट पर उनके परिवार का पव्वा होते हुए भी टैस्ट टीम में उनकी स्थायी जगह नहीं बनी। छिहत्तर-सतत्तर में वे तूफानी गेंदबाज हुए। पैकर सर्कस ने उन्हें दुनिया के बड़े ऑलराउंडरों में एक बना दिया। यानी अपने को पूरी तरह क्रिकेट को देने और उसमें नाम कमाने में इमरान को छह साल लगे। तब वे पच्चीस-छब्बीस के हो चुके थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामन्ती धनी परिवार, पठानी परम्परा, ऑक्सफोर्ड की पढ़ाई और क्रिकेट के खेल ने उन्हें ब्रिटेन के उस सामन्ती समाज से जोड़ दिया जिसे आर्थिक सुरक्षा और प्रतिष्ठा तो है लेकिन वह राजनीतिक सत्ता नहीं है जो पाकिस्तान में उनके जैसे पठान परिवारों के पास है। राज चलाने की जिम्मेदारियों से दूर यह समाज फैशन, विलासिता और मौजमस्ती का जीवन जीता है। ब्रिटेन में इमरान खान इस समाज के सहज स्वाभाविक सदस्य हो गए। उनके लिए खेलना, मौजमस्ती करना, इश्क लड़ाना, शिकार करना आदि जीवन शैली के शगल हो गए। वे क्रिकेट में शमशीरधारी योद्धा बन गए। पाकिस्तान में तो उनका रौब-दाब था ही ब्रिटेन की हाई सोसाइटी भी उन्हें अपना मानने लगी।

कप्तानी में इमरान की प्रतिभा सचमुच निखरी और पाकिस्तान क्रिकेट ने उनकी तानाशाही प्रवृत्तियों को सकारात्मक अभिव्यक्ति के अवसर भी दिए। जितनी छूट और जितनी सत्ता कप्तान के नाते इमरान को मिली उतनी किसी देश के किसी कप्तान को नहीं मिली होगी। इमरान ने कई खिलाड़ियों के कैरियर चौपट किए लेकिन कई लड़कों को धूल से उठाकर हीरा भी बना दिया। होने को तो बोथम, कपिल और हैडली उनकी टक्कर के ऑल राउंडर थे लेकिन इमरान इन चारों में कप्तान सबसे बड़े थे।

कप्तानी की यह हटूटी इमरान को अपनी सामन्ती पठानी परम्परा से सहज ही मिली होगी। नेतृत्व की इस सहज-स्वाभाविक प्रवृत्ति ने उन्हें ऐसा करिश्मा भी दिया जो बोथम, कपिल और हैडली जैसे महान खिलाड़ियों में भी नहीं था। यही करिश्मा इमरान के दूसरे काम भी आया और महिलाओं में अपनी लोकप्रियता का उन्होंने भरपूर आनन्द उठाया। वे जन्म से ही मानो यह विश्वास लेकर आए थे कि दुनिया में अपनी जगह बनी हुई है और उससे अपने को कोई बेदखल नहीं कर सकता। अपने सात खून माफ हैं और अपन चाहें जो भी कर गुजरें पकड़े नहीं जाएँगे।

कहते हैं कि इमरान जब इंग्लैंड में पढ़ रहे थे तो उनकी माँ ने उनसे कहा था कि गोरी मेम से शादी करके मत आना। शायद इसलिए वे गोरी मेमों के साथ रंगरेलियाँ करते रहे, पर ब्याह नहीं किया। फिर कैंसर में उनकी माँ का निधन हो गया और इमरान ने तय किया कि वे पाकिस्तान में ऐसा आधुनिक कैंसर अस्पताल बनवाएँगे कि लोग इस रोग से बचाए जा सकें। इसके लिए पैसा जुटाने के वास्ते वे फिर क्रिकेट खेलने लगे। यूरोप की हाई सोसाइटी को भी चैरिटी के काम करना अच्छा लगता है। कई लोग इमरान के मददगार हो गए।

फिर बानवे के विश्वकप में इमरान ने सचमुच पाकिस्तान को विश्वविजेता बना दिया। पर वे अपनी टीम को भूल गए, कैंसर अस्पताल याद रहा। सब तरफ से उन पर यश और धन की बौछार हुई और इमरान को विश्वास हो गया कि वे उस शिखर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
पर आखिर पहुंच गए हैं जहाँ से रिटायर हो सकते हैं। हो गए। और अस्पताल बनाने में लग गए। उनकी शोहरत और पाक सेना और राजनीति में उनके रिश्तेदार और दोस्तों ने उन्हें पाकिस्तान में क्रिकेट से बड़े इलाके में अपनी जगह बनाने पर ललचाया। पाकिस्तानी राजनीति में उनके जैसा आदमी कट्टरपन्थी इसलामी रास्ते से ही आ सकता है।

इसी राजनीति के दबावों ने इमरान को पठानी सूट पहनने, पाकिस्तान में पश्चिमी जीवन पद्धति को कोसने, जवानों से अंग्रेजी पढ़ने लेकिन अंग्रेज न होने आदि की बातें कहना सिखाया। धीरे-धीरे वे कट्टरपन्थी इसलामी जबान में बोलने लगे और इसलाम को ईसाइयत से बेहतर और पश्चिमी जीवन पद्धति को घटिया बताने लगे। इससे ब्रिटेन में वे और भी विवादास्पद हो गए। लेकिन वहाँ के समाज में विवाद मशहूर होने के लिए अच्छे उपाय मान लिए गए हैं।

इमरान ने विवाह और महिलाओं के रोल पर भी अपने ऐसे विचार प्रकट करने शुरू किए जो ब्रिटेन में उनके जीवन से तो ठीक उलट थे लेकिन पाकिस्तान के कट्टरपन्थी मजहबी माहौल में बिलकुल फिट बैठते थे। इमरान ने कहा कि महिलाओं की जगह घर में है। उन्हें घर चलाना चाहिए और बच्चे उछेरने चाहिए। इसी रौ में उन्होंने कहा कि वे एक अच्छी मुसलमान और सलवार-कमीज पहनने वाली पाकिस्तानी लड़की से शादी कर सकते हैं। ब्रिटेन में माना गया कि यह सब वे अपना राजनीतिक कैरियर बनाने के लिए कर रहे हैं।

इसलिए जब अपनी सभी नई-पुरानी देसी-विदेशी माशूकाओं को छोड़कर उन्होंने अपने से इक्कीस साल छोटी यहूदी माँ लेकिन करोड़पति अंग्रेज पिता की सुन्दर लड़की से शादी की घोषणा की तो लन्दन में तहलका मच गया। जेमिमा रईस घराने की आजाद शहजादी है और मौज मजे का जीवन जीती है। ऐसी लड़की के इसलाम कबूल करने और पाकिस्तान में परदे में रहने और कैदी जैसा जीवन बिताने की सम्भावना से अंग्रेजी समाज और अखबार त्राहि-त्राहि करने लगे। पाकिस्तानियों, इसलाम और एशियाई समाज के प्रति उनके सारे पूर्वग्रह जैसे इस एक शादी से प्रकट होने लगे। भविष्यवाणियाँ हो गईं कि यह शादी टिकने की नहीं। लेकिन इमरान और जेमिमा जैसे इस विवाद और पब्लिसिटी का मजा ले रहे हैं। स्कैंडल में जैसे उन्हें भी आनन्द आ रहा है।

सचिन इमरान के उलट-व्यक्ति हैं। अपने नौकरीपेशा मध्यवर्गीय महाराष्ट्रीय परिवार में उन्होंने पूरे समर्पण के साथ अपने लक्ष्य पर लगे रहना सीखा है। सचिन बारह-तेरह साल के थे तब से आठ से बारह घंटे क्रिकेट का अभ्यास करते रहे हैं। जैसे अर्जुन को चिड़िया की सिर्फ आँख दिखती थी वैसे सचिन को सिर्फ गेंद दिखती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। मोहिन्दर अमरनाथ क्रिकेट खेलने पर टीवी सीरियल बना रहे थे तब उनने बालक सचिन से भी बात की थी। पूछा था—कोई महत्त्वाकांक्षा है? "बस सर, यह कि अच्छा खेलता रहूँ। अच्छा खेलता रहूँगा तो बाकी सब तो अपने आप आएगा ही।" सचिन खेलते रहे और बाकी सचमुच आ ही गया। छप्पर फाड़कर आया।

पन्द्रह साल के भी नहीं हुए थे जब विनोद काम्बली के साथ मिलकर 664 रन बना डाले जो कि क्रिकेट इतिहास की सबसे बड़ी भागेदारी है। इसमें सचिन 326 पर नाबाद थे। टैस्ट में चूक गए पर रणजी, दिलीप, ईरानी आदि ट्राफियों के पहले ही मैच में शतकें ठोकी। न्यूज़ीलैंड में जब खेल रहे थे तो सर रिचर्ड हैडली ने कहा कि यह उम्र स्कूल में क्रिकेट सीखने की है, टैस्ट क्रिकेट खेलने की नहीं। सचिन तब शतक से बारह रनों से चूक गए नहीं तो टैस्ट में सेंचुरी मारनेवाले वे सबसे छोटे खिलाड़ी हो जाते। सत्रह साल के थे तब इंग्लैंड में पहली शतक बनाई। अब तक आठ टैस्ट शतक और फटाफट क्रिकेट में पाँच शतकें मार चुके हैं। ऐसा कुछ नहीं जो उनसे बच जाएगा। बार्डर कह चुके हैं कि एक सचिन ही उनसे ज्यादा (11000 से ज्यादा) रन बना सकते हैं।

यह अद्‌भुत प्रतिभा तो है ही पूर्ण समर्पण और दत्तचित्तता भी है। क्रिकेट के अलावा सचिन का किसी में मन नहीं लगता। अब अंजिल में लग रहा है लेकिन वह भी उन्हें क्रिकेट से हटा नहीं सकती। प्रेम सम्बन्ध तीन साल से चल रहा था और एक साल पहले मंगनी हुई। लेकिन 94-95 का क्रिकेट साल सचिन का अब तक का सबसे शानदार वर्ष रहा है।

वरली मुम्बई में समुद्र किनारे खिलाड़ियों की एक बहुमंजिला इमारत है जिसमें गावसकर समेत कई मशहूर खिलाड़ी रहते हैं। बाईस बरस के सचिन से कहा गया है कि इस इमारत की छत पर वे अपना पैंट हाउस बना लें। पता नहीं, पूर्वी ब्रांदा के छोटे से फ्लैट में रहने वाले तेंदुलकर परिवार के बालक को पैंट हाउस में रहना जँचेगा या नहीं। लेकिन इतना जरूर है कि वह हवा में उड़ेगा नहीं।

इमरान खान के लिए क्रिकेट और शादी का जो मतलब है वह सचिन तेंदुलकर के लिए कभी हो नहीं सकता। सामन्तशाही पतनशीलता और मध्यवर्गीय संघर्षशीलता में चारित्रिक और बुनियादी अन्तर है।

(8.5.95)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकटे कोई भीषण प्रतिभा

केबल टीवी से तब मुझे इतनी चिढ़ थी।

कोने का घर है ना तो वे सड़क पर अपनी वैन खड़ी करके पूछने आए थे कि क्या हम आपके स्विच बोर्ड से बिजली लेकर जरा टैस्ट कर लें। क्या टैस्ट करेंगे ? कॉलोनी में केबल लगा रहे हैं। गुस्से में ऐसा बिफरा कि उन्हें भगाने लगा। वह तो मुनमुन ने रोका। क्या पापा, जरा-सी बात के लिए अनजान लोगों पर बिगड़ रहे हैं। उन्हें जो करना था वे करके चले गए।

फिर जब आस्ट्रेलिया में विश्व कप शुरू हुआ तो पप्पू ने केबल लगवा लिया। कोई नौ साल पहले टीवी भी उसी के कारण लेना पड़ा था। तब इंग्लैंड में विश्व कप हो रहा था और वह माता के पीछे पड़ गया। किश्तों में ब्लैक एंड व्हाइट टीवी लिया जो अब भी रखा है। उसमें सब लम्बे दिखते हैं। तब लगता था कि रंगीन टीवी क्या लेना। जो मजा ब्लैक एंड व्हाइट में है वह रंगीन में कहाँ।

फिर रंगीन टीवी आया, केबल आया, वीसीआर आया और घर में अनेक गटरगंगाएँ बहने लगीं। फिर एक दिन भेनजी ने कहा आप ही डूबे रहते हो इस गटरगंगा में। हम तो नहीं देखते। सचमुच अपन ही ज्यादातर समय और वह भी रात का, टीवी के सामने गुजार रहे थे। धीरे-धीरे वीसीआर का चलना कम हुआ और अब तो कभी-कभार ही कोई उसे चलाता है। केबल का चस्का भी अब उतर रहा है। पन्द्रह चैनल आने लगी हैं। अक्सर तो एक के बाद दूसरी पर टप्पे खाते रहते हैं। और फिर खीज कर बन्द कर देते हैं।

रविवार की एक दोपहर देखा कि कोई पाँच चैनलों पर फिल्में चल रही थीं। कुछ पर फिल्मों के गाने। बीबीसी, और प्राइम स्पोर्ट्स पर ही गैर फिल्मी कार्यक्रम थे। पर दूर से भी सुनता हूँ तो लगता है कि ये बीबीसी वाले सभी एक जैसी आवाज में बोलते हैं। एशिया और अफ्रीका के बारे में उनके कार्यक्रम काले लोगों की हिंसा, भुखमरी, अकाल और फटेहाली पर होते हैं। यूरोप के जीवन की जो समझ और उसके प्रति जो सहानुभूति वे दिखाते हैं वह एशिया और अफ्रीका पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नदारद रहती है। इच्छा नहीं होती कि कहूँ कि यह नस्लीय पूर्वग्रह है। लेकिन वह नहीं है तो क्या है?

बीबीसी की कार्यकुशलता, तटस्थता और निष्पक्षता की धारणाओं में अगर आप पले पनपे हैं तो अब उसके टीवी को दिन-रात घर में देख और समझकर उसके प्रति वही सम्मान नहीं रख सकते जो पहले था। पहला झटका बाबरी मस्जिद के ध्वंस के उसके कवरेज से लगा। जो भाषा उसने इस्तेमाल की वह संघ परिवारियों, अकालियों और बुखारियों की थी। यानी वहाँ जो भी हुआ वह हिन्दुओं ने किया। कारसेवक हिन्दू थे लेकिन वे हिन्दू समाज की तरफ से मस्जिद नहीं तोड़ रहे थे।

मार्क टली ने तब बीबीसी छोड़ा नहीं था। वे पुराने दोस्त हैं और भारत को जितना समझते हैं उतना शायद ही कोई अंग्रेज समझता हो। पर वे वैसे अंग्रेज हैं भी नहीं। कलकत्तेवाले हैं। भारत सरकार ने उन्हें पद्मश्री दिया है। उन्होंने बताया कि अपनी रपट में उन्होंने साफ-साफ कहा था कि कारसेवक कौन हैं और उन्हें किन संगठनों ने वहाँ बुलाया था। लेकिन लन्दन वालों ने वह तो सब हटा दिया और हिन्दू मिलिटंट्स और हिन्दू एक्सट्रीमिस्ट्रस कहते रहे।

हमारे एक और मित्र जॉर्ज वर्गीज तो अंग्रेजी के ही वरिष्ठ पत्रकार हैं। केम्ब्रिज में पढ़े हैं। अभी उस दिन कह रहे थे कि बीबीसी वाले बोसनिया के मुसलमानों और सर्बों में भेद करते हैं। जब आप बार-बार मुसलमान कहते हैं तो यह भी बताइए कि जो ईसाई हैं वे प्रोटैस्टेंट हैं या केथोलिक। नहीं, बीबीसी की भाषा बहुत पूर्वग्रही और उनके सवाल बहुत लोडेड होते हैं। जॉर्ज वर्गीज आप जानते हैं कि ईसाई हैं और उनकी पत्नी जमीला मुसलमान, लेकिन उन्हें भी बीबीसी का बोसनिया का कवरेज तोड़ा-मरोड़ा और बिगाड़ा हुआ लगता है।

और अभी उस दिन तो हद ही हो गई। कश्मीर में चरारे-शरीफ के जलाए जाने की घटना की खबर दी। उसके कुछ दृश्य दिखाए और उनमें बोसनिया और चेचन्या के दृश्य जोड़ दिए। रक्षा मन्त्रालय ने विरोध जताया तो माफी भी माँग ली है लेकिन दृश्य मुख्य खबर में दिखाए गए थे और माफी सिर्फ एशिया टुडे पर माँगी गई।

भरोसा करना मुश्किल है कि चेचन्या और बोसनिया के युद्ध के दृश्य चरारे-शरीफ के दृश्यों में गलती से मिल गए होंगे। देखते ही लगता है कि ये कश्मीर के नहीं हो सकते। बख्तरबन्द गाड़ी और बैठे सैनिक, हेलीकाप्टर और विरोध जताता नागरिक सब यूरोपीय हैं। कश्मीरी लोग गोरे होते हैं लेकिन यूरोपीय नहीं दिखते। चमड़ी के रंग पर इतने सचेत ये लोग क्यों फर्क नहीं देख पाए? क्योंकि आँखों पर चश्मे चढ़े हैं। भारत विरोध के नहीं तो कश्मीर में जो हो रहा है उसमें विकृत रुचि के कारण।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
जैसे हमारे जॉर्ज वर्गीज कह रहे थे कि कश्मीर के बारे में लोग बार-बार कहते हैं कि भारत के अकेले मुसलिम बहुमत वाले राज्य कश्मीर में यह चल रहा है। यानी जो लोग बार-बार सुनते होंगे उन्हें तो लगता होगा कि कश्मीर में ज्यादातर मुसलमान हैं तो उसे पाकिस्तान में जाना चाहिए। हिन्दू-मुसलमान के नाम पर भारत बँटा तो सारे हिन्दू भारत में और सारे मुसलमान पाकिस्तान में। बीबीसी सुनते रहे तो पाकिस्तान का प्रचार उचित ही लगेगा कि कश्मीर के मुसलमान भारत से अलग होकर पाकिस्तान में मिलना चाहते हैं और भारत की सेना उन्हें जबरन रोके हुए है।

वर्गीज भारतीय हैं। कोई भूल से भी उन्हें कट्टर राष्ट्रवादी-हिन्दुत्ववादी नहीं कह सकता। पर बीबीसी के कवरेज और उसकी भाषा पर वे जो कहते हैं ठीक वैसा ही अपन भी महसूस करते हैं। पहले ललक से सुनते और देखते थे कि बीबीसी भारत के बारे में क्या कहता और दिखाता है। अब वे भारत पर आते हैं तो अपन चैनल बदल देते हैं। फिर यह भी लगता है कि भारतीय होने के कारण अपन ने बीबीसी की असलियत जान ली। लेकिन क्या पता दूसरे एशियाई-अफ्रीकी देशों के साथ भी ये यही करते होंगे जो हमारे साथ कर रहे हैं। इन पर क्यों भरोसा किया जाए?

पहले लगता था कि अपना दूरदर्शन और आकाशवाणी विश्वसनीय नहीं हैं। ये सरकारी दृष्टिकोण से देश को देखते हैं और वही सुनाते-दिखाते हैं जिससे सरकार को एतराज नहीं। सरकारी होने के कारण इनकी विश्वसनीयता नहीं है। अब लगता है बीबीसी पर ही क्यों भरोसा किया जाए? सीएनएन वाले भारत और एशिया और अफ्रीका के बारे में क्या जानते हैं? उनसे ज्यादा जानकारी और ज्ञान तो हमारे लोगों को अमेरिका और यूरोप पर है।

केबल टीवी के कारण इतना जरूर हुआ है कि बीबीसी और सीएनएन पर जो विश्वास था वह जाता रहा। अब इन्हें भी उसी शंका और विश्वासहीनता के साथ देखते हैं जिनसे दूरदर्शन की खबरों और सामयिक विषयों के कार्यक्रमों को देखते हैं। यह अच्छा नहीं कि जिसे आप देखें उस पर सहज विश्वास न करें। अविश्वास से नकारात्मक दृष्टिकोण पनपता है और वह आदमी के लिए अच्छा नहीं होता। लेकिन बार-बार आप असलियत समझ लें तो भला विश्वास कहाँ से लाएँ?

इसी तरह की निराशा अपने को प्राइम स्पोर्ट्स से हो चली है। अक्सर तो उसमें ऐसे खेल चलते रहते हैं जिनमें आम भारतीयों की रुचि नहीं हो सकती। आइस हॉकी, मोटर रेसिंग, गोल्फ, रग्बी और डब्लूडब्लूएफ यानी वर्ल्ड रेसलिंग फेडरेशन का रेसलोमेनिया कुश्ती के नाम पर जनता को बेवकूफ बनाना। इतने बरस हो गए प्राइम स्पोर्ट्स देखते हुए आज तक समझ में नहीं आया कि दिखाने की इनकी कसौटी क्या है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस साल का पहला ग्रैंड स्लेम यानी आस्ट्रेलियाई ओपन पूरा दिखाया गया। लेकिन फ्रेंच ओपन का एक मैच तो क्या एक दृश्य भी नहीं दिखाया। पता नहीं फ्रेंच वालों ने इन्हें बाहर बैठा दिया या इनका सौदा नहीं पटा इसलिए बाहर हो गए। लेकिन दावा है कि दुनिया में देखने के लायक जो भी खेल हो रहा हो वह प्राइम स्पोर्ट्स पर जरूर होगा। जो दिखाते हैं उसका महीने-भर पहले से टीम-टाम धूमधड़ाका करते हैं। लेकिन जो नहीं दिखाते उसके बारे में कोई जिक्र तक नहीं।

फ्रेंच ओपन पूरा का पूरा गायब है। न लाइव, न रेकार्डेड। कोई कारण भी नहीं बताया। माफी भी नहीं माँगी कि नहीं दिखा पा रहे हैं। क्या फ्रेंच ओपन देखने लायक नहीं है? तो इतने सालों से क्यों दिखा रहे थे और उसका नाम भी नहीं लेते। उससे तो अपना दूरदर्शन ही अच्छा कि कम-से-कम चारों सेमी फाइनल और दोनों फाइनल तो दिखा रहा है।

आजकल प्राइम स्पोर्ट्स का सारा हल्ला इस पर है कि वह विंबलडन दिखाएगा। जब फ्रेंच ओपन चल रहा हो तब वह तो मत दिखाओ लेकिन बाद में होने वाले विंबलडन के दिखाने का ढोल पीटो। हर कार्यक्रम रोककर ढोल पीटो। लेकिन जब विंबलडन भी सेमी फाइनल पर आएगा तो सीधा प्रसारण टेढ़ा हो जाएगा यानी रेकार्ड किया हुआ मैच दिखाया जाएगा। टीवी पर जो रोमांच सीधे प्रसारण को देखने में आता है वह निर्णय जान लेने के बाद रेकार्ड किया हुआ मैच देखने में थोड़े आता है।

लेकिन प्राइम स्पोर्ट्स यह अक्सर करता है। और ऐसा करने का कोई कारण नहीं बताता न दिखा न पाने की माफी माँगता है। क्या सेमी फाइनल और फाइनल दिखाने के ज्यादा पैसे देने पड़ते हैं और विज्ञापन से उसे इतनी आमदनी नहीं होती? फिर यह गेम के बाद विज्ञापन क्यों दिखाते हैं और भारत में तो वे शराब के या सिगरेट के। इसके अलावा विज्ञापन ही उन्हें नहीं मिलते?

क्रिकेट दिखाने में तो और भी सनकीपन किया जाता है। फरवरी, मार्च, अप्रैल में आस्ट्रेलिया ने वेस्टइंडीज का दौरा किया। फटाफट क्रिकेट के पाँचों एक दिवसीय दिखाए। वन डे तो वे कहीं के भी दिखा देते हैं। लेकिन टैस्ट मैच के दो घंटे के हाईलाइट्स दिखाते हैं। लेकिन इस बार आस्ट्रेलिया-वेस्टइंडीज के टैस्ट भी पूरे और सीधे प्रसारण पर दिखाए। वेस्टइंडीज को पन्द्रह साल बाद एक सीरीज हारते देखकर अच्छा लगा।

लेकिन आजकल यही वेस्टइंडीज इंग्लैंड के दौरे पर है। तीन वन डे की टेक्सको ट्रॉफी हो चुकी। एक भी मैच सीधे प्रसारण पर नहीं दिखाया गया। हाईलाइट्स भी नहीं। आजकल लीड्स में पहला टैस्ट चल रहा है। न सीधा प्रसारण न हाईलाइट्स, न खबर। प्राइम स्पोर्ट्स देखकर लगता ही नहीं कि इंग्लैंड में आजकल क्रिकेट का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
मौसम चल रहा है। क्रिकेट देखने का जो मज़ा इंग्लैंड में आता है वह कहीं नहीं आता। वैसा वातावरण ही कहीं नहीं लगता। लेकिन इंग्लैंड-वेस्टइंडीज सीरीज का कहीं अता-पता नहीं।

गए साल आस्ट्रेलिया ने इंग्लैंड का दौरा किया था। तब तो पूरे वन डे दिखाए गए और टैस्ट मैचों के हाईलाइट्स और कभी-कभी सीधे प्रसारण भी। फिर इंग्लैंड की टीम आस्ट्रेलिया गई तो सभी वन डे के सीधे प्रसारण पर और टैस्ट मैचों के हाईलाइट्स। एशेज सीरीज का अपना ही मजा है लेकिन वेस्टइंडीज कहीं भी खेल रही हो तो मैच देखने लायक होता है। पर प्राइम स्पोर्ट्स वाले आस्ट्रेलिया को तो सभी जगह दिखाते हैं बाकी की परवाह नहीं करते। क्यों? शायद इसलिए कि प्राइम स्पोर्ट्स वाले स्टार टीवी के मालिक रूपर्ट मरडॉक हैं और वे मूल आस्ट्रेलियन हैं और इसलिए आस्ट्रेलिया का क्रिकेट भी दिखाया जाएगा और रग्बी भी। समुद्र में नौकाओं की दौड़ और घुड़दौड़ भी।

हमारे लालची और बिकाऊ क्रिकेट बोर्ड ने भारत के सारे क्रिकेट को दिखाने का ठेका एक अमेरिकी कम्पनी को दे दिया जिसके पास अपनी चैनल भी नहीं उसने दिखाने का ठेका प्राइम स्पोर्ट्स को दे दिया। प्राइम स्पोर्ट्स की भारतीय क्रिकेट में ज्यादा रुचि नहीं इसलिए उसने घरेलू क्रिकेट के मैचों के एक-एक घंटे के कैपसूल बनाए और इंडिया क्रिकेट सीन के नाम पर जब मन में आया और वक्त मिला तो दिखाया। दूरदर्शन ने रणजी, दिलीप, देवधर कोई ट्रॉफी का मैच नहीं दिखाया। देश का टीवी देश का ही क्रिकेट नहीं दिखा सका क्योंकि एकाधिकार विदेशी कम्पनी को बेच दिया गया है।

अपन जानते हैं कि दूरदर्शन को बोर्ड ने बाहर किया क्योंकि जितना पैसा उसे चाहिए उतना दूरदर्शन नहीं देता। लेकिन क्या बोर्ड की जिम्मेदारी देश के क्रिकेट प्रेमियों, खिलाड़ियों और क्रिकेट के प्रति नहीं है? उसका मकसद क्या सिर्फ डॉलर कमाना है? अपने ही देश में जब घरेलू क्रिकेट देखने को नहीं मिलेगा तो बाहर उसे कौन देखेगा? लेकिन जिस तरह बोर्ड की करतूत में कार्य कारण नहीं दिखता वैसा ही प्राइम स्पोर्ट्स का भी कामकाज है। वह क्या दिखाएगा, क्यों दिखाएगा, कैसे दिखाएगा और कब दिखाएगा इसका कोई ठिकाना नहीं रहता। लेकिन वह एशिया की मुख्य खेल चैनल है और जो भी देखने लायक होता है वह उसी पर देखा जा सकता है। यानी देखने लायक क्या है यह दर्शक नहीं प्राइम स्पोर्ट्स तय करता है। इसी को खुले बाजार में चुनने की स्वतन्त्रता कहते हैं। समझे कि नहीं।

बीबीसी और प्राइम स्पोर्ट्स के नजर से उतर जाने के बाद अपने लिए केबल टीवी में ज्यादा कुछ बचा नहीं है। इसलिए केबल टीवी को देखने की इच्छा और टीवी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
के सामने गुजारे गए वक्त में लगातार कमी होती जा रही है। कहते हैं इसका भी एक जुनून होता है जो शुरू में तो सवार रहता है फिर उतर जाता है और सामान्य हो जाता है। जिन देशों से इलेक्ट्रानिक क्रान्ति की शुरुआत हुई वहाँ भी अब केवल टीवी का जुनून उतर गया है। सैकड़ों चैनल हो गई हैं और लोग उन पर टप्पे खाते-खाते सो जाते हैं।

अपने देश में भी आगे-पीछे तो यही होना है। इसलिए जो लोग उपग्रह टीवी के हवाई हमले से बहुत चिन्तित हैं उनसे मैं कहता हूँ कि परेशान होने की जरूरत नहीं। लोग जल्दी ही अघा जाएँगे। फिर टीवी पर कैसी भी गटरगंगाएँ बह रही हों लोग नहीं देखेंगे। वे वही देखेंगे जिसे देखने में उनकी रुचि है और जो उन्हें देखना चाहिए।

इसलिए दूसरे देश की चैनलों से होड़ करने की हड़बड़ाहट में आपा मत खोओ। सोच-समझ लो कि अपने लोग क्या देखना चाहते हैं, उनकी रुचि क्या है और उन्हें क्या दिखाया जाए तो उनके लिए बेहतर होगा। फिर अच्छे भारतीय प्रोग्राम बनाओ और विदेशी प्रोग्रामों की नकल मत मारो। लेकिन अपनी दिक्कत यह है कि हम जहाँ से हार्डवेयर यानी मशीनें लाते हैं वहीं का सॉफ्टवेटर यानी प्रोग्राम भी ले आना चाहते हैं। हमारी आविष्कारिता विदेशी तकनीक की नकल में लग जाती है और मौलिकता भी उसी में खुट जाती है।

मैं चकित हूँ कि जिस देश में इतनी सबल और सदियों से चली आ रही वाचिक परम्परा है और जहाँ एकदा नैमिषारण्ये से शुरू होने वाली कथा बाँचने और सुनने की परम्परा है वहाँ का टीवी और रेडियो इतना नकली, विदेशी और प्रभावहीन क्यों है? हम श्रुति और स्मृति वाले देश हैं। हमारे यहाँ लिखना, पढ़ना उतना सहज और सर्वव्यापी कभी नहीं रहा जितना सुनना, सुनाना और याद रखना और इस तरह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को देना रहा है।

ऐसी परम्परा वाले देश में तो कोई माध्यम सबसे स्वीकार्य और सहज उपयोगी हो सकता है तो वह रेडियो और टीवी ही हो सकता है। बल्कि ये माध्यम जितने सशक्त और प्रभावशाली अपने देश में सकते हैं उतने तो कहीं और हो ही नहीं सकते। और किसी देश में वाचिक परम्परा उतनी समृद्ध और अक्षय नहीं है जितनी हमारे यहाँ। लेकिन कमाल देखिए कि अपने यहाँ अभी तक कोई इस परम्परा को टीवी और रेडियो से नहीं जोड़ पाया। जो माई का लाल जोड़ देगा वह इलेक्ट्रानिक नहीं सांस्कृतिक क्रान्ति कर देगा। शुकदेव महाराज भेजो। नेमिषारण्य से किसी बीहड़ प्रतिभा को! जो संस्कृति की गंगा को टीवी में उतार लाए।

(21.6.95)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब होगी अग्नि-परीक्षा

अपनी क्रिकेट टीम का सचमुच पुनर्जन्म हो रहा है क्या इसकी अग्नि-परीक्षा आज से पाकिस्तान में होगी। पाकिस्तान को पाकिस्तान में मारना और वह भी उसकी अपनी भीड़ और अम्पायरों के सामने यों भी क्रिकेट का लगभग असम्भव कार्य माना जाता है। फिर वह टोरेंटों में 1-4 से पराजय से बुरी तरह तिलमिला रहा है और पहला मौका मिलते ही हिसाब बराबर करने को बेताब है। ऐसे में तेंदुलकर की टीम अगर अपना विजय अभियान जारी रखे और रेत के महल की तरह बिखर कर ढेर न हो जाए तो इसका मतलब होगा कि टोरेंटो में उसने जो कर दिखाया वह धूल में लट्ठ नहीं था।

पाँच में से चार मैच लगातार जीतना वैसे कोई धुप्पल में नहीं हो सकता। फिर भी टोरेंटो की बात अलग थी। एक तो वहाँ के पिच लगभग पुराने इंगलिश पिचों की तरह बरताव कर रहे थे। यानी टप्पा खाने के बाद गेंद उन पर खूब घूमती थी। फिर वातावरण भी ठंडा और बादलों से घिरा हुआ था यानी गेंद जितनी टप्पा खाने के बाद घूमती थी उतनी ही हवा में लहराती थी। गेंद की सीम पकड़कर अगर लगातार ठीक लाइन में बल्लेबाज के आगे टप्पा मारा जाए तो वह आगे-पीछे कैच पकड़ाकर जाएगा ही।

पाकिस्तान के बल्लेबाजों के लिए ऐसे पिचों पर खेलना कोई नई बात नहीं है। वे न सिर्फ इंगलिश मौसम में वहाँ लगातार लीग या काउंटी क्रिकेट खेलते हैं—वहाँ के दौरे पर भी पाकिस्तानी टीम जाती रहती है और इंग्लैंड के सामने उसका प्रदर्शन बेहतर ही रहता है। फिर भारतीय गेंदबाज ऐसी परिस्थितियों का भरपूर लाभ लेने में उतने माहिर नहीं हैं जितने कि अंग्रेज या ऐसे गेंदबाज जो वहाँ लगातार खेलते रहते हैं। इस मामले में भी पाकिस्तानी गेंदबाज भारतीय गेंदबाजों से ज्यादा प्रभावी साबित होने चाहिए थे।

लेकिन हुआ उलटा। अपने अपेक्षाकृत अनुभवहीन और नए गेंदबाजों ने टोरेंटों की परिस्थितियों का बेहतर इस्तेमाल किया। उन्होंने न सिर्फ अपनी लाइन और टप्पा ठीक रखा, वे गेंद को घुमाते भी खूब रहे और पाकिस्तानी बल्लेबाज वह धीरज और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
काबू नहीं रख सके जिसके बिना ऐसे पिचों पर ऐसी गेंदबाजी खेली नहीं जा सकती। यह भी जरा समझ के बाहर की बात है। और किसी के सामने पाकिस्तानी कुछ भी करते हों भारत के सामने तो वे हमेशा जान लगा देते हैं। भारत से हारने से बड़ी जैसे कोई शर्म न हो। लेकिन टोरेंटो में वे लापरवाही से नहीं तो एक ऐसी खुदकुशी में खेले जो वे भारत के सामने कभी नहीं करते।

इस रवैये के क्या कारण थे इसका अंदाज ही लगाया जा सकता है। और ऐसे अंदाज दरअसल अललटप्पू होते हैं जैसे यह कि पाकिस्तानी खिलाड़ी रमीज़ राजा की कप्तानी से खुश नहीं थे और सबसे वाहियात यह कि तेंदुलकर की कप्तानी बचाने के लिए उनने पैसे खा लिए और इसलिए हारते चले गए। पाकिस्तानी अखबारों में दरअसल ऐसा छपा भी है। अब कोई पूछे कि तेंदुलकर की तरफ से इतने पैसे खिलाने वाला कौन होगा और भले ही पैसों के लिए हो पाकिस्तानी खिलाड़ियों में तेंदुलकर के लिए इतनी सहानुभूति कब से हो गई कि उनकी कप्तानी बचाने के लिए वे भारत से हार जाएँ जो कि पाकिस्तानी बोली में दोजख के बराबर है। हार से बौखलाए पाकिस्तानी हुए बिना यह बात समझी नहीं जा सकती। लेकिन इतना सही है कि पाकिस्तानी टीम में जान लड़ा देने का वह जज़्बा नहीं था जो भारत के खिलाफ हर पाकिस्तानी टीम में होता है। वे नाजुक मौकों पर लापरवाह शॉट मारते रहे और कैच पकड़ाकर आते रहे।

पाकिस्तानी टीम के रवैये को अगर चंडूखाने पर छोड़ दिया जाए तो समझदारी का एक खुलासा यह होगा कि पाकिस्तानी गेंदबाज आकिब जावेद, अजहर मेहमूद, शाहिद नजीर और मोहम्मद अकरम—हमारे कुरुविला, मोहन्ती, हरविंदर सिंह और गांगुली से तेज हैं। अपनी तेजी और कन्धों के इस्तेमाल से वे गेंद को एकदम उछाल तो लेते थे लेकिन उसे हवा में और टप्पा खाने के बाद घुमा नहीं पाते थे। ऐसा करने के लिए गेंदबाज का कुछ धीमा होना जरूरी है। थोड़ी धीमी गेंद ही हवा में लहराती है और वह टप्पा खाने के बाद घूमती है। हमारे गेंदबाज अंग्रेजी कहावत का इस्तेमाल किया जाए तो मिलेट्री मीडियम हैं। यानी वे तेज नहीं हैं और गेंद को वातावरण और पिच का इस्तेमाल करने के लिए छोड़ देते हैं। पाकिस्तानी गेंदबाज बहुत जोर लगाते रहे और इसलिए वाइड भी करते रहे और नो बॉल भी क्योंकि उनका नियन्त्रण नहीं रह पाता था। फिर भारतीय बल्लेबाजों ने ज्यादा धीरज और समझदारी से काम लिया। वे गेंद को उधेड़ देने के लिए नाहक लप्पेबाजी नहीं करते रहे। इसीलिए आखिरी मैच को छोड़ के हर बार टीम को जिताते रहे।

अपनी गेंदबाजी ने यही करिश्मा कोई चौदह साल पहले इंग्लैंड में दिखाया था। उस विश्व कप में हमारे पास मदनलाल, रोजर बिन्नी, मोहिन्दर अमरनाथ और सन्धु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
जैसे गेंदबाज थे जो सभी कपिल से बहुत धीमे थे लेकिन इंग्लैंड की परिस्थितियों और पिचों पर सबसे घातक साबित हुए। फिर जैसे अमरनाथ, कपिल, बिन्नी आदि सभी ठीकठाक बल्लेबाजी भी कर लेते थे वैसे ही गांगुली और रोबिन सिंह दोनों ने ही ऐन मौके पर उपयोगी रन भी बनाए। गांगुली ने तो सबसे ज्यादा 222 रन ठोके हीं। पाकिस्तान के पास एक ही गेंदबाज बल्लेबाज थे—सलीम मलिक। लेकिन वे उन पिचों के लिए बहुत धीमे और लॉलीपॉप करने वाले थे और उन्हें हमारे बल्लेबाजों ने आते ही पीटकर बाहर कर दिया। तो परिस्थितियों ने हमारे साधारण गोलंदाजों को लगभग प्रभावहीन।

इस फर्क को समझने के लिए पाकिस्तान जाने की जरूरत नहीं है। टोरेंटो के आखिरी मैच में उजली धूप निकली हुई थी और पिच कोई कारगुजारी नहीं कर रहा था। हमारे वही गेंदबाज जो पहले के चार मैचों में चढ़कर गेंदबाजी कर रहे थे इस मैच में कैसी बुरी तरह पिटे आपने देखा ही होगा। इजाज और आफरीदी, इंजमाम और दुधमुंहे हसन रजा तक ने उन्हें इतनी बेरहमी से पीटा कि मोहन्ती तो चार ओवरों में पचास रन दे बैठे, कुरुविला, हरविन्दर और तो और गांगुली की भी धुनाई हो गई। वह तो वसीम राजा और सलीम मलिक सस्ते में और आफरीदी और इजाज के बाद एक के बाद एक आउट न हुए होते तो ढाई सौ रन का लक्ष्य तो पाकिस्तानी पैंतीस ओवर में ही पार कर देते। तो हमारी गेंदबाजी का यह हश्र जब टोरेंटो में ही हो गया तो पाकिस्तान की बात ही अलग होती।

पाकिस्तान के पिच, भारत और श्रीलंका की तरह धीमे और कम उछाल देते हैं। उन पर गेंद नहीं घूमती न वातावरण इतना भारी होता है कि गेंद हवा में लहराए। इसलिए जो फायदा कुरुविला, मोहन्ती, हरविन्दर और गांगुली को टोरेंटो में मिला वह पाकिस्तान में नहीं मिलेगा। टप्पा खाने के बाद गेंद चूँकि एक-सी उछाल पर सीधी आती है इसलिए उस पर खुलकर और बेझिझक शॉट मारना आसान होता है। तो अगर हमारे तथाकथित तेज गेंदबाजों ने लाइन और टप्पा ठीक नहीं रखा और दाएँ-बाएँ गेंद करते रहे तो उनकी खूब पिटाई होगी खास कर पहले पन्द्रह ओवरों में जब सिर्फ दो फील्डर बाउंड्री के आसपास रखे जा सकते हैं। श्रीलंका में जयसूरिया, अट्टापट्टू, डिसिल्वा और रणतुंगा ने कैसा कत्लेआम मचा दिया था। कराची, हैदराबाद और लाहौर में टोरेंटो के नायकों की यही हालत हो सकती है।

इसलिए पाकिस्तान में स्पिनर रखने ही होंगे। इस टीम में हमारे पास दो स्पिनर हैं—एक राजेश चौहान और दूसरे नीलेश कुलकर्णी। चौहान सकलेन मुश्ताक की तरह वन डे की सन्तान नहीं हैं। वे टैस्ट मैचों के शास्त्रीय ऑफ स्पिनर हैं। वे रन देकर विकेट खरीदने वाले गेंदबाज हैं रन रोककर बल्लेबाज को हताशा में विकेट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
फेंकने पर मजबूर करने वाले नहीं। इसलिए सकलेन, मुरलीधरन और दक्षिण अफ्रीका के सिमकॉक्स जैसे वन डे के रन रोकू, विकेट लेने वाले गेंदबाज नहीं हैं। नीलेश कुलकर्णी की तो खूबी ही रन रोकने वाले गेंदबाज की है। श्रीलंका तक के में सबसे किफायती साबित हुए थे जबकि वह उनका पहला दौरा था। टोरेंटो में तो उन्हें मौका मिला नहीं। अब पाकिस्तान में उनकी परीक्षा होगी। पाकिस्तान में उन्हें या चौहान या दोनों को खेलाना जरूरी होगा। गांगुली और रोबिन सिंह होंगे ही इसलिए—कुरुविला और मोहन्ती या हरविन्दर ही खेल पाएँगे। पाकिस्तानी पिचों पर यह गेंदबाजी क्या गुल खिलाएगी अभी कहा नहीं जा सकता लेकिन इतना तय है कि इसमें टोरेंटो वाली धार तो आ ही नहीं सकती।

लेगस्पिनर मुश्ताक अहमद को पाकिस्तान ने नहीं लिया है लेकिन वकार यूनुस लौट आए हैं। पर बहुत चाहते हुए भी वसीम अकरम लौट नहीं सके हैं। वकार भले ही सबसे तेज गेंदबाज होंगे लेकिन उनकी गेंदों में वह विविधता और अचरज का तत्त्व नहीं है जो वसीम अकरम में है। वसीम वन डे के वैसे ही अद्भुत तेज गेंदबाज हैं जैसे वेस्टइंडीज के कर्टली एम्ब्रोज। लेकिन वसीम को गेंदबाजी वाले कंधे की चोट और ऑपरेशन ने वैसे ही बाहर कर रखा है जैसे हमारे श्रीनाथ को। फिर वसीम घातक और किफायती गेंदबाज के अलावा कप्तान भी बहुत चतुर हैं। पूरी पाकिस्तान टीम उनकी चौतरफा प्रतिभा की कायल है। इमरान के बाद वे सबसे सम्मानित कप्तान हैं। अनवर हो या राजा—किसी में भी वसीम जैसी कप्तानी की हटूटी और हर खिलाड़ी से उसका सर्वश्रेष्ठ योगदान निकाल लेने की योग्यता नहीं है।

वकार के लौटने से पाकिस्तानी गेंदबाजी में कोई बहुत धार नहीं आ जाएगी। वन डे में वकार यों भी कोई कम नहीं पिटते हैं। अपने अजय जडेजा ने गए साल विश्व कप के बँगलूर मैच में उनके दो ओवरों में चालीस रन ठोक दिए थे। आजकल वे सबसे खतरनाक उस पुरानी गेंद पर होते हैं जो एक तरफ से चिकनी और दूसरी ओर खुरदरी कर दी गई हो। ऐसी गेंद पर वकार की रिवर्स स्विंग बहुत घातक होती है। फिर वकार के होने से आकिब और शाहिद या अजहर सभी बेहतर गेंदबाजी करेंगे और टोरेंटो से तो निश्चित ही ज्यादा असरकारक होंगे। वह तो खूब तेज और उछाल देने वाले पिच पाकिस्तान में बन नहीं सकते। अगर बन सकते होते तो पाकिस्तानी ऐसे ही पिच बनाते और उन पर हमारे बल्लेबाज भरतनाट्यम करते।

होगा यह कि पाकिस्तान में पिच बल्लेबाज के लिए स्वर्ग होंगे। टोरेंटो में पाकिस्तान की बल्लेबाजी ही दगा दे गई थी। पाकिस्तान में ऐसा मौका नहीं आने दिया जाएगा। और हालाँकि अब सलीम मलिक, आमिर सौहेल और वसीम राजा टीम में नहीं हैं लेकिन जैसे कि पाकिस्तान में पिच बनते हैं और इस बार भी बनेंगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
सईद अनवर, इजाज अहमद, इंजमाम और आफरीदी को खुलकर धूम मचाने का मौका मिलेगा। हमारी गेंदबाजी में अब भी वह तेजी और सूझबूझ नहीं है जिसकी कमी श्रीलंका में बार-बार दिखाई दी थी। श्रीलंका भी बल्लेबाजी और सधी हुई गेंदबाजी पर हमसे जीता नहीं तो एक मुरली को छोड़कर उनके पास गोलंदाज है कौन? चामिंडा वास भी रोक के रखने वाले गेंदबाज हैं विकेट लेने वाले नहीं तो पाकिस्तान में असली मुकाबला बल्लेबाज का होगा। हमारे तेंदुलकर, अजहर, गांगुली, द्रविड़, जडेजा और रोबिन सिंह—पाकिस्तान के अनवर, इजाज, इंजमाम, सलीम इलाही, मोहम्मद वसीम, हसन रजा आदि से कोई कम धुरंधर नहीं हैं। फिर रुककर खेलने और पारी को लगातार संवारते रहने में भारतीय बल्लेबाज खेल और स्वभाव दोनों से ही ज्यादा चतुर हैं। बड़ा फर्क यही होगा कि पाकिस्तानी अपने पिचों पर अपने दर्शकों के सामने और अपनी अम्पायरों में खेल रहे होंगे। पाकिस्तानी दर्शक भारत के खिलाफ अपने बल्लेबाजों का जोश बढ़ाने और उनके अम्पायर अपने बल्लेबाजों का विश्वास कायम रखने में दुनिया भर में मशहूर हैं। दबाव तो पाकिस्तानी बल्लेबाजों पर भी होगा लेकिन भारतीय बल्लेबाजों पर तो बेहद होगा। पाकिस्तान में मैदान और मैदान के बाहर भारतीय खिलाड़ियों पर गजब का दबाव होता है। गावसकर जैसी इस्पाती नसों और अर्जुनी दत्तचित्तता वाले खिलाड़ी तक परेशान हुए हैं तो इस टीम में तो अजहर और तेंदुलकर को छोड़कर पहले कोई पाकिस्तान में खेला भी नहीं है। तेंदुलकर का भी वह पहला दौरा था और तब वे सोलह बरस के भी नहीं थे। अब न सिर्फ बल्लेबाजी करने का दबाव उन पर होगा कप्तानी में नया और असम्भव कर दिखाने की उम्मीद भी होगी। हर गेंदबाज के वही लक्ष्य होंगे और यह दबाव भारत की तुलना में भी ज्यादा होगा।

अच्छी और जमकर की गई बल्लेबाजी के अलावा जानमारी की फील्डिंग और सधी हुई गेंदबाजी भारत को थामे रख सकती है। दबाव में हमारी गेंदबाजी और फील्डिंग अक्सर चीं बोल जाती है। इसलिए तेंदुलकर को शुरू से ऐसा कुछ करना होगा कि पाकिस्तानी बल्लेबाज धुआँधार करके पहले पन्द्रह ओवरों में भारत की मुट्ठी से खेल निकाल न ले जाएँ। अनवर और आफरीदी या इजाज को रोकने के लिए तेंदुलकर शुरू में ही चौहान या कुलकर्णी का इस्तेमाल कर सकते हैं। अनवर के लिए चौहान और आफरीदी के लिए कुलकर्णी। फिर पन्द्रह ओवरों में फील्डर जमाने में भी अनोखापन दिखाना होगा। जैसी लप्पेबाजी आफरीदी करते हैं उसे देखते हुए दोनों फील्डरों को मिडऑन, मिडऑफ पर और अनवर के लिए मिडविकेट और एक्स्ट्रा कवर पर खड़े करना पड़ सकता है। पहले पन्द्रह ओवरों में ही हर मैच का वारा-न्यारा होना है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगर तेंदुलकर पाकिस्तान से टीम को जिता लाए तो वे ऐसा करिश्मा करेंगे जो पहले किसी ने नहीं किया। ऐसा नहीं कि करिश्मे होते नहीं। लेकिन न हो तो तेंदुलकर का सिर कलम मत कीजिएगा। उससे कई बड़े कप्तान पाकिस्तान से धूल में लोटते हुए आए हैं।

(28.9.97)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बताया कि किनके बिना काम चल सकता है

कुम्बले ने दस के दसों विकेट लेकर दिल्ली में पाकिस्तान पर भारत की जीत का बहुत कुछ गौरव अकेले समेट लिया है। सही है कि उनका पराक्रम भी आखिर अद्‌भुत था। टैस्ट मैच के किसी एक पारी में सभी विकेट लेने वाले क्रिकेट इतिहास के वे दूसरे ही गेंदबाज हैं। पहले थे इंग्लैंड के ऑफ स्पिनर जिम लेकर जिनने सन् छप्पन में ओल्ड ट्रेफर्ड के मैदान पर आस्ट्रेलिया के पहले दाँव में नौ और दूसरे दाँव में दस के दसों विकेट उड़ा दिए थे। कुम्बले ने पाकिस्तान की पहली पारी में चार ही विकेट लिये थे।

फिर भी दस के दसों विकेट लेना पराक्रम ही ऐसा है कि उसके सामने भारत की जीत, सकलैन मुश्ताक के हर टैस्ट में दस विकेट और पहले टैस्ट में शाहिद आफरीदी और सचिन तेंदुलकर की शतकें और पाकिस्तान की सिर्फ बारह रनों से जीत सब फीके पड़ गए। कुम्बले के सामने भारत-पाकिस्तान की सबसे रोमांचक और काँटे की सीरीज का तनाव भी काफूर हो गया। आखिर पाकिस्तान के कप्तान, मैनेजर और सभी खिलाड़ियों को कुम्बले का गुणगान करना पड़ा और वे भी इस भारतीय गेंदबाज को बधाई देने वालों की लाइन में फूल लिये खड़े दिखाई दिए। चेन्नई में पाकिस्तानी टीम और दिल्ली में भारतीय टीम का पराक्रम भले ही बराबरी का रहा हो लेकिन आखिर में कुम्बले सभी की चमक उतारकर ध्रुव तारे की तरह खेल के आसमान में चढ़कर थिग गए।

चेन्नई के पहले टैस्ट में सचिन तेंदुलकर की विफल महानायकी ने सिर्फ बारह रन से पराजय और वह भी पाकिस्तान से, थोड़ी सहनीय बना दी थी। आखिर सचिन भी भारत को जीत की बिलकुल दहलीज पर ले आए थे। कुम्बले, जोशी, श्रीनाथ और प्रसाद बारह रन नहीं बना पाए इसका दुख तो हर भारतीय को है लेकिन तेंदुलकर को कोई नहीं कोसता कि अपने अकेले बल्ले से अपनी टीम को तूफान से निकालकर लाने वाले इस तूफानी बल्लेबाज को क्या आधे घंटे और सँभलकर खेलने की जरूरत नहीं थी। आखिर वे सात घंटे से खेल रहे थे और उनकी कमर की भी नस खिंची

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुई थी। हो सकता है कि दर्द बहुत बढ़ गया हो और इसलिए वे मैच को जल्दी से खत्म करना चाहते रहे हों। जिस गेंद को वे मिडविकेट पर मारकर लगातार तीसरा चव्वा जड़ने को उतारू थे उसी ने उन्हें मिड ऑफ पर आसानी से झिलवाया। वह गेंद की सकलैन की घातक फ्लोटर थी यानी लेग में घूमने के बजाय सीधी निकल रही थी। अगर वह घूमती तो तीसरे चौके या छक्के पर जाती। लेकिन सीधी निकलकर सचिन के बल्ले के कोने से लगकर ऐसी उड़ी कि अकरम के हाथों आसानी से झिल गई। सचिन के जाते ही सन्नाटा पड़ गया और बाकी के बल्लेबाज जैसे बलि होकर आ गए।

तेंदुलकर को वह शाट उस मौके पर बिलकुल नहीं खेलनी चाहिए थी। उन्हें भले ही एक-एक रन बनाना पड़ता और उनका दर्द कुछ और बढ़ता लेकिन उन्हें भारत को जिता कर ही अपना बख्तरबन्द खोलना चाहिए था। सचिन तेंदुलकर ही एक ऐसे भारतीय खिलाड़ी हैं जो विफल महानायक बनने के बजाय सहज ही सफल बल्लेबाज हैं। वे भारतीयों की एक ऐसी जवान पीढ़ी की अगुवाई कर रहे हैं, जो ऐन आखिरी सीढ़ी से लुढ़कने के बजाय जीत की मंजिल पर रखे सिंहासन पर बैठने का सहज स्वाभाविक ललक और सामर्थ्य दिखा रही है। सचिन का बिलकुल शिखर के पास से ऐसा फिसलना और पूरी टीम को साथ लेकर धड़ाम से गिरना उन्हें कतई शोभा नहीं देता। पूरी टीम उनके साथ इसलिए गिरी कि वह उनके अकेले बल्ले से शिखर पर बढ़ने की आदी हो गई है। इसके पहले सुनील गावसकर के बल्ले की पालकी पर पूरी टीम चलती थी। उनके आउट होते ही प्रतिद्वन्द्वी कप्तान मान लेता था कि अब हम जीत रहे हैं। सचिन के विकेट पर होने से भारत की जीत पक्की होती रहती है।

किसी एक महानायक पर टिके रहना और पराजय की शर्म और वेदना को उसकी विफल महानायकी से गलत करना हम भारतीयों की प्रिय आदत है। और हालाँकि मैं लगातार इसके खिलाफ लिखता रहता हूँ लेकिन ईमानदारी से कहूँ तो कहना पड़ेगा मैं खुद भी इस आदत का कोई कम मारा हुआ नहीं हूँ। जैसे चेन्नई की सिर्फ बारह रन की पराजय के दुख और उसकी शर्म को मैं सचिन की महान पारी के गुलाब जल से धोता रहा। अब भी धो रहा हूँ। अगर सचिन भारत को तिरायासी पर पाँच की दयनीय और बेआस हालत से निकालकर जीत के मंगल द्वार पर नहीं लाते तो हम सौ डेढ़ सौ रन से हारते। जीत की उम्मीद और फिर लगभग पूरा भरोसा भी आखिर उस मुश्किल पिच पर सचिन के पराक्रम से ही देश को मिला था। सचिन तेंदुलकर भारतीय क्रिकेट के ही नहीं विश्व क्रिकेट के महानायक हैं और आखिर हाड़मांस के पुतले हैं। वे भी विफल हो सकते हैं और उनकी भी कमर में नस खिंच

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकती है। लेकिन इस सच्चाई से भी इस सवाल का उत्तर नहीं मिलता कि हाड़-मांस आखिर ऐन मंजिल पर ही क्यों बोलता है और कमर के दर्द को हमारा महानायक कुछ देर और बर्दाश्त क्यों नहीं कर सकता। हमारे घायल योद्धा जीत के बाद ही प्राण क्यों नहीं छोड़ते? और जीत को हाथ से छूते ही उनके प्राण-पखेरू क्यों उड़ जाते हैं?

इस यक्ष प्रश्न का उत्तर दिए बिना हम भारतीय विजय के महामुकुट के सहज और योग्य अधिकारी नहीं हो सकते। बात सिर्फ क्रिकेट की नहीं है। यह हममें से प्रत्येक भारतीय के निजी और पूरे राष्ट्रीय जीवन का यक्ष प्रश्न है। ग्रीक ट्रेजेडी की तरह हम विफल महानायकों के देश क्यों हैं जबकि ट्रेजेडी की परम्परा भारत की नहीं है। हमारे यहाँ ट्रेजेडी नहीं लिखी गई। हमारे यहाँ ऐसे महाकाव्य रचे गए जिनमें जय और पराजय आखिर में बेमतलब और अप्रासंगिक हो जाते हैं। महाभारत तो है ही महायुद्ध की महागाथा लेकिन उसका सन्देश यही है कि अहिंसा ही परम धर्म है और जीतता महायोद्धा, सेना या देश नहीं है। जब भी विजय होती है सत्य की होती है।

क्या इसीलिए तो हमें पाकिस्तान से बराबर हुई यह सीरीज इतना सन्तोष नहीं दे रही है कि इसमें न कोई हारा न कोई जीता। यह दोनों देशों की टीमों की ताकत और कमजोरियों का सबसे न्यायोचित नतीजा है। उनकी गेंदबाजी हमसे बेहतर है और हमारी बल्लेबाजी उनसे बीस पड़ती है। फिर भी देखिए कि हमारी जीत का श्रेय एक गेंदबाज कुम्बले की महानायकी को जाता है और हमारी हार हमारे सबसे बड़े बल्लेबाज की विफल महानायकी के कारण हुई। आप कैसे कह सकते हैं कि पाकिस्तान की बल्लेबाजी हमसे कमजोर है? और गेंदबाजी को पाकिस्तान की तुलना में भोथरी कैसे कहा जाएगा? चेन्नई में पाकिस्तान की दूसरी पारी में चाय के बाद प्रसाद ने बिना कोई रन दिए पाँच विकेट उड़ाकर भारत को जीतने का सुनहरा अवसर दिया जिसे हमारे बल्लेबाजों ने खो दिया। और दिल्ली में हमारे बल्लेबाजों ने दूसरे दाँव पाकिस्तान पर चार सौ उन्नीस रन बनाकर जो मौका दिया उसे अनिल कुम्बले ने देखते-देखते एक शानदार जीत में बदल दिया। कौन ज्यादा असरदार है हमारी बल्लेबाज या गेंदबाजी?

कुम्बले के महानायकी पराक्रम के बावजूद कहना पड़ेगा कि दूसरी पारी में अगर हमारे बल्लेबाज तीन सौ उनचालीस रन नहीं बनाते और पहली पारी की अस्सी रन की बढ़त से मिलकर हमारी कुल बढ़त चार सौ बीस नहीं होती तो भारत की जीत इतनी पक्की नहीं होती कि पाकिस्तान उसे टालने या अपनी जीत में बदलने की सोच ही नहीं पाता। आखिर दूसरी पारी में जीतने के लिए पाकिस्तान ने सबसे ज्यादा रन बनाए हैं तो तीन सौ पन्द्रह। दूसरी पारी में जीत का सबसे बड़ा लक्ष्य भारत ने पार किया है। उसने वेस्टइंडीज में चार सौ छह रन बनाए थे सन् छिहत्तर में। यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
कीर्तिमान उसने आस्ट्रेलिया की उस अजेय टीम से छीना है जिसकी कप्तानी डॉन ब्रेडमेन कर रहे थे और लक्ष्य था चार सौ दो का। इसलिए क्रिकेट इतिहास का जीत का सबसे बड़ा लक्ष्य देने के बाद भारत का जीत लगभग अपरिहार्य हो गई थी। कुम्बले के पराक्रम ने उसे अप्रासंगिक बना दिया।

लिखने वाले लिख और कहने वाले कह रहे हैं कि अगर अम्पायर जयप्रकाश ने आफरीदी को कैच और इजाज अहमद को एलबीडब्लू आउट नहीं दिया होता तो जीत के दरवाजे नहीं खुलते। ये लोग मानते हैं कि आफरीदी के बल्ले की किनार गेंद पर नहीं लगी थी और जिस गेंद के पाँव पर लगने पर इजाज को आउट दिया गया वह लेग डंडे के बाहर निकल जाती। यह गलत हो या सही अम्पायर के भारतीय होने के कारण पक्षपात का आरोप चिपक सकता है। लेकिन न्यूजीलैंड के अम्पायर स्टीव डन का क्या करेंगे? उनने चेन्नई में अजहर को एलबीडब्लू तब आउट दिया जब उनके तीनों डंडे दिख रहे थे और गेंद ऑफ में टप्पा खाकर घूम रही थी। और सौरभ गांगुली को जिस गेंद पर आउट दिया गया वह फील्डर के पाँव से उछलकर टप्पा खाने के बाद विकेट कीपर मोइन खान के द्वारा पकड़ी गई थी। चेन्नई में भारत तो सिर्फ बारह रन से हारा और उसके दो प्रमुख बल्लेबाजों का इस तरह गलत आउट दिया जाना उसके लिए निश्चित ही बहुत भारी पड़ा।

पाकिस्तान तो चार सौ बीस रन वैसे भी नहीं बना सकता था और भारत के बारह रन से हारने की तुलना में वह दो सौ बारह रन से हारा है। क्रिकेट इसीलिए इतना महान खेल है कि आखिर में वह सब हिसाब बराबर कर देता है। भारत के अजहर और गांगुली के साथ चेन्नई में जो हुआ वही अगर पाकिस्तान के आफरीदी और इजाज अहमद के साथ दिल्ली में हुआ तो हिसाब बराबर ही हुआ ना! चेन्नई में पाकिस्तान जीता था दिल्ली में भारत जीत गया। जयप्रकाश की तुलना में स्टीव डन कोई बेहतर अम्पायर नहीं हैं। खेलने वाली टीमों का न होने से कोई अम्पायर निष्पक्ष भले ही हो जाता हो बेहतर नहीं हो जाता। गोरा होने से भी कोई अम्पायर बेहतर नहीं हो सकता यह सचाई वेंकटराघवन और स्टीव बकनर ने साबित ही कर दी है। गलतियाँ तो वेंकट और बकनर से भी होती हैं और इंग्लैंड के डिकी बर्ड से भी होती थीं। लेकिन यह मानना गलत होगा कि स्टीव डन ने चेन्नई में भारत को हराया और जयप्रकाश ने उन्हें दिल्ली में जितवाया। याद रखना चाहिए कि दिल्ली टैस्ट के पहले दाँव में सचिन तेंदुलकर को इन्हीं अम्पायर जयप्रकाश ने एलबीडब्लू आउट दिया था जबकि सकलैन की जो गेंद उनके पाँव पर लगी थी वह लेग डंडे के बाहर जा रही थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अम्पायरी के ऐसे होने और चेन्नई और दिल्ली दोनों के पिच स्पिन गेंदबाजी के इतने मददगार होने के बावजूद अम्पायरी और पिचों को लेकर वैसी दिलजलाऊ छाती माथा कटाई नहीं हुई जैसी कि हमेशा होती रही है। क्या कारण है ? क्या भारत और पाकिस्तान के खिलाड़ी और दर्शक और पत्रकार कमेंट्रीकार क्या एकदम इतने परिपक्व हो गए हैं कि क्रिकेट की अन्तिम न्यायप्रियता में विश्वास करते हुए भावनाओं के चक्कर में न आएँ। भारत और पाकिस्तान के बीच कोई छियालीस साल से क्रिकेट हो रहा है लेकिन ऐसे सद्भाव, भाईचारे और वाहवाही में कोई सीरीज समाप्त नहीं हुई जैसी कि इस बार हुई। भारत और पाकिस्तान के बीच जो प्रतिद्वन्द्विता है वह तो इंग्लैंड और आस्ट्रेलिया के बीच भी नहीं रही। इतना तनाव और ऐसा दबाव किन्हीं भी दो देशों की क्रिकेट टीमों के खेल में नहीं होता। भारत के पाकिस्तान से हारने पर भारत के मुसलमान बल्लियों उछलते हैं और आतिशबाजी करते हैं–ऐसा आरोप सभी हिन्दुत्ववादी लगाते हैं और पाकिस्तान को हराकर जैसा परमानन्द भारत को होता है वैसा किसी और से जीतने पर नहीं होता–ऐसा सभी का मानना है।

पाकिस्तान से हार पर हिन्दुत्ववादियों को मुसलमानों की कथित खुशी से जो अपमान लगता है उसी को टालने के लिए शिवसेना वाले पाकिस्तान के खिलाफ पिच खोद कर उनसे मैच होने नहीं देते। कश्मीर में आतंकवादी भेजने की पाकिस्तानी कारस्तानी का जवाब देने की बात तो बहानेबाजी है। जो लोग बदमाश के साथ बदमाशी को न्याय मानते हैं उनके कार्यकर्ता आतंकवादियों के जवाब में अपने देश की पिच नहीं खोदते। वे अगर सचमुच बहादुर हैं तो उन्हें पाकिस्तान में घुसपैठ करके आतंकवादियों के शिविरों को तहस-नहस कर देना चाहिए या कश्मीर जाकर आतंकवादियों से बराबरी की गुरिल्ला लड़ाई लड़नी चाहिए। सेनापति बाल ठाकरे कहते हैं कि हमें वैसे ही हथियार दो तो हम यह भी कर देंगे। मुंबई में शिवसैनिक जो करते और करवाते हैं उसके लिए हथियार कौन देता है? सच पूछिए तो शिवसेना वाले ऐसे कायर लोग हैं जो पाकिस्तान से क्रिकेट में हार को भी अपनी राष्ट्रीय पराजय मानते हैं और इसलिए उसका सामना नहीं कर सकते।

और यह भी मत मानिए कि ऐसा शिवसेना वाले ही करते हैं। ऐसी कायरता में संघ परिवारी भी संगतदार हैं। शिवसेना की कारगुजारी को उसकी पुरानी नीति कहकर बर्दाश्त करने वाले यही संघ परिवारी हैं। नीति होने से क्या वह उचित हो जाती है? नीति गलत है और उससे अगर देश का कानून टूटता है तो कड़ी प्रशासनिक कार्रवाई होना चाहिए। बोर्ड के दफ्तर में भारत का जीता हुआ विश्व कप भी शिवसैनिक तोड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आए लेकिन दिल्ली और मुम्बई के संघी प्रशासक विचलित नहीं हुए। उलटे उनके मुखपत्र आर्गनाइजर के लल्लू सम्पादक ने लिखा कि क्रिकेट के बिना हमारा काम चल सकता है। इस सीरीज की सबसे बड़ी राष्ट्रीय सफलता यह है कि चेन्नई के दर्शकों ने बता दिया कि संघ परिवार और हिन्दुत्ववादियों के बिना यह देश मजे में अपना काम चला रहा है और चलाएगा।

(21.2.99)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खिसियाकर खम्भे नोचने को हम रह गए

पाकिस्तान ने श्रीलंका से मिलकर भारत को एशियाई टैस्ट चैम्पियनशिप से बाहर कर दिया। अगर सचमुच खेलकर किया होता तो वे कागद कारे करने की जरूरत नहीं पड़ती। लेकिन उसने ऐसा खेल के बहाने मिलीभगत से किया।

पाकिस्तान के खिलाड़ियों पर सट्टाखेरों से मिलकर मैच फेंक देने या जीत लेने के आरोप कोई यों ही नहीं लगते रहे हैं। जाँच करने वाले जज साब ने तो कहा ही है किं उन्हें इतने सबूत मिल गए हैं कि कुछ सट्टाखोर खिलाड़ियों पर जीवनभर के लिए पाबन्दी लगाई जा सके। इन खिलाड़ियों में सबसे आगे नाम है वसीम अकरम का जो पाकिस्तान के कप्तान हैं और जिनने श्रीलंका से मिलकर इसका इंतजाम किया कि भारत से ढाका में फाइनल न खेलना पड़े और पाकिस्तान आसानी से एशियाई टैस्ट चैम्पियन हो जाए।

कोलम्बो में गए महीने भारत से खेलते हुए श्रीलंका ने मैच ड्रा करवा लिया था। दरअसल उनने विकेट ही ऐसा बनाया था कि जिस पर कोई फैसला न हो सके। भारत को कलकत्ता में हारने के बाद पाँच बोनस पाइंट मिले थे। अगर वह कोलम्बो में श्रीलंका से जीत जाता तो फाइनल में उसका पाकिस्तान से खेलना तय हो जाता। तब भारत को मौका मिलता कि वह कलकत्ते में हार का न सिर्फ हिसाब बराबर कर सके बल्कि एशियाई टैस्ट चैम्पियन होने के दावे पर पाकिस्तान से बराबरी पर मुकाबला कर सके। लेकिन पाकिस्तान ऐसे मुकाबले का खतरा नहीं उठाना चाहता था। कलकत्ते में उसे जो जीत मिल गई थी उसी के बल पर वह एशियाई चैम्पियन बन जाना चाहता था। इसलिए उसने मिलीभगत से श्रीलंका के इतने बोनस पाइंट बनवा दिए कि फाइनल में वही खेल सके और मुकाबला ऐसा काँटे का न हो सके कि जिसमें वह हार सके।

श्रीलंका की टीम वैसे भी वन डे की विजेता टीम है। टैस्ट मैच में उसकी टीम ज्यादा से ज्यादा मैच ड्रा करवा सकती है। फिर उसके सबसे धारदार गेंदबाज मुरलीधरन और धुआँधार बल्लेबाज सनत जयसूरिया आस्ट्रेलिया में चोट खाकर और ऑपरेशन करवाकर खेल से अभी बाहर हैं। वे दरअसल विश्व कप की तैयारी में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
आराम कर रहे हैं। कोलम्बो में वे भारत के खिलाफ खेले नहीं। लेकिन मैच के दौरान कप्तान रणतुंगा और उपकप्तान अरविन्द डिसिल्वा की भी मांसवेशी खिंच गई और तेज गेंदबाज चामिंडा वास भी पूरी तरह फिट न होने के कारण ठीक से गेंदबाजी नहीं कर पाए। ड्रा हुए इस टैस्ट से श्रीलंका को कुल चार बोनस पाइंट मिले थे।

लाहौर में पाकिस्तान से खेलते हुए उसे सात बोनस पाइंट मिलने की सम्भावना नहीं थी क्योंकि जयसूरिया और मुरलीधरन ही नहीं रणतुंगा, डिसिल्वा और बास भी वहाँ खेलने नहीं गए थे। इन पाँच धुरन्धर खिलाड़ियों के दम पर ही श्रीलंका ने विश्व कप जीता था और इन्हीं के भरोसे उसका टैस्ट क्रिकेट भी चल रहा था। इन पाँचों के न होने के बावजूद श्रीलंका पाकिस्तान में पाकिस्तान से सात बोनस पाइंट जीत ले इसकी सम्भावना नहीं दिखती थी। इसलिए लगभग निश्चित मान लिया गया था कि एशियाई टैस्ट चैम्पियनशिप का फाइनल पाकिस्तान और भारत के बीच होगा। क्रिकेट में अनहोनी भी हो जाती है इसलिए उसकी गुंजाइश हमेशा ही छोड़ी जाती है।

कलकत्ता और कोलम्बो के दो टैस्टों से भारत को कुल दस बोनस पाइंट मिले थे। श्रीलंका उसे ढाका में खेलने से तभी वंचित कर सकता था जब वह लाहौर के मैच से कम से कम सात बोनस पाइंट कमा लेता। ऐसा लगता नहीं था कि श्रीलंका को इसकी बड़ी चिन्ता हो कि उसे ये पाइंट मिलें ही। यह विश्व कप की तैयारी में अपने सभी बड़े खिलाड़ियों को इतना आराम देने में लगा हुआ था कि वे अपनी-अपनी चोटों से उबरकर पूरी तरह फिट हो सकें। एशियाई टैस्ट चैम्पियनशिप उनके लिए इतनी महत्त्वपूर्ण नहीं थी कि विश्व कप से अपने बड़े खिलाड़ियों के दूर होने का खतरा मोल ले सकें। श्रीलंका में पिछला स्मिथ कप जीता है और मई के महीने में इंग्लैंड में उसे इस कप का बचाव करना है।

इसलिए हशन तिलकरत्ने को कप्तान बनाकर श्रीलंका ने लाहौर ऐसे नवयुवकों की टीम भेजी जिन्हें मौके और अभ्यास की जरूरत थी। यह टीम पाकिस्तान से खेलकर सात बोनस पाइंट छीन ले, इसकी कोई खास उम्मीद श्रीलंका के बोर्ड को नहीं थी। लाहौर के टैस्ट में पहले दिन श्रीलंका की टीम न ऐसा खेली न, उसने ऐसी लय बनाई कि लगे कि वह ढाका में फाइनल खेलने के लिए बहुत तत्पर हो। पाकिस्तान ने तीन विकेट खोकर पैंसठ ओवर में 192 रन बनाए थे। बोनस पाइंट की उसे कोई दरकार नहीं थी क्योंकि कलकत्ते के टैस्ट में सत्रह पाइंट पाकर वह पहले ही फाइनल में पहुँच चुकी थी। फिर भी उसे बल्लेबाजी के चार बोनस पाइंट पाने के लिए पैंतीस ओवर में कोई 108 रन बनाने थे। यानी एक ओवर में तीन रन से कुछ ज्यादा। पिच और श्रीलंकाई गेंदबाजी को देखते हुए यह कतई मुश्किल नहीं था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन दूसरे दिन जब खेल शुरू हुआ तो पाकिस्तान के बल्लेबाज यूसुफ योहाना और वजाहत वास्ती तेजी से रन बनाने को ऐसे उतारू दिखे कि उन्हें अपने आउट होने की कोई परवाह ही नहीं थी। टीवी पर कमेंट्री करते पाकिस्तान के पुराने तेज गेंदबाज सिकन्दर बख्त ने कहा कि उन्हें पाकिस्तान की रणनीति समझ के बाहर लग रही है। ये या तो श्रीलंका को गेंदबाजी के बोनस पाइंट दिलाना चाहते हैं या लंच पर पारी घोषित करके मैच जीतने की कोशिश में हैं। लेकिन अभी तो दूसरा दिन शुरू हुआ है। पाकिस्तान मजे में चाय तक खेलकर काफी रन बना सकता है। ऐसा खेलना तो वह तभी कर सकता है जब उसने तय कर लिया हो कि फाइनल में श्रीलंका को खिलाया जाए। भारत के सुनील गावसकर साथ में कमेंट्री कर रहे थे। उनने हँसकर कहा कि लेकिन लगता नहीं कि श्रीलंका फाइनल में पहुँचने को बहुत उत्सुक हो। उसी वक्त किसी लंकाई फील्डर ने आसान कैच छोड़ा था।

बहरहाल योहाना, आफरीदी, वास्ती, सकलैन और अकरम ऐसे ही खेलते हुए आउट हुए। श्रीलंका ने भी अस्सी ओवर होते ही नई गेंद नहीं ली। नब्बे ओवर के बाद ली। सौ ओवर में पाकिस्तान 350 से ऊपर रन भी बना गया और उसने अपने दसों विकेट श्रीलंका को सौंपकर उसे गोलंदाजी के चार बोनस पाइंट भी दिला दिए। पाकिस्तान की बल्लेबाजी और श्रीलंका की गेंदबाजी और फील्डिंग देखकर यह साफ लगता था कि दोनों टीमों ने तय किया है कि पाकिस्तान भी बोनस पाइंट लेगा और श्रीलंका को भी दिलवाएगा। पाकिस्तानी कमेंट्रीकार बख्त ने कहा भी कि चूँकि पाकिस्तान इस मैच को नियन्त्रित कर रहा है इसलिए वह चाहता है कि श्रीलंका ही फाइनल खेले। यह मिलीभगत का खेल है—इसके बचे-खुचे सबूत श्रीलंका की बल्लेबाजी से मिल गए। दूसरे दिन अकरम ने सिर्फ सात ओवर फेंके। जो फजले अकबर बुरी तरह पिट रहे थे वही गेंदबाजी करते रहे। सकलैन मुश्ताक की गेंद पर चूँकि तीन श्रीलंकाई बल्लेबाज आउट हो गए थे इसलिए वे भी गेंदबाजी छोड़कर फ्लू से पीड़ित होकर पेवेलियन लौट गए। श्रीलंका ने पचास से कम ओवरों में चार विकेट पर 187 रन बना लिये।

तीसरे दिन फिर फजले अकबर और आफरीदी रसेल ऑरनाल और कालूवितर्णा को खेलाते रहे। पाकिस्तान के सबसे प्रभावकारी गेंदबाज अकरम और सकलैन मुश्ताक गेंदबाजी करने नहीं आए। जब तय हो गया कि तीन बोनस पाइंट मिल जाने पर श्रीलंका ही फाइनल खेलेगा तब लंच के बाद अकरम गेंद करने आए और हैट्रिक समेत चार विकेट ले गए। सकलैन मुश्ताक ने इसके पहले अपने पहले ओवर में बारह रन दिए और जिस घातक गेंदबाजी के लिए वे जाने जाते हैं वह तीसरे दिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिखाई नहीं दी। कहा गया कि अकरम और सकलैन दोनों की ही तबीयत ठीक नहीं थी इसलिए वे गेंदबाजी पर नहीं लगे। लेकिन फील्डिंग तो वे फिर भी करते रहे। अकरम ने शुरू में सात ओवर करने के बाद तभी गेंदबाजी की जब श्रीलंका को बल्लेबाजी के तीन बोनस पाइंट मिल चुके थे। और सकलैन मुश्ताक तब गेंदबाजी छोड़कर गए जब उन्हें खटाखट तीन विकेट मिल चुके थे लेकिन श्रीलंका भारत को पीछे करने से दो पाइंट पीछे था।

जब तय हो गया कि भारत नहीं श्रीलंका ही फाइनल में खेलेगा तो पाकिस्तान को नाहक दिन-भर फील्डिंग करना गवारा नहीं हुआ। उसने ग्यारह रन में श्रीलंका की पारी समाप्त कर दी और जीतने के लिए बल्लेबाजी करने लगा। तीसरे दिन का खेल खत्म होने तक वह उसने दो सौ तक बढ़ा ली और कोई विकेट नहीं गँवाया। आफरीदी और वास्ती के दस-बारह कैच श्रीलंकाई फील्डरों ने टपकाए। सही है कि अकरम को हैट्रिक श्रीलंका ने प्लेट पर रखकर नहीं दी लेकिन यह भी सही है कि कुल अकरम ने शुरू के सात ओवरों के अलावा गेंदबाजी नहीं की। अब पाकिस्तान जीत भी जाए तो यह टैस्ट खेला हुआ नहीं खिलवाड़ किया हुआ ही माना जाना चाहिए क्योंकि दोनों टीमों ने इसे एक दूसरे के खिलाफ नहीं खेला है, मिलकर खेला है।

पाकिस्तान ने लाहौर में जो किया वह नियम के विरुद्ध नहीं था लेकिन मुकाबले की खेल भावना से भी यह टैस्ट नहीं खेला गया। पाकिस्तान नहीं चाहता था कि फाइनल में भारत का सामना करना पड़े क्योंकि यह भारत को जीतने का मौका भी देना था। पाकिस्तान को भारत से हारना बहुत बुरा लगता है जैसा कि भारत को भी पाकिस्तान से हारना खटकता है। पाकिस्तान ने श्रीलंका से मिलकर बोनस पाइंट प्रणाली का ऐसा उपयोग किया कि भारत चैम्पियनशिप से बाहर हो गया। अब ढाका में पाकिस्तान का जीतना तय है क्योंकि श्रीलंका को उसी ने फाइनल में पहुँचाया है। यह सब करते हुए पाकिस्तान ने क्रिकेट का कोई नियम नहीं तोड़ा है। यह साफ लगते हुए भी कि पाकिस्तान और श्रीलंका की मिलीभगत है इन दोनों टीमों के खिलाफ कुछ नहीं किया जा सकता क्योंकि यह साबित नहीं हो सकता कि कैच जान-बूझकर छोड़े गए, गोलंदाजी ऐसी की गई कि रन आसानी से बनें और जब आउट होना था तभी लोग आउट हुए। खेल की भावना से खिलवाड़ करते हुए भी आप नियम से खेलते रह सकते हैं।

पाकिस्तान के इसी तौर-तरीके के कारण ईडन गार्डंस में खेल देखने आए कोई एक लाख दर्शकों को लगा कि सचिन तेंदुलकर को रोकने के लिए ही शोएब अख्तर वहाँ आकर खड़े हुए थे। सचिन जिधर भी रन पूरा करने के लिए गए वहीं शोएब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अड़ गए। अम्पायरों ने भी सचिन को शंका का लाभ नहीं दिया जबकि वह हमेशा बल्लेबाज को ही मिलता है। जैसे साबित नहीं किया जा सकता कि पाकिस्तान और श्रीलंका लाहौर में मिलकर खेले ताकि भारत को फाइनल से बाहर किया जा सके वैसे ही साबित नहीं होता कि शोएब ने जान-बूझकर सचिन का रास्ता रोका। शोएब की मंशा साबित नहीं की जा सकती इसलिए सचिन आउट दिए गए और इसे कलकत्ते के दर्शक पचा नहीं सके। उनने उपद्रव करके मैच आगे चलने में बाध ा डाली और पाँचवें दिन मैच तभी पूरा हो सका जब स्टेडियम खाली करवा लिया गया। दर्शकों ने ठीक नहीं किया। कलकत्ता और खेल को कलंकित किया क्योंकि कानून को अपने हाथ में लेकर तोड़ा। उन्हें शिकायत थी कि पाकिस्तानियों ने नियम से खिलवाड़ करके भारत को हराया है। लाहौर में हमने देख ही लिया कि किस तरह पाकिस्तान ने नियम से खिलवाड़ करके भारत को फाइनल से बाहर किया है।

यह सब लिखना और कहना खेल में खिसियाई बिल्ली खम्भा नोचे भी कहा जा सकता है। क्योंकि आजकल जीतना सबसे बड़ा और ऊँचा माना जाता है और जीत के लिए नियम से खेलना कोई बुरी बात नहीं मानी जाती। पाकिस्तान ने लाहौर में जो भी किया वह नियम तोड़े बिना किया इसीलिए उसके खिलाफ कुछ नहीं किया जा सकता। खेल-भावना कोई पवित्र गैया नहीं है जिससे खिलवाड़ करने की सजा होती हो या जिस पर सारी दुनिया धिक्कार देकर थू-थू करती हो। पाकिस्तान को खेल-भावना की नहीं जीत की फिकर है और नियम में रहते हुए सब तरह की कारस्तानी करने में वह माहिर है। इंग्लैंडवाले पाकिस्तान को धोखाधड़ी करनेवाला मानते ही हैं।

आस्ट्रेलिया और दूसरे कई क्रिकेट खेलनेवाले देश भी खेल के लिए उसका सम्मान नहीं करते। क्रिकेट में न्यूट्रल अम्पायर इसीलिए आए कि पाकिस्तान जानेवाली हर टीम वहाँ के अम्पायरों को कोसते हुए लौटती थी।

जब भारत से सामना हो तो पाकिस्तान जीतने के लिए कुछ भी कर सकता है। मैच उसके लिए जंग है और लड़ाई में जिस तरह सब जायज होता है वैसा ही पाकिस्तान के लिए मैच में सब जायज है। लेकिन भारत में वैसी आग नहीं जागती। बल्कि हमारी टीम पाकिस्तान के खिलाफ खेलते हुए बेहद तनाव और दबाव में आ जाती है। कलकत्ते में पाकिस्तान के छह विकेट पर सिर्फ छब्बीस रन थे फिर भी वह पहले दाव में 185 रन बना गया। दूसरे दाव में हमारे 107 पर कोई आउट नहीं था फिर भी हमसे 279 रन नहीं बने। चेन्नई में हम सिर्फ बारह रन से हारे। हमारे चार विकटों से सत्रह रन नहीं बने। हमें एक टीम की तरह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
जान देकर लड़ानेवाला कोई कप्तान नहीं है। अजहर भले आदमी लेकिन लल्लू कप्तान हैं। ये टीम को लड़ मरनेवाली फौज तो बना ही नहीं सकते। उनमें नेतृत्व के वे गुण ही नहीं हैं।

लेकिन जब तक भारत की टीम में यह आग और धार नहीं आती हम इसी तरह छले जाकर खम्भा नोचते रहेंगे। नोचते रहें?

(7.03.99)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बार-बार पाकिस्तान की हेकड़ी निकालो

जानता हूँ कि यह क्रिकेट नहीं है। जिस पर लिख रहा हूँ वह और जैसा लिख रहा हूँ वह भी। लेकिन इंग्लैंड और सातवें विश्व कप की अपनी सबसे दुखदायी यादगार यही है और इसलिए जरूरी है कि पहले उससे निपट लूँ फिर दूसरी बातें लिखने में लगूँ।

आठ जून को मेनचेस्टर के ओल्ड ट्रेफर्ड मैदान पर भारत ने पाकिस्तान को 47 रनों से हरा दिया। मैच बहुत तनाव में और विश्व कप की सबसे तगड़ी सुरक्षा व्यवस्था में हुआ। लेकिन कहीं कोई बदमजगी नहीं हुई यानी न खिलाड़ियों में कहा-सुनी हुई, न अम्पायर बकनर और शेफर्ड ने कोई गलत-सलत फैसला दिया। भारत के साफ और धमाके से जीतने के बाद भारतीयों ने आतिशबाजी की। पाकिस्तानी दर्शक ज्यादा बड़ी संख्या में थे। मेनचेस्टर में पाकिस्तान से आए ज्यादा लोग रहते भी हैं। लेकिन उनकी टीम हार गई थी और इसलिए वे आखिर में खीजे और हताश मैदान में घूम रहे थे। लेकिन यह उन्हें और भी बड़ी हार लग रही थी कि वे भारतीयों को विजय का उत्सव मनाने दें और चुपचाप मैदान से बाहर हो जाएँ।

जब पेवेलियन में पुरस्कार समारोह हो रहा था और भारतीय मूल के दर्शक तिरंगे लहराकर उनके साथ झूम रहे थे तब पिच के पास पाकिस्तानी दर्शक इकट्ठे हुए और उनने एक बड़े से तिरंगे झंडे को आग लगा दी। हमारे प्रेस बॉक्स से पाकिस्तानियों की यह कारस्तानी ज्यादा पास थी और पुरस्कार समारोह दूर दाहिनी ओर। वे पाकिस्तानी दर्शक जानते थे कि प्रेस और टीवी का ध्यान उन पर जाएगा। लेकिन वे झंडा पूरा जला पाते इससे पहले ही सुरक्षा कर्मचारी उन पर टूट पड़े और एक-दो को पकड़के भी ले गए। दो-तीन पाकिस्तानी पत्रकारों को बुरा लगा कि दर्शकों के साथ यह जबरदस्ती की गई। तिरंगा झंडा जलाने वाले दर्शकों से अपनी सहानुभूति जताने में उन्हें कोई हिचक नहीं हुई।

लेकिन मैं सुन्न रह गया। विदेशी चैनलों पर कभी पाकिस्तानियों और कभी कश्मीरियों को विरोध में तिरंगा जलाते हुए देखा है। लेकिन वह इंग्लैंड का एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुराना टैस्ट मैदान था और उस पर खेले गए मैच में भारत ने पाकिस्तान को साफ और अच्छी तरह हराया था। भारत की ओर से कोई अन्याय नहीं हुआ था। भारत ने पाकिस्तानियों का कोई हक नहीं छीना था। इसके पहले सिडनी और बँगलूर में भारत ने विश्व कप के मैचों में पाकिस्तान को हराया था। पाकिस्तान हाल ही भारत से वन-डे की तितरफा सीरीज जीतकर गया था। फिर भी इंग्लैंड में बसे पाकिस्तानियों को यह बर्दाश्त नहीं था कि वे भारतीयों को जीत का जलसा मनाने दें और अपनी टीम के हारने के गम में मैदान छोड़कर चले जाएँ। उन्हें जरूरी लगा कि भारत का कुछ बिगाड़ा जाए। जो तिरंग लहराते हुए वे जीत की खुशी में घूम रहे हैं उसका जवाब उनका वही झंडा जला कर दिया जाए। यानी क्रिकेट के मैदान पर खेल में भारत की जीत भी उन्हें बर्दाश्त नहीं थी। भारत के गौरव के प्रतीक को जला कर वे पाकिस्तानी जैसे बताना चाहते थे कि वे कहीं भी भारत को जीतते और पाकिस्तान को हारते नहीं देख सकते। वे मानते हैं और अंग्रेजों ने उनकी इस हेकड़ी को हवा दी है कि पाकिस्तानी भारतीयों से जबरें हैं और आमने-सामने की टक्कर में मुसलमान हिन्दुओं से भारी पड़ते हैं। पाकिस्तानी दर्शक ही नहीं पाकिस्तानी टीम भी भारत के साथ इसी गरूर से खेलती है।

ओल्ड ट्रेफर्ड के उस मैदान में जहाँ भारत ने पाकिस्तानी टीम को हराया था पाकिस्तानी दर्शकों का पिच के पास तिरंगा जलाना खेल के उत्साही या भरमाये दर्शकों का बरताव नहीं था। यह निश्चित ही खेल के आरपार जाने और जमी रहने वाली खुन्नस की बखिया उधेड़कर दिखाता था। दर्शकों के देशप्रेमी बरताव या स्वभाव का ही सवाल हो तो अपने को सबसे बड़ा तुर्रम खाँ समझने वाले तो दक्षिण अफ्रीकी गोरे हैं। वे तो बाकी दुनिया को अपने सामने कुछ समझते ही नहीं और ऐसे व्यवहार करते हैं कि जैसे मैदान, सड़क, स्टेशन और तेजी से भागती रेल में उनके अलावा लोग कोई हैं ही नहीं। अभी कल तक नस्लवादी वर्चस्व चलाने वाले ये दक्षिण अफ्रीकी गोरे बाकी लोगों को नाकुछ समझने में इतराएँ तो, कोई नई बात है भी नहीं। इन दक्षिण अफ्रीकियों को इंग्लैंड के लोगों का अच्छा और ठोस प्रदर्शन मिलता रहा है, सरकारों ने भले ही भेदभावी दक्षिण अफ्रीका का बॉयकॉट किया हो। दक्षिण अफ्रीका पर पाबन्दियाँ लगाने में इंग्लैंड की सरकारें भले ही बाकी दुनिया के साथ रही हों पर अंग्रेज लोगों की सहानुभूति हमेशा वहाँ के नस्लवादी गोरों के साथ रही है।

चूँकि इस विश्व कप की सबसे बड़ी दावेदार दक्षिण अफ्रीका की टीम थी और अगला विश्व कप भी वहीं होना है इसलिए इस बार इंग्लैंड में दक्षिण अफ्रीकी बहुत बड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संख्या में आए थे और जहाँ भी उनकी टीम खेलती थी, वे जमा हो जाते थे। भारतीयों, पाकिस्तानियों, बांग्लादेशियों और श्रीलंकाइयों से उनकी संख्या फिर भी कम पड़ती थी लेकिन शोर मचाने और झंडे लहराने और लगातार शराब पीकर दुर्व्यवहार करने में वे सबसे आगे ही होते थे। जुनून में वे पाकिस्तानियों को अच्छी टक्कर दे सकते थे। दक्षिण अफ्रीका ने पाकिस्तान में और फिर अपने देश में पाकिस्तान को टैस्ट और वन डे दोनों में हराया भी था। पाँच जून को ट्रेंट ब्रिज नाटिंघम में सुपर सिक्स के मुकाबले में दक्षिण अफ्रीका ने फिर पाकिस्तान को तीन विकेट से हराया। वहाँ भी बड़ी संख्या में दक्षिण अफ्रीकी और पाकिस्तानी जमा थे। पहले पाकिस्तानी शोर करते रहे और नारे लगाते रहे। फिर दक्षिण अफ्रीकियों ने मैदान सिर पे उठा लिया। शोएब अख्तर के एक ओवर में क्लूजनर ने दो चौके और एक छक्का जड़कर मैच पाकिस्तान से छीन लिया। क्लूजनर ने एक छक्का अकरम को और एक सकलैन को भी मारा था।

लेकिन इस पराजय के बाद पाकिस्तानी दर्शक सिर लटकाए लौट गए। वहाँ न उनने दक्षिण अफ्रीकी झंडा जलाने की कोशिश की, न पुरस्कार समारोह में अपना झंडा फहराकर नारेबाजी की। नाटिंघम में तो उस शाम जैसे दक्षिण अफ्रीकी गोरों का राज था। बसों, सड़कों, स्टेशनों और रेलों तक पर जैसे उनका कब्जा था। पाकिस्तानी वहाँ दिखते तक नहीं थे। उनने अपने झंडे लपेट लिए थे, सीटियाँ और भोंगे थैलों में रख लिए थे और चुपचाप घरों को लौट गए थे। दक्षिण अफ्रीकी जीत और अपनी हार का बदला लेने की कोई कोशिश उनने नहीं की। दक्षिण अफ्रीका से हारने में पाकिस्तानियों को बुरा नहीं लगता। वे इसे खेल में हार मानकर चल देते हैं। लेकिन भारत की जीत उन्हें कतई बर्दाश्त नहीं।

खेलों में खुन्नस आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड में भी कोई कम नहीं है। दोनों को एक दूसरे की जीत फूटी आँखों नहीं सुहाती। सन बानवे के विश्व कप में जब न्यूजीलैंड को पाकिस्तान ने हरा दिया तो आस्ट्रेलिया के अखबारों में छपा कि वह जानबूझकर हार गया ताकि उसे आस्ट्रेलिया आकर सेमी फाइनल न खेलना पड़े। वैसे न्यूजीलैंड सेमी फाइनल में भी पाकिस्तान से हार गया और उसके फाइनल में न पहुँच पाने की राहत आस्ट्रेलिया में साफ देखी और महसूस की जा सकती थी। उस विश्व कप में पहले दौर में न्यूजीलैंड ने आस्ट्रेलिया को हराकर शुरुआत की थी। उसके सारे मैच अपने घर के पिचों पर ही थे और पाकिस्तान से हारने के पहले वह किसी से हारा भी नहीं था। न्यूजीलैंड का प्रदर्शन आस्ट्रेलिया से ठीक विपरीत और शानदार था और इसकी व्यथा आस्ट्रेलिया में थी। इसका बदला आस्ट्रेलिया ने सन् 96 के विश्व कप में चेन्नई में न्यूजीलैंड को हराकर लिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
इस विश्व कप के पहले दौर में न्यूजीलैंड ने आस्ट्रेलिया को कार्डिफ में पाँच विकेट से हराया था। दोनों की प्रतिद्वन्द्विता वहाँ भी देखी जा सकती थी। लेकिन ऐसा नहीं हुआ कि आस्ट्रेलिया को हराने के बाद न्यूजीलैंड के दर्शकों ने जैसे कार्डिफ पर कब्जा कर लिया हो। वे खैर इतनी संख्या में थे भी नहीं कि कुछ कर पाते लेकिन न्यूजीलैंड का झंडा लिये वे भी जहाँ-जहाँ उनकी टीम जाती उसका हौंसला बढ़ाने जाते थे। बाहर से आए दर्शकों में वही सबसे सभ्य और दोस्ताना तबीयत के लोग थे। आस्ट्रेलिया के दर्शक समर्थक न्यूजीलैंड की तुलना में ज्यादा शोर करने और रौब दिखाने वाले लोग थे। लेकिन ऐसा नहीं हुआ कि आस्ट्रेलिया को हराकर न्यूजीलैंड ने अपने दर्शकों को इतना उत्तेजित कर दिया हो कि वे आस्ट्रेलियाई झंडा जलाने लग जाएँ। या न्यूजीलैंड से हार कर आस्ट्रेलियाई इतने खीजे हों कि न्यूजीलैंड का झंडा जला दें। खेल की उनकी प्रतिद्वन्द्विता खेल तक ही सीमित रहती है। पड़ोसी होने की खुन्नस भी खेल में ही निकलती है। वे एक दूसरे का झंडा नहीं जलाते।

प्रतिद्वन्द्विता से कुछ ज्यादा वेस्टइंडीज और दक्षिण अफ्रीका के बीच खटकती है। दक्षिण अफ्रीका के गोरे अपने को कालों से श्रेष्ठ मानते रहे हैं और वेस्टइंडीज के महान खिलाड़ी कालों के गर्व और गौरव के लिए खेलते रहे हैं। विवियन रिचर्ड्स, क्लाइव लॉयड, होल्डिंग, मार्शल आदि गोरी टीमों से खेलते वक्त अपने गर्व को जाहिर करने में कोई कोताही नहीं करते थे। जो वेस्टइंडियन खिलाड़ी भेदभाव वाले राज के वक्त दक्षिण अफ्रीका गया उनका पत्ता वेस्टइंडीज के क्रिकेट से ही कट जाता था। इस विश्व कप में वेस्टइंडीज का सामना दक्षिण अफ्रीका से नहीं हुआ इसलिए दोनों के समर्थकों का टकराव भी देखने को नहीं मिला। लेकिन इंग्लैंड में वेस्टइंडीज के लोगों की कमी नहीं है। उनमें अपनी तरह जीने रहने और बरताव करने की एक आक्रामकता भी है जो आपको एशियाई मूल के लोगों में देखने को नहीं मिलेगी। वेस्टइंडीज के समर्थक चाहते तो जगह-जगह जाकर दक्षिण अफ्रीका की तिलीमिली कर सकते थे जैसा कि पाकिस्तानी भारतीयों की करने की कोशिश करते थे। लेकिन वेस्टइंडीज के मैचों के अलावा वे कहीं दिखे भी नहीं। और उन्हें इसकी भी शिकायत नहीं थी कि न्यूजीलैंड और जिम्बाब्वे जैसी टीमें सुपर सिक्स और सेमी फाइनल में पहुँच गईं और पहले दो विश्वकप जीतने वाली वेस्टइंडीज न्यूजीलैंड से रन रेट में 0.08 से पिछड़ गई तो सुपर मिक्स में भी नहीं आ सकी।

इस विश्व कप में बारह टीमें थीं। पाकिस्तानी दर्शकों को भारत के अलावा किसी टीम से कोई अदावत नहीं थी। हारने को पाकिस्तान बांग्लादेश से भी हारा। बांग्लादेश भी आखिर एक स्वतन्त्रता संग्राम लड़कर ही पाकिस्तान से अलग हुआ है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और पाकिस्तान की फौज ने बांग्लादेशियों को दबाने में कोई कम क्रूरता नहीं दिखाई है। लेकिन बांग्लादेश जो क्रिकेट में अभी टैस्ट का दर्जा भी नहीं पा सका है उससे भी हारने के बाद पाकिस्तानी दर्शकों ने बांग्लादेश का झंडा नहीं जलाया। बांग्लादेश की उमंग में ठेस मारने की भी कोशिश नहीं की। पाकिस्तानी कप्तान वसीम अकरम ने हारने के बाद कहा कि कोई बात नहीं हम अपने भाइयों से ही हारे हैं। बांग्लादेशी उनके भाई हैं, भारतीय या श्रीलंकाई नहीं क्योंकि बांग्लादेश इस्लामी देश है और उसकी टीम में सब मुसलमान हैं। भारतीय टीम का तो कप्तान ही मुसलमान है फिर भी वह भाई क्यों नहीं है?

सभी टीमों के खिलाड़ी और सभी दर्शकों-समर्थकों को देखने का मौका इंग्लैंड में मिला। लेकिन वहाँ के पाकिस्तानी दर्शकों में भारतीय टीम के प्रति दुश्मनी जैसा रवैया जो दिखा वैसा किसी भी टीम के समर्थकों-दर्शकों में नहीं दिखा। औसत अंग्रेज को आस्ट्रेलिया का जीतना बिलकुल नहीं भाया। वे लगातार पाकिस्तान की टीम में हवा भरते रहे और अखबार लिखते रहे कि पाकिस्तान को जीतना चाहिए। लेकिन पहले हेडिंग्ली और फिर एजबेस्टन में आस्ट्रेलिया ने जिस तरह दक्षिण अफ्रीका को हराया और फिर फाइनल को बिलकुल एकतरफा बना दिया उससे ब्रिटेन के मीडिया और लोगों ने आस्ट्रेलिया का लोहा माना। आप जानते हैं कि इंग्लैंड और आस्ट्रेलिया में कितनी खटकती है। आस्ट्रेलिया के लोग आखिर इंग्लैंड के अपराधियों की सन्तानें हैं। आस्ट्रेलिया का सबसे लोकप्रिय शगल अंग्रेजों का मखौल उड़ाता है और अंग्रेज आस्ट्रेलियाई लोगों को हिकारत से देखने में ही सन्तोष पाते हैं। उनमें भी आखिर उसी तरह खटकती है, जैसी दो भाइयों में। पाकिस्तान भी आखिर भारत से काटकर अलग किया गया है और नस्ल के हिसाब से देखें तो भारत और पाकिस्तान भाई ही हैं। लेकिन अंग्रेज फिर भी खेल में आस्ट्रेलिया का लोहा मान लेगा, पाकिस्तानी नहीं मानेगा कि भारतीयों में कोई बेहतरी हो सकती है।

इसलिए किसी से भी खेल में हारने या जीतने पर कोई देश के दर्शक किसी का झंडा नहीं जलाते। इंग्लैंड में रहते हुए और ब्रिटिश नागरिक बनकर भी पाकिस्तानी दर्शक भारत से हारने पर तिरंगा जलाए बिना सन्तोष नहीं कर सकते क्योंकि यह कैसे हो सकता है कि भारत उन्हें हरा दे। भारत का तो अपमान किए बिना उन्हें शान्ति नहीं मिल सकती। ओल्ड ट्रेफर्ड का क्रिकेट मैदान तो उनकी खुन्नस को जाहिर होने का मौका भर है। वहाँ अगर पाकिस्तान हारे तो खम्भा नोचने के लिए पाकिस्तानी तिरंगा जरूर जलाएँगे।

मैं जानता हूँ कि यह पाकिस्तानियों की हीन भावना है जो उन्हें भारतीयों के खिलाफ बहुत आक्रामक होने और अपने को श्रेष्ठ समझने को प्रेरित करती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनकी दिखनौटी मर्दानगी और हेकड़ी आखिर उनके राष्ट्रीय गुबारे में भरी हुई बासी हवा है। इसलिए ओल्ड ट्रेफर्ड में तिरंगा जलते देखने के बाद पाकिस्तान का लाड्र्स में बुरी तरह हारना मुझे बहुत सन्तोष दे गया है। पाकिस्तान अगर चाहता है कि भारत के खिलाफ खेल का मैदान भी युद्ध का मैदान हो तो हमें उसे युद्ध देना चाहिए और उसमें उसका वही हाल करना चाहिए जो तीन युद्धों में किया है। बार-बार ऐसा किए बिना उसकी हेकड़ी निकलेगी नहीं।

(27.6.99)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सचिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्प्रास और सचिन तेंदुलकर फिर नए हुए दो पुराने हीरो

आप जानते हैं कि अपन फुटबॉल के ऐसे दीवाने नहीं हैं कि रात को दो बजे तक बैठे विश्वकप का हर मैच देखते रहें। ज्यादातर हिन्दुस्तानी फुटबाल के वैसे दीवाने हैं ही नहीं। कोई खेल आपका खेल है या नहीं—यह जानने की एक पक्की कसौटी है कि उससे लोगों का सामूहिक राग-द्वेष ज्वार-भाटे की तरह चढ़ता-गिरता है या नहीं। कलकत्ता और केरल की कुछ जगहों को छोड़ दें तो फुटबॉल भारत में कहीं ऐसा ज्वार-भाटा नहीं लाता। अपने पर तो खैर उसका जादू चढ़ता ही नहीं।

इसलिए पिछले हफ्ते के अपने सबसे सुखकारी और सन्तोषदायी घंटे रहे पहले सम्प्रास को पाँचवाँ विंबलडन खिताब जीतते देखना और फिर भरे कोलम्बो में भारत का श्रीलंका को इंडिपेंडेंस कप के फाइनल में छह रन से पीटना।

सम्प्रास महानता की देहरी पर पहुँच गए हैं लेकिन यह साल उनके लिए अच्छा नहीं जा रहा था। आस्ट्रेलिया और फ्रेंच ओपन में वे क्वार्टर फाइनल से आगे नहीं बढ़ पाए थे और एटीपी टूर के दूसरे टूर्नामेंटों में भी वे हर किसी से हार रहे थे। कुछ दिनों के लिए तो वे नम्बर वन भी नहीं रहे। चिली के मार्सेली रिऔस उनसे नम्बर मार गए। सम्प्रास से बेहतर तो आन्द्रे अगासी खेल रहे थे जो ब्रुक शील्ड्स से शादी करने के बाद जैसे नए उत्साह और उमंग से विश्वविजय करने लौटे हों।

ऐसा होता है। इवान लेंडल अपने देखते-देखते शिखर से खिसके तो फिर लाख कोशिश करने के बाद भी पहुँच नहीं पाए। विंबलडन के जिस खिताब के बारे में वे चढ़ती जवानी के दिनों में कहते थे कि घास गैयाओं के लिए है उसे पाने के लिए बदले में अपने वे सारे खिताब देने को तैयार थे। लेकिन विंबलडन उससे जीता नहीं गया तो नहीं गया। और जो टेनिस खिलाड़ी विंबलडन नहीं जीत पाए वह हार्ड कोर्ट और क्ले पर चाहे जितना अच्छा खेलता हो महान नहीं हो सकता। और लेंडल के पहले मेकिनो और कोनोर्स भी महानता की देहरी पर आ कर ठिठक गए और उनके बाद बेकर और एडबर्ग।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
सम्प्रास दस ग्रैंड स्लैम जीतकर उनसे तो आगे हो गए थे और लगभग सभी मानने लगे थे कि जितना ऑल राउंड चहुँमुखी खेल सम्प्रास का है उतना और किसी का नहीं। लेकिन ग्यारह खिताब जीते हैं बोर्ग और लेवर ने और सबसे बड़ा रेकार्ड है—आस्ट्रेलिया के रॉय एमरसना का—बारह खिताबों का। सम्प्रास को इस बार विंबलडन जीतकर बोर्ग की बराबरी करनी थी जो लगातार पाँच साल जीते हैं और छह दूसरे खिताब। रॉड लेवर पाँच विंबलडन तो नहीं जीते हैं पर उनने भी ग्यारह खिताब जीते हैं। रॉय एमरसन तक पहुँचने के पहले सम्प्रास को बोर्ग और लेवर तक पहुँचना था और इस बार का विंबलडन उनके लिए सबसे अच्छा और निर्णायक मौका था।

विंबलडन की पवित्र घास की कोर्ट पर ही चार खिताब जीतकर सम्प्रास महानता की देहरी पर पहुँचे थे। ग्रीस से अमेरिका में बसे इस खिलाड़ी ने पहला खिताब भले ही आठ साल पहले अमेरिका ओपन जीतकर पाया हो—उनकी ख्याति तो विंबलडन में उनके पराक्रम पर ही खड़ी है। वहीं पाँचवाँ खिताब जीतकर वे बोर्ग और लेवर के बराबर आकर खड़े हो सकते थे। लेवर तो उनके आदर्श रहे ही हैं बोर्ग को भी लगातार पाँच साल तक टीवी पर जीतते देखकर बालक सम्प्रास को कभी लगता नहीं था कि कोई उनकी बराबरी कर सकेगा। अब सम्प्रास को बोर्ग की बराबरी और अपने आदर्श के समान होने का मौका था और अब तक जो सारे समझदार लोग उन्हें अजेय बताते थे वे कहने लगे थे कि सम्प्रास अपराजेय नहीं लगते। चोटों और खराब खेलने का लगभग पूरा साल उनका पीछा कर रहा था।

सम्प्रास के खेल की नहीं, परीक्षा सचमुच उनकी चारित्रिक शक्ति और निश्चय की थी। उनके पहले के विफल लोगों की कतार उनके सामने थी। सफलता के खाने में सिर्फ तीन थे—बोर्ग, लेवर और एमरसन। क्या सम्प्रास में इनके जैसी प्रतिभा, दृढ़ निश्चय, चारित्रिक शक्ति और आत्मविश्वास है? क्या वे सही समय पर अपने फॉर्म के शिखर और सबसे तेज धार पर आ सकते हैं? सम्प्रास के चहुँमुखी और लगभग सम्पूर्ण खेल में किसी को शंका नहीं थी लेकिन क्या वे सब गुणों को एक साथ धार देकर ऐसी मार पैदा कर सकते हैं जो चैम्पियन को महान खिलाड़ी और महान को कालजयी बनाती है? और ऐसा एक या दो नहीं पूरे दो हफ्ते करना था।

सम्प्रास ने कर दिखाया। फाइनल में पहला सेट हारने और दूसरा सेट भी टाई ब्रेकर में जीतने के बाद उनमें अन्तिम विजेता का वह सहज आत्मविश्वास लौट आया जो गोरन इवानिसेविक जैसे तुनकमिजाज लेकिन घनघोर प्रतिभावान प्रतिद्वन्द्वी का आत्मविश्वास और सन्तुलन तोड़ने के लिए जरूरी होता है। इसके बाद सम्प्रास ने एक सेट और हारा लेकिन मैच पर जैसे लिख गया था कि विजेता सम्प्रास है। बोर्ग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
के बराबर पहुँचने के बावजूद सम्प्रास ने वह लटका-झटका नहीं दिखाया जो आजकल अललटप्पू खिलाड़ी भी बताते रहते हैं। अपने स्वभाव और चरित्र के सच्चे सम्प्रास ने सिर्फ हाथ ऊँचे किए और सेंटर कोर्ट के लगभग गगनभेदी अभिवादन का विनम्र उत्तर दिया। सात महीने लगभग कुछ भी न जीतने वाले सम्प्रास इस सदी के सबसे बड़े खिलाड़ी के पायदान पर पहुँच गए।

सम्प्रास बड़बोलापन तो क्या बड़ी बातें भी नहीं करते हैं। उनका रैकेट ही उनकी जबान है। पर इस बार उनने कहा कि अभी उन्हें लगता है कि कुछ ग्रेंड स्लेम वे और जीत सकते हैं यानी बोर्ग और लेवर को पीछे छोड़ने के बाद एमरसन से भी आगे निकल सकते हैं। सम्प्रास के सामने सचमुच बड़े और टक्कर के प्रतिद्वन्द्वी बने नहीं हैं। कोई क्ले पर अच्छा है तो कोई हार्ड कोर्ट पर तो कोई घास पर। सम्प्रास जैसा चहुँमुखी, निर्दोष और लगभग सम्पूर्ण खेल किसी का नहीं। उनके जैसा सघन और खेल को समर्पित भी कोई और नहीं है। छब्बीस बरस के सम्प्रास टेनिस में बूढ़े माने जाने चाहिए। लेकिन पुरुषों के टेनिस में होनहारों का टोटा है।

सम्प्रास का कालजयी होने की देहरी पर पहुँचना अपने समय के चलन के खिलाफ महज एक टिप्पणी नहीं बल्कि महागाथा है। सम्प्रास को मीडिया और बड़े पैसे यानी कारपोरेट संसार ने महान नहीं बनाया है। मीडिया उन्हें लगभग रोज-रोज नीचे गिराने की कोशिश करता रहा है। वे कोर्ट पर मेकिनरो और कोनोर्स की तरह तुनकमिजाज और ताता थैया करने वाले कभी नहीं रहे जो कैमरा और कलम उन्हीं पर टिके रहते। कोर्ट के बाहर उनके कहानी-किस्से और कांड नहीं हुए कि वे विवादों में घिरे रहते। दिखने में बहुत साधारण। निचला होंठ ऐसे लटका रहता जैसे कोई नेल्या राल टपका देगा। दर्शकों को लुभाने—खुश करने की कोई चेष्टा उनकी ओर से नहीं हुई। दिखनौटापन उनके स्वभाव में ही नहीं है। बल्कि एक तरह का सहज संकोच और कुछ नहीं पन है जो हमारे जमाने के नायकों में ढूँढ़े नहीं मिलता। ऐसे आदमी को मीडिया नहीं चढ़ाता और कारपोरेट संसार बेचता नहीं। ऐसा आदमी अगर महान खिलाड़ी बनता है तो अपने टेनिस के दम पर। सम्प्रास की महानता में टेनिस के खेल की पुनर्स्थापना हुई है और इसीलिए वे अपने नायक हैं। और उनका पाँचवीं बार विंबलडन जीतना अपने पोर-पोर को सन्तुष्ट और तृप्त कर गया है। और अब अपनी आँखें अगले महीने के अमेरिकी ओपन पर लगी हैं जहाँ जीत गए तो सम्प्रास एमरसन के बराबर हो जाएँगे।

दूसरे अपने हीरो हैं सचिन तेंदुलकर—नए सिरे से और नई कसौटी पर और उनके ऐसे होने ने भारत को विश्व विजेता लंका को उसी के मैदान पर उसी के इंडिपेंडेंस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कप के फाइनल में हरा दिया। दो-तीन साल से श्रीलंका वन डे में ताजदार बादशाह है। सन छियानवे में उनने पाकिस्तान में विश्व कप जीता। तब से वे जीतते ही आ रहे हैं हालाँकि टैस्ट में उनकी टीम जिम्बाब्वे से ऊपर है। लेकिन वन डे के आखिरी दस लप्पेबाजी के ओवरों को शुरू के पन्द्रह ओवरों में बदलकर श्रीलंका ने नए ढंग का खेल शुरू किया जो हमारे उपमहाद्वीपीय पिचों पर बेहद सफल होता है क्योंकि सिर्फ दो फील्डर ही तीस गज के दायरे से बाहर खड़े हो सकते हैं। ऐसे में पहले पन्द्रह ओवर में सौ सवा सौ रन कूट लेनें वाली टीम जीतती चली जाती है।

इस तरह मारने वाले पहले ओपनिंग बल्लेबाज अपने कृष्णामचारी श्रीकांत थे। जब श्रीलंका के जयसूरिया और कालूवितर्णा ने शुरू से धुआँधार करना शुरू किया तो और सबको यह अजूबा लगता था तब श्रीकांत ने याद दिलाया कि मैं यही करता था लोग मुझे कहते थे कि सीधे और सँभलकर खेला करो। जो हो यह श्रीलंका फार्मूला ऐसा हिट हुआ कि अर्जुन रणतुंगा सबसे चतुर कप्तान और जयसूरिया और डिसिल्वा सबसे शानदार बल्लेबाज हो गए। श्रीलंका का हौंसला ऐसा बढ़ा कि वे कहने लगे कि सन दो हजार तक हम वन डे और टैस्ट में दुनिया की सबसे श्रेष्ठ टीम बना लेंगे। श्रीनाथ के न होने से गए साल उनने भारत के खिलाफ़ नौ सौ से ज्यादा रन बनाने का विश्व रेकार्ड अपने पाटा पिच पर खड़ा कर दिया। श्रीलंका जो भी वन डे खेलने गया, हारा। इससे लंका वालों का हौंसला ही नहीं दम्भ भी बढ़ गया। भारत की तरह अपनी गली में वे शेर थे और दहाड़ते थे।

फिर इस साल की शुरुआत में वे दक्षिण अफ्रीका गए जहाँ के सख्त पिचों पर गेंद बहुत उछलती है और तेज निकलती है। यानी श्रीलंका के आँगन से वह बिलकुल टेढ़ा है। दक्षिण अफ्रीका ने टैस्ट और वन डे दोनों में श्रीलंका को पीट-पाटकर भेज दिया। न जयसूरिया चले, न डिसिल्वा और मुरलीधरन की सबने खूब पिटाई लगाई। बहरहाल दक्षिण अफ्रीका के एक दौरे ने श्रीलंका के बोलकारों का यह जुमला भुला दिया कि हम सन दो हजार तक संसार के सर्वश्रेष्ठ क्रिकेट खिलाड़ी देश हो जाएँगे। अब उनकी यही इच्छा थी कि वे किसी तरह न्यूजीलैंड को टैस्ट में हरा दें और भारत को अपनी आजादी का कप न जीतने दें। पहले टैस्ट में जीत जाने वाली न्यूजीलैंड को तो उनने गाल के स्पिनरों वाले पिच पर ले जाकर हरा दिया। लेकिन भारत के बल्लेबाज स्पिन गेंदबाजी के सामने न्यूजीलैंड की तरह लड़खड़ाते नहीं। फिर बरसात ने वन डे टूर्नामेंट के ज्यादातर मैच होने ही नहीं दिए। कुल चार मैच पूरे हो पाए। जिनमें दो में श्रीलंका ने न्यूजीलैंड को हरा दिया। एक में भारत ने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीलंका को हराया दूसरे में श्रीलंका ने भारत को। फाइनल श्रीलंका और भारत में ही होना था, सो हुआ।

अब पिछले तीन वर्षों की तरह इस बार भारत ऐन मौके पर ढेर होना या रास्ता भूल जाना छोड़ रहा है। कारण यह है कि सचिन तेंदुलकर ने तय कर लिया है कि वे नाहक धुआँधार करने में अपना विकेट नहीं फेंकेंगे। जमकर खेलेंगे और तभी अपने धुरंधर हाथ दिखाएँगे जब टीम को जरूरत होगी। इसी का नतीजा है कि दुनिया में सर्वश्रेष्ठ टैस्ट टीम मानी जाने वाली आस्ट्रेलिया को भारत ने 2-1 से हराया और इस साल के पाँच में से चार वन डे टूर्नामेंट जीते। सचिन ने वन डे में इस साल के सात महीने में कोई बारह सौ रन और पाँच शतक बनाए। शारजाह में आस्ट्रेलिया के खिलाफ सचिन ने ऐसे ही दो मैचों में संचुरियाँ मारीं जब वे निहायत जरूरी थी और उन्हीं की बदौलत हम जीते।

मजा यह है कि परिपक्वता का यह निर्णय सचिन तेंदुलकर ने तब लिया जब टीम चुनने वाले पाँच बुद्धिमानों ने उनसे कप्तानी छीनी क्योंकि कप्तानी से उनकी बल्लेबाजी बिगड़ रही थी। सचिन ने कहा कि क्या खाक बिगड़ रही थी। टैस्ट और वन डे दोनों में मैंने एक-एक हजार से ज्यादा रन बनाए हैं। लेकिन बुद्धिमानों ने कप्तानी अजहर को फिर दे दी जो चिढ़कर लप्पेबाजी करने लगे थे और जिन्हें टीम की चिन्ता नहीं थी। कप्तानी चली जाने के बावजूद सचिन ज्यादा जिम्मेदार हो गए और उनके आक्रमण में समझदारी आ गई। अब वे नाहक विकेट फेंकने के बजाय विवेक के साथ सोच समझ कर हमला बोलने लगे। इतना नाप तौल कर कि सामने वालों का हौंसला पस्त हो जाए। आस्ट्रेलिया वालों का पस्त हो गया और अब वे सबके सब कहते हुए गए ब्रेडमेन के बाद सबसे वर्चस्ववान बल्लेबाज है सचिन तेंदुलकर!

आस्ट्रेलिया के बाद श्रीलंका की बारी थी। सचिन ने गांगुली के साथ मिलकर पहले विकेट की भागीदारी में 252 रन बनाए जो विश्व रेकार्ड है। सचिन ने एक मौका नहीं दिया और ऐसे जमकर खेले कि श्रीलंका को आत्मरक्षण पर मजबूर कर दिया। पहले विकेट की रेकार्ड भागीदारी ने भारत का टोटल 308 पर पहुँचा दिया। बल्लेबाजी में दिग्गज श्रीलंका से उतने रन नहीं बने और विश्व विजेता होने के गरूर में घूमने वाली श्रीलंका अपने ही मैदार में हार गई। खेल में होड़ करना और आखिरी दम तक संघर्ष करना एक बात है और खुन्दक निकालना बिलकुल दूसरी। श्रीलंका के खिलाड़ियों में भारत के प्रति लगभग वही रवैया आ गया था जो पाकिस्तानियों में बरसों से रहा है। भारत के साथ वे खेलते नहीं, जैसे युद्ध करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गए साल भारत जब श्रीलंका के दौरे पर गया था तो खिलाड़ियों, बोर्ड के अधिकारियों और अखबारों का ही नहीं दर्शकों का भी रवैया ऐसा था मानो उन्हें अपनी बेहतरी साबित करनी हो। जैसे महावत को बताना हो कि वह हाथी से बड़ा और बलवान है। इस दौरे में भारत के श्रीलंका से तीन मैच हुए। एक में श्रीलंका जीता, दो में हम। फर्क था सचिन तेंदुलकर जिनके अब वन डे में सात हजार से ज्यादा रन और सत्रह शतक हैं। अगले साल जब क्रिकेट का विश्व कप इंग्लैंड में होगा तो सचिन तेंदुलकर सब रेकार्ड तोड़ चुके होंगे।

(12.7.98)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या सचिन को फिर फेल करना है?

यह सचिन तेंदुलकर के समर्थक-प्रशंसक और मोहम्मद अजहरुद्दीन के आलोचक होने के कारण नहीं है। लेकिन कप्तान चुने जाने के दिन के पहले दोनों के बरताव और रवैये को देखिए।

भारतीय टीम का कप्तान अट्ठाईस जुलाई को नागपुर में चुना जाना था। चुनने वाली समिति में अपने यहाँ पाँच लोग होते हैं। देश को पाँच क्षेत्रों में बाँटा गया है और हर क्षेत्र का एक प्रतिनिधि समिति में होता है। इन्हीं में से एक सदस्य समिति का अध्यक्ष चुना जाता है। पाँच समझदार पंचों की यह समिति पहले कप्तान और फिर टीम के खिलाड़ी चुनती है। टीम चुनने के लिए होने वाली बैठक में कप्तान भी होता है जो बहस-विचार में भाग तो लेता है लेकिन वोट देने का अधिकार उसे नहीं होता। उसकी राय या सलाह मानने की कोई बाध्यता समिति पर नहीं होती। समिति पूरी तरह स्वायत्त मानी जाती है। बोर्ड या उसके पदाधिकारी या क्षेत्र क्रिकेट संघों को कोई दखल या सलाह देने का अधिकार नहीं है। माना जाता है कि किसे कप्तान बनाया जाए या किसे टीम में लिया जाए यह कहने का अधिकार किसी को नहीं है। चयन समिति अपनी आश्वस्त स्वायत्तता में काम करती है और बोर्ड की हर सहायक एजेंसी उसकी स्वायत्तता को सर्वोपरि मानती है और कोई दखल नहीं देती।

कई खिलाड़ियों, विशेषज्ञों और क्रिकेट प्रेमियों का मानना है कि क्षेत्रों के आधार पर बनने वाली यह समिति ही लगभग सभी बुराइयों की जड़ है। कप्तान और टीम का चयन राष्ट्र और खेल के हित में नहीं क्षेत्रीयता के हिसाब से होता है। समिति की स्वायत्तता छलावा है। बोर्ड के सत्ताधारी अधिकारी को जो करना होता है समिति से करवाते हैं। क्षेत्र के क्रिकेट संघों की मर्जी के खिलाफ चयन समिति के सदस्य कुछ नहीं कर सकते। वे क्षेत्र के संघों को खुश नहीं रखेंगे तो समिति में रहेंगे नहीं। कप्तान को अक्सर ऐसी टीम का नेतृत्व करना पड़ता है, जिसके खिलाड़ी उसकी राय को दरकिनार करके चुने गए हैं। क्रिकेट राजनीति बहुत कुछ इस समिति के जरिए चलती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या होना चाहिए, क्या नहीं यह बहुत पुरानी, लम्बी और उलझी हुई बहस है। इसमें अभी पड़ेंगे तो विश्व कप से सिर झुकाए खाली हाथ लौटने और आश्चर्यजनक सन्नाटे के बाद कप्तान चुनने में जो नाटक हुआ है वह ओझल हो जाएगा। अभी इतना जान लेना ही काफी है कि जो समिति अट्ठाईस जुलाई को नागपुर में मिली उसके अध्यक्ष अजित वाडेकर हैं जो पश्चिम क्षेत्र के हैं और भारत के पूर्व कप्तान और बाएँ हाथ के बल्लेबाज रह चुके हैं। भूतपूर्व ऑफ स्पिनर शिवलाल यादव दक्षिण से, भूतपूर्व बल्लेबाज अशोक मलहोत्रा पूर्व से, रणजी खिलाड़ी अनिल देशपांडे मध्य से और भारत के भूतपूर्व ऑल राउंडर मदनलाल उत्तरी क्षेत्र से समिति के सदस्य हैं। यानी पाँच में से चार सदस्य टैस्ट खिलाड़ी रह चुके हैं। इस समिति की समझ, निष्पक्षता और भारतीय क्रिकेट की सेवा भावना सन्देह से परे होनी चाहिए। लेकिन जैसा कि आपने पढ़ा-सुना और सोचा होगा और मैं भी बताऊँगा, समिति का कामकाज, तौर तरीका और फैसला विवाद और सन्देह से भरा कहा गया है।

समिति की बैठक के एक दिन पहले अजहर पत्नी संगीता बिजलानी के साथ दिल्ली आए। उनने कहा कि प्रधानमन्त्री के दफ्तर से उन्हें सूचना मिली थी कि आज ही (यानी सत्ताईस जुलाई को) वे आएँ। अजहर विश्व कप से भारत के बाहर होने के बाद अपने दाहिने कंधे पर ऑपरेशन करवाने के लिए लन्दन में ही रह गए थे और तीन-चार दिन पहले ही स्वदेश लौटे थे। वे कारगिल में भारतीय जवानों की बहादुरी से बहुत प्रभावित थे और सुरक्षा कोष में अपने निजी खाते से पाँच लाख रुपए का चैक प्रधानमन्त्री को देना चाहते थे। चूँकि कप्तानी का मामला विश्व के पहले से ही तूल पकड़े हुए था और कप के दौरान और बाद में अजहर की कप्तानी आलोचना और विवाद का केन्द्र बनी हुई थी और श्रीलंका के लिए कप्तान दूसरे ही दिन चुना जाना था इसलिए मीडिया का ध्यान अजहर पर टूट पड़ना स्वाभाविक था। इसलिए भी कि भूतपूर्व टैस्ट खिलाड़ी और भाजपा विधायक कीर्ति आजाद उन्हें प्रधानमन्त्री से मिलाने ले गए और सूचना और प्रसारण मन्त्री प्रमोद महाजन उन्हें अपनी गाड़ी में वापस ले गए। टीवी ने प्रधानमन्त्री से उनका मिलना और चैक देना खबर माना और दूसरे दिन दिल्ली के अखबारों में भी प्रधानमन्त्री की उनके और पत्नी संगीता बिजलानी के साथ फोटो छपी। प्रधानमन्त्री निवास के बाहर अजहर ने मीडिया से बात की। उस दिन वे मीडिया की खुली चकाचौंध और उत्सुकता के केन्द्र बने रहे।

तब तक अखबारों में यह अटकल ही नहीं बोर्ड के एक-दो पदाधिकारियों के हवाले से भी छप चुका था कि अजहर को हटा कर तेंदुलकर को फिर कप्तान बनाया जाएगा। यह भी कि तेंदुलकर कप्तानी सँभालने को राजी नहीं हैं। और यह भी कि उनने कुछ शर्तें रखी हैं जिन्हें बोर्ड ने मंजूर कर लिया है इसलिए अनिच्छा के बावजूद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे कप्तान हो जाएँगे। तभी कपिलदेव की अजहर को यह सलाह भी छप चुकी थी कि उन्हें अब संन्यास ले लेना चाहिए। यह भी जाहिर था कि खुद होकर अजहर न कप्तानी छोड़ेंगे, न टीम से हटेंगे। जाहिर है कि इतने सवाल और विवाद सामने हों तो प्रधानमन्त्री को चैक देने मुम्बई से दिल्ली आए अजहर को मीडिया यों ही छोड़ नहीं देने वाला था।

अजहर घेरे जाने या चकाचौंध में आने पर कोई नाखुश नहीं दिख रहे थे। उनने कहा कि कपिल देव का धन्यवाद कि उनने मुझे संन्यास की सलाह दी। लेकिन यह फैसला मुझे खुद करना है और करते वक्त इसे याद रखूँगा। (अजहर की कप्तानी में ही कपिल रिटायर होने की चौतरफा माँग के बावजूद खेलते रहे थे। और उन्हें बोर्ड के अधिकारियों ने आखिर समझाया कि अब बहुत हुआ, छोड़ दीजिए।) लेकिन फिलहाल संन्यास लेने का मेरा कोई इरादा नहीं है। मैं मानता हूँ कि अभी कुछ साल खेलने लायक क्रिकेट मेरे अन्दर बचा हुआ है। अपनी फिटनेस के बारे में जल्द ही मैं अधिकारियों को बता दूँगा। कप्तान बनाना या टीम में लेने का फैसला तो चुननेवालों को करना है। मुझे सचिन की कप्तानी में खेलने से कोई हिचक या एतराज नहीं है। पहले भी खेल चुका हूँ। मुझे अजय जडेजा की कप्तानी में भी खेलने में कोई दिक्कत नहीं होगी। अजहर ने विश्व कप में अपनी कप्तानी और बल्लेबाजी पर भी सवालों के जवाब दिए और लगभग वही कहा जो वे पहले इंग्लैंड में भी कह चुके थे। कुल मिलाकर उनका दिल्ली आना और मीडिया से बात करना एक जनसम्पर्कीय कवायद थी और साफ था कि चकाचौंध से कतराने और अपने को अपने तईं रखनेवाले अजहर अब मौका बनाने और सम्भ्रम पैदा करने में उस्ताद हो गए हैं। यह चाहे दूसरी पत्नी संगीता बिजलानी की अभिनय प्रतिभा के कारण हुआ हो या प्रमोद महाजन की एजंटीय और कीर्ति आजाद की राजनीतिक फितरत के कारण। लेकिन इसका ऐसा असर हुआ कि यह जानने-समझने के बावजूद कि कोई प्रधानमन्त्री से मिलने और सुरक्षा कोष में चन्दा देने से कप्तान नहीं बन सकता। मेरे मन में भी शंका हुई कि कहीं यह चयन समिति को प्रभावित करने के लिए तो नहीं है।

दूसरे दिन जब दोपहर तक ही पता चल गया कि समिति ने कप्तानी तेंदुलकर को सौंपी है तो राहत मिली। लेकिन खबर के साथ ही यह शंका भी चारों तरफ उछली कि सचिन तेंदुलकर लापता हैं। कोई नहीं जानता कि वे कहाँ गए हैं और उन्हें कप्तानी मंजूर है या नहीं। उनसे सम्पर्क करने की सारी कोशिशें फेल हो गई हैं। चूँकि तेंदुलकर की अनिच्छा की खबरें पहले से चली आ रही थीं और बैठक के दौरान बोर्ड के एक अधिकारी ने कहीं प्रेस को सचिन की 'ना' की बात फिर कही थी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
इसलिए ये सवाल अचानक उठे कि समिति ने पहले सचिन की हाँ ली है या नहीं और क्या पता वे समिति के फैसले को मानेंगे या नहीं। अध्यक्ष वाडेकर ने कहा कि पहले किसी की अनुमति लेने और फिर उसे कप्तान बनाने की कोई परम्परा या उदाहरण नहीं है। मंजूरी जल्दी लेने की भी कोई कोशिश नहीं की जाती। कप्तान चुनना और जिसे चुना है उसे सूचित करना समिति का विशेषाधिकार और जिम्मेदारी है। ऐसी भी क्या जल्दी है कि जो बातें रूटीन में होती हैं उन्हें तत्काल किया जाए। वाडेकर ने यह भी कहा कि कप्तानी ठुकराना सचिन की बेवकूफी होगी। बहरहाल चौबीस घंटे अनिश्चितता बनी रही।

जिन्हें कप्तानी से हटाया गया और हटाए जाने की माँग छह-सात महीनों से हो रही थी वे अजहर तो बैठक के पहले प्रधानमन्त्री से मिलने दिल्ली आए और मीडिया से बतियाते रहे। लेकिन जिन तेंदुलकर के कप्तान बनाए जाने की खबर और माँग काफी पहले से चल रही थी वे कप्तान बनाए जाने पर लापता पाए गए। उनसे न संपर्क हो सका, न उनने कहीं से समिति के अध्यक्ष वाडेकर या बोर्ड के अध्यक्ष राजसिंह डूँगरपुर को सूचित किया कि उन्हें मंजूर है या नहीं। अजहर 36 के हैं और तेंदुलकर 26 के। दस साल में पीढ़ी बदल जाती है। आज की पीढ़ी पब्लिसिटी पाने और मीडिया में चमकाने को उत्सुक कही जाती है। लेकिन अजहर और सचिन के व्यवहार में यह फर्क कैसे आया? फर्क है भी या नहीं? अजहर का समिति की बैठक से पहले दिल्ली की चकाचौंध में आना और मीडिया से बात करना क्या संयोग भर था? और सचिन का अज्ञातवास में चले जाना और बैठक में क्या होगा इसकी कोई चिन्ता न करना भी उनका सहज-स्वाभाविक और खाँटी चारित्रिक बरताव था? दोनों ही जानते थे कि चयन समिति मिल रही है, दोनों को मालूम था कि उनके नामों पर चर्चा और फैसला होगा। दोनों जानते हैं कि भारत में क्रिकेट टीम की कप्तानी आम उत्सुकता और ध्यान की चीज है और उसे लेकर जितने भारतीयों की भावना जागती है उतनी और किसी भी देश के लोगों की नहीं। फिर भी अजहर ने खूब प्रकट हो और सचिन ने गायब हो अनिश्चितता और रहस्य को बढ़ाया।

फिर चौबीस घंटे के बाद सचिन ने बोर्ड के अध्यक्ष राजसिंह डूंगरपुर को सूचित किया कि उन्हें समिति का फैसला मंजूर है और दूसरे दिन मुम्बई में प्रकट होकर मीडिया को बताया कि वे अज्ञातवास में क्यों चले गए थे। लेकिन कहा फिर भी नहीं कि कहाँ चले गए थे। बहुत साफ सचिन ने यह कहा कि चूँकि उपकप्तान कप्तान बनाए जाते रहे हैं और वे उपकप्तान नहीं थे इसलिए उन्हें उम्मीद नहीं थी कि वे कप्तान बनाए जाएँगे। फिर दो दिन पहले उनने बोर्ड अध्यक्ष डूँगरपुर, समिति के अध्यक्ष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
वाडेकर और कोच गायकवाड को कह दिया था कि कप्तानी करने को वे मानसिक रूप से तैयार नहीं हैं। चूँकि वे उपकप्तान नहीं थे और कप्तान होने को तैयार भी नहीं थे इसलिए अज्ञातवास में चले गए। उनने यह भी कहा कि समिति के सामने उनने कोई शर्तें नहीं रखी थीं। टीम चुनना समिति का काम है। कौन किस नम्बर पर बल्लेबाजी करे यह कप्तान तय करेगा और मैं वन डे में एक नम्बर पर बल्लेबाजी करना चाहता हूँ। अजहर को टीम में लिया जाए या नहीं इस पर मैं समिति से बैठक में बात करूँगा। मुझे उनके टीम में लिए जाने से कोई एतराज नहीं है। मैं उनकी कप्तानी में खेला हूँ और वे मेरी कप्तानी में। कप्तानी छिनने के बाद भी मैं उनकी कप्तानी में खेला हूँ। मैं नहीं सोचता कि इसको लेकर हमारे बीच कोई झंझट होगी।

सचिन ने जवाब तो और भी कई सवालों के दिए लेकिन अपने मुद्दे से अभी उनका मतलब नहीं है। मुद्दा यह है कि जब सचिन ने बोर्ड और चयन समिति के अध्यक्षों को कह दिया था कि वे अभी कप्तानी के लिए तैयार नहीं हैं तो दोनों ने यह क्यों कहा कि उनकी सचिन से कप्तानी के बारे में पहले कोई बात नहीं हुई थी और उन्हें सचिन ने नहीं कहा था कि वे तैयार नहीं हैं? मुद्दा यह भी है कि क्या सचिन ने शर्त रखी थी कि बल्लेबाजी का क्रम वे खुद तय करेंगे और टीम में कौन लिया जाए कौन नहीं, इस पर भी उनका फैसला माना जाएगा? अगर हाँ तो फिर चयन समिति क्या कप्तान और बोर्ड की खबर स्टाम्प भर है? और क्या टीम चुनना पाँच समझदार सयानों का नहीं एक कप्तान का विशेषाधिकार है? अगर ऐसा है तो फिर चयन समिति बनाने और उसके तय करने का नाटक क्यों? अगर ऐसा नहीं तो सचिन दो दिन पहले ही अपनी तैयारी न होने की बात कहकर अज्ञातवास में क्यों चले गए? क्या उनसे पूछा गया था कि कप्तान बनना उन्हें मंजूर है या नहीं। और बावजूद उनकी घोषित अनिच्छा के उन्हें कप्तान क्यों बनाया गया? क्या समिति और बोर्ड की मैदान के मामलों में वही दखलन्दाजी चलेगी जो सचिन की कप्तानी की पहली पारी में चली थी। कोई बताता क्यों नहीं कि सचिन की शर्तें थीं या नहीं और अगर थीं तो क्या-क्या मानी गईं और क्या नहीं?

सवाल यह नहीं है कि सचिन को कप्तान बनाना ठीक था या नहीं। मैं मानता हूँ कि वही सबसे उचित, मान्य और लोकप्रिय उम्मीदवार थे। लेकिन जिस तरह उन्हें चुना गया उससे यह शंका मजबूत होती है कि कप्तानी का फैसला बोर्ड के पदाधिकारी पहले ही ले लेते हैं और चयन समिति उस पर सिर्फ मुहर लगाती है। यह भी साफ है कि सचिन से पहले पूछा ही नहीं गया उन्हें मनाया भी गया। इसका मतलब यह कि कप्तानी का मामला समिति के बाहर बोर्ड के पदाधिकारी ले लेते हैं और भारत की कप्तानी बाहरी दबाव और असर से तय होती है। अजहर का दिल्ली आना,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रधानमन्त्री को चैक देना, खुद कप्तानी और खेलना छोड़ने से इन्कार करना और विश्व कप में अपनी कप्तानी और विफलता का बचाव चयन समिति और बोर्ड को प्रभावित करने की कोशिश था? और क्या अजहर नौ साल तक कप्तान इसलिए बने रहे कि बोर्ड के सत्ताधारी उनसे सन्तुष्ट थे और विश्व कप के बाद उनकी आलोचना और देश के जनमत के कारण उन्हें हटाना जरूरी हो गया था?

अगर यह सब इसी तरह चलता रहा तो इक्कीसवीं सदी के क्रिकेट महानायक सचिन तेंदुलकर की कप्तानी में भारतीय क्रिकेट का कायाकल्प नहीं होगा। क्या सचिन को फिर फेल होने और फिसड्डी बने रहने के लिए कप्तान बनाया गया है?

(1.8.99)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सचिन की मूरत का सिन्दूर खरोचने वाले

'तेंदुलकर ने धोखाधड़ी की—रेफरी का कहना है।'—यह बीस नवम्बर के टाइम्स आफ इंडिया की पहली खबर का शीर्षक है। टाइम्स के खेल सम्पादक श्रीवत्स से मैंने पूछा कि यह क्या कहते हैं आप? विनम्र श्रीवत्स ने कहा—'क्या करें साब खबर यही कहती है।' दक्षिण अफ्रीका के पोर्ट एलिजाबेथ से जो खबर दुनिया भर में फैली वह सचमुच यही कहती थी कि दूसरे टैस्ट के तीसरे दिन मैच रेफरी माइक डेनेस ने सचिन तेंदुलकर को गेंद से छेड़खानी करने और धोखाधड़ी से उसकी हालत बिगाड़ने का दोषी पाया है। इसलिए उन्हें एक मैच से बाहर बैठने की स्थगित सजा और मैच फीस का पचहत्तर प्रतिशत जुर्माना किया गया है।

दूसरे दिन सवेरे जब रेफरी डेनेस ने प्रेस को बयान दिया तो भारत से गए पत्रकार उन पर टूट पड़े। डेनेस फिर भी कड़ी चुप्पी साधे मिट्टी के माधो बने बैठे रहे। उनके इस बरताव से भारत के भूतपूर्व कप्तान और आलराउंडर और अब कमेंटेटर रवि शास्त्री ऐसे फट पड़े कि उनने पूछा—'अगर रेफरी माइक डेनेस को कुछ नहीं कहना है तो वे यहाँ इस तरह बैठे हुए क्यों हैं? हम सब जानते हैं कि ये कैसे दिखते हैं।' इस पर डेनेस का चेहरा तमतमाकर लाल हो गया लेकिन वे बोले फिर भी नहीं। सारी दुनिया में छपा और सजा का यही मतलब निकाला गया कि संसार भर में आदर्श खिलाड़ी माने जाने वाले भारत के विलक्षण बल्लेबाज सचिन तेंदुलकर गेंद से छेड़खानी करते हुए पकड़े गए और उन्हें इस धोखाधड़ी की सजा दी गई है।

और अब नौ दिन बाद पहले उन्हीं डेनेस और फिर आईसीसी के प्रवक्ता जोनाथन हेमुस ने कहा है—सचिन तेंदुलकर गेंद से छेड़खानी करने के दोषी नहीं पाए गए हैं। उन्हें जो सजा दी गई वह अम्पायरों को बताए बिना गेंद की सीवन से मिट्टी और घास निकालने के लिए है और ऐसा करना गेंद से छेड़खानी करने से बिलकुल अलग है। दुखी और उदास माइक डेनेस ने क्रिकेट लेखक टेड कॉरबेट से कहा—छेड़खानी एक ऐसा शब्द है जिसका हर कोई तत्काल इस्तेमाल करना चाहता है। लेकिन मैंने सचिन तेंदुलकर को गेंद से छेड़खानी करने का दोषी नहीं पाया है। मैंने उन्हें गेंद की सीवन से मिट्टी और घास साफ करने और ऐसा अम्पायर को बताए बिना करने की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सजा दी है। सचिन ने तो मैच पर किए गए जुर्माने और सजा पर भी सवाल नहीं उठाया। तेंदुलकर को दी गई सजा का लोगों ने गलत मतलब निकाला है।

हो सकता है कि भारत के छह खिलाड़ियों के खिलाफ डेनेस ने जो सजाएँ सुनाईं उनसे दुनिया भर में हुए हंगामे ने उन्हें दुखी और उदास कर दिया हो। लेकिन सच्चाई यह भी है कि डेनेस ने चुप रहकर और अपने फैसलों का खुलासा न करके लोगों को यह मतलब निकालने दिया। अपने फैसलों पर उनने लिखित बयान दिया था जो कि दक्षिण अफ्रीका के क्रिकेट प्रशासक ने उनकी उपस्थिति में मीडिया को पढ़कर सुनाया। दूसरे दिन उनने फिर एक खुलासा किया। अपने बयान और खुलासे में डेनेस चाहते तो स्पष्ट कर सकते थे कि तेंदुलकर गेंद से छेड़खानी करते हुए नहीं पकड़े गए हैं। उन्हें तो सजा इसलिए दी गई कि नियमानुसार उन्हें अम्पायर को बता कर गेंद की सफाई करनी चाहिए थी। पोर्ट एलिजाबेथ में ऐसा स्पष्ट करने का मौका उन्हें उसी दिन सुलभ था। आईसीसी के नियम का पालन करते हुए वे मीडिया के सवालों के जवाब नहीं देना चाहते थे तो न देते। चुप ही रहते। लेकिन अपने लिखित बयान या खुलासे में ही बता सकते थे कि उनके फैसले का गलत मतलब निकाला जा रहा है। लेकिन तब तो उनने ऐसा कुछ नहीं किया। भारत ने कहा कि वे रेफरी रहेंगे तो हम तीसरा टैस्ट नहीं खेलेंगे तब भी वे चुप रहे। भारत में उनके पुतले जलाए गए और संसद में उनके फैसलों की निन्दा हुई तब भी वे चुप रहे। भारत और दक्षिण अफ्रीका ने मिलकर उन्हें रेफरी के पद से हटा दिया और उन्हें मैदान में आने की भी इजाजत नहीं दी तब भी वे चुप रहे। वे इंग्लैंड लौट आए और भारत और दक्षिण अफ्रीका ने तीसरा टैस्ट भी खेल लिया। इस टैस्ट के दर्जे को लेकर आईसीसी और भारत में ऐसी तनातनी भी हो गई कि विश्व क्रिकेट संकट में पड़ गया लेकिन तब भी डेनेस चुप रहे। आखिर आईसीसी ने चेतावनी दी कि भारत वीरेन्द्र सहवाग को खेला रहा है या नहीं शुक्रवार तक बताए और इसके बाद भी भारत के चयनकर्ताओं की समिति ने इंग्लैंड के विरुद्ध पहले टैस्ट के लिए चुने गए चौदह खिलाड़ियों में सहवाग को चुन लिया। आईसीसी के कड़े पत्र का बीसीसीआई के अध्यक्ष जगमोहन डालमिया ने कड़ा जवाब दिया। हाथ मरोड़ने की नौबत जब पटकनी मारने पर आ गई तो दोनों तरफ से पीछे हटने और समझदारी पर आने की कोशिश शुरू हुई। सचिन तेंदुलकर को गेंद से छेड़खानी करने के आरोप से मुक्त करना इसी कोशिश की पहली पहल थी। तो क्या माइक डेनेस ने सचिन तेंदुलकर को बरी आईसीसी के कहने पर किया? और अगर यह मेलमिलाप की कोशिश का कदम है तो सही क्या है? डेनेस ने पहली बार में ही सचिन को निर्दोष पाया था या अब संकट समाप्त करने के लिए उन्हें बरी किया है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
डेनेस अभी जो खुलासा दे रहे हैं वही सब उसी दिन सुनील गावसकर ने कहा था। उनने कहा था कि सचिन तेंदुलकर ने नियम तोड़ा है क्योंकि वे गेंद की सीवन की सफाई अम्पायर को बताए बिना कर रहे थे। इसके बावजूद उन्हें गेंद के साथ छेड़खानी करने का दोषी नहीं ठहराया जा सकता क्योंकि न तो वे नाखून से सीवन उठा रहे थे, न गेंद की सिलाई उधेड़ रहे थे। अम्पायर से पूछे बिना गेंद की सफाई करने के दोष की सजा वह नहीं हो सकती जो कि डेनेस ने तेंदुलकर को दी है। इंग्लैंड के भूतपूर्व खिलाड़ी बॉयकॉट भी गावसकर के साथ ही कमेंट्री कर रहे थे और उनने भी यही कहा। भारत के रवि शास्त्री और नवजोत सिद्धू ने आक्रोश में बार-बार यही दुहराया। लेकिन गावसकर, बॉयकॉट, शास्त्री और सिद्धू के ऐसे मतलब निकालने को तरजीह नहीं दी गई। माना गया कि वे सचिन और भारत के दूसरे खिलाड़ियों का पक्ष ले रहे हैं। गावसकर ने जो कहा वह टीवी पर कहा और सचिन के गेंद की सीवन पर उंगलियाँ फेरने के दृश्यों के साथ कहा और दुनिया भर ने देखा-सुना। गावसकर आईसीसी की क्रिकेट कमेटी के अध्यक्ष हैं। आईसीसी अगर विवाद को बढ़ने न देना चाहती तो वह गावसकर को कह सकती थी इसे निपटाने में मदद करो। लेकिन न उसने कुछ किया न मैच रेफरी माइक डेनेस ने। अब मामला इतना बढ़ जाने और बिगड़ जाने के बाद माइक डेनेस और आईसीसी के प्रवक्ता वही कह रहे हैं जो सुनील गावसकर पहले दिन बल्कि उसी क्षण से कह रहे थे। तो क्या यही माना जाए कि डेनेस और आईसीसी अब लीपापोती कर रहे हैं ताकि संकट समाप्त किया जा सके। क्या जैसे लोग गेंद से छेड़खानी के शब्द को ले उड़े और सचिन को बदनाम करते रहे वैसे ही डेनेस और आईसीसी चाहते थे कि भारत का सबसे बड़ा खिलाड़ी और संसार का सर्वश्रेष्ठ बल्लेबाज बदनाम होता रहे ?

ऐसा कहना गोरी दुनिया की आँख में खोट देखना नहीं होगा। खोट है। सचिन के गेंद की सीवन पर उंगलियाँ फेराने को कैमरे पर 'पकड़ने' वाले दक्षिण अफ्रीकी कैमरामैन हर्म वेंटर ने कहा है—'कैमरा झूठ नहीं बोलता और जिस दृश्य के कारण रेफरी ने सचिन के खिलाफ मामला उठाया वह कोई अकेला और संयोग से ही पकड़ में नहीं आया था। मेरे पास सबसे शक्तिशाली लेंस हैं और मेरा काम ही यही है कि कमेंट्री करने वाले जिसकी बात कर रहे हों उसे दिखाने को मैं बिलकुल नजदीक से दृश्य लूँ। मुझे अचरज हो रहा था कि सचिन इसे छुपाने की कोशिश भी नहीं कर रहे थे। वह सब ऐसा दिनदहाड़े हो रहा था। इसके पहले वे अपना अँगूठा गेंद की सीवन पर घुमा रहे थे जब श्रीनाथ गेंदबाजी कर रहे थे और वे मिड ऑफ पर फील्डिंग करके गेंद उठा रहे थे।' वेंटर ने जब सचिन को कैमरे पर गेंद से 'छेड़खानी' करते हुए पकड़ा तब दक्षिण अफ्रीकी टीवी पर केपलर वेसल्स और रॉबिन जैकमन कमेंट्री कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
रहे थे। वेसल्स दक्षिण अफ्रीका के भूतपूर्व कप्तान हैं और इन्हीं ने सन 92-93 के दौरे पर कपिलदेव के पाँव पर बल्ले से मारा था। जैकमन इंग्लैंड के भूतपूर्व खिलाड़ी हैं जिनके टीम में शामिल किए जाने पर वेस्टइंडीज में हंगामा हो गया था क्योंकि पाबन्दी के बावजूद वे दो बार दक्षिण अफ्रीका में खेलकर आए थे। ये दोनों कह रहे थे सचिन तेंदुलकर गेंद के साथ 'छेड़खानी' कर रहे हैं। कहते हैं इन्हीं ने अपने टैप मैच रेफरी माइक डेनेस के पास पहुँचाए थे हालाँकि डेनेस ने इसका खंडन किया और कहा कि टैप उनने मंगवाए थे। बहरहाल यह आरोप कि सचिन ने गेंद के पास 'छेड़खानी' की है यहीं से चालू हुआ। छेड़खानी की शिकायत न तो अम्पायरों ने की, न दक्षिण अफ्रीका के खिलाड़ियों ने। डेनेस ने भी गेंद 'छेड़खानी' के तत्काल बाद बुलवाकर नहीं देखी। उनने गेंद देखी तब वह पचहत्तर ओवर पुरानी हो चुकी थी फिर भी उस पर छेड़खानी के निशान नहीं थे, न अम्पायरों ने कोई शिकायत की थी। डेनेस ने कहा कि टैप भी उन्होंने बुलवाए और नतीजा भी उन्हीं ने निकाला। क्या डेनेस को बिलकुल अंदाज नहीं था कि उनकी सजा का मतलब गेंद से छेड़खानी करना निकाला जाएगा? और जब लोगों ने वही मतलब निकालना शुरू भी कर दिया तब भी वे चुप क्यों रहे?

केपलर वेसल्स और रॉबिन जैकमन के बाद कुछ भूतपूर्व दक्षिण अफ्रीकी खिलाड़ियों ने भी वही मतलब निकाला। फिर जागे आस्ट्रेलिया के कप्तान स्टीव वॉ। उनने कहा–'कानून से ऊपर कोई नहीं है। चूँकि सचिन ने यह (यानी गेंद के साथ छेड़खानी) किया इसलिए उन्हें सजा दी गई। यह सही फैसला था। नियम तोड़ने वाले छह खिलाड़ियों को सजा देकर डेनेस ने बिलकुल ठीक किया। इससे क्रिकेट में नियम-कानूनों से छेड़खानी करने वालों को सही सन्देश मिलेगा। मैंने अपने गेंदबाजों से कह रखा है कि जब तक वे नियम-कानूनों में खेलेंगे मैं उनके साथ हूँ। वे जम के खेलें कोई समस्या नहीं। लेकिन वे गेंद के साथ छेड़खानी करें तो मैं उनका साथ नहीं दूँगा।' स्टीव वॉ को गांगुली ने कहा कि शट अप लेकिन आस्ट्रेलियाई कप्तान–वेसल्स और जैकमन की तरह माने बैठे थे कि सचिन तेंदुलकर गेंद के साथ छेड़खानी कर रहे थे। हद तो तब हुई जब रिची बैनो जैसे भूतपूर्व आस्ट्रेलियाई कप्तान और सब दूर सम्मानित पत्रकार और टीवी कमेंटेटर ने भी वही दक्षिण अफ्रीकी टैप देखकर निष्कर्ष निकाला कि सचिन तेंदुलकर गेंद के साथ छेड़खानी कर रहे थे। उनने कमेंट्री करते हुए टीवी पर कहा–'मैंने जो अभी देखा उससे मैं स्तब्ध हूँ। बिलकुल स्तब्ध ! और अगर यह गेंद के साथ छेड़खानी करना नहीं है तो मैं नहीं जानता कि छेड़खानी क्या होती है !' ये रिची बैनो के शब्द हैं। इन्हें जरा अब डेनेस के कथन के सामने रखिए ! क्या अर्थ निकलेगा ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यही कि डेनेस यही चाहते थे कि इसका अर्थ जो जैसा निकालना चाहे निकाले। आस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका, इंग्लैंड और भारत में भी माना गया कि सचिन तेंदुलकर गेंद से छेड़खानी कर रहे थे। वही लोग हैं जो सचिन की महानता को सहन नहीं कर सकते। आस्ट्रेलिया और दक्षिण अफ्रीका में कई पुराने और नए खिलाड़ी सचिन की मूरत का सिन्दूर खुरचना चाहते हैं। वे जले हुए हैं कि डॉन ब्रेडमेन ने महान आस्ट्रेलियाई और दक्षिण अफ्रीकी टीम में से एक को भी अपनी टीम में शामिल नहीं किया और सचिन तेंदुलकर को ले लिया। ब्रेडमेन को एक भी आस्ट्रेलियाई बल्लेबाज अपनी तरह खेलता हुआ नहीं लगा। लगा तो एक सचिन तेंदुलकर। कई लोगों को इसी की जलन है कि सचिन इतना बड़ा ब्रांड है। इसी की ईर्ष्या है कि वह करोड़ों कमाता है और दुनिया का सबसे अमीर क्रिकेट खिलाड़ी है। सचिन से जलने वालों में टाइम्स ऑफ इंडिया के भी लोग हैं। यह इन सबकी बदकिस्मती है कि गेंद से छेड़खानी करने की धोखाधड़ी में पकड़े जाने के बावजूद सचिन साफ बच गए।

(2.12.2001)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सचिन से अजय रात्रा तक

जब अपने यहाँ रात के बारह बज चुके होते हैं तब वेस्टइंडीज में चाय होती है। उस दिन चाय पर वसीम जाफर अस्सी पर खेल रहे थे और उनके साथ राहुल द्रविड़ पचास मार चुके थे। चौथे टैस्ट का यह पहला दिन था। हूपर ने टॉस जीतकर भारत को बल्लेबाजी करने बुलाया था और बदनसीब शिवसुन्दर दास फिर गेंद की उछाल से मारे गए थे। तब द्रविड़ के साथ खेलते हुए वसीम जाफर ने दूसरे विकेट के लिए लगभग डेढ़ सौ की भागेदारी जोड़ दी थी। चाय के बाद के दो घंटे के खेल में वे शतक कर सकते थे। उनकी और इस दौरे पर किसी ओपनर की पहली शतक।

मुझे सो जाना चाहिए था। सारे घरवाले पीछे पड़े थे। अभी आठ दिन पहले ऑपरेशन हुआ है और अस्पताल से लौटा हूँ। रातभर क्रिकेट देखने लायक न मेरी हालत है, न उमर। लेकिन मन नहीं मान रहा है। वसीम को शतक लगाते हुए देखने की बड़ी इच्छा हो रही है। वे इस दौरे पर ओपनर की तरह ही भेजे गए हैं। दो साल पहले भारत आई दक्षिण अफ्रीका के खिलाफ उन्हें पहली बार मौका दिया गया था। वह वही सीरीज थी जिसमें तेंदुलकर टीम चुननेवालों और बोर्ड के अधिकारियों से बहुत दुखी थे। वे आस्ट्रेलिया से हारकर आए थे लेकिन नहीं चाहते थे कि टीम में विकेटकीपर मोंगिया और अजहर को फिर लिया जाए। मोंगिया को तो आस्ट्रेलिया भेज ही दिया गया था लेकिन उन्हें न सिर्फ खेलाया नहीं गया था, टीम में कोई उनसे बात भी करने को तैयार नहीं था और एक भी मैच में खेले बिना उन्हें लौट आना पड़ा था। लेकिन बावजूद खुद अच्छी बल्लेबाजी करने के कप्तान के नाते सचिन हारे थे इसलिए अधिकारी लोग सुनने को तैयार नहीं थे। टीम अपने घर में भी दोनों टैस्ट हार गई थी। वसीम का खेल-जीवन उन्हीं दो टैस्टों से शुरू हुआ था और चूँकि उनसे कुछ बना नहीं था इसलिए बाहर कर दिए गए थे। पर वे हारे नहीं थे। घरेलू क्रिकेट में उनने ढेरों रन बनाए थे और कुछ शतक भी। एक पारी तो तीन सौ से ऊपर की। देश के पास दास के साथ खेलनेवाला दूसरा कोई ओपनर नहीं था। इसलिए वसीम जाफर को फिर मौका दिया गया था। अगर ओपनर के नाते कोई वेस्टइंडीज में खेल जाए तो उसकी जगह पक्की हो सकती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन कप्तान गांगुली की अपनी सनकें हैं। उन्हें ओपनर ऐसा चाहिए जो पारी शुरू करने और बल्लेबाजी के साथ कुछ और भी कर सके। गोलंदाजी करे या विकेटकीपरी कर ले। ओपनर जो ओपन करके काफी रन बना दे वह गांगुली को काफी नहीं लगता। और जाफर फील्डिंग भले ही अच्छी कर लेते हों बोलिंग तो नहीं करते ना। इसलिए गांगुली ने पहले टैस्ट में दासगुप्ता को ओपन करने के लिए लिया था। वे जीरो पर तो आउट हुए ही, विकेटकीपरी भी उनने ऐसी करी कि टीम को भारी पड़ गए। हूपर का जीरो पर कैच छोड़ा जो डबल सेंचुरी मार गए। टैस्ट तो ड्रा हो गया लेकिन जिन दीप दासगुप्ता के कारण गांगुली को टीम में शानदार सन्तुलन बना दिख रहा था उनके खिलाफ सारा देश हो गया। दूसरे टैस्ट में उन्हें तो बाहर बैठा दिया गया पर गांगुली बांगड को ओपन करने ले आए। बांगड ओपन करने के साथ मध्यम तेज गोलंदाजी भी कर लेते हैं। बांगड न तो ठीक से ओपन करके रन बना पाए, न गोलंदाजी करके विकेट ले सके। बाँगड़ को भी झक मारके बाहर बैठाना पड़ा। तीसरा टैस्ट आया तो गांगुली जाफर को बाहर नहीं बैठा सकते थे। वहाँ पहली पारी में जाफर से भी कुछ नहीं बना। लेकिन दूसरी पारी में उनने शानदार अर्द्धशतक बनाया। पीछे पाँव पर जाकर नई गेंद और तेज गोलंदाजों को पाइंट से लेकर कवर तक मारा। लेग में भी अच्छे फ्लिक लगाए। यह टैस्ट तो भारत हार गया लेकिन जाफर को बांहर बैठाना सम्भव नहीं रहा। अब गांगुली रात्रा को बाहर बैठाने की बात करने लगे क्योंकि वे विकेटकीपरी तो भले ही बहुत बढ़िया कर लेते हों, उनसे रन नहीं बनते। और दासगुप्ता विकेटकीपर भले ही डब्बा हों, वे कुछ रन तो बना ही सकते हैं।

वसीम जाफर ने ओपन किया और जब दास तीन पर अपना ही डंडा उड़ाकर चले आए तो वसीम दो चौके मार चुके थे। द्रविड़ जमकर खेल रहे थे और वसीम भी अच्छी गेंदों को रोक ही रहे थे पर बीच-बीच में वे शानदार चव्वा भी ठोक देते थे। वेस्टइंडीज के चारों गोलंदाज तेज थे और ओपनर के नाते यह वसीम की अच्छी परीक्षा हो रही थी। लंच उनने निकाल दिया और अब चाय पर भी खेल ही रहे थे। द्रविड़ और उनने 140 रन की भागेदारी कर ली थी। न द्रविड़ ने मैच हाथ में लिया था, न वसीम धुलाई में लगे थे। लेकिन दोनों मिलकर वही कर रहे थे जो एक ओपनर और नम्बर तीन से टैस्ट के पहले दिन उम्मीद की जाती है। जाफर ने तेरह चौके मारे थे और द्रविड़ ने नौ। जब द्रविड़ आए थे तो जाफर के दस रन थे। उसके बाद उनने सत्तर जोड़े और द्रविड़ ने सड़सठ बनाए, यानी दोनों लगभग साथ-साथ ही चल रहे थे। अब अगर जाफर शतक बना लें तो द्रविड़ कल आके भी शतक बना सकते हैं। या क्या पता आखिरी सेशन में थके हुए गोलंदाजों की पिटाई होने लगे और दोनों ही शतक बना लें। शाम तक कोई आउट न हो तो टॉस जीतकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
बल्लेबाजी के लिए भारत को बुलानेवाले कप्तान हूपर को अच्छा जवाब मिल जाएगा। वैसे सेंट जोंस एंटिगा के इस मैदान के बादशाह विवियन रिचर्ड्स जिन्हें अब सर की उपाधि मिल गई है सबेरे से दो बार कह चुके हैं कि भारत को बल्लेबाजी करने बुलाने का क्या मतलब ? इस पिच में न तो जान है, न हवा में गेंद लहरा रही है। सिवाय थोड़ी उछाल के कुछ नहीं है। इस पर तो खुद वेस्टइंडीज को बल्लेबाजी करनी चाहिए थी। द्रविड़ और जाफर दोनों को ही उस पिच पर सच कोई परेशानी नहीं थी और अगर कोई खुद गलती न करे तो वह आउट भी नहीं होनेवाला था। शायद इसीलिए वेस्टइंडीज के गोलंदाज रन रोकने में लगे थे।

घर भर के ऐतराज के बावजूद मैं टीवी के सामने बैठ गया। मेरी चिन्ता के मुताबिक जाफर जरा ज्यादा सावधान हो गए थे और वेस्टइंडीज के गेंदबाज लगातार ऑफ स्टम्प के बाहर गेंद करने की लाइन पकड़कर एक जैसी गेंद कर रहे थे। हूपर ने उन सब जगहों पर फील्डर लगा दिए थे जहाँ जाफर गेंद मारते थे। रन जैसे सूखे नल से बूँद की तरह टपक रहे थे। ऐसी स्थिति में जरूरत थी कि द्रविड़ कुछ उलटा-सीधा करके गोलंदाजी और खेल की बोरियत को तोड़ते और जवान और अपने सिर्फ चौथे टैस्ट में शतक के पास पहुँचे जाफर के लिए रन बनाना आसान करते। लेकिन यही एक काम है जो द्रविड़ से नहीं होता। वे खुद होकर खेल का रुख नहीं बदलते। जैसा चल रहा है उसमें अपने को ढाल लेते हैं। वे वैसा ही खेलने लगे जैसा कि उन्हें खेलने दिया जा रहा था। जाफर के लिए काम और मुश्किल हो गया था। बॉयकॉट बार-बार बता रहे थे कि किस तरह हूपर रन रोककर जाफर को आत्महत्या करने के लिए मजबूर कर रहे हैं। गेंद वहीं जा रही है जहाँ फील्डर खड़े हैं। जाफर इधर-उधर करेंगे तो कैच भी वहीं जाएगा। बॉयकॉट से कई बार मुझे चिढ़ होने लगती है। बात वे पते की कहते हैं पर उसे रगड़े ही जाते हैं और लगता है कि वे ऐसा ही चाहते हैं जैसा कि कह रहे हैं कि हो सकता है। चाय के बाद काफी देर खेलकर भी जाफर सिर्फ छह रन जोड़ पाए। दूसरे सिरे से नौ जुड़े थे। तभी पेड्रो कॉलिंस ने एक गेंद ऐसी फेंकी जो ऑफ स्टम्प के बाहर से उठी और जाफर को उसे खेलना ही पड़ा और वह उनके बल्ले का किनारा लेकर विकेटकीपर जेकब्स के दास्तानों में बैठ गई। जाफर ने अम्पायर रसल टिफिन की तरफ देखा और उनने सिर हिला के कहा कि हाँ सही अपील है। जाफर शतक के चौदह रन नजदीक आकर लौट गए। मेरा दिल बैठ गया। उनकी सेंचुरी होनी चाहिए थी। वे मुम्बई से निकले अच्छे ओपनर हैं। हमारे महान ओपनरों विजय मर्चेंट और सुनील गावसकर की लाइन में हैं। सहज ओपनर हैं, मारकूट के बनाए नहीं गए हैं। उनकी तकनीकी सही है, मिजाज अच्छा है, एक ओपनर जैसा होना चाहिए वैसे ही हैं। मुश्किल से मौका मिला था। शतक के इतने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
नजदीक आकर उन्हें विफल नहीं होना था। उन्हें सिर झुकाते जाते देखकर मन उदास हो गया।

लेकिन अब सचिन तेंदुलकर उतरे। कितनी पारियों के बाद वे ऐसे समय खेलने आ रहे थे जब सामने 168 रन टँगे थे। साथ के बल्लेबाज जमे हुए थे और सचिन मजे में खुलकर खेल सकते थे। बारबेडोस में वे पहली पारी में जीरो और दूसरी में सिर्फ आठ रन बना पाए थे—भारत हारा था। इसके पहले क्वींस पार्क में पहली पारी में 117 रन बनाए थे लेकिन बड़ी मेहनत से और अपने स्वभाव के विपरीत। दूसरी पारी में जीरो पर गए थे। शतकों के मामले में ब्रेडमेन के बराबर होकर भी शून्य पर। अब कहते हैं उनके चरित्र की परीक्षा थी। दो जीरो के बाद उन्हें अपनी बदकिस्मती से उबरना था। छोटी-सी उमर से वे ऐसी स्थिति में नहीं पड़े थे। अब उन्हें बताना था कि वे किस धातु के बने हैं। सचिन के क्रीज तक पहुँचने तक मैं यह सब सोच गया था। सचिन ने गॉर्ड लिया, बल्ला ऊँचा करके अपने को ढीला छोड़ा और कॉलिंस की पहली गेंद के पीछे बल्ले को ऐसे ले गए जैसे साँप को डसने को हाथ थमाया हो। गेंद जेकब्स के दस्तानों में गई और चारों तरफ लोग उछल पड़े। मैं उठा और टीवी बन्द कर दिया। थोड़ी देर दिमाग खाली और शरीर बेजान हो गया। यह देखने के लिए मैं रात-भर नहीं जगा था। फिर मैंने बिजली बन्द की और अपने बिस्तर पर लेट गया। शून्य, शून्य, आठ और शून्य। पहली गेंद पर ही शून्य। पिछली बार पहली गेंद पर सचिन का डंडा कोलकाता में उड़ते देखा था शोएब अख्तर की यार्कर पर। इसके पहले भी सचिन दो बार पहली गेंद पर आउट हुए हैं पर ये पारियाँ अपन ने देखी नहीं थीं। सचिन का यह दसवाँ डक था। और भी बड़े बल्लेबाज और भी ज्यादा पारियों में और भी ज्यादा बार शून्य पर उड़े हैं। लेकिन आँकड़े मन बहलाने को नहीं होते। आँकड़े बहुत दुखदायी भी होते हैं जैसे शून्य, शून्य, आठ और शून्य। और ये दुनिया के सर्वश्रेष्ठ बल्लेबाज के आँकड़े हैं, जो दूसरे सर्वश्रेष्ठ कहे जानेवाले बल्लेबाज के सामने हैं। एक आसमान पर चढ़ाई गई होड़ का यह हश्र होना था। क्या हुआ है सचिन को? ऐसे नरबस, ऐसे आत्मघाती और ऐसे बेदम तो वे कभी नहीं थे। उनतीसवाँ शतक बनाकर ब्रेडमेन के बराबर होकर अब क्या वे यहीं लटके रहेंगे? एक महान खेल कैरियर का ऐसा निराशाजनक अन्त होनां है। क्या करें? देखना छोड़ दें?

घंटे भर अँधेरे में पड़ा अपने गौरव के सूर्य के इस दयनीय अस्त को भुगतता रहा। मुझे भय लग रहा था कि अब अपनी टीम ढेर हो जाएगी और हूपर का जुआ सही हो जाएगा। फिर धीरे-धीरे मुझे लगा कि सचिन ही भारतीय क्रिकेट नहीं हैं और जब मैंने खेलना और देखना शुरू किया था तो कर्नल नायडू अपने क्रिकेट के पहले सुपर स्टार हुआ करते थे। फिर अपनी जान गावसकर के बल्ले में बन्द रहा करती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
थी। फिर कपिल अपने गौरव के स्तम्भ हुआ करते थे और अब सचिन हैं। कभी अपन अपनी टीम के लिए भी मरे? कभी अपने को लगा कि महानायक के अलावा भी टीम खेलती है। सही है कि टीम का प्रदर्शन निराशाजनक होता है इसलिए नायकों में हम अपने गौरव के बिन्दू ढूँढ़ लेते हैं। लेकिन टीम के बिना कोई कैसे बन सकता है। शायद यह टीम के ढेर हो जाने के भय को भगाने का तरीका था। हिम्मत करके मैंने फिर टीवी खोला। द्रविड़ और गांगुली खेल रहे थे। राहत मिली और शान्ति से सोने के लिए आखिर तक देखता रहा। वे दोनों खेलते रहे और टीम टिकी रही। सब कुछ देखकर सवेरे साढ़े तीन बजे सोया। दूसरे दिन गांगुली द्रविड़ गए तो लगा हम फिर संकट में आ गए। फिर लक्ष्मण ने छोर सँभाला और उनके साथ रात्रा हुए। रात्रा की बल्लेबाजी की बड़ी हँसी बॉयकॉट ने उड़ाई थी। डर था कि वे कभी भी चल निकलेंगे। लेकिन निपट अनपढ़ और सड़क-छाप लगते रात्रा ने लक्ष्मण के हाथ पर लग जाने के बाद नई गेंद और तेज गोलंदाजी की धुलाई करना शुरू कर दिया। चाय के बाद दो घंटों में उनने 130 रन ठोंक दिए। खेल रुका तो रात्रा 93 पर थे। इसके पहले कभी रात्रा ने प्रथम श्रेणी के मैच में भी शतक नहीं बनाया था और वे सिर्फ अपने तीसरे टैस्ट में खेल रहे थे। इसके पहले किसी भारतीय विकेटकीपर ने विदेश में शतक नहीं बनाया था। इसलिए तीसरे दिन की सुबह यानी अपनी शाम मैं फिर धड़कते दिल से टीवी के सामने बैठा। रात्रा ने कफी को ऐसा चौका जड़ा जैसा तो कल एक बार भी नहीं मारा था। फिर लक्ष्मण आउट हुए। फिर रात्रा की उँगली में गेंद बुरी तरह लगी। फिर एलबीडब्ल्यू की अपील हुई। फिर रात्रा ने चौका मार दिया। अजय रात्रा टैस्ट में शतक मारनेवाले दुनिया के सबसे छोटे विकेटकीपर बन गए। वर्ल्ड रेकार्ड! अपने लिए टैस्ट समाप्त हो गया।

अजय रात्रा के पिता ने फरीदाबाद में ढोल बजाकर घर चलाया और अब अंडे बेचते हैं। वसीम जाफर के पिता अब्दुल कादिर मुम्बई में बस चलाते हैं। अब इस देश के मामूली और गरीब आदमी के बेटे दुनिया में अपना दम दिखा रहे हैं। फिर भी हमारी टीम क्यों नहीं बनती? हम क्यों नहीं जीतते? मेरे देश, बताओ।

(19.5.2002)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सचिन पर सिन्दूर चढ़ाने वाले

दिल्ली में बिजली का ऐसा ही है। ऐन मौके यानी जब आपको अहसास तक नहीं रहता कि वह है तो वह जाकर बता देती है कि थी। सचिन तेंदुलकर 95 पर थे और बिजली चली गई। नहीं यह अभी नहीं—मैं चीखकर अँधेरे और सन्नाटे में टीवी का परदा देखता रहा। आकुलता में दिल अब भी तेजी से दौड़ रहा था। कुछ देर उम्मीद में बैठा रहा कि शायद लौट आए। नहीं लौटती तो मन हुआ अब्बी भैया को फोन करके कहूँ कि यहाँ बिजली नहीं है। वे बताते रहें कि खेल में क्या हो रहा है। पर उठते नहीं बना। फिर राहत में मन ने बताया कि ठीक ही है। बिजली ने अपन को घबराहट से बचा लिया। हो सकता है अपने न देखने से सचिन की तीसवीं सेंचुरी हो ही जाए। पर ट्रेंट ब्रिज में अपन देख नहीं रहे थे, क्योंकि विमान में थे तो सचिन 82 पर वॉन की गेंद पर बोल्ड हुए। अब भी वैसा ही हो तो हाथ मलते रह जाएँगे। द्रविड़ के जाने और गांगुली के जमने के दौरान सचिन एक-एक और दो बार रन भागकर 85 पर पहुँचे थे। वे खतरा मोल नहीं ले रहे थे। लेकिन इस धीमेपन से अपनी घबराहट और दिल की धड़कन बढ़ती गई थी। अब बिजली ने जाकर निराश किया तो राहत भी दी। भेनजी ने कुछ देर में मोमबत्ती जलाकर दी तो उसे लेकर बाथरूम चला गया। बैठने के पहले स्विच ऑन किया ताकि बिजली आते ही उठ सकूँ। मन में सचिन की इस पारी को आगे-पीछे और उलट-पुलट करके देखता रहा। फिर जब बिजली आई तो घबराहट भी लौट आई। बाहर निकलकर टीवी की आवाज सुनने की कोशिश की। कोई उत्तेजना नहीं थी। अपनी कुर्सी पर जाकर बैठा तो सचिन दिखने से राहत हुई। इतने में उनने सिर्फ दो रन जोड़े थे। लेकिन मेरे आते ही उनने जाइल्स को शुद्ध शास्त्रीय आन ड्राइव मारा और गेंद चार हो गई। हेडिंग्ली में तालियाँ पिटने लगीं। सचिन ने हेलमेट उतारी और पेवेलियन में अपने साथियों को बल्ला दिखाने के पहले लगभग दाँत किचकिचाते हुए प्रेस बाक्स को जैसे बल्ले से मारा। आसमान को देखते हुए भगवान को याद बाद में किया। यह सचिन की तीसवीं सेंचुरी थी यानी डॉन ब्रेडमेन से एक आगे। मेरी आँखें आँसू से भर गईं।

उन्नीस साल पहले सुनील गावसकर ने मद्रास के चिपॉक मैदान पर वेस्टइंडीज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्नीस साल पहले सुनील गावसकर ने मद्रास के चिपॉक मैदान पर वेस्टइंडीज के डेविस की गेंद को मिडविकेट पर मोड़कर एक रन लिया था और मेरी आँखें इसी तरह डबडबा गई थीं। तब जनसत्ता निकाले को एक महीना हुआ था लेकिन धर साब के कहने पर इंडियन एक्सप्रेस के पहले पेज पर आँखों के धुँधला जाने का वर्णन किया था। पहली बार कोई शतक के मामले में ब्रेडमेन से आगे गया था और वह अपना सुनील गावसकर था। एक्सप्रेस में इसीलिए लिखा था कि मद्रास संस्करण में छपेगा और गावसकर उसे पढ़ेंगे। सचिन को पढ़वाने की न इच्छा है, न उनसे ऐसे सम्बन्ध हैं। फिर सचिन को अभी सुनील के पार जाना है। सुनील तब चौंतीस साल और पाँच महीने के थे। सचिन अभी उनतीस साल और चार महीने के हैं। यानी उमर में सचिन ने सुनील से पाँच साल पहले ही ब्रेडमेन को पार कर लिया है। पर यह भी याद रखिए कि पहला टैस्ट खेला तब सुनील इक्कीस साल और आठ महीने के थे और सचिन ने कराची में जीवन का पहला टैस्ट सोलह साल और सात महीने की उमर में खेल लिया था। यानी सचिन को पाँच साल की बढ़त मिली हुई है। तीसवीं सेंचुरी मारने के बाद सुनील चार साल और छत्तीस टैस्ट और खेले। सचिन अभी कम-से-कम नौ-दस साल और खेल सकते हैं। यानी सचिन ही सुनील से आगे जाएँगे। होना भी यही चाहिए कि अगली पीढ़ी पिछली से आगे जाए। वैसे बचपन से विलक्षण प्रतिभाशाली होने के कारण सचिन सोलह साल से ही टैस्ट खेलने लगे थे। यह लाभ न ब्रेडमेन को मिला था, न गावसकर को। ब्रेडमेन बीस साल के हो चुके थे जब ब्रिसबेन में उन्हें इंग्लैंड के खिलाफ पहला टैस्ट खेलने का मौका मिला। दूसरे विश्वयुद्ध ने उनके खेल जीवन से आठ साल काट लिए। सन् अड़तीस से टैस्ट क्रिकेट बन्द हुआ तो सन छियालीस में खुला। वे अपना आखिर टैस्ट खेले तब चालीस के हो चुके थे। यानी बीस साल के खेले जीवन में वे बारह साल खेले और कुल बावन टैस्ट और अस्सी पारियाँ खेल सके। उनने उन्तीस शतकें मारीं और 6886 रन बनाए। यह सब पार कर लिए गए हैं। लेकिन उनने प्रत्येक पारी में 99.94 रन बनाए। कोई माई का लाल इसके आसपास भी नहीं पहुँच पाया है। उनके बाद दक्षिण अफ्रीका के पोलक का नाम आता है जिनकी औसत 60.97 है। इसीलिए इंग्लैंड के महान आलराउंडर इयन बोथम ने कहा है कि ब्रेडमेन की औसत छोड़कर बल्लेबाजी के सब रेकार्ड सचिन के नाम हो सकते हैं। सचिन की तीसवीं सेंचुरी 99वें टैस्ट में बनी। सुनील गावसकर को भी इतने ही टैस्ट लगे थे। ब्रेडमेन ने उन्तीसवीं सेंचुरी अपने 51वें टैस्ट में बनाई थी, यानी सुनील और सचिन दोनों से अड़तालीस टैस्ट पहले। इसलिए ब्रेडमेन का सचमुच कोई सानी नहीं है। ब्रेडमेन ने ही कहा था कि सचिन उनके जैसा खेलते हैं। तभी से सचिन तेंदुलकर ब्रेडमेन के बाद दुनिया के सर्वश्रेष्ठ बल्लेबाज माने जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
एक बार सचिन के पिता रमेश तेंदुलकर मुम्बई में बेटे का पुरस्कार लेने आए। मुझे भी वह पुरस्कार पत्रकारिता के लिए मिला था। तब रमेश तेंदुलकर से उनके बेटे की विलक्षण प्रतिभा पर बात हुई थी। इसके पहले मुम्बई से दिल्ली की एक उड़ान में सचिन मेरे पास बैठे हुए थे। कुछ दिन पहले उन्हें वानखेड़े स्टेडियम में कपिल के साथ डबल विकेट काम्पीटिशन खेलते देखा था। सत्रह साल के सचिन ने पाकिस्तान के तूफानी गेंदबाज और तीसमारखाँ खिलाड़ी इमरान खान को दो लगातार छक्के मारे थे। मैं उन कलाइयों को देखना चाहता था जिनमें इतनी ताकत है। सचिन ने छोटे-से बच्चे की तरह अपने हाथ मेरे सामने कर दिए थे। इस सबका बखान एक कागद कारे में किया था। एक रिटायर अध्यापक ने यह कहते हुए पत्र लिखा था कि मैं अपने को बहुत ट्रिवियलाइज करता हूँ—छुटभैया बना देता हूँ। अपनी अध्यापिका गरिमा और उम्र का हवाला उनने यह बताकर दिया था कि वे नामवरजी के साथ पढ़ाते रहे हैं। वह चिट्ठी तो मैंने रखी नहीं जैसे और चिट्ठियाँ भी नहीं रखता हूँ। लेकिन उन वयोवृद्ध अध्यापक की पीड़ा समझ सकता हूँ। कुछ साल पहले तक अपने यहाँ खेल, सिनेमा जैसी चीजों को कौन गम्भीरता से लेता था। मखौल उड़ाने के लिए अशोक वाजपेयी को भी मेरा क्रिकेट और फिल्म पर लिखना याद आया था। लेकिन अपन सचिन के जमाने से नहीं सीके नायडू के वक्त से क्रिकेट के इतने रसिया हैं कि पद और उमर आदि का कोई मान नहीं रहता। क्रिकेट देखने आज भी उतनी तेजी से दौड़ता जाता हूँ जितनी से दस साल की उमर में पहला मैच देखने गया था। क्रिकेट, टेनिस, फुटबाल आदि के कारण तबीयत में खेल समाया रहता है और इसलिए एक तरह की जवानी बनी रहती है। जो आनन्द कुमार जी की किसी तान और अज्ञेय या इलियट की किसी काव्य-पंक्ति से मिलता है वही गावसकर के कवर ड्राइव या सचिन के स्ट्रेट ड्राइव से प्राप्त होता है। खेल या कौशल की कोई विधा अपने को कभी सस्ती और चालू नहीं लगती। और इसलिए सचिन के तीसवें शतक से उपलब्धि का वही बोध होता है जो नॉयपाल के उपन्यास 'ए हाउस फार मिस्टर बिस्वास' से होता है। सचिन का होना जेआरडी, सत्यजित राय, अमर्त्य सेन या नॉम चोमस्की के होने से कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। जिससे मन उदात्त होता हो, उससे ट्रिवियलाइज कैसे हो सकता है।

एक जमाने में सुनील गावसकर की मूरत से सिन्दूर नोचने की होड़ भी अपने यहाँ चली थी। हमारे एक्सप्रेस में ही सुमेर कौल और वाधवानी थे जो उनके पीछे पड़े रहते थे। तब सुनील की ओर से तलवार चलाने में आनन्द आता था। अब देखता हूँ कि भाई लोग सचिन के पीछे पड़े हैं। किसी को अन्तिम रूप से महान स्वीकार करने के पहले दुनिया उसे कीचड़ में लथेड़ने की पूरी कोशिश करती है। ऐसे लोग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
हमेशा रहे हैं और अब भी हैं जो सफलता और महानता से चिढ़ते हैं। उनके स्वभाव में होता है। जो सचमुच टिका रहने वाला है, वह ऐसे लोगों के बावजूद बढ़ता चला जाता है। जैसे सचिन को चार-पाँच साल पहले सिंहासन पर चढ़ाने की चारों तरफ से कोशिश हुई। ब्रेडमेन की टिप्पणी ने रास्ता खोला। अब देखता हूँ कि दो साल से उनका सिन्दूर नोचने और चमक बदरंग होने की कोशिश हो रही है। रिश्वतखोरी और सट्टेबाजी के कीचड़ से एक वही बिलकुल बेदाग बने निकलकर आए। अब लिखा जा रहा है कि उनकी तकनीक में बड़ा भारी सुराख ढूँढ़ लिया गया है। गेंदबाज जान गए हैं कि कैसे उन्हें ढेर किया जा सकता है। नासिर हुसैन ने तरकीब निकाल ली है कि सचिन को साधारण बल्लेबाज कैसे बनाया जाए। सब जानते और देख रहे हैं कि हुसैन का आविष्कार यही है कि सचिन को खेलने लायक गेंद ही न दी जाए। जाइल्स के बँगलूर में छप्पन गेंद उन्हें दी जिनमें डंडे पर चार आईं। बाकी की सब लेग डंडे से बाहर थीं। अब इंग्लैंड में या तो गेंद उनके सिर पर से निकाली जा रही है या ऑफ स्टम्प के दो फुट बाहर। जाइल्स वही लेग थियरी चला रहे हैं। फिर भी सचिन ने भारत में तीन टैस्ट में तीन सौ से ज्यादा और इंग्लैंड में भी तीन सौ से ज्यादा रन ठोंक दिए हैं। सन 2002 में वे सबसे ज्यादा रन बनाने वाले बल्लेबाज हैं दुनिया भर में। पर भाई लोग कुछ और लिख रहे हैं कि उनके मिट्टी के पाँव ढूँढ़ लिए गए हैं और इस साल वे बिलकुल फार्म में नहीं हैं। अपने भारतीय क्रिकेट रिपोर्टर, लेखक और कमेंटेटर भी यही कह रहे हैं। सब जानते हैं कि सहवाग उनके जैसा खेलने की कोशिश करते हैं। यह भी मानते हैं कि सचिन सोना तो सहवाग सुहागा हैं। लेकिन दूसरे टैस्ट में सहवाग ने सेंचुरी मारी और सचिन नहीं मार पाए तो कहा गया कि गुरु तो गुड़ ही रह जाएगा और चेला शक्कर हो जाएगा।

इंग्लैंड के अखबार ऐसे टैबलॉइड हो गए हैं कि तत्त्व और सत्त्व उनकी समझ से बाहर हैं। वे चमकती बिजली को सूरज की रोशनी और मृगतृष्णा को ठोस धरातल बताने में लगे रहते हैं। वैसा ही हाल उनके क्रिकेट लेखन का है। फिल्मी टीन-टप्पर की दुनिया को वे खेलों में आरोपित कर रहे हैं। अभी मैंने देखा कि सेट मैक्स नाम की कोई टीवी चैनल क्रिकेट मसाला नाम का कार्यक्रम चलाने वाली है जिसमें क्रिकेट खिलाड़ियों के बारे में बताया जाएगा कि किसका किससे इश्क चल रहा है और किसका तलाक होने वाला है। दिल से क्रिकेट खेल चुके और उतार चुके कपिलदेव—क्रिकेट दिल से दिखाएँगे। टीवी एक्शन को दिखाने वाला सबसे अच्छा माध्यम है। लेकिन उसके लोग समझते हैं कि गॉसिप के साथ गॉसिप का वघार और मसाला नहीं लगेगा लोग देखेंगे नहीं। ऐसा ही रवैया अखबारों का हो रहा है। वे समझते हैं कि खेल के बारे में क्या लिखना। उसे तो लोग टीवी पर देख चुके। अब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
अखबार में तो गॉसिप छपेगी, गपशप होगी तभी लोग पढ़ेंगे। इंग्लैंड में हुए विश्व कप में ऐसे बहुत से पत्रकार थे जो खेल शुरू होते ही कॉपी लिखने बैठ जाते थे। खेल देखना उनका काम नहीं था। एक टीम की पारी पूरी हो तो खबर भेज देते थे। जवाबी पारी के बाद जवाबी कॉपी। पूछा कि भाई आते ही लिखते हो तो खेल के बारे में तो नहीं लिखते होगे क्योंकि वह तो शुरू ही होता है। तो फिर लिखते क्या हो? कहा कि वातावरण, गपशप, यहाँ के अखबारों में छपी चटपटी बातें और किसने क्या किया और कहा। हमारा अखबार पूरा पेज निकालता है। खेल तो टीवी पर देख लेते हैं। राय और विश्लेषण बड़े खिलाड़ियों के नाम हो जाता है। अपन पढ़नेवाली कॉपी लिखते हैं। ऐसे पत्रकारों में कोलकाता के लोग सबसे ज्यादा थे। टीवी और बड़े खिलाड़ियों के नाम से प्रेत लेखन ने पत्रकारों को गपशप और मुहिम लेखक बना दिया है। वे खुद न कुछ देखते, समझते और मानते हैं। इसलिए क्रिकेट पर लिखने के बजाय गपशप लिखते हैं, खिलाड़ियों के पीछे पड़े रहते हैं। एक खिलाड़ी की दूसरे पर खुन्दक उछालते रहते हैं। यानी राजनीतिक संवाददाता जो राजनीति और राजनेताओं के साथ करते हैं, वही अपने क्रिकेट रिपोर्टर खेल और खिलाड़ी के साथ करते हैं।

यही लोग सचिन तेंदुलकर के पीछे पड़े हैं। उन्हीं की ओर बल्ला करके सचिन ने घुमाया था। हालाँकि जब शास्त्री ने उनसे पूछा तो सचिन ने कहा नहीं मैं तो शतक के बाद सभी को धन्यवाद देता हूँ। ऐसा ही कुछ गावसकर ने दिल्ली में उनतीसवाँ शतक मारने के बाद कहा था। सचिन गावसकर से ज्यादा गम्भीर और फालतू की बातों में न पड़ने वाले खिलाड़ी हैं। इसीलिए किसी विवाद में नहीं पड़ते। इसीलिए भारत के लोगों के मन में वे मासूम महानायक बने हुए हैं। विज्ञापन वाले कहते हैं कि किसी भी सिने सितारे से उनकी चमक ज्यादा है। लेकिन आप बताने बैठें कि सचिन ठोस सोने के हैं और उन पर कोई चमक चढ़ा नहीं सकता। उनकी चमक से लोग फायदा ले सकते हैं। तो आप पाएँगे कि सुनने वाले अखबार और टीवी के नहीं होंगे। वे क्रिकेट के रसियाँ ही हैं जो सचिन को देखते और मानते हैं। अपने जैसे लोग जिनकी आँखें भर आती हैं और गला रुँधने लगता है। सिन्दूर नोचने वाले नहीं चढ़ाने वाले।

(25.8.2002)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभी तो सचिन से टैक्स लेना है

अखबारों में सम्पादक के नाम पत्र लिखने वाले कुछ पाठकों ने कहा है कि सचिन तेंदुलकर को भेंट में मिली फरारी को भारत लाने के लिए सरकार से कर माफ कर देने का अनुरोध नहीं करना चाहिए था। उन्हें बाहर से ऐसी बेशकीमती कार को लाने का जो भी आयात शुल्क बनता हो, पाई-पाई चुकाना चाहिए और इस तरह देश के सामने उदाहरण पेश करना चाहिए। वे कर सकते हैं क्योंकि वे ईमानदार और जिम्मेदार आदमी हैं और उनके पास पैसा है। वे उदाहरण नहीं बनेंगे तो कौन बनेगा?

मैं नहीं जानता कि सचिन के घरवालों और उनकी छवि निखारे रखने वालों ने कोने कुचाले में छोटे अक्षरों में छपी ये चिट्ठियाँ पढ़ी हैं या नहीं और उनमें इतनी हिम्मत और सचाई है कि नहीं कि जनमत के ऐसे नमूनों को उन तक पहुँचा सकें। भारत के एक अरब लोगों के लिए सचिन के होने का अर्थ समझने वालों का कर्तव्य है कि वे उन्हें बताएँ कि जो लोग उन्हें लगभग कृष्ण कन्हैया की तरह पूजते, मानते और प्रेम करते हैं, वे उनकी कर-माफी की विनती के बारे में क्या महसूस करते हैं। यह न सचिन के लिए शुभ है, न इस देश के लोगों के लिए कि आदर्श की एक और मूरत ढह जाए। सवाल क्रिकेट में सचिन के स्थान और भारत सरकार के राजस्व का नहीं है। सवाल है एक मूल्य का, जिसके बिना लोकतन्त्र और उसका उत्तरदायी शासन नहीं चल सकता। हमारे राजनेताओं, समाज, संस्कृति और धर्म के नेताओं ने गांधी के बाद इस मूल्य की परवाह नहीं की है और इसलिए हमारे सार्वजनिक जीवन में आचरण का ऐसा सर्वव्यापी और दुखदायी पतन हुआ है। लोगों को उनतीस बरस के एक क्रिकेट खिलाड़ी से उम्मीद है कि वह श्रीमान भारत होने का सच्चा उदाहरण देगा। आप कह सकते हैं कि यह बेचारे सचिन के साथ ज्यादती है। हो भी तो क्यों न हो? आखिर यही लोग कहते हैं कि क्रिकेट हमारा धर्म और सचिन हमारा भगवान है। अगर सचिन क्रिकेट में उनकी उम्मीदों पर खरे उतरना चाहते हैं तो उन्हें इस अपेक्षा पर भी ध्यान देना चाहिए।

मामला यह है कि इटली में कार बनाने वाली एक कम्पनी है फिएट। इसका एक कारखाना पुराने जमाने से भारत में भी चला आ रहा है। मारुति की कार क्रांति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के पहले अपने यहाँ दो ही कारें मिला करती थीं-एम्बेसडर और फिएट। अब इस फिएट कम्पनी ने पेलियो, सिएना नाम की कई किस्म की गाड़ियाँ बनाई हैं जिसके विज्ञापन सचिन तेंदुलकर करते हैं। सचिन के कारण ये गाड़ियाँ लोकप्रिय और बिकाऊ हुई हैं। सचिन को तेज दौड़ने वाली अच्छी और कीमती गाड़ियों का शौक बताया जाता है। वे यूरोप में होने वाली कार रेसों में बेहद दिलचस्पी लेते हैं। इस बार इंग्लैंड के दौरे पर तीस शतक पूरे करके वे ब्रेडमेन के आगे गए और उनने सौवाँ टैस्ट भी खेला। जिन कम्पनियों के उत्पादों का सचिन विज्ञापन करते हैं उनके लिए ये अवसर व्यापारिक हितों को आगे बढ़ाने के थे क्योंकि सचिन मीडिया की आँखों में थे। सचिन को फिएट ने इंग्लैंड से बुलाया, एक कार रेस दिखाई और कार दौड़ों में उनके जैसा ही नाम कमाने वाले मशहूर कारचालक माइकल शूमाखर के हाथों एक फरारी भेंट कर दी। फरारी वह गाड़ी है जिसे दौड़ा कर शूमाखर ने कई प्रतिष्ठित कार-दौड़ें जीती हैं। लाल रंग की फारमूला एक में दौड़नेवाली फरारी फिएट की बड़ी नामी कार है। इटली और यूरोप के कई देशों में फरारी फर्राटे से भागने वाली गाड़ी पैसे वालों के ही बस की गाड़ी है। सचिन अगर तेज भागने वाली गाड़ियों के शौकीन हैं तो शूमाखर की भेंट की गई फरारी उनके लिए कोहिनूर हीरे जैसी ही बेशकीमती होगी। प्रतिष्ठा और शान की गाड़ी। अब आपने खरीदी हो या आपको भेंट में मिली हो, उदारीकरण के इस जमाने में भी फरारी जैसी गाड़ी लाने पर आपको अच्छी खासी ड्यूटी चुकानी पड़ती है। कहते हैं सचिन को एक से डेढ़ करोड़ की ड्यूटी देनी पड़ती है।

किसी ने सुझाया होगा या उन्हीं के मन में आया होगा कि फरारी पर जो अच्छा खासा आयात शुल्क देना पड़ेगा, उसे माफ करवाया जा सकता है। सन् पचासी में आस्ट्रेलिया में चैम्पियंस ट्रॉफी हुई थी जिसे सुनील गावसकर की भारतीय टीम ने जीता था। उस ट्रॉफी में एक चैम्पियन ऑफ चैम्पियंस खिताब था, जो रवि शास्त्री ने अपनी बल्लेबाजी और गेंदबाजी के कारण जीता था। इसमें एक नामी ऑडी गाड़ी उन्हें मिली थी। आपको याद होगा कि मेलबर्न के मशहूर स्टेडियम में बिजली की चकाचौंध रोशनी में शास्त्री की इसी गाड़ी पर चढ़कर भारतीय खिलाड़ियों ने ट्रॉफी के साथ चक्कर लगाया था। वह राजीव गांधी के राज का पहला सुनहरा साल था। तब शास्त्री को मेलबर्न में जीती गई गाड़ी को भारत लाने के सभी कर माफ कर दिए गए थे। यही रवि शास्त्री अब टीवी के कमेंटेटर हैं और इंग्लैंड में करारनामे के संकट में खिलाड़ियों की ओर से बात करने के लिए नियुक्त किए गए थे। उनसे सचिन ने प्रेरणा ली हो या दूसरों से, उनने मुम्बई के ही भाजपाई नेता और अटल मंत्रिमंडल के पव्वेदार मन्त्री प्रमोद महाजन को लिखा कि मुझे शुमाखर ने फरारी भेंट की है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
और मेहरबानी होगी अगर सरकार उसे भारत लाने का कोई शुल्क न ले। अब प्रमोद महाजन के बारे में आप जानते हों तो उनकी भाजपाई नेतागिरी इसी से पनपी है कि वे भाजपा के लिए देश की आर्थिक राजधानी से धन उगाने में माहिर थे। जो पार्टी के लिए धन जुटाते हैं वे धन देने वालों के काम भी करवाते हैं। और पैसे वालों के ऐसे ही काम करवाने होते हैं। कहीं कोई ड्यूटी माफ करवा दी, कहीं कोई रियायत दिलवा दी। पार्टी को पैसा देने वाला कोई अपनी जेब से तो देगा नहीं। वह दिया गया पैसा बाजार से ही खींचेगा। और पैसा लेने वाला राजनेता या दलाल यह सुविधा दिलाता ही है। इसलिए प्रमोद महाजन ऐसे काम करवाने में माहिर हैं। हो सकता है उन्हीं के कहने पर सचिन ने चिट्ठी लिखी हो। बहरहाल सचिन ने लिखी और प्रमोद महाजन ने उसे वित्त मन्त्री जसवन्त सिंह को दी और वित्त मन्त्री ने ड्यूटी माफ कर दी। प्रमोद महाजन ने इसे भारत के एक महान खिलाड़ी को दिए गए सम्मान की तरह प्रचारित करवाया। शिवानी भटनागर हत्याकांड में मधु शर्मा के आरोपों के बाद हाथ धोने के लिए उन्हें गंगाजल की जरूरत थी भी।

अब यह प्रचारित हुआ कि सचिन तेंदुलकर की फरारी पर कर-माफी हो गई है और वे इसे दिलवाने वाले प्रमोद महाजन को मुम्बई के मेरिन ड्राइव पर फरारी में घुमाएँगे, तो इसकी प्रतिक्रिया भी हुई। उन्हीं दिनों छप रहा था कि आईसीसी का करारनामा सबसे ज्यादा सचिन को प्रभावित करेगा क्योंकि वही सबसे ज्यादा कम्पनियों के सबसे ज्यादा विज्ञापन करते हैं और उन्हें एक विज्ञापन का एक करोड़ से ज्यादा पैसा मिलता है और उनकी साल भर की कमाई छत्तीस करोड़ के आसपास है। अब ऐसे सचिन फरारी लाने के एक-डेढ़ करोड़ सरकार को दे भी दें तो उन्हें क्या फर्क पड़ेगा? फिर कलकत्ते की एक संस्था का पता चला जो गरीब और विकलांग बच्चों को विदेशों से मिले खिलौने मँगवाकर बाँटती है। खिलौनों की ऐसी ही एक खेप आई तो कस्टम वालों ने उस संस्था से बीस-पच्चीस लाख की ड्यूटी माँगी। संस्था ये पैसे दे नहीं सकी तो खिलौने वापस भेज दिए गए। कलकत्ते के अखबारों ने पूछा कि गरीब बच्चों के लिए दान में मिले खिलौनों पर ड्यूटी माफ नहीं की जा सकती तो सचिन को मिली फरारी पर कैसे और क्यों माफ की जा रही है? कर-माफी फिर उन्हीं चीजों पर सरकार दे सकती है जो सार्वजनिक हित के लिए लाई जा रही हों और जिससे कमाई करके कोई व्यापारिक हित न साधा जा रहा हो। लोगों ने पूछा और सही पूछा कि सचिन की फरारी से कौन-सा और किसका सार्वजनिक हित सधेगा? वह उनके शौक और शान की गाड़ी है उनके निजी इस्तेमाल में आएगी। वे उसे लाने की पूरी ड्यूटी मजे में चुका सकते हैं। उन्हें कर-माफी क्यों दी जानी चाहिए? ऐसा तो है नहीं कि वे फरारी चलाएँगे तो और तेजी से रन बनाएँगे या उनके फरारी में घूमने से देश की इज्जत बढ़ेगी। फिर क्या भरोसा कि उनके फरारी दौड़ने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का चित्र निकालकर फिएट अपनी गाड़ियों के विज्ञापन में नहीं लगाएगी? ऐसा हुआ तो यह तो एक महान और पैसेवाले खिलाड़ी को दी गई कर-माफी का सरासर व्यापारिक इस्तेमाल होगा। जिन पाठकों ने सम्पादक के नाम पत्र लिखे वे ऐसी ही जानकारी से विचलित हुए हैं और वे निश्चित ही सचिन को अपनी भारतीय शान और अभिमान का प्रतीक मानते हैं और उन्हें बुरा लग रहा है कि सचिन भी दूसरे छुटभैया लोगों की तरह कर-चोरी करने या हैसियत का दुरुपयोग करने की कोशिश कर रहे हैं।

सचिन से यह उम्मीद इसलिए भी है कि दो साल पहले क्रिकेट में सट्टाखोरी और रिश्वतखोरी का इतना बड़ा भंडाफोड़ हुआ। उसमें कप्तान अजहर और पूर्व कप्तान कपिलदेव और आठ दस दूसरे बड़े खिलाड़ियों पर भी आरोप आए। दक्षिण अफ्रीका के शानदार कप्तान हंसी क्रोनिए रँगे हाथों पकड़े गए। आस्ट्रेलिया के शेनवार्न और मार्क वॉ, वेस्टइंडीज के लारा, पाकिस्तान के सलीम मलिक, वसीम अकरम और दूसरे देशों के खिलाड़ियों पर भी कीचड़ लगा। लेकिन जो किसी भी मैच का वारा-न्यारा करने की योग्यता रखते हैं और सबसे बड़े ही नहीं सबसे कमाऊ खिलाड़ी भी हैं, वे सचिन तेंदुलकर बिलकुल बेदाग साबित हुए। बल्कि जाँच से पता चला कि उनके आउट होने के बाद ही रिश्वतखोरी और सट्टेबाजी चलती थी। उनका ऐसा खौफ था। और जो मैच कप्तान द्वारा बेच दिए जाते थे उनकी खबर मिलने और सचिन से ही कोच उम्मीद करते थे कि वे उसे बचा लेंगे। सट्टेबाजी और रिश्वतखोरी के भंडाफोड़ में सचिन ही सच्चे सोने के बनकर निकले थे। फिर फिल्म और क्रिकेट के कई सितारे आयकर न चुकाने के घोटालों में फँसे पाए गए। लेकिन कभी सचिन का नाम नहीं उछला क्योंकि वें अपनी आमदनी पर पैसे-पैसे का टैक्स चुकाते हैं। इस कारण वे न सिर्फ भोले-भाले और प्यारे गुदगुदे खिलाड़ी दिखते हैं, सचमुच ईमानदार और सच्चे आदमी हैं भी और इसीलिए देश और दुनिया में उनकी इतनी इज्जत है। विलक्षण प्रतिभा के शुद्ध शास्त्रीय धुआँधार बल्लेबाज के नाते ही नहीं, एक समर्थित और आदर्श खिलाड़ी और एक सच्चे और ईमानदार और बेहद विनम्र आदमी के नाते भी। ऐसे ही आदर्श व्यक्तित्व से भेंट में मिली फरारी पर पूरा आयात शुल्क चुकाने की उम्मीद लोग रखते हैं।

नहीं तो फरारी की तरह ही बेशकीमती और नामी गाड़ी बीएमडब्लू होती है जो दक्षिण अफ्रीका में सट्टाखोरी में धन्धे में पड़े भारतीय मूल के एक व्यापारी ने कपिल को दी थी। एक बीएमडब्लू दुबई में अजहर को भी भेंट की गई थी। कपिल को सबसे ज्यादा विकेट लेने पर और अजहर को वन डे में नौ हजार रन बनाने पर। ये दोनों ही बेशक बड़ी उपलब्धियाँ हैं और उन पर उन्हें बीएमडब्लू मिलना कोई बड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
बात नहीं है। लेकिन बाद की जाँच में पाया गया कि ये भेंट देनेवाले या उनके पीछे के लोग खिलाड़ियों को रिश्वतखोरी में फँसाने और सट्टेबाजी करने की कोशिशों में लगे होने के शक के घेरे में हैं। पता नहीं इन गाड़ियों पर कपिल और अजहर ने पूरी ड्यूटी दी या नहीं, या उन्हें भी कर माफी दिलवाने वाले लोग दिल्ली में थे। अजहर और कपिल पर तो बाद में आरोप भी लगे। कपिल बच गए या बचा लिए गए लेकिन अजहर पर तो पाबन्दी लगी हुई है। कपिल को जब से विजडन ने पैसों वालों की मदद से पिछली सदी का सबसे बड़ा भारतीय खिलाड़ी बनाकर पुनर्स्थापित किया है, वे अजहर और अजय जडेजा पर से पाबन्दी उठवाने की वकालत कर रहे हैं। कपिल और अजहर के पीछे जो कारपोरेट ताकतें लगी हुई हैं उन्हें कोई भी देख सकता है। उनके साथ लोकेश शर्मा जैसे कारपोरेट दलाल लगे हुए हैं, जो कहते हैं कि महानायकों की मूरतें नहीं गिराना चाहिए क्योंकि इससे देश का ही नुकसान होता है और हमारे सार्वजनिक जीवन में हताशा और मोहभंग का वातावरण बनता है जो नकारात्मकता पैदा करता है। सच है। लेकिन हम अपने महानायकों को मूल्यों की कसौटी पर घिसके देखेंगे और देखते रहेंगे या उनके ऐब और अवगुण दबाते और छुपाते रहेंगे? पाखंड सचाई को छुपा या दबा नहीं सकता क्योंकि सत्य का तो स्वभाव ही प्रकट होते रहना और चमचमाते रहना है। अगर हमारे महानायक सार्वजनिक मूल्यों की कसौटी पर खरे नहीं उतरते तो हम उनका भंडाफोड़ होने से रोक नहीं सकते। जो उम्मीद कर रहे हैं कि सचिन शुमाखर से मिली फरारी का पूरा टैक्स चुकाएँगे, वे उनके प्रशंसक और भक्त हैं और उन्हें कसौटी पर घिसकर देख रहे हैं। खरे उतरने की जिम्मेदारी अब सचिन पर है। और वित्त मन्त्री जसवन्त सिंह की भी जिम्मेदारी है कि वे सचिन की महानता की सराहना करते हुए भी उनसे पूरा आयात शुल्क लें, क्योंकि वे चुका सकते हैं। जब वे अकाल से भूखों मरते गरीबों को मुफ्त अनाज नहीं दे सकते तो करोड़पति सचिन को ऐश करने की गाड़ी फोकट में क्यों लाने दे रहे हैं?

अपने महानायक गावसकर, कपिल और अजहर की सार्वजनिक सेवा की सचाई फिर कभी बताऊँगा। अभी तो सचिन से टैक्स लेना है।

(22.9.2002)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टेनिस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इनामी रकम की कीमत

अब गीता मोर का महिला टेनिस से वही लेना-देना है जो हमारे गाँव की धापू बाई का राग जयजयवन्ती से है। लेकिन जिन्दगी में पहली बार टीवी पर फ्रेंच ओपन देखने वाली गीता मोर का भी कहना है कि महिलाओं का खेल पुरुषों से ज्यादा मजेदार और कसा हुआ था। जानकार और बरसों से टेनिस देख रहे समझदार तो खैर कह ही रहे हैं कि इस बार फ्रेंच ओपन के रोला गारो में महिलाओं के क्वार्टर फाइनल, सेमी फाइनल और फाइनल में खेल ज्यादा आकर्षक, ज्यादा संघर्षपूर्ण और ज्यादा ऊँची क्वालिटी का था। दर्शकों ने भी पुरुषों के बजाय महिला टेनिस का ज्यादा आनन्द लिया। दोनों के सेमी फाइनलों और फाइनलों में भीड़ लगभग समान थी।

पचपन साल में तीसरी बार लगातार फ्रेंच ओपन जीतने वाली अठारह साल की युगोस्लाव नम्बर वन खिलाड़ी मोनिका शेलस ने इतिहास बनाते ही पुराना सवाल उठा दिया कि महिलाओं को पैसा कम क्यों मिलता है। जबकि उनका खेल लगातार ऊँचा उठता जा रहा है। पैसा कम यानी क्या? टेनिस में आजकल कितना पैसा है इसका अन्दाज लगाना हो तो अगले महीने विंबलडन में जीतने वाले और जीतने वाली को मिलने वाली इनामी रकम देख लीजिए। खिताब जीतने वाले पुरुष को आज के हिसाब से जी हाँ, एक करोड़ सैंतालीस लाख और महिला को एक करोड़ तैंतीस लाख रुपए मिलेंगे। यानी एक खिताब जीतना किसी उद्योग में साल भर का मुनाफा कमाने से कम नहीं है। दस टॉप पुरुष और महिला खिलाड़ियों की साल भर की कमाई हमारे छोटे-मोटे उद्योगपतियों की कुल कमाई से ज्यादा ही ठहरेगी। ऐसा नहीं कि पैसा जीतने वाले खिलाड़ियों को ही मिलता हो। अमेरिका के आन्द्रे एगासी ने अभी तक कोई खिताब नहीं जीता लेकिन टेनिस और रंगीले सितारे होने के कारण वे करोड़ों कमा चुके हैं।

आपने देखा होगा कि विंबलडन की पुरुषों और महिलाओं की इनामी रकम में सिर्फ चौदह लाख का फरक है। फ्रेंच ओपन में भी महिला खिताब जीतने वाली को पुरुष खिताब जीतने वाले से थोड़ा ही कम मिलता है। ग्रैंड स्लैम के दूसरे दो ओपन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमेरिकी और आस्ट्रेलियाई खिताबों में तो दोनों को समान रकम मिलती है। महिलाओं से भेदभाव के दो ही गढ़ बचे हैं—विंबलडन और रोलाँ गारो। मोनिका शेलस इन्हें ढहाना चाहती हैं और इस सदी की शायद सबसे महान खिलाड़ी मार्तिना नवरातिलोवा भी ढहाना चाहती थीं। शेलस से मार्तिना की आवाज में ज्यादा वजन और दम था। महिला टेनिस की इस 'ही मैन' ने बरसों टेनिस कोर्टों पर राज किया। वे अभी भी खेल रही हैं और जीवन में सबसे ज्यादा 158 खिताब जीतने वाली महिला हो गई हैं। मार्तिना और स्टेफी की सर्विस अपने रमेश कृष्णन से तेज थी और है। कुछ ग्राउंड स्ट्रोक भी ये दोनों जितने तेज मारती हैं अपने रमेश भाई कृष्णन तो कभी मार ही न पाएँगे। दबाव में मार्तिना और स्टेफी का जो दिमागी लोहा दिखाई देता है, कई पुरुषों का तो वह मोम ही लगेगा।

फिर भी आप जानते हैं कि महिलाओं को खिताबी रकम कम क्यों मिलती है? क्योंकि वे मैच में तीन सेट खेलती हैं और पुरुष पाँच। जैसे खिताबी रकम कोर्ट पर शारीरिक दमखम की बदौलत टिके रहने से तय होती हो। टेनिस भले ही अब पूरी तरह पॉवर का खेल हो गया हो लेकिन उसे सिर्फ शारीरिक बल का खेल मानना भी गलत है। जिनकी सर्विस बम के गोले की तरह निकलती है और वॉली भी गोल की तरह पड़ती है वे भी नजाकत से ड्राप शॉट मार लेते हैं और ऊपर से गोल घूमता हुआ ऐन केर लाइन पर गिरनेवाला लॉब भी। बल्कि अगर वे ऐसे सहलाने वाले नजाकती शॉट न खेल पाएँ तो कई बार तो पाइंट जीत ही नहीं पाएँगे। सर्विस और डाउन द लाइन शॉट मारने में गजब का पावर चाहिए। लेकिन कौशल और कलाकारी के बिना कोई भी खिलाड़ी सितारा और सितारे से भी महान खिलाड़ी नहीं हो सकता। टेनिस पॉवर का जितना खेल है उतना ही कलाकारी का भी है। इसलिए पाँच सेट खेलने वाले को ज्यादा पैसा और तीन सेट खेलने वाली को कम वाली दलील ज्यादा दम नहीं रखती। खिताबी इनाम ज्यादा सेट खेलने और कोर्ट पर टिके रखने की क्षमता से तय नहीं होना चाहिए।

पाँच सेट की बात है ना, तो रोलाँ गारो में पुरुषों के दोनों सेमी फाइनल तीन-तीन सेट में तय हो गए। जिस कूरियर और आंद्रे अगासी का सेमी फाइनल तो फाइनल ही समझा गया था क्योंकि यही दो खिलाड़ी खिताब जीतने के दावेदार और दमदार लग रहे थे। लेकिन पहले सेट के बाद ही जैसे अगासी की हवा निकल गई। दूसरे और तीसरे सेट में कूरियर के रोड रोलर के रंगीन तबीयत और तामझाम वाले अगासी को बराबर कर दिया। दूसरा सेमी फाइनल फ्रांस के हेनरी लेकाँ और चेकोस्लोवाकिया के पेत्र कोरडा के बीच हुआ। लेकाँ मजदूरी करनेवाले प्रतिशत खिलाड़ी नहीं हैं। वे चमकदार और प्रेरित टेनिस खेलते हैं। क्वार्टर फाइनल में वे स्वीडन के कुल्ती को एक शानदार मैच में हराकर आगे बढ़े थे। वह मैच पाँच सेटों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
तक गया क्योंकि लेकां पहले दो सेट हार चुके थे। लेकिन सेमीफाइनल में लेकां कोरडा के सामने कहीं टिक ही नहीं पाए। कुल्ती को हराने में जो बिजली-सी चमक उनके खेल में बार-बार दिखी थी वह सेमीफाइनल में वोल्टेज न होने वाले लट्टू जैसे हो गई थी। कोरडा ने उन्हें तीन सीधे सेटों में हरा दिया और लेकां के लिए लगातार तालियाँ बजाने और जोर लगाने के होय्या करने वाले फ्रांसीसी दर्शक निराश होकर गए। पुरुषों के दोनों ही सेमीफाइनल साधारण टेनिस और बिना जानकारी के मैच थे।

इसके ठीक विपरीत महिलाओं के दोनों सेमीफाइनल तीन सेटों तक गए और एक-एक पाइंट के लिए जानदार संघर्ष हुआ। पाँच सेट-तीन सेट की कसौटी अगर ली जाए तो महिलाओं के सेमीफाइनल दो सेट में तय हो जाने चाहिए थे। लेकिन पहला सेमी फाइनल स्पैन की अरांगजा सांचेज-विकारियो और जर्मनी की स्टेफी ग्राफ में हुआ और वह कोरडा और लेकाँ के सेमीफाइनल से निश्चित ही ज्यादा आकर्षक, रोमांचक और संघर्षपूर्ण था। अरांगजा ने स्टेफी को पहले सेट में एक गेम नहीं लेने दिया। नम्बर दो स्टेफी पाँव जमाती, तब तक ठिगनी और गबदुल्ली अरांगजा ने सेट 6-0 से साफ कर दिया था। लेकिन दूसरे सेट में पाँव जमा लेने के बाद स्टेफी ने अरांगजा को पूरे कोर्ट में दौड़ाया और कांटे के संघर्ष के बाद किसी तरह वह सेट जीता और अपने फाइनल में पहुँचने की उम्मीद बनाए रखी। तीसरे सेट में स्टेफी और अरांगजा का संघर्ष और भी काँटे का और जानकारी का हुआ। आखिर में जब स्टेफी ग्राफी जीतीं तो जैसे दर्शकों को तनाव से राहत मिली हो। लेकिन नम्बर एक मोनिका शेलस और नम्बर तीन गैब्रियाला सबातीनी के बीच सेमी फाइनल तो और भी रोमांचक हुआ। दोनों एक-एक सेट जीतकर तीसरे में पहुँची और पहले चार गेम होने के बाद लगा कि सबातीनी कहीं नम्बर एक शेलस को हराकर लगातार तीसरी बार फ्रेंच ओपन जीतने के उसके सपने का सफाया न कर दे। वह तो शेलस सबातीनी की सर्विस तोड़कर उनके बराबर आई और फिर आगे बढ़ीं। लेकिन फिर भी आखिर तक तय नहीं था कि शेलस फाइनल तक पहुँच ही जाएगी। शेलस भी आखिर जीतीं तो दर्शकों का तनाव चरम पर पहुँचकर तालियों में फूट पड़ा।

पुरुषों और महिलाओं के सेमीफाइनल चारों ही मैच तीन-तीन सेटों तक गए और महिलाओं के मैच पुरुषों से निश्चित ही ज्यादा आकर्षक और रोमांचक थे। दर्शकों को कूरियर-अगासी और कोरडा-लेकां के मैच तो याद नहीं रहेंगे, ग्राफ सांचेज विकारियो और शेलस सबातीनी के संघर्ष बरसों याद आते रहेंगे। टेनिस की क्वालिटी भी महिलाओं के सेमीफाइनलों में बेहतर थी और एक-एक पाइंट के लिए जो जानलेवा संघर्ष महिलाओं ने किया वैसा पुरुषों ने नहीं किया। अगासी और लेकां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
ने जैसे पहले सेट के बाद ही हार मान ली थी जबकि अरांत्जा और गैब्रियाला ने मैच खत्म होने के बाद ही हारना मंजूर किया। शेलस और ग्राफ का फाइनल कूरियर और कोरडा के फाइनल से तो निश्चित ही कई गुना ज्यादा रोमांचक और संघर्षपूर्ण था। बराबरी की टक्कर से जो चिनगारियाँ निकलती हैं वही किसी मैच को यादगार और ऐतिहासिक बनाती हैं। शेलस का निश्चय था कि तीसरी बार लगातार जीतूँगी चाहे जो हो जाए और ग्राफ अपने निजी-पारिवारिक जीवन के आँधी अन्धड़ को पीछे छोड़कर फिर नम्बर एक होने का हौसला बाँधे हुए थी। एक सेट शेलस ने जीता और एक ग्राफ ने और फिर शुरू हुआ तीसरा सेट जो टाई ब्रेकर की व्यवस्था न होने से 10-8 गेम तक गया। यानी जो सेट आमतौर पर 6-4 से तय होता है वह आठ गेम तक और खिंचा। अगर कोर्ट पर टिके रहने की क्षमता और देर तक खेलने के दमखम को कसौटी माना जाए तो फाइनल में शेलस और ग्राफ का खेला तीसरा सेट सबसे ज्यादा कठिन आंका जाना चाहिए और उसके सबसे ज्यादा पैसे मिलने चाहिए। कूरियर और कोरडा का फाइनल तो पहले सेट के बाद ही बेदम हो गया था और तीन सेट ही चला और दोनों खेले भी लगभग उतनी ही देर जितनी शेलस और ग्राफ खेली थीं।

इसीलिए फ्रेंच ओपन जीतते ही शेलस ने खिताबी रकम बराबर करने का मुद्दा उठाया क्योंकि पुरुषों और महिलाओं के फाइनल और सेमीफाइनल के छहों मैच तीन-तीन सेटों तक गए और अगर सेटों के नम्बर से ही रकम तय होती है तो अब बराबर हो जानी चाहिए। लेकिन फ्रांस और ब्रिटेन में महिला टेनिस खिलाड़ियों के साथ सेटों के नम्बर पर भेदभाव यों भी गलत है और वहाँ महिलाओं को शारीरिक रूप से कमजोर मानकर उन्हें दोयम दर्जा वहाँ के समाज के गहरे जमे पूर्वाग्रह का ही प्रतीक है। समान काम समान वेतन का फारमूला टेनिस में नहीं लगाया जा सकता। लेकिन खेल के ज्यादा आकर्षक और रोमांचक होने की दलील भी सही नहीं बैठेगी। कभी मैच समान रूप से ताकतवर खिलाड़ियों के बीच होकर उबाऊ और थकाऊ भी हो सकते हैं। ऊँचे नीचे और कम ज्यादा होने वाले मानदंडों पर खिताबी रकम तय नहीं होनी चाहिए। पुरुषों और महिलाओं को यों भी समान मानकर बराबर पैसा ही देना चाहिए।

लेकिन मैं एक और कसौटी आपकी सेवा में रखता हूँ। स्त्री होने के कारण महिला खिलाड़ियों को जो भावनात्मक दबाव और तनाव झेलना और भुगतना पड़ता है वह पुरुष खिलाड़ी नहीं भुगतते। दूर मत जाइए। कोनर्स और एवर्ट की प्रेमकथाएँ कितनी चलीं। बदनामी स्विस एवर्ट की हुई। उन्होंने लॉयड से शादी की। प्रेस ने उनके निजी जीवन को इतना उधेड़ा कि वह विवाह टूट गया। स्विस ने फिर शादी की है लेकिन वे कई बार कितनी ट्रेजिक लगती हैं। जूड़ी नेलसन से समलैंगिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्बन्धों के कारण नवरातिलोवा जैसी इस्पाती महिला का निश्चय टूट गया। अखबारों ने उन्हें कहीं का नहीं छोड़ा। स्टेफी ग्राफ के पिता क़ा एक मॉडल कन्या से कांड हुआ और पापुलर प्रेस ने स्टेफी का खेलना मुहाल कर दिया। पारिवारिक जीवन की त्रासदी के अलावा जहाँ वह जाती पिता के अनाचार की छाया उसके साथ जाती। पिता का किया स्टेफी को भुगतना पड़ा। पिछले साल चोट के कारण मोनिका शेलेस विंबलडन से बाहर हो गईं और एकान्तवास में रहीं। ब्रिटेन के अखबारों ने यहाँ तक लिख दिया कि वे गर्भवती थीं और गर्भपात करवाने गई थीं। बोर्ग चार शादियों और अनेको प्रेम प्रकरणों और घोटालों के बावजूद सदी के सबसे बड़े खिलाड़ी हैं और उन्हें बदनामी वैसे कभी बरबाद नहीं करेगी जैसे मार्तिना को करती है। भारत ही नहीं दुनिया में सब जगह बदनामी की सलीब महिलाओं को ही ढोनी पड़ती है। यह समाज उनके दबाव और तनाव झेलने और भुगतने का कोई मूल्य नहीं रखता। इसके बावजूद वे डटी रहती हैं। उनकी इस अनोखी ताकत पर ही उन्हें बराबर की खिताबी रकम मिलनी चाहिए। जी हाँ, यह मैं कह रहा हूँ बेकार हल्ला मचानेवाले वामपन्थियों का तथाकथित सती समर्थक आपका पोंगापन्थी प्रभाष जोशी।

(14.6.92)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रात से सुबह तक—एक पागलपन

अमेरिकी ओपन के सेमी फाइनल में पिछले शनिवार स्टीफन एडबर्ग माइकल चांग से खेल रहे थे। एडबर्ग ऐसी गलतियाँ कर रहे थे कि जो गेम उन्हें आसानी से जीत जाना चाहिए उसे ऐन मौके पर गंवा देते थे और हताशा में रैकेट को जैसे खुद पर चलाते हुए अपने को लगातार कोसते जा रहे थे। पहला सेट वे टाई ब्रेक में हारे। चांग से टाई ब्रेक में एडबर्ग जीवन में पहली बार हारे थे। दूसरे में भी वही पहली सर्विस पर फॉल्ट फिर डबल फॉल्ट और वही नेट में वॉली। एडबर्ग को इतना खराब खेलते देख मैं ऐसी हताशा और उत्तेजना में फँस गया कि क्या बताऊँ। दिल कभी घोड़े की दुलकी चाल चले, कभी दौड़ने लगे और कभी लगे कि बन्द होकर बैठ जाएगा।

ठंडे दूध में बर्फ के तीन टुकड़े डाले और धीरे-धीरे चुस्की लेते हुए एक काम्पोज निगली। एक गावतकिए पर पाँव पसारे, दूसरे पर सिर रखा और अपने को बिलकुल ढीला छोड़कर टीवी के परदे पर हलकी पीली गेंद और एडबर्ग के साथ आँखें घुमाता रहा। अपने को समझाता रहा कि कोई बात नहीं एडबर्ग हार की कगार पर पहुँचकर अचानक अपने खेल को ऐसी ऊँचाई पर ले जाएँगे कि हारा सेट जीत जाएँ। लेकिन मुझे लगे कि एडबर्ग अब ऐसी मार देंगे या उनकी वॉली चांग को छकाती हुई कोर्ट के बाहर हो जाएगी तभी वे डबल फॉल्ट कर दें या वॉली को नैट में मार दें। मेरा दिल डूबने लगे या जोर से धड़ककर फट फड़ने की हालत में आ जाए। मैं एक और काम्पोज लाया और ठंडे दूध से निगल गया। दूसरा सेट गिरते-पड़ते किसी तरह एडबर्ग ने जीता। वह भी टाई ब्रेक में। लेकिन तनाव कुछ कम हुआ। तीसरे सेट में भी वे हारते-हारते किसी तरह टाई ब्रेक में पहुँचे और तलवार की धार पर चलते हुए जीते।

अब एडबर्ग एक के मुकाबले दो सेट से आगे थे। ठंडे दूध से दो काम्पोज मेरे अन्दर घुलकर नसों में बहने लगी थीं और उन्हें दिल को सहलाकर शान्ति से सुला देना चाहिए था। लेकिन न मुझे नींद का झोंका आया, न दिल घोड़े की तरह अस्तबल में बँधा सुस्ताने को तैयार हो। चौथे सेट में भी एडबर्ग के वही रंग-ढंग थे। एक सेट से आगे होने का तथ्य न उनके खेल को नारमल कर पाया न वे आश्वस्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
होकर ठीक से अपने को खेलने में लगा पाए। मैंने अपने को बहुत समझाया कि कोई बात नहीं। अभी दो सेट और होने हैं। अव्वल तो चौथा सेट जीतकर एडबर्ग खेल खत्म कर देंगे। और हार भी गए तो पाँचवाँ सेट है। आखिर लैंडल को उन्होंने पाँचवें सेट और टाई ब्रेक में ही कल हराया था। इसके पहले भी क्राइजैक से पाँचवें सेट में जीते थे। चांग पाँचवें सेट में इतना जमकर और इतने मनोयोग से नहीं खेल पाएँगे। एडबर्ग भी आखिर फाइटर खिलाड़ी हैं और एक-एक पाइंट के लिए चांग से तो बेहतर ही जूझ सकते हैं।

लेकिन खुद को इस तरह समझाने के बावजूद हालत बिगड़ती गई। मैच देखते-देखते कोई साढ़े तीन घंटे हो गए थे यानी शनिवार की रात के बारह बजने के बाद रविवार शुरू हो चुका था। तनी हुई नसों पर ज्यादा जोर न पड़े इसलिए टीवी को लगभग चुप कर रखा था। इसलिए अचानक बाहर का सन्नाटा कभी-कभी पकड़ लेता था। बीच-बीच में चौकीदार की सीटियाँ बजकर सन्नाटे से छुड़ाती थीं। फिर भी एक अजीब-सा अकेलापन, चिढ़, हताशा और डर बारी-बारी से घेर लेते थे। कितना समझाऊँ कि आखिर यह एक सिर्फ टेनिस मैच है। अभी पूरा नहीं हुआ है और दो में से एक सेट जीतकर एडबर्ग फाइनल में पहुँच जाएँगे। आखिर वे पिछले साल के विजेता हैं और नम्बर दो हैं। चांग का नम्बर चार है। तीन साल पहले फ्रेंच ओपन जीतने के बाद चांग ने कुछ नहीं जीता है और अमेरिकी ओपन के नकली हार्ड कोर्ट पर वे सेमी फाइनल से तो आगे गए ही नहीं हैं। और एडबर्ग तब से एक विंबलडन और एक अमेरिकी ओपन जीत चुके हैं। डर किस बात का ? लेकिन चांग टाईब्रेक में एडबर्ग से कभी नहीं जीते थे। अभी पहले सेट में जीत गए ना। कुछ भी हो सकता है।

मेरी चिढ़, हताशा और उत्तेजना बढ़ाते हुए एडबर्ग आखिर चौथा सेट हार गए। अपनी सर्विस पर जिस गेम को जीतकर उन्हें सेट को टाई ब्रेकर में ले जाना था उसमें उन्हें चांग ने पीट दिया। अब दोनों के दो-दो सेट थे और पाँचवें में कोई भी जीत सकता था। खचाखच भरा फ्लशिंग मीडो का स्टेडियम चांग के साथ था और कोर्ट पर निपट अकेले एडबर्ग अपने आपसे जूझ रहे थे। उन्हें चांग नहीं हरा रहे थे। वे अपने आपको हरा रहे थे। पाँचवे सेट में पहली सर्विस नेट में लगती या बाहर हो जाती तो नाईकी के विज्ञापन की तरह वह मेरी छाती पर लगकर जलता हुआ छेद कर जाती। चांग ने आखिर एडबर्ग की सर्विस तोड़ दी और चार-दो से आगे हो गए। कमेंटेटर ने कहा कि चांग को अब कुछ नहीं करना है। दो बार अपनी सर्विस को जमकर पकड़े रहें तो वे फाइनल में होंगे। लगा कि वह अमेरिकी हैं और इन अमेरिकियों को स्वीडन के खिलाड़ी फूटी आँख नहीं सुहाते। सातवाँ गेम शुरू हुआ तो एक बार तो मुझे लगा कि टीवी बन्द करके बिस्तर पर चला जाऊँ। पत्नी को उठाकर बात करूँ। लेकिन जानता था कि मैच को ऐसी कांटेदार धार पर छोड़कर मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहीं भी चला जाऊँ मेरा दिल ऐसी ही खौफनाक रफ्तार से धड़कता रहेगा। इसलिए या तो दिल को फटे देख जाने देना चाहिए या उसे मजबूती से थामकर मैच पूरा कर लेना चाहिए।

आपने पढ़ा होगा कि किसी के निन्यानवे पर आउट होने से या अपनी टीम के खिलाफ गोल हो जाने से या अपने खिलाड़ी के सीधे सेटों में हार जाने से कोई मैदान पर या टीवी के सामने या रेडियो सुनते हुए गिर कर खलास हो गया। खिलाड़ी तो सिर झुकाए और मुँह लटकाए लौट आता है, लेकिन बेचारा दर्शक सीधे स्वर्ग पहुँच जाता है। आपने निन्यानवे पर आउट होते बल्लेबाज, गोल खाते गोली और हारते टेनिस खिलाड़ी को हार्ट फेल से मरते या आत्महत्या करते नहीं सुना होगा। एक भी ऐसा उदाहरण नहीं है। लेकिन दर्शक बेचारे कई भगवान को प्यारे हो गए हैं। भगवान को भी वही प्यारे लगते हैं जिनका दिल होता है। बहरहाल मैं इसी उम्मीद में लेटा खेल देखता रहा कि कुछ भी हो जाएगा। एडबर्ग ने लेकिन अचानक अपने खेल को इतना ऊपर उठाया कि अगले चारों गेम जीतकर फाइनल में पहुँच गए। चांग का रिटर्न साइड लाइन के बाहर गिरा और मैं एडबर्ग से ज्यादा राहत और उत्साह से खड़ा हो गया। फिर जैसे बाढ़ पर आई नदी खतरे के निशान तक पहुँचकर धीरे-धीरे उतर जाए वैसे ही मेरी उत्तेजना उतर गई। तनावहीन और सन्तुष्ट, एक तकिए पर पाँव और दूसरे पर सिर रखकर मैं फिर लेट गया और महिलाओं के फाइनल के शुरू होने का रास्ता देखने लगा। पाँच घंटे छब्बीस मिनट इस जानलेवा उत्तेजना में रहने के बाद अब मैं शान्ति से दो बजाकर बाकी की रात और सवेरे तक टेनिस देखने के लिए पसर गया। सम्प्रास ने जब कूरियर को चौथे सेट में हराकर पेट पकड़े लॉकर रूम की तरफ दौड़ लगाई तो टहलकर लोटे सेहतखोजी लोग अखबार पढ़ते चाय पी रहे थे। और पिछले तीन दिनों लगातार यात्रा करने और चौथे दिन भर व्यस्त रहने के बाद कोई ग्यारह घंटे तक मैं लगातार टेनिस देखकर आराम से सोने की तैयारी कर रहा था लेकिन नींद गुजरी हुई घड़ी की तरह लौटने को तैयार नहीं थी।

मैं जानता हूँ कि आप इसे पागलपन कहेंगे और होंठों के कोने से मुस्कुराएँगे। लेकिन अपने इस जानलेवा लगाव का मैं क्या करूँ। आप जानते हैं स्टीफन एडबर्ग मेरे बेटे नहीं हैं, न कोई रिश्तेदार। मेरी जात के भी नहीं हैं। मेरे शहर इन्दौर और राज्य मध्यप्रदेश के भी नहीं हैं। भारतीय भी नहीं हैं। और उनके जीतने पर मैंने कोई सट्टा भी नहीं लगा रखा था। यानी ऐसे घातक और मारक लगाव के जो कारण अपने यहाँ माने जाते हैं उनमें से एक भी एडबर्ग और मेरे बीच खोजा और पाया नहीं जा सकता। एडबर्ग को मैंने रूबरू देखा तक नहीं। वे नहीं जानते कि प्रभाष जोशी नाम का कोई हिन्दुस्तानी रात को टीवी के सामने बैठा उनका खेल देखते हुए इतना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परेशान हो रहा था कि जितना उनका कोच और पत्नी एनीट भी नहीं। लेकिन इससे क्या होता है? मन का लगाव समझदारी और सन्तुलन का मोहताज नहीं होता। यह भी मत समझिए कि एडबर्ग अपने सबसे प्रिय खिलाड़ी हैं और टेनिस अपना सबसे प्रिय खेल। नहीं अपने हीरो अभी भी इवान लैंडल हैं जो बेचारे एक दिन पहले ही पाँचवें सेट में टाई ब्रेक में एडबर्ग से हारकर उसी उदास चेहरे पर अपना बैग लटकाकर कोर्ट से विदा हुए थे। और कहने की जरूरत नहीं कि अपना पहला प्यार क्रिकेट है टेनिस नहीं यानी उस शनिवार की रात के पागलपन का भी कोई उचित ओर-छोर नहीं है।

अंग्रेजी वाले कहते हैं कि उसके पागलपन में भी एक निश्चित तरीका होता है। अपना भी है। चार साल पहले विंबलडन के फाइनल में बेकर के सामने एडबर्ग थे। आपको याद होगा कि सात साल पहले सत्रह बरस के बेकर ने टेनिस के आकाश में धूमकेतु की तरह फटकर धूम मचा दी थी। बूम-बूम बेकर ने लगातार दो विंबलडन जीते, तीसरे में किसी पीटर डूहन ने उन्हें शुरू के राउंड में ही पीट दिया। लेकिन अपने चौथे विंबलडन में साँड की तरह फूँ फाँ करते हुए बेकर फाइनल में पहुँच गए और उनकी शक्तिशाली टक्कर में किसी का टिकना असम्भव लग रहा था। आत्मविश्वास और स्वाभाविक आक्रमण से हुंकारते महाबली बेकर को उस विंबलडन में एडबर्ग ने नाथ दिया था। एडबर्ग के सुन्दर कोमल चेहरे, लगभग शरमाती मुस्कान और शुद्ध शास्त्रीय कलात्मक टेनिस ने बेकर को जैसे सींगों से पकड़ा, उठाया और गोल चक्कर घुमा कर धम्म से दचक दिया। लेकिन ऐसा करके भी एडबर्ग ने हवा में मुट्ठियाँ नहीं मारीं, गरजे नहीं, न फूट कर रोए। मन्द-मन्द मुस्कुराते रहे। मेरे मन में कालियादमन करने के बाद कृष्ण का जो मुस्कुराता और बंसी बजाता चित्र है—कुछ वैसा ही सन् अट्ठासी के विंबलडन में एडबर्ग का है। विजेता का विवेकी और विनम्र होना एक उदात्त मूल्य है। एडबर्ग के टेनिस का परिष्कार दरअसल उनके परिष्कृत चरित्र की अभिव्यक्ति है। ऐसे आदमी का आज के टेनिस में जीतना मुझे पशुबल पर संस्कृति की विजय लगती है।

लैंडल को छोड़कर और किसी के भी खिलाफ एडबर्ग खेल रहे हों तो मेरा मन उन्हें जिताता रहता है। लेकिन शनिवार की उस रात और रविवार की सुबह एडबर्ग को लेकर ऐसी जानलेवा उत्तेजना में फँसने का एक और कारण था। एडबर्ग के मुख्य शस्त्र हैं सर्विस और वॉली और उनकी सबसे बड़ी ताकत है उनकी फुर्ती। पाँच घंटे छब्बीस मिनट और साठ गेमों तक चले उस मैच में एडबर्ग के मुख्य शस्त्र ही उनका साथ छोड़ गए थे। उनकी न पहली सर्विस लग रही थी न दूसरी। वॉली नेट में फँसे जा रही थी या बाहर चली जाती थी। और हालाँकि चांग भी कोर्ट में बहुत चपलता से घूमने और गेंद तक पहुँचने वाले चुस्त और जवान खिलाड़ी हैं लेकिन एडबर्ग की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
फुर्ती तो सर्वमान्य है। फिर भी गेंद एडबर्ग के अगल-बगल से ही नहीं सामने से निकल जाती थी और वे रैकेट अड़ाए टापते रह जाते थे। ऐसी हालत में बेकर, कूरियर, अगासी और सम्प्रास जैसे खिलाड़ी रैकेट फेंक देते कि आज मेरा दिन नहीं है और कुछ भी कर लूँ तो पासा उलटा ही पड़ेगा इसलिए छोड़ो। एडबर्ग के शस्त्र और ढाल उन्हें छोड़ गए थे फिर वे मैदान में डटे हुए थे और कभी हार न मानने वाले चांग के धीरज और जुझारूपन से होड़ ले रहे थे। एडबर्ग नेचरल हैं यानी खेल जैसे उन्होंने सीखा न हो वह उनकी सहज स्वाभाविक क्रिया हो। ऐसे खिलाड़ी जो अपनी छठी एन्द्रिय से खेलते हैं, हारने लगे तो हारते चले जाते हैं। उस रात एडबर्ग चांग से उतने नहीं जितने अपने आपसे लड़ रहे थे। और भीतरी और बाहरी मोर्चे पर एक साथ लड़ने वाला योद्धा एक साथ दो योद्धाओं से लड़ता है और ऐसे लड़ाकू का नायकत्व मुझमें सहानुभूति और सराहना का अजीब-सा धारदार घोल बना देता है। यह घोल ही मुझे उसी को देखकर जीने की शक्ति देता है कि जिस जालिम पै दम निकले। और इस तरह दम निकलते हुए जीना मुझे शान्ति और प्रतिष्ठा से जीने से बेहतर लगता है। कच्चे धागे से बँधे पाताल जितनी गहरी खाई पर लटक जाना और पींग भरते हुए उस पर चट्टान पर टिक जाने का मजा ही अलग है।

'मैं बहुत अच्छा खेला इसलिए हारने का मुझे दुख नहीं है। मुझे अपने पर गर्व है'—चांग ने उस रात एडबर्ग से हारने के बाद कहा था। मुझे भी अपने पागलपन पर कोई शर्म नहीं है। एडबर्ग की जीत पर अपनी जान लगा देना—दरअसल एडबर्ग को जिताना नहीं है। यह अपने को किसी ऐसे दाँव पर लगा देना है जिस पर अपना कोई बस नहीं है। लेकिन यह जुआ भी नहीं है क्योंकि एडबर्ग का टेनिस कला और शास्त्र और अभ्यास का अद्भुत खेल है। ऐसा खेल ही आपके दिल को धड़का-धड़का कर उन धमनियों में जमी चर्बी और उनमें आए कड़ेपन को दूर करता है जिससे हार्ट अटैक की शंकाएँ मिटती हैं। दस बरस का था तब स्कूल से तड़ी लगाकर यशवन्त क्लब में होलकर और वेस्टइंडीज का मैच देखने गया था। वैसी ही उत्तेजना और धड़कन आज भी होती है जब एक्सप्रेस बिल्डिंग से फिरोजशाह कोटला मैदान पर टैस्ट देखने जाता हूँ। जो पागलपन आपको बुढ़ापे में भी बच्चे की तरह संवेदनशील और उत्फुल्ल बनाए रखे उस पर शर्म क्यों करना? जीने के लिए समझदारी और सन्तुलन उतना अनिवार्य नहीं है जितना एक पागलपन जिस पर आप गर्व कर सकें। हर आदमी में यह पागलपन होता है लेकिन ज्यादातर लोग सयाने दिखने के चक्कर में उसे दबा देते हैं या शर्म से छुपाते हैं। ऐसा मत कीजिए। गर्व करने से पागलपन जीने की रचनात्मक ऊर्जा में बदल जाता है। आजमाकर देखिए।

(22.9.92)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक हरियाले आलिंगन की ललक

पिछले पखवाड़े भर आस्ट्रेलियन ओपन देखते हुए मन करता रहा कि कैमरा कोर्ट पर चलता खेल और नेशनल टेनिस सेंटर ही न दिखाता रहे। वह उठे, यारा नदी पार करे और उस विशाल बॉटेनिक गार्डंस में मॉयर म्यूजिक वाउल गवर्नमेंट हाउस, वॉर मेमोरियल और झील भी बीच-बीच में दिखाए। भीड़ में जैसे आप किसी परिचित चेहरे को तलाशते रहते हैं और वह दिख जाए तो उछल पड़ते हैं कुछ वैसे ही मैं उस बगीचे की झलक के लिए तरसता रहा। सघन वन जैसे उस बगीचे से ऐसा निहायत निजी लगाव हो गया है।

छब्बीस मार्च को पिछले साल उदास उठा था। होटल के कमरे का परदा खोल कर धूप में चमकते मेलबर्न क्रिकेट ग्राउंड के प्रकाश स्तम्भों को देखते-देखते मन और उदास हो गया। वन डे मैचों और उनके लिए सुबह उठकर रोज यात्रा करने की उत्तेजना आज सुबह नहीं थी। महीने भर की भागमभाग और एक के बाद दूसरी उम्मीद के घोड़े की सवारी अब खत्म हो गई थी। कल रात फाइनल के साथ पाँचवाँ विश्व कप समाप्त हो गया था। मेला उजड़ जाने के बाद जैसा लगता है कुछ वैसा ही सुनसान और जीवनहीन लग रहा था। पाकिस्तान के बजाय भारत भी जीता होता तो भी ऐसा ही लगता। उदासी विश्व कप के नतीजे की नहीं मेले के उजड़ जाने की थी।

विश्व कप जब आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड में शुरू हुआ और उसे देखने और उसे रिपोर्ट करने का योग बना तो कैसा उत्साह, उत्तेजना और अपेक्षाओं का गुदगुदापन मन में भर गया था। अब जैसे वह सब रीत गया था। भारत वापसी अभी दो दिन दूर थी। जल्दी तैयार होकर किसी ग्राउंड की तरफ अब रवाना नहीं होना था। और लिखने के बाद उसे फैक्स से भेजना और दिल्ली से उसकी प्राप्ति की सूचना लेना नहीं था। दो दिन और दो रात का समय उदास और दुखी होने के लिए सामने खाली पड़ा था।

महीने-भर मैं आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड घूमता रहा। आराम और सुविधा के साथ। कहीं कोई झंझट या बदमजगी नहीं हुई। एयरलाइंसवाले, होटलवाले, टैक्सीवाले,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
ग्राउंडवाले और फैक्सवाले सभी अपने काम करते रहे और कहीं कोई शिकायत का मौका नहीं आया। सभी काम ऐसी रवानगी और सुर में हुए जिसकी उम्मीद अपन अपने इस देश में नहीं करते। लेकिन इस दौरान किसी एक व्यक्ति से भी अपनी कोई जान-पहचान नहीं जो सम्बन्ध में पनप पाती। एक प्रवासी ने सभी से सभ्य व्यवहार किया और बदले में आदर-सत्कार पाया। लेकिन एक महीने भर आप प्रवास करते रहें और किसी एक भी आवासी से आपका तार नहीं जुड़े तो इसे किसी चिकनी सतह पर किसी गेंद का फिसल जाना ही कहा जाएगा। कोई मुठभेड़, कोई गुत्थमगुत्था और कोई उलझाव न हो तो आत्मीयता का कोई सम्बन्ध बनता ही नहीं। इसे अपनी विफलता कहूँ या अपने काम और शौक की भागमभाग की मजबूरी कि किसी से बैठकर घंटे भर कोई गपशप ही नहीं हुई जिसका ताल्लुक क्रिकेट से नहीं होकर आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड के जीवन से होता। आखिर क्रिकेट के बहाने आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड के बारे में पढ़ते हुए कितनी-कितनी उत्सुकताएँ उमगी हैं जिन्हें मैं इस यात्रा में उलट-पुलट सकता था। लेकिन वहाँ सिर्फ एक क्रिकेट लेखक की तरह घूमता, देखता और लिखता रहा और मेरे परिचित पत्रकार भी रिपोर्ट करते और खिलाड़ी खेलते रहे। महीने भर के बाद अपने पल्ले क्या पड़ा। यह सुनसान, अकेलापन और यह उदासी।

फिर घूमते हुए मेरी आँखें उस बगीचे पर फैलकर उसकी सघन वीथियों में धँस गईं। मेलबर्न में पहली बार अट्ठाईस फरवरी को आया था और सिडनी होते हुए ब्रिसबेन चला गया था। दूसरी बार सर डॉन ब्रेडमेन से मिलता हुआ एडीलेड से आया था। शाम हो चली थी। मैं जल्दी से एमसीजी पहुँचकर टीमों को प्रैक्टिस करते देखकर उनकी तैयारी समझना चाहता था। इसलिए होटल के कमरे में सामान रखते ही मैंने रिसेप्सनिस्ट को टैक्सी बुलाने को फोन पर कहा। उसने कहा—एमसीजी जाने के लिए टैक्सी की क्या जरूरत है। सामने के पार्क से पैदल जाइए। घूमना भी होगा और जल्दी पहुँच जाएँगे। मुझे यह सुझाव बहुत निजी और आत्मीय लगा। आस्ट्रेलियन महिलाओं की दोस्ताना बेतकल्लुफी की अच्छी खासी जानकारी हो गई थी। इसलिए उसके सुझाव की निजता में कोई गोपनीयता नहीं है यह समझते हुए भी वह मुझे आत्मीय लगा। टैक्सी बुलवा देना उसके लिए सहज होटलीय काम होता। लेकिन उसका कहना कि शाम पड़े टहलते जाइए कोई पर्यटकीय सुझाव नहीं था। यह दोस्ताना सलाह थी। मैंने नीचे रिसेप्शन पर उससे कहा—बहुत अच्छा। लेकिन यह बताओ कि जाएँगे कैसे ? उसने बाहर निकलकर रास्ता बता दिया।

सामने सेंट किल्डा रोड और पार्क स्ट्रीट का संगम था। उसके दाहिने सड़क पार ट्राम का स्टॉप था। सड़क पार करते ही रॉयल बॉटेनिक गार्डंस की मखमली चढ़ाई शुरू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो जाती थी। मैं उस पर लपक कर चढ़ गया और तेजी से चलने लगा। चढ़ते-चढ़ते जब वॉर मेमोरियल के पास पहुँचा और सिर ऊँचा किया तो शहीदों के शानदार स्मारक से ज्यादा अपने दिल की धड़कन सुनाई दी। सामने बेंच पर बैठ गया। मुझे इतनी तेजी से नहीं चढ़ना चाहिए था। लेकिन चढ़ाई और वन मेरे अन्दर के वनवासी गिरिजन को जैसे टेरते हैं। चारों तरफ से खुला और बहादुर सिपाहियों के नामों से खुदा वह युद्ध स्मारक अपने इंडिया गेट जैसा नहीं था। गेट वे ऑफ इंडिया की तरह बड़ी मेहराब और गेट जैसा नहीं था। तीन मूर्ति का बड़ा, भव्य और दर्शनीय-सा प्रक्षेपण लग सकता है। लेकिन तीनमूर्ति की तरह भी नहीं है। बड़ा-सा गुम्बद है लेकिन वह लोधी गार्डस के गुंबदों की तरह अन्दर से खाली नहीं है। उस दिन उसके सामने तो मैं कुछ देर सुस्ताने बैठा था और साँस काबू में आ जाने के बाद सहज चलने लगी तो मैं उठा और धीरे चलकर बगीचे के अन्दर की सड़क पार की। फिर घने खड़े पेड़ों की कतारों में से होता हुआ गवर्नमेंट हाउस की बगल से निकला। शाम को अपने शहरों के पार्कों में जैसी भीड़ हो जाती है वैसी वहाँ दिखाई नहीं दी। इक्का-दुक्का लोग दौड़ते हुए दिख जाते या वहाँ काम करने वाला आस्ट्रेलियन माली या कोई मालिनी।

उन्हीं में से एक से रास्ता पूछता हुआ मैं दाहिनी ओर चलता चला गया। काफी दूर चल निकलने के बाद उतार आया और सीढ़ियों से उतरते हुए मैं फुटपाथ पर पहुँचा। ट्रेफिक निकल जाने के बाद सड़क पार की। यारा नदी का पुल पार किया। बाएँ घूमकर नेशनल टेनिस सेंटर के सामने आ गया। वहाँ कुछ हलचल थी और कारें खड़ी थीं। सामने के रग्बी मैदान पर कुछ लोग रग्बी खेल रहे थे। उनसे रास्ता पूछ कर सेंटर के दाहिनी ओर से एक पैदल पुल पर चढ़ा। पुल एक तरह से टेनिस सेंटर और एमसीजी को जोड़ता है। पुल के दोनों तरफ बड़े-बड़े रंगीन क्रिकेट फोटू लगे हुए हैं जिन्हें किसी ने रगड़कर बिगाड़ा नहीं है। नीचे से तेज रेलगाड़ियाँ निकल जाती हैं। कोई बीस-तीस लाइनें बिछी हुई हैं। पुल से जाते हुए आपके दाहिनी ओर टेनिस कोर्ट भी हैं जिन पर स्त्री-पुरुष प्रैक्टिस करते हैं। पुल समाप्त होने के बाद दाहिनी ओर फिर टेनिस के घास कोर्ट हैं मखमल की तरह बिछे हुए और गलीचे की तरह जमाए हुए। दाहिने मुड़ कर एमसीजी आ जाता है। टेनिस कोर्ट से लगा और जालियों से चारों तरफ और ऊपर से घिरा प्रैक्टिस पिच है जिस पर वेस्टइंडियन खिलाड़ी तरह-तरह के कपड़ों और उपकरणों में अभ्यास कर रहे थे। अन्दर एमसीजी पर आस्ट्रेलियन खिलाड़ी फील्डिंग प्रैक्टिस कर रहे थे।

देखते, मिलते और बात करते रात हो गई। खुद टैक्सी बुलाकर या दूसरे पत्रकारों की टैक्सी में जा सकता था। लेकिन मुझे लगा कि पैदल ही बॉटेनिक गार्डस से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
होटल जाकर खबर फैक्स कर देनी चाहिए। इस बार जल्दी नहीं थी लेकिन अँधेरा हो गया था। पार्क की सड़कों पर चलने के लिए तो काफी उजाला था लेकिन पेड़ों, झाड़ियों और फूलों की गचागच भरी क्यारियों को ठीक से देखा नहीं जा सकता था। गुनगुनी ठंड में साफ और स्वच्छ हरियाली में से तेज चलते हुए निकलना बहुत सुखद और स्वास्थ्यकर लग रहा था। तेजी से चलने के चक्कर में सीधे चला गया। सेंट किल्डा रोड के विस्तार के सामने अपनी होटल नहीं दिखी तो बाएँ घूमता हुआ फिर बगीचे में घुस गया। रोशनी के सहारे वॉर मेमोरियल के पास पहुँचा लेकिन इस बार उसकी दूसरी तरफ था। वहाँ से उतरकर सड़क पर आया तो सामने दाहिनी ओर होटल का बिजली से चमकता नाम दिखाई दिया। वहीं पहुँचकर उस रिसेप्शनिस्ट कन्या को 'थेंक यी' कहा। शाम का आस्ट्रेलिया में वह पहला सदुपयोग था।

इसके बाद कुल मिलाकर कोई हफ्ता भर मैं मेलबर्न रहा लेकिन कभी सुबह तो कभी शाम उस बगीचे में से घूमता हुआ ही आया-गया। रिसेप्शनिस्ट ने ठीक कहा था कि पार्क में से होते हुए एमसीजी जल्दी पहुँचा जा सकता है। आस्ट्रेलिया-वेस्टइंडीज वाले मैच में जल्दी निकल गया था और धूप में ऊनी कपड़ों की जरूरत नहीं थी। लेकिन आस्ट्रेलिया की पारी खत्म होते-होते तीसरी मंजिल के प्रेस बाक्स में ठंड लगने लगी। अभी कम से कम चार घंटे वहीं और रहना था इसलिए होटल से पुलओवर लाने के लिए टैक्सी लेकर निकला। न सिर्फ लगभग एक घंटा टैक्सी में लग गया, बीस-बाईस डॉलर भाड़े के और लग गए। पार्क में से पैदल जाता और आता तो न सिर्फ ठंडी रात में गर्मी आती, जल्दी भी पहुँच जाता और नाहक पैसे नहीं लगते। टैक्सी वालों को काफी घूमकर आना होता है जब कि ऐसी बाधाएँ और नियम पैदल चलने वालों के लिए नहीं हैं। पैदल चलने और दौड़ लगाने का शौक आस्ट्रेलियाई लोगों में खूब है। दोपहर में भी किसी महिला को ट्रेक सूट पहने या चड्डी चोली में दौड़ लगाते पार्क में देखा जा सकता था। लेकिन किसी भी वक्त वहाँ मैंने स्त्री-पुरुष को विहार करते नहीं देखा। बम्बई में तो पार्क में ही नहीं समुद्र किनारे भी आप स्त्री-पुरुष को ऐसे बैठे या बतियाते देख सकते हैं जिसे भारतीय समाज में निर्लज्ज कहा जाएगा। अपने शहरों में भीड़ इतनी ज्यादा है और प्राइवेसी के लिए जगह नहीं है। आस्ट्रेलिया खूब लम्बा चौड़ा महाद्वीप है और उसकी कुल आबादी इतनी है जितनी साल भर में हम अपनी आबादी में जोड़ लेते हैं। मेलबर्न पैंतीस लाख लोगों का शहर है। लेकिन वहाँ शान्ति और निजता के लिए बहुत जगह है।

रॉयल बॉटेनिक गार्डस इसलिए भी मुझे अच्छा लगा कि वहाँ वन में अकेले होने की अनुभूति होती थी। बड़े और सघन पेड़ों पर धूल नहीं जमी होती। झाड़ियाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
करीने से कटी और साफ होतीं और फूलों की तो रंगबिरंगी अनगिनत और गचागच क्यारियाँ होतीं। उनके बीच बैठने पर लगता जैसे फूलों की वादियों में खो गए हों। जगह-जगह छोटे-छोटे फव्वारों से फूलों, झाड़ियों और पेड़ों पर पानी चलता रहता। कभी-कभी और कहीं-कहीं बगीचे में काम करती औरतें और आदमी दिख जाते लेकिन ऐसा कभी नहीं लगा कि आपकी चौकीदारी कर रहे हों। आप फूल तोड़ें, किसी पेड़ की टहनी देखें, कोई फल उठा लें कोई नहीं टोकता। बगीचे के बीच में टहलने के लिए बनी सँकरी सड़क छोड़कर घास पर टहलें लोटे या बैठे रहें तो भी आपको कोई देखने वाला नहीं था। ऐसे सुनसान और वातावरण में जाहिर है कि आदमी अपने से बात करता है। आदमी जब अपने से बात करता है तो वह न सिर्फ निजी और आत्मीय होती है बल्कि बहुत सघन भी। हमारा आधे से ज्यादा बोलना डायलॉग यानी संवाद नहीं मोनोलॉग यानी अपने-आपसे बोलना होता है। बाथरूम में सब गाते हैं और अपने कमरे की प्राइवेसी में हम सभी बोलते हैं अपने-आपसे। आप अकेले हों और अपने गुन्ताड़े में लगें तब अपने को पकड़िए। आपकी जबान उसी तरह चलती मिलेगी जैसे आप बोल रहे हों। दोस्ती और आत्मीय सम्बन्ध का मतलब अगर सघन संवाद और सम्प्रेषण है तो मेरा संवाद और सम्प्रेषण आस्ट्रेलिया में उस रॉयल बॉटेनिक गार्डंस में हुआ। आस्ट्रेलिया में उस बगीचे में घूमते हुए जितना संवाद सम्प्रेषण मैंने अपने आप से किया और घूमते हुए जितने स्वास्थ्यवर्धन की अनुभूति हुई वैसी तो जीवन में कहीं नहीं हुई। न सिर्फ तेज चलने का आनन्द वहाँ मिला एक तरह का पुनर्जन्म होते देखा। जैसे वह बगीचा एक आत्मीय आलिंगन था, किसी माँ की कोख थी जिसमें से मैं फिर निकल रहा था।

इसलिए अट्ठाईस तारीख की सुबह नौ बजे उड़ान पकड़ने के लिए पाँच बजे उठा और भोर में दो घंटे तक उस बगीचे में घूमता रहा। जैसे मैं किसी आत्मीय से विदा लेने गया हूँ। जैसे किसी से जाने के पहले बातचीत करने गया हूँ। जैसे देखने गया हूँ कि मन के खजाने में मुझे कुछ क्या संवार और संजोकर रखना है। मैंने कहा कि छब्बीस मार्च को सवेरे मुझे लगा था कि महीना भर मैंने नाहक गँवाया क्योंकि किसी से कोई सम्बन्ध नहीं बना। कोई मेरी दोस्ती नहीं हुई जिसे बनाए रखने की ललक मन में हो। होने को आस्ट्रेलिया के कई कार्ड मेरे पास हैं लेकिन उन परिचयों का कोई मतलब नहीं क्योंकि वे बिजनेस कार्ड लेने-देने की तरह थे। वहाँ जो क्रिकेट देखा वह भी कोई ऊँचे दर्जे का नहीं था। मेरी कल्पना में जो आस्ट्रेलियाई क्रिकेट है वह जो वहाँ देखा उससे बिलकुल अलग है। लेकिन वह बगीचा मेलबर्न में मेरा दोस्त है। उससे मेरा आत्मीय सम्बन्ध है। और वहीं और उसके होते हुए ही मैं सघन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संवाद और सम्प्रेषण कर सका। खुलकर बोल और सोच सका और अपने अन्दर जीवन का फिर स्फुरण होते देखा। आस्ट्रेलिया में वही एक मित्र, वही एक सम्बन्ध और वही एक हरियाला आलिंगन मैं छोड़कर आया हूँ। उसे देखने की ललक हो तो इसमें गलत क्या है? बताइए?

(31.1.93)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो घट में है और ब्रह्मांड में भी

बीबीसी ने पूछा कि अब नरसिंह राव का क्या होगा? मैंने कहा प्रधानमन्त्री हमारे टेनिस खिलाड़ी रमेश कृष्णन की तरह हैं। वे सामने वाले की गलतियों से जीतते हैं। कुछ दिनों बाद हिन्दी में कही गई इस बात पर किसी ने मुझे अंग्रेजी में चिट्ठी लिखी। नरसिंह राव और राजनीति के बारे में आपको जो ठीक लगता हो, कहिए। पर टेनिस और रमेश कृष्णन के बारे में चुप ही रहें तो अच्छा है। यानी आप राजनीति तो थोड़ी बहुत समझते होंगे। लेकिन टेनिस नहीं समझते इसलिए रमेश कृष्णन कैसे हारते या जीतते हैं, इस पर नाहक टिप्पणी मत कीजिए। मुझे अच्छा लगा कि प्रधानमन्त्री की तुलना में रमेश कृष्णन को डिफेंड करने वाला एक टेनिस प्रेमी तो है। भले ही टेनिस की उसकी समझ राष्ट्र प्रेम से नीचे न उतरती हो।

इसी तरह कुछ साल पहले किसी ने पूछा था कि इतना लिखते रहते हैं। आखिर प्रभाष जोशी को क्रिकेट पर लिखने का अधिकार क्या है? उस पत्र में क्रिकेट की शब्दावली और खिलाड़ियों के नाम लिखने में कई गलतियाँ की गई थीं। लेकिन क्रिकेट पर लिखने के मेरे अधिकार को वे चुनौती जरूर देना चाहते थे। मैं बरसों से आकाशवाणी और दूरदर्शन पर विशेषज्ञ और साधारण कमेंट्रीकारों को सुन रहा हूँ। लेकिन मैंने नहीं पूछा कि जिन लोगों को न हिन्दी बोलते बनती है न अंग्रेजी और जो खेल भी ठीक से नहीं जानते उन्हें बार-बार कमेंट्री करने क्यों बुलाया जाता है? क्योंकि मैं जानता हूँ कि अच्छा बोलने का ताल्लुक सही बोलने और खेल को खूब अच्छी तरह समझने से नहीं है। लेकिन अगर आप खेल समझते हैं और खेलों का आनन्द लेना चाहते हैं तो इतनी खिलाड़ी भावना भी आपमें होनी चाहिए कि सबको मौका मिले और सब उसका आनन्द लें और दूसरों तक पहुँचाएँ।

इस भाई को मैंने नहीं लिखा कि नरसिंह राव की चारित्रिक कमियाँ और खूबियाँ बताने के लिए राजनीति की समझ जरूरी नहीं है। समझ मनुष्य को चाहिए। लेकिन वह भाई मान के चल रहा था कि बरसों से सम्पादक हूँ तो राजनीति भले ही समझता हूँगा लेकिन टेनिस की समझ मुझे कहाँ से होगी? अब मैं उन्हें कहाँ बताऊँ कि टेनिस मैं बचपन से देख-पढ़ रहा हूँ। रमेश कृष्णन के पिता रामनाथन कृष्णन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
जब बड़े 'टच आर्टिस्ट' कहे जाते थे और विंबलडन के आखिरी सोलह खिलाड़ियों में पहुँचने वाले पहले भारतीय हुए थे तब भी मैं टेनिस देखता, पढ़ता और थोड़ा बहुत खेलता था। रमेश कृष्णन को जूनियर से बुढ़ियाते मैंने देखा है और टेनिस के एबीसी कहे जाने वाले अमृतराज, बोर्ग और कोनर्स तीनों के खेल-जीवन को उठते, परवान चढ़ते और उतरते भी देखा है। रमेश कृष्णन की सर्विस से तेज सर्विस तो कई लड़कियाँ करती.हैं और उनके ग्राउंड स्ट्रोक्स में ज्यादा लय और ताकत होती है। और रमेश कृष्णन एक औसत खिलाड़ी हैं जो लगातार एक जैसा खेलते रहते हैं। न उनके पास कुछ अद्भुत और शानदार शाट्स हैं, न उन्हें खेलकर धूमधड़ाका करने के चक्कर में वे गलतियाँ करते हैं। उनके परसेंटेज टेनिस की खूबी भी यही है कि वे खुद होकर कम गलतियाँ करते हैं। इसलिए सामने वाले की गलतियों का उन्हें अच्छा फायदा मिलता है। वे जितने भी मैच जीते हैं उनका विश्लेषण करके देख लीजिए। आप पाएँगे कि उनके सामने वाले ने ज्यादा गलतियाँ की हैं—खुद होकर भी और मजबूरी में भी। और इसीलिए रमेश कृष्णन जीते हैं। अपने प्रधानमन्त्री की भी यही ताकत है कि उनके सामने वाले ज्यादा गलतियाँ करते हैं। वे हमारी राजनीति के रमेश कृष्णन हैं। यह आलोचना नहीं प्रशंसा है।

लेकिन मेरा इरादा रमेश कृष्णन और नरसिंह राव और टेनिस और राजनीति की बात करना नहीं था। बात मैं स्टेफी ग्राफ की करना चाहता हूँ जो अब फिर दुनिया की नम्बर एक महिला खिलाड़ी हो गई हैं। पिछले शनिवार को जब वे फ्रेंच ओपन के फाइनल में खेलीं तो नम्बर दो से नम्बर एक होकर अपने उस उन्मादी चहेते की इच्छा पूरी कर गईं जिसने हैमबर्ग में मोनिका सेलेस की पीठ में छुरा मार दिया था। वह मोनिका को घायल करके खेल से हटा देना चाहता था ताकि टेनिस की उसकी देवी स्टेफी ग्राफ फिर नम्बर एक हो जाए। स्टेफी को उस पागल के छुरे की जरूरत नहीं थी। कतई नहीं। आखिर दो साल पहले स्टेफी ग्राफ रेकार्ड एक सौ छियासी सप्ताह तक नम्बर एक रही तो किसी पागल की विकृत हिंसा के सहारे नहीं। उनका रैकेट ही उनका विजय ध्वज है। वे निश्चित ही नम्बर एक होना चाहती थीं लेकिन इस तरह तो कभी नहीं। इसलिए फ्रेंच ओपन में पन्द्रह बरस की सनसनीखेज क्रोशियाई लड़की ईवा माजोली से हारते-हारते जीतने के बाद स्टेफी ग्राफ ने कहा कि फ्रेंच ओपन जीतने के बाद वे जरूर नम्बर एक हो जाएँगी लेकिन इसका कोई मतलब नहीं है जब तक कि मोनिका सेलेस सर्किट में वापस नहीं आ जातीं। यानी नम्बर एक को बराबरी के कोर्ट पर साफ और सीधे मुकाबले में हराए बिना नम्बर एक होने में कोई दम नहीं है। सच्चे खिलाड़ी की यही भावना है। जिसे अपनी प्रतिभा में विश्वास हो और जो निरन्तर अभ्यास और समर्पण से उसे लगातार धार देता रहता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
हो और उसी धार पर खड़ा रहता हो वह किसी छलकपट और धोखाधड़ी से जीतना नहीं चाहता। ऐसी जीत सिर्फ राजनेता को मुबारक होती है। ऐसी जीत पर सिर्फ राजनेता ही इतरा सकते हैं।

हैमबर्ग में छुरे से घायल मोनिका जब अपना इलाज करवा रही थी और स्टेफी ग्राफ उससे मिलने गई और दोनों रोने लगी थीं तो यहीं मैंने पाँच हफ्ते पहले लिखा था कि सेलेस के बाहर होने पर नम्बर एक होना स्टेफी ग्राफ को कभी अच्छा नहीं लगेगा। खासकर इसलिए भी कि उसे नम्बर एक बनाने के लिए उसी के एक पागल चहेते दर्शक ने छुरा मारकर मोनिका सेलेस को खेल से बाहर किया है। वह उस पागल चहेते को नहीं जानती लेकिन उसका धतकरम स्टेफी ग्राफ के मन में अपराध की गाँठ बनकर बँधा रहेगा। कोर्ट पर टेनिस खेलते हुए लगे छुरे का घाव भले ही जल्दी भर जाएगा लेकिन मोनिका के मन पर हुआ घाव शायद ही कभी भरे। जो पागल छुरा मोनिका के मन पर निशान बन गया है, उसने स्टेफी के मन में अपराध की भी गाँठ बना दी है। दोनों फिर से खेलकर और खेल में ही अपना नम्बर बनाकर उस अपराधी के छुरे से मुक्त हो सकती हैं। स्टेफी ग्राफ अपनी चहेती खिलाड़ी नहीं है लेकिन उसकी खिलाड़ी भावना और महानता में अपने को कभी सन्देह नहीं रहा। इसलिए यह पढ़कर अपने को बड़ा सन्तोष हुआ कि स्टेफी ग्राफ ने वही कहा जो पाँच हफ्ते पहले मुझे लगा था कि वे कहेंगी। अंग्रेजी में चिट्ठी लिखनेवाले वे साहब अगर बीबीसी सुनने के अलावा यह अखबार पढ़ते भी हों तो कृपया नोट करें कि मैं टेनिस भले ही न समझता होऊँ, टेनिस खेलने वालों का मन जरूर समझता हूँ। और मन और चरित्र की जो खूबी किसी को टेनिस के शिखर पर ले जाती है, वही उसे एवरेस्ट पर भी चढ़ाती है। खेल हो चाहे पर्वतारोहण, संगीत हो चाहे साहित्य और उद्योग हो चाहे राजनीतिक-शिखर पर जो भी पहुँचता है उसमें कोई विशेष प्रतिभा जरूर होती है। अगर आप इस प्रतिभा को समझते हैं तो खेल और फिल्म आपको सस्ते और हलके-फुलके मनोरंजन और साहित्य और कला आपको ऊँचे दर्जे के उपक्रम नहीं लगेंगे और एक को आप हिकारत और दूसरे को सम्मान से नहीं देखेंगे। यह अपने ही महान सांस्कृतिक देश में होता है कि साहित्य और धर्म का पाखंड भी खेल और कलाओं के पराक्रम से ऊँचा और बड़ा समझा जाता है। कोई अचरज नहीं कि अपने यहाँ प्रतिभा दर-दर की ठोकरें खाती है और पाखंड ऊँचे सिंहासन पर विराजता है।

जब आस्ट्रेलिया के एलन बॉर्डर अपने सुनील गावसकर के दस हजार एक सौ बाईस टैस्ट रनों से आगे निकल गए तो मैंने पहले पेज पर एक टिप्पणी लिखी। कुछ संघ परिवारियों को लगा कि यह क्या मजाक है। जो आदमी मुम्बई के बम विस्फोटों पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहले पेज पर लिखकर मुसलमानों और पाकिस्तानियों की आतंकवादी साजिश के धुर्रे बिखेरने में नहीं लगता वह किसने कितने रन बनाए यही बताने में लगा है। धिक्कार है ऐसे प्राणी को! अब इन लोगों को कौन बताए कि पाकिस्तान की मदद लेकर बम्बई में बम फोड़ने और बेकसूर लोगों को मारने वाले मुसलमान और पंजाब में पाकिस्तानी हथियारों से सिखों और हिन्दुओं को मारनेवाले सिख और बांग्लादेशी मदद से असम में आतंकवादी हिंसा करने वाले हिन्दू-मुसलमान, सिख और हिन्दू नहीं हैं। वे सब विकृत मनःस्थिति में पड़े आतंकवादी अपराधी हैं और उनकी समान रूप से भर्त्सना और ताड़ना की जानी चाहिए। उनसे निपटे बिना हमारे समाज में शान्ति, भाईचारा और समरसता नहीं आ सकती। लेकिन उनसे निपटते समय या उनका सामना करते हुए हम क्यों भूलें कि हमारे समाज में एक गावसकर भी हैं। उनमें जो ऊँचे दर्जे का साहस है वही दुनिया के तूफानी गेंदबाजों का सामना करने में प्रकट होता था और बम्बई में उनके घर के सामने कार में गुंडों से घिरे एक परिवार के काम आया। जो सुनील गावसकर बल्ला लेकर खड़े हो जाते और मार्शल, होल्डिंग, लिली, थॉमसन और इमरान के तूफान को उलट देते वही सांप्रदायिक पागलपन में जलते बम्बई में गुंडों से कह सकते हैं कि मैं गावसकर हूँ और मेरे रहते आप इस परिवार को हाथ नहीं लगा सकते। आतंकवादियों की कायरता की भर्त्सना करते समय हमें ऐसे साहस का अभिनन्दन भी करना चाहिए। बल्कि आतंकवादी कायरता का सही जवाब यह साहस ही है। ऐसे साहसी के पराक्रम के ऊपर अगर कोई एक कदम और बढ़ा ले तो उसका अभिनन्दन करना चाहिए। वे भले ही आस्ट्रेलिया के एलन बॉर्डर हों।

स्टेफी ग्राफ का तो जीवन-धर्म ही टेनिस खेलना है इसलिए वह फ्रेंच ओपन में खेलने से तो मना नहीं करती। लेकिन उसके खेलने से साफ लगता था कि मोनिका सेलेस के बिना वह अपने तीसरी बार फ्रेंच ओपन जीतने को कोई महत्त्व नहीं दे रही। सच पूछिए तो इस बार फ्रेंच ओपन का मजा ही किरकिरा हो गया क्योंकि मोनिका सेलेस के बिना उसमें कोई मुकाबला ही नहीं बचा था। खेल का आनन्द बराबरी के और काँटे के मुकाबले में है। मोनिका सेलेस के बिना कौन मानेगा कि महिला टेनिस की असली अग्नि-परीक्षा हो सकती है। मोनिका सेलेस रोलाँ गेरास में तीन साल से लगातार जीतती आ रही हैं। एक पागल का छुरा उन्हें खेल से बाहर नहीं करता तो वे वहाँ होतीं और चौथी बार जीतने के रिकॉर्ड की कगार पर होतीं। वे नहीं हैं तो स्टेफी ग्राफ हर किसी को लथोड़ती रहीं जैसे चिढ़ी हुई शेरनी बकरियों और हिरनियों को लथोड़ देती है। स्टेफी ग्राफ की चिढ़ और पीड़ा जैसे उनके चेहरे पर लिखी रही। अपनी प्रतिद्वन्द्विनी की दुखद अनुपस्थिति से स्टेफी ग्राफ को अपना जीतना और नम्बर एक होना बेमानी-सा लगता है तो यह अभिनन्दनीय मानवीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संवेदनशीलता है। ऊँचे दर्जे के खिलाड़ी भावना की नहीं, मन को छूने और आदमी को ऊपर उठाने वाली कविता है। स्टेफी ग्राफ को पाँच साल से देख रहा हूँ, उसके लिए इतना प्रेम और सम्मान मेरे मन में कभी नहीं उमड़ा जितना इस बार फ्रेंच ओपन में खेलते देखकर उमड़ा।

साहित्य और कलाओं का मर्म अगर यही मानवीय संवेदन और इस पर चलने वाले सम्बन्धों में है तो आप पाएँगे कि खेल और खिलाड़ियों को भी यही संवेदन-प्रेरित और समृद्ध करता है। आस्ट्रेलिया और इंग्लैंड में क्रिकेट के मैदान पर कोई एक सदी से प्रखर प्रतिद्वन्द्विता चली आ रही है। डॉन ब्रेडमेन आस्ट्रेलिया के ही नहीं क्रिकेट के सबसे बड़े बल्लेबाज माने जाते हैं। उनके जमाने में इंग्लैंड में दो बल्लेबाज सबसे नामी माने गए। सर जैक हॉब्स और वाल्टर हैमंड। दोनों सज्जन और दुर्दांत बल्लेबाज। ब्रेडमेन अच्छे विकेटों के महान बल्लेबाज थे और हैमंड सभी विकेटों पर अच्छा खेलनेवाले महान बल्लेबाज थे। एक मैच में पानी गिरा और गीले विकेट पर खेलना बेहद मुश्किल था। उस विकेट पर हैमंड ने कोई छत्तीस एक रन बनाए। हैमंड की उस अद्भुत पारी की ब्रेडमेन ने बहुत तारीफ की। हैमंड ने अपनी जीवनी में उस मैच और अपनी पारी का जिक्र किया और यह भी कहा कि सर डॉन ब्रेडमेन ने उसके बारे में क्या कहा। फिर हैमंड लिखते हैं—'थैंक्यू, सर डॉन ! लेकिन उजली धूप में आपने जो कई धुआँधार पारियाँ खेली हैं उनके सामने मेरी उस पारी की क्या बिसात! यह अखबार के लिए दिया गया बयान नहीं है। दिखनौटी विनम्रता नहीं है। एक महान खिलाड़ी का अपने सबसे बड़े प्रतिद्वन्द्वी महान खिलाड़ी की प्रतिभा को प्रणाम है। और यह मत मानिए कि ये सब पुराने जमाने की बातें हैं जब सज्जन लोग खेला करते थे। भारत में छह साल हुए विश्व कप के पहले एक टीवी बातचीत में सुनील गावसकर ने रिचर्ड्स को कहा आप दुनिया के सबसे बड़े बल्लेबाज हैं। रिचर्ड्स ने उन्हें काट कर कहा—नहीं अपने जमाने के सबसे बड़े बल्लेबाज से मैं बात कर रहा हूँ। पिछले साल आस्ट्रेलिया में मीडिया रिचर्ड्स को सबसे बड़ा बल्लेबाज बता रहा था और रिचर्ड्स मैं नहीं गावसकर है—कह रहे थे। इसे आप क्या कहेंगे ?

(6.6.93)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घास पर परम्परा

विंबलडन देखता हूँ और बार-बार अपने से कहता हूँ—यह टेनिस है।

अभी इसी महीने देखा गया फ्रेंच ओपन आँखों के पीछे कहीं होता है। उसके पीछे होता है जनवरी में मेलबर्न के टेनिस सेंटर में देखा हुआ आस्ट्रेलियाई ओपन। और उसके भी पीछे होता है गए साल अगस्त में देखा अमेरिकन ओपन। आस्ट्रेलियाई ओपन के लिए सवेरे जल्दी उठना पड़ता है। अमेरिकन ओपन रात भर जगाता है। फ्रेंच ओपन के लिए दोपहर और शाम लगती है। और विंबलडन शाम से रात तक। सेटेलाइट टीवी है तो घर बैठे टेनिस की चारों बड़ी प्रतियोगिताएँ देख लो। बीच-बीच में इधर-उधर के टूर्नामेंट भी देखे जा सकते हैं। और बहुत शौकीन हों तो बड़े खिलाड़ियों की तरह सर्किट में साल भर घूमते हुए टेनिस देख सकते हैं।

मैं देखता रहता हूँ इसलिए विंबलडन देखते ही एकदम लगता है कि यह टेनिस है। हरे मखमल जैसी बिछी घास और उस पर पड़ती सुनहली धूप। देखने वालों के रंग-बिरंगे कपड़े, खेल को समझता उत्साह, शोर और तालियाँ लेकिन चेयर अम्पायर के लेडीज एंड जेंटलमैन, क्वायट प्लीज और सेंटर कोर्ट हो या कोई भी कोर्ट—ऐसी शान्ति के खिलाड़ी की साँस सुनाई पड़ जाए। ऐसा कहते तो सभी जगह हैं लेकिन खेल और खिलाड़ी के लिए ऐसी सम्मानजनक शान्ति सिर्फ विंबलडन में होती है। जैसे लोग टेनिस देखने नहीं गिरजे में प्रार्थना करने, मस्जिद में नमाज पढ़ने या मन्दिर में पूजा करने आए हों। ऐसा क्यों होता है ? अमेरिकी और आस्ट्रेलियाई दर्शक तो फिर भी माना कि खुले और परम्परा मुक्त समाज के लोग हैं। लेकिन फ्रांसीसी लोगों को तो परम्परा और अपनी संस्कृति से कोई कम लगाव नहीं है। बल्कि कुछ सदियों पहले तो फ्रांस ही अपने को परिष्कार, अभिजात्य और संस्कृति का केन्द्र मानता था। इंग्लैंड अक्खड़ लोगों का देश और अंग्रेजी उजड्ड भाषा थी। लेकिन फ्रेंच ओपन में वह वातावरण नहीं होता जो विंबलडन में आप महसूस कर सकते हैं, देख और सुन सकते हैं। विंबलडन की जैसे एक गन्ध हैं। अनोखी, मन्दी, मदमाती और आपको चारों तरफ से घेर कर चुपचाप आपसे कहलवाती—जो विंबलडन में है वह दुनिया में कहीं नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुनिया के किसी भी टेनिस कोर्ट को वैसा सम्मान नहीं मिलता जैसा विंबलडन को प्राप्त है। जैसे लाड्‌र्स को क्रिकेट की काशी या मक्का माना है वैसे ही विंबलडन को टेनिस का घर कहते हैं। ब्रिटेन के पास अब वह साम्राज्य नहीं है जो दूसरे महायुद्ध तक था। उसका वैसा दबदबा और रुतबा नहीं है जैसा पहले महायुद्ध के पहले था। आज वह न सैनिक शक्ति है, न आर्थिक ताकत। वह ज्ञान-विज्ञान और कला संस्कृति का अग्रणी देश भी नहीं है। मनुष्य की उपलब्धि का ऐसा कोई क्षेत्र नहीं है जिसमें ब्रिटेन का डंका बजता हो। ब्रिटेन के लोग भी अपने को तीसमारखाँ नहीं मानते। उनके समाज में पतन के स्वर और एक अजीब-सी दुर्गन्ध है—जैसे बियावान में मध्य युग का कोई खँडहर हो जहाँ चमगादड़ें उलटी टँगी हों और लगता हो कि उजली धूप और ताजी हवा कभी आई थी। अब पता नहीं कि कब आएगी। ब्रिटेन का समाज अपने अन्दर देखता बन्द और घुटता हुआ समाज है। अपने अतीत की याद में जीता लेकिन वर्तमान पर छाती-माथा कूटता और अपने को कोसता हुआ। वह सिर्फ अपनी परम्पराओं के निर्वाह में गौरवशाली और श्लाघनीय है। विंबलडन उसकी एक ऐसी ही परम्परा है।

ब्रिटेन का यह दावा सारी दुनिया मानती है। जब तक कोई विंबलडन न जीत जाए तब तक विश्व विजेता नहीं माना जाता। अपने जमाने के अमेरिकी पॉप सितारे टेनिस खिलाड़ी आन्द्रे अगासी ने पिछले साल विंबलडन को छोड़कर आज तक कुछ नहीं जीता है। लेकिन वे एक विंबलडन से ही सुपर सितारे बने हुए हैं। और इस सदी के अन्तिम बड़े खिलाड़ी इवान लैंडल ने कभी कहा था कि घास (विंबलडन की) गायों के लिए है। अब जब वे विंबलडन जीत नहीं सकते तो एक दो साल पहले लैंडल ने कहा था मेरे सारे खिताब ले लो और मुझे एक विंबलडन दे दो। लैंडन फ्रेंच, अमेरिकन और आस्ट्रेलियाई ओपन दो-दो, तीन-तीन बार जीत चुके हैं। लेकिन विंबलडन में दो बार फाइनल में पहुँचे एक बार बेकर और दूसरी बार कैश ने उन्हें मार दिया। तब से वे बदकिस्मत खिलाड़ी माने जाते हैं। यहाँ पाँच साल लगातार जीतने वाले बोर्ग इस सदी के सबसे बड़े खिलाड़ी हैं। कहावत है कि जिसने लाहौर नहीं देखा वह जन्मा ही नहीं। लेकिन यह कहावत नहीं वास्तविकता मानी जाती है कि जो सेंटर कोर्ट विंबलडन में नहीं खेला उसने टेनिस खेला ही नहीं। यह अंग्रेज कहावत नहीं है। टेनिस का पारस पत्थर है। विंबलडन-पर आकर सब अपनी धातु घिसकर देखते हैं। वहाँ जो सोना निकलता है वही दुनिया में असली सोना माना जाता है। किसी से भी पूछ लो। अमेरिकी हो या इतावली या फ्रेंच या रूसी या आस्ट्रेलियाई सब यही कहेंगे कि विंबलडन टेनिस की अग्नि-परीक्षा है। जो उसमें से साबुत निकले वही कुन्दन का है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
विंबलडन को यह प्रभामंडल इसलिए नहीं मिला कि ग्रेट ब्रिटेन एक महाबली देश है। इसलिए भी नहीं कि संस्कृति और सभ्यता में अग्रगामी देश है। इसलिए भी नहीं कि जापान या जर्मनी की तरह धनी देश है। इन सब मानदंडों को तो छोड़ ही दीजिए। खेलों का भी सिरमौर देश इंग्लैंड नहीं है। सॉकर उसका राष्ट्रीय खेल कहा जाता है लेकिन अभी इस महीने अमेरिका ने भी उसे दो गोल से पीट दिया। अमेरिका में अगले साल विश्व कप भले ही हो रहा हो, लेकिन वह देश सॉकर यानी फुटबॉल की कोई फिकर नहीं करता। सॉकर में वह घुटने चलने वाला देश है। लेकिन उसने इंग्लैंड को दो गोल से पीट दिया ! तब से अंग्रेज लोग शर्म के मारे मरे जा रहे हैं। क्रिकेट को भी अंग्रेज अपना खेल मानते हैं और वहीं से वह अंग्रेजी राज के साथ दुनिया में गया। लेकिन पिछले साल उसे पाकिस्तान ने हराया फिर भारत ने फिर लंका ने और अब उसे आस्ट्रेलिया पीट रहा है। वन डे क्रिकेट भी वहीं शुरू हुआ और वहीं सबसे ज्यादा खेला जाता है। लेकिन विश्व कप दो बार वेस्टइंडीज, एक-एक बार भारत, आस्ट्रेलिया और पाकिस्तान ने जीता। इंग्लैंड एक बार इंग्लैंड में, दूसरी बार भारत में और तीसरी बार आस्ट्रेलिया में—फाइनल खेला और तीनों बार हरा दिया गया। फुटबॉल को वह अपना राष्ट्रीय खेल मानता है। जितने अंग्रेज सॉकर देखते हैं और उसके पीछे दीवाने होते हैं और उसे जनम-मरण का सवाल बनाकर लड़ते हैं—वैसी दीवानगी तो ब्राजील या मैक्सिको में भी नहीं है। लेकिन कुल जमा एक बार इंग्लैंड ने विश्व कप जीता है 1966 में। न कभी उसके पहले न आज तक उसके बाद। लेकिन जैसे लाडर्स क्रिकेट की काशी है वैसे ही वेंबली का स्टेडियम है।

और टेनिस में तो और भी हाल बेहाल है। घास पर टेनिस इंग्लैंड वाले सभी जगह खेलते हैं और विंबलडन उन्हीं का है। चैम्पियनशिप से करोड़ों की आमदनी होती है और यह सारा पैसा वापस खेल में जाता है यानी लड़के-लड़कियों को टेनिस खेलाने में लगता है। लेकिन पिछली बार कोई अंग्रेज खिलाड़ी विंबलडन कप जीता? जरा सोचिए सन् छत्तीस में फ्रेड पैरी जीते थे तब से सत्तावन साल हो गए कोई अंग्रेज चैम्पियन नहीं हुआ। महिलाओं में आखिरी बार मिस वेड सन् सतत्तर में जीती थीं। पिछले सोलह साल में कोई अंग्रेज कन्या या श्रीमती विंबलडन नहीं जीती। डबल्स या मिक्स डबल्स में भी यही हाल है। फिलहाल इंग्लैंड के नम्बर एक खिलाड़ी हैं जरमी बेट्स—वे पहले ही राउंड में बाहर हो गए। और अभी गुरुवार को बिना सीडिंग के अंग्रेज खिलाड़ी ख्रिस बैली पाँचवें नम्बर के इवानिशेविक को पाँच सेट तक खींच ले गए तो सेंटर कोट पर बैठा हर अंग्रेज उनके लिए गला खोलकर चिल्लाता और चिल्लाती रही। यानी किसी अंग्रेज को जीतते देखने की ऐसी इच्छा है अंग्रेजों में। खेल में इतना पैसा है, इतने सुन्दर और शानदार कोर्ट हैं, इतने साधन हैं और अंग्रेजों के लिए इतने अवसर हैं फिर भी कोई अंग्रेज बच्चा विंबलडन जीतकर चैम्पियन नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
होता। फ्रेंच, अमेरिकन और आस्ट्रेलियाई ओपन भी किसी अंग्रेज ने जीती हो तो याद कीजिए। याद आ जाए तो मुझे बताना। मुझे तो याद नहीं आता और सच मानिए मेरी याददाश्त बुरी नहीं है।

फिर भी जो ऑल इंग्लैंड चैम्पियनशिप है वही दुनिया की चैम्पियनशिप है। क्यों विंबलडन में आकर सब मत्था टेकते हैं? क्यों वहाँ दुनिया के सारे खिलाड़ी कसौटी पर चढ़ने आते हैं और विंबलडन जीत गए तो अपने को चैम्पियन ही नहीं सम्पूर्ण खिलाड़ी मानते हैं। विंबलडन घास पर खेली जाती है। फ्रैंच ओपन लाल मिट्टी पर और अमेरिकन और आस्ट्रेलियाई ओपन सिन्थेटिक टर्फ पर। कहीं भी खेल उतना तेज नहीं होता जितना विंबलडन की घास पर। आजकल तो सिन्थेटिक कोर्ट का चलन है और पहले क्ले यानी मिट्टी की कोट का होता था। ज्यादातर टूर्नामेंट ऐसी ही कोर्टों पर होते हैं। लेकिन कोई नहीं कहता कि विंबलडन की घास पर हार गए तो क्या हुआ ? घास पर आजकल खेलता कौन है? बारिश अमेरिकन और आस्ट्रेलियाई ओपन को बिगाड़ नहीं सकती। लेकिन विंबलडन में कोर्ट को ढँकने वाला स्टेडियम नहीं बनता। पानी गिरे तो कोर्ट को ढँक देते हैं। गिरता रहे तो खेल दूसरे दिन होता है लेकिन कोर्ट को नकली वातावरण में सदा खेलने के योग्य नहीं रखा जाता। रात को विजली के उजाले में मैच नहीं होते। और हालाँकि टेलीविजन ने और सब जगह खेल को अपनी जरूरत के हिसाब से मोड़ा है या बिगाड़ा है। विंबलडन में गेंद को पीली करने के अलावा और कोई बिगाड़ मंजूर नहीं किया। व्यापारीकरण का असर विंबलडन पर भी हुआ है। अब विजेता महिला को भी एक-डेढ़ करोड़ रुपए मिलते हैं। करोड़ों रुपया टेलीविजन से और प्रायोजकों से मिलता है हालाँकि विंबलडन पर कोई विज्ञापन नहीं लगता।

विंबलडन में होते खेल और अमेरिकी ओपन को साथ रखकर देखें तो फर्क एकदम समझ आएगा। अमेरिकी ओपन जैसे मेला लगा हुआ है। लोग वहाँ और भी बहुत कुछ करने आते हैं—टेनिस देखने के साथ। लेकिन विंबलडन में टेनिस ही मुख्य है और उसके अलावा कोई आनन्द नहीं है। कुछ और समझने के लिए आप कह सकते हैं कि विंबलडन पर्व है और अमेरिकी ओपन त्यौहार। लोग दोनों में हैं और उनकी खूब भागीदारी भी है। लेकिन त्यौहार मनाते और मेले में आए लोगों और शिवरात्रि पर काशी विश्वनाथ के दर्शन या कृष्ण जन्माष्टमी पर मथुरा में जुटे लोगों के मनोभावों में उल्लास और उदात्त का अन्तर है। ऐसा ही अन्तर आप विंबलडन और टेनिस की किसी और प्रतियोगिता में देख सकते हैं। यह फर्क सिर्फ परम्परा के कारण नहीं है। विंबलडन के प्रति अंग्रेजों का जो संस्कारी भाव है उसका वहाँ ऐसा वर्चस्व होता है कि वहाँ जो भी आता है वह भी वैसे ही सम्मान और संस्कार से टेनिस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
देखता है। अंग्रेजों की परम्परा और संस्कारों भाव को आज को टेनिस की दुनिया में जो मान्यता है वह अंग्रेज जीवन में विंबलडन के स्थान के कारण है। अगर इंग्लैंड को विंबलडन के एक सौ सोलह वर्षों में सहेज कर रखने लायक और उसका सम्मान करने का निश्चय नहीं होता तो आज ऑल इंग्लैंड चैम्पियनशिप—द चैम्पियशनशिप नहीं होती।

मैंने शुरू में ही कहा कि मैं विंबलडन देखता हूँ और मेरा मन उमग कर कहता है यह टेनिस है। क्रिकेट भी इस बार पहले दक्षिण अफ्रीका, फिर आस्ट्रेलिया, फिर भारत, फिर वेस्टइंडीज और अब इंग्लैंड में होते देख रहा हूँ। फिर भी यह क्रिकेट है और क्रिकेट का रोमांस कहीं है तो लाड्र्स पर है—ऐसी अनुभूति लाड्र्स के मैच का प्रसारण देखते हुए ही हुई। या वेंबली में यूरोपियन सॉकर देखते ही लगा कि यह फुटबॉल का जादू छा रहा है। क्या ऐसा मुझे अपने संस्कारों के कारण लगता है। हम लोग अंग्रेजों की संस्थाओं और परम्पराओं, उनकी कसौटियों और उनके मानदंडों को इस देश में ऐसे सम्मान से देखते आ रहे हैं कि दुनिया में कहीं कोई महत्त्वपूर्ण है तो यही है—वाला भाव सहज ही जुड़ जाता है। लेकिन ऐसा क्या सिर्फ मेरी पीढ़ी के लोगों को होता है जिन्होंने बचपन में अंग्रेजों को भारत से जाते देखा ? बाद की पीढ़ियों के लोगों को भी वैसा ही लगता है जैसा मुझे लगता है? जब मैं पहली बार लाड्र्स के लांग रूम में गया तो लगा जैसे मन्दिर में आया हूँ और जूते मुझे बाहर निकाल देना चाहिए था। जब विंबलडन गया तो चैम्पियनशिप हो चुकी थी—लेकिन घास पर चलते हुए हिचकता रहा कि कहीं मैं उसे अपवित्र तो नहीं कर दूँगा।

मेलबर्न क्रिकेट ग्राउंड या सिडनी क्रिकेट ग्राउंड पर मुझे वैसी ही अनुभूति नहीं हुई क्योंकि वे ग्राउंड वैसे रहे ही नहीं जैसे मैंने बचपन में पढ़े और फोटुओं में देखे थे। ब्रिसबेन के गाबा मैदान पर मेरी स्मृति इकतीस साल पहले के ऐतिहासिक टाई टैस्ट में गई। उतना ही इतिहास लगा जितना वहाँ शेष बचा है। मेलबर्न क्रिकेट ग्राउंड के पास नए बने टेनिस सेंटर में तो मैं गया भी नहीं। महीने भर वहाँ के क्रिकेट मैदानों पर घूमता रहा और क्रिकेट देखता रहा। मेरी कल्पना का आस्ट्रेलियाई क्रिकेट मुझे कहीं नहीं मिला। जिस पायजामा क्रिकेट को मैंने देखा वह चन्दू सरवटे और वीनू मनकड का बताया आस्ट्रेलियाई क्रिकेट नहीं था। क्रिकेट के रोमांस और पावित्र्य का भाव मुझे सिर्फ तभी आया जब सर डॉन ब्रेडमेन के सामने खड़ा हुआ और उनसे हाथ मिलाया। जैसे किसी इतिहास पुरुष को छुआ हो। जैसे किसी व्यक्ति से न मिले हों क्रिकेट के शिखर पर चढ़कर वहाँ माथा टेका हो। जो सज्जन सर डॉन के घर ले गए उन्होंने कहा था कि डॉन किसी से मिलते नहीं। मिलना-जुलना उन्हें पसन्द नहीं। मैंने कहा जानता हूँ। लेकिन जिस देश से आया हूँ वहाँ लोग भगवान के दर्शन करने जाते हैं। पट खुलते हैं तब तक बाहर बैठे रहते हैं। दर्शन करके परिक्रमा लगाकर चले जाते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। मैं सर डॉन के घर तीर्थ यात्रा पर आया हूँ। दर्शन किए बिना जाऊँगा नहीं। सर डॉन ब्रेडमेन और एडीलेड में उनके घर के अलावा ऐसा भाव मुझे आस्ट्रेलिया में कभी नहीं आया।

बताऊँ क्यों? क्योंकि आस्ट्रेलिया में भी क्रिकेट की सौ साल से बड़ी परम्परा है। पहला टैस्ट आखिर वहाँ मेलबर्न में एक सौ सोलह साल पहले खेला गया था। लेकिन एमसीजी में बीच में जाकर भी खड़े हों तो पहले टैस्ट का कोई इतिहास आपमें जागेगा नहीं। वह मैदान अब नहीं है जहाँ पहला टैस्ट खेला गया। अगर आस्ट्रेलिया ने अपने इतिहास और अपनी परम्परा को जीवन्त नहीं रखा और उसके मन में अपने अतीत का सम्मान नहीं है तो किसी और में वह कैसे जागेगा? लार्ड्स जैसा मेलबर्न हो सकता था, नहीं है। आस्ट्रेलिया को इसका अहसास और इसका आग्रह नहीं है। विंबलडन, लार्ड्स और वेंबली अगर खेल के तीर्थ हैं जहाँ सब सिर नवाते हैं तो इसलिए कि अंग्रेजों ने उन्हें पूजनीय बनाया और बना रखा है। आजकल इस देश में हम अपनी संस्कृति और इतिहास की बड़ी बातें करते हैं। हमने क्या पूजनीय बनाया है? जो है वह उन भारतीयों का दिया हुआ है, जिन्हें नव हिन्दुत्व सिर नहीं नवाता। धर्म आग लगाने और संस्कृति बदला लेने का नाम नहीं है।

(27.6.93)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह पिता और कोच बताइए कैसा है ?

करोली ने पत्नी के कन्धे पर सिर रखा और रोने लगे। आपको बताने में कोई शर्म नहीं कि मेरा भी गला भर आया। कोई जरूरत नहीं थी फिर भी साथ मैच देख रहे तीनों बच्चों से उसी फटे गले से कहा—वो रो रहे हैं। शायद पप्पू को मालूम नहीं था इसलिए उसे कहा—वो सेलेस के पिता हैं।

तब तक कैमरा घूमकर फिर उन पर आ गया था। अब उनने काला चश्मा लगा लिया था। उन्हें मालूम था कि टीवी वाले उन्हें दिखाएँगे और वे फिर रोते नहीं दिखना चाहते थे। सीधे बैठ गए थे और उनकी बैठक से लगता था कि वे निश्चयपूर्वक अपने पर काबू किए हुए हैं। टीवी वाले ने कहा भी कि पिता करोली ने अपनी भावनाओं पर नियन्त्रण कर लिया है।

लेकिन जिस क्षण मोनिका सेलेस ने आस्ट्रेलियन ओपन का खिताब जीता उनके पिता अपने को रोने से रोक नहीं सके। टीवी कैमरों और खचाखच भरे स्टेडियम के बीच सहारे के लिए उनने सिर दाहिने बैठी पत्नी के कन्धे पर रखा। महिलाएँ रोती-सुबकती हैं और सहारे के लिए पुरुष के कन्धे, पीठ या सीने पर सिर रख देती हैं। उन्हें इसकी शर्म नहीं लगती।

लेकिन हमारी दुनिया में कोई पुरुष रोए और सहारे के लिए पत्नी के कन्धे पर सिर रख दे तो इसे पुरुषत्व की शोभा नहीं माना जाता। मोनिका सेलेस की माँ उनके पिता से ज्यादा पक्की और अपने पर काबू रखने वाली निकलीं। और तो और खुद सेलेस की भी आँखों में जीतने के बाद आँसू नहीं छलके। ट्रॉफी लेते समय, फिर बोलते समय और फोटू खिंचवाते हुए भी एक दो बार उनका चेहरा-विकृत तो हुआ और लगा कि अब वे फूट पड़ेंगी, फट पड़ेंगी। लेकिन सेलेस ने तो धन्यवाद भी अपने कोच को दिया।

हम सब जानते हैं कि उनके पिता ही उनके कोच हैं लेकिन दूसरे सभी खिलाड़ियों/खिलाड़िनों की तरह सेलेस ने माता-पिता या पिता कहने के बजाय औपचारिक कोच का सम्बोधन पसन्द किया। यह प्रयत्न ही बताता है कि सेलेस कितनी कोशिश करके अपनी भावनाओं पर काबू कर पा रही थीं। माँ-बाप और बेटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में माँ-बेटी तो आँसुओं को रोक़ने में कामयाब हो गईं पर पिता अपने टूट कर बह निकलने को नहीं रोक सका। सच कहूँ, मेरी राय में पिता करोली ज्यादा बहादुर हैं क्योंकि ऐसे रो सकने में जो निर्लज्जता चाहिए वह हर किसी में नहीं होती।

उस एक पल के बाद सेलेस के पिता व्यवस्थित और सामान्य हो गए हालाँकि वे स्पष्ट ही बहुत सुखी और खुश लग रहे थे। स्टेफी ग्राफ के पिता की तरह वे मुट्ठियाँ बजाकर उछल नहीं पड़े थे, न ग्राफ की तरह मोनिका जीतते ही माता-पिता से जा लिपटी थीं। मोनिका की तरह उसके माँ-बाप भी बड़े विलक्षण लोग हैं।

मैंने कहा कि मेरी राय में करोली ज्यादा बहादुर हैं तो इसलिए नहीं कि कैमरों और खचाखच भरे स्टेडियम में बेटी की जीत पर इस तरह रो सकते हैं। बल्कि इसलिए कि मोनिका सेलेस के वही पिता और वही कोच हैं और उन्होंने मोनिका को वह निश्चय, साहस और खेल दिया है जिसके बूते पर वे हेमबर्ग के टेनिस कोर्ट पर कोई तीन साल पहले एक पागल के छुरे से घायल होने और दो साल टेनिस से बिल्कुल दूर रहने के बाद भी दनदनाती वापस आईं और आस्ट्रेलियन ओपन जीत गईं।

टेनिस के इतिहास में कोई खिलाड़िन/खिलाड़ी छुरे से घायल होकर पेशेवर सर्किट से इस तरह बाहर नहीं हुई/हुआ। और कोई दो साल बाहर रहने के बाद लौटकर कोई किसी ग्रैंड स्लेम को जीत नहीं पाया। न बोर्ग, न मेकिनरो, न कोई और तीसमारखाँ। यह करतब बाईस साल की इस लड़की मोनिका सेलेस ने ही किया। कल शाम मेलबर्न में उसने अंके हुबर को सीधे दो सेटों में पीटकर साल का पहला ग्रैंड स्लेम जीत लिया।

गए साल अमेरिकी ओपन में भी फाइनल तक मोनिका पहुँची थीं और वहाँ स्टेफी ग्राफ से हारी थीं। कन्धे के घाव का निशान और उससे भी कहीं गहरे मन पर लगे घाव से निपटकर मोनिका दो साल बाद पहले ग्रैंड स्लेम में उतरी थीं। पेशेवर टेनिस में कोई इतनी लम्बी गैरहाजिरी और ऐसी घटना के बाद वापस टॉप पर नहीं पहुँचता।

योर्न बोर्ग और जॉन मैकिनरो जैसे भीषण प्रतिभावान पुरुष खिलाड़ी भी छुट्टी के बाद वापस आकर टॉप पर पहुँचने और ग्रैंड स्लेम जीतने का कमाल और निश्चय नहीं दिखा पाए। उनके अपनी नाव से किनारे उतरकर अपनी चाहत के बगीचे में चले जाने के बाद जब वे लौटे तो नदी उनसे इतनी दूर चली गई थी कि फिर वे उसे नहीं पकड़ सके। कोशिश करते हुए कई बार बहुत हास्यास्पद भी लगे और आखिर शिखर पर पहुँचे बिना, नम्बर एक हुए बिना रिटायर हुए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोनिका का मामला तो स्वेच्छा से और स्वस्थ दुरुस्त होते हुए टेनिस छोड़ने का है भी नहीं। आपको याद हो तो भी बताना चाहता हूँ कि मई तिरानवे में मोनिका सेलेस हेमबर्ग में एक टूर्नामेंट में खेल रही थीं। तब वे सिर्फ नम्बर वन महिला खिलाड़ी ही नहीं थीं, विंबलडन को छोड़कर तीनों ग्रेंड स्लेम जीत चुकी थीं। न सिर्फ टॉप पर थीं बल्कि महिला टेनिस की ताजदार साम्राज्ञी थीं।

उनने लगातार तीन साल, नब्बे, इकानवे और बानवे में फ्रेंच ओपन जीता था। लगातार तीन साल–इकानवे, बानवे और तिरानवे में आस्ट्रेलियन ओपन जीता था और लगातार दो साल–इकानवे और बानवे में अमेरिकी ओपन पर वर्चस्व स्थापित किया था। एक साल वे फ्रेंच ओपन जीतने के बाद विंबन्लडन से गोची मार गई थीं और उनके बारे में यूरोप की टेबलॉइड प्रेस में क्या-क्या नहीं छिपा था। दूसरे साल वे फाइनल में बरसात और स्टेफी ग्राफ से हारी थीं। तिरानवे में जनवरी में होने वाले ग्रेंड स्लेम-आस्ट्रेलियन ओपन को जीतने के बाद फ्रेंच ओपन, विंबलडन और अमेरिकी ओपन को जीतने की तैयारी में थीं।

तभी यह अनहोनी और बेहद शर्मनाक दुर्घटना हुई। हेमबर्ग के इस टूर्नामेंट में वे मलीवा से पहला सेट जीतकर दूसरे में चार-तीन से आगे थीं और आठवाँ गेम जीतने की तैयारी में अम्पायर के पास कुर्सी पर बैठीं पल भर के लिए सुस्ता रही थीं। तभी बेकारी में चल रहे एक लेथ-मजदूर ने उन्हें पीछे से लपक कर छुरा मारा। उसी क्षण वे टॉवल लेने के लिए नीचे झुकी थीं, इसलिए छुरा उनके दाहिने कन्धे में सिर्फ डेढ़ सेंटीमीटर घुस पाया। खून में लथपथ वे उस टेनिस कोर्ट पर गिर पड़ीं जिस पर उनका राज चल रहा था।

यह जर्मन लेथ मजदूर बेकारी के कारण हताश और परेशान नहीं था। वह स्टेफी ग्राफ का फैन, प्रशंसक था और मोनिका सेलेस को इस निश्चय के साथ छुरा मारने आया था कि घायल होने और खेल से बाहर होने के बाद वे नम्बर एक नहीं रहेंगी और यह शिखर फिर स्टेफी ग्राफ को मिल जाएगा। शिखर से स्टेफी को मोनिका ने ही अपदस्थ किया था और उनके खेलते रहने से तो स्टेफी के लिए फिर मौका नहीं बनता था। एक जर्मन लड़की को फिर शिखर पर देखने को लालायित एक सिरफिरे जर्मन चाहने वाले ने एक शानदार खिलाड़ी को छुरा मार दिया था।

घायल होने के बाद मोनिका वहीं हफ्ते भर अस्पताल में रहीं और डेढ़ सेंटीमीटर का उनका घाव जर्मनी में ही भर गया। लेकिन उन्नीस बरस की और हँसती-खेलती और टेनिस की गेंद की तरह ही टप्पा खातीं मोनिका सेलेस के मन पर हुआ घाव या खौफ कहीं अधिक गहरा था। शरीर के घाव की तरह वह इतनी आसानी से नहीं भर सकता था। हेमबर्ग की उस निश्चिन्त दुपहरी में हुआ वह हादसा सेलेस की

CC-0. In Public Domain: Gurukul Kangri Collection, Haridwar

तमाम निश्चिन्तता, सहज आत्मविश्वास और जीवट को जैसे बुरी तरह लथोड़कर छोड़ गया था। उन्नीस बरस की मोनिका सेलेस की मासूमियत जैसे छुरे के एक वार से छिन्न-भिन्न और ध्वस्त हो गई थी।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहले कहा गया कि वे मई-जून में होने वाला फ्रेंच ओपन तो नहीं खेल पाएँगी लेकिन विंबलडन नहीं खेलेंगी। फिर न वे विंबलडन खेलीं न साल का आख़िरी ग्रेंड स्लेम अमेरिकी ओपन। उन्हें कई मनोवैज्ञानिक मदद कर रहे थे कि किसी तरह वे हेमबर्ग की उस दुपहरी में हुए अँधेरे को चीर कर वापस उजाले में लौट आएँ। निरभ्र आकाश के नीचे झकाझक धूप में निश्चिन्त होकर खेल सकें। जितना समय लग रहा था उससे दिनोंदिन साफ हो रहा था कि यह कितना मुश्किल होने वाला है। उन अँधेरे खौफ भरे दिनों में अपने मन से ही संघर्ष में लगीं मोनिका सेलेस को जीवन और टेनिस में कोई लौटाकर ला सकता था तो उनके पिता और कोच करोली।

सवाल सिर्फ स्वस्थ होकर टेनिस खेलने में लगने का नहीं था। उस सहज आत्मविश्वास के लौटने का था जिसके बिना कोई भी एक गेंद पर अपना सर्वस्व लगाकर किसी काँटा जोड़ मुकाबले में खेल नहीं सकता। यह सुरक्षा और यह आत्मविश्वास मोनिका को कोई डॉक्टर, कोई मनोवैज्ञानिक, कोई ओझा नहीं दिलवा सकता था। मोनिका को यह सुरक्षा और विश्वास उनके पिता से ही मिल सकता था। वे सिर्फ उनके पिता, सिर्फ उनके कोच नहीं थे। जीवन और टेनिस दोनों ही मोनिका को करोली ने दिया था।

उनकी बेटी पेशेवर टेनिस खेल सके इसलिए करोली बिखरते-टूटते यूगोस्लाविया को छोड़कर अमेरिका आ गए थे। वे चित्रकार हैं और कार्टून बनाकर परिवार चलाते हैं। कार्टून अपनी भाषा में अपने देश और अपने लोगों के लिए ही बनते हैं क्योंकि व्यंग्य और मखौल किसी मैकेनिकल पेशे की तरह नहीं किए जा सकते। उनकी आर्थिक हालत भी खस्ता रही होगी।

अपन ने तो नहीं पढ़ा, न सुना। लेकिन मुनमुन कहता है कि उसके एक दोस्त ने एक टीवी इंटरव्यू देखा जिसमें मोनिका सेलेस ने कहा कि अगर फलाँ टूर्नामेंट में ख्रिस एवर्ट से वे मैच नहीं जीततीं तो न तो उनके परिवार के अमेरिका आने और बसने के पैसे चुकते न खाने-पीने को बचता। ऐसा सब कुछ दाँव पर था और मोनिका वयस्क भी नहीं हुई थीं और एक टेनिस साम्राज्ञी से खेल रही थीं। इस तरह की पीछे न हटने की परिस्थितियों में संघर्ष करके जीतना मोनिका को घुट्टी में मिला है और यह घुट्टी उसे माँ ने नहीं पिता ने पिलाई है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

ये पिता ही मोनिका को अपने मन के घाव से निकालकर टेनिस की गला काटू होड़, प्रतिद्वन्द्विता, ईर्ष्या और चकाचौंध में खेलते और फिर से अपने रैकेट को शिखर पर झंडे की तरह गाड़ देने के लिए तैयार कर सकते थे। दो साल बाप-बेटी ने मिलकर अँधेरे की परत काटी। मोनिका में अगर संघर्ष करने, आखिरी दम तक हार न मानने और बुरी से बुरी हालत से भी वापस लौट आने की चारित्रिक शक्ति नहीं होती तो सत्रह बरस की उमर में वह फ्रेंच ओपन नहीं जीत पातीं। और उसके बाद सात और ग्रेंड स्लेम तो जीत ही नहीं सकती थीं।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्योंकि कोई ग्रेंड स्लेम कोई खिलाड़ी मात्र अपने प्रतिभावान खेल से नहीं जीतता। जीतने के लिए सबसे अनिवार्य तत्त्व होता है—चारित्रिक शक्ति का। जब आप एक काँटेदार मुकाबले में अकेले अपने प्रतिद्वन्द्वी से जूझ रहे होते हैं तो खेल में हुई गलती को तो सुधार सकते हैं लेकिन चारित्रिक शक्ति की कमी या टूट को खेलते हुए ठीक नहीं कर सकते। यह शक्ति आपकी बनावट में होती है। जिसमें यह शक्ति होती है वही शिखर पर पहुँचता है। वही नम्बर वन हो सकता है और वही नम्बर वन होने के बाद शिखर पर टिका रह सकता है।

मोनिका सेलेस की चारित्रिक शक्ति का लोहा सभी मानते रहे हैं। फिर भी दुनिया भर के मन में शंका थी कि हेमबर्ग की उस उजली दुपहर में हुए अँधेरे और कन्धे और मन पर हुए घाव से मोनिका उभर पाएँगी या नहीं। टेनिस में तो छुरे से घायल होकर कोई लौटा नहीं है। क्रिकेट में भी जिसके सिर पर बंपर लग गई हो वह जमकर नहीं खेल पाया। बॉक्सिंग में ऐसे घायल हुए वज्र पुरुष फिर कभी विश्व चैम्पियन नहीं हुए। मोनिका तो उन्नीस बरस की सीधी-सादी मासूम लड़की थी।

लेकिन अँधेरी सुरंग से निकलकर इस मोनिका सेलेस ने फिर एक ग्रेंड स्लेम जीत लिया। भले ही उस प्रतियोगिता में उसकी प्रतिद्वन्द्वी और सहशिखरवासिनी—यानी साझा नम्बर एक खिलाड़ी स्टेफी ग्राफ ने खेली हो। सेमीफाइनल में चन्दा रुबिन मोनिका को हराने से दो पाइंट दूर थी। सिर्फ दो पाइंट। लौटने के बाद यह मोनिका की सबसे कड़ी अग्नि-परीक्षा थी। मोनिका ने न सिर्फ वे दो पाइंट जीते बल्कि बाकी के चारों गेम जीतकर फाइनल में पहुँचीं।

ऐसी मोनिका सेलेस के पिता—कोच बेटी की शिखर विजय पर रोना रोक न सकें तो बताइए वे रोतले हैं या गर्वीले और बहादुर पिता? अपना तो गला भरा है और आँखें गीली हैं इसलिए अपन न्याय क्या करें?

(28.1.96)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो प्रतिभा को शिखर दे

विजय अमृतराज और ब्रायन लेंगली ने जब गुड बाई कर दिया और टीवी के परदे पर अड़गम-बड़गम आने लगा तो राहत उदासी में घड़ी देखी। छह बजकर दस मिनट हो गए थे। जी हाँ, सबेरे के। रात बारह बजे के आसपास स्टेफी ग्राफ और मोनिका सेलेस के बीच लेडीज फाइनल शुरू हुआ था, पीट सम्प्रास जब माइकल चांग को हराकर दाहिने हाथ में यूएस ओपन का कप लिये स्टेडियम में जीत का चक्कर लगाने निकले तो छह बजे होंगे। यानी रात भर कोई छह घंटे टेनिस देखा।

जिसके दिल को ठीक से खून पहुँचाने के लिए तीन नलियाँ लगाई गई हों ऐसे आदमी को रात भर इस तरह नहीं जागना चाहिए। जानता हूँ। लेकिन साल के आखिरी ग्रैंड स्लेम के दोनों फाइनल भी आप नहीं देख पाएँ तो जीने का क्या मजा। दो साल पहले ऑपरेशन करने के बाद डॉक्टरों ने कहा था कि हमने वह किया ताकि आपकी क्वालिटी ऑफ लाइफ बेहतर हो सके। इस जुमले का अनुवाद होगा कि जीवन की गुणवत्ता बढ़ जाए।

यह कोरा अनुवाद है और पश्चिम के नए मुहावरे का ज्यादा या सही-सही मतलब नहीं समझाता। जहाँ लोगों की बुनियादी जरूरतें मजे में पूरी होती हैं और उनके लिए आदमी को जद्दोजहद नहीं करनी पड़ती वहाँ अब जोर दिया जा रहा है कि कैसे जीवन को बुनियादी स्तर से उठाकर भरापूरा और सुख-सन्तोष से समृद्ध किया जा सके। यह मुहावरा इन्हीं कोशिशों में से निकलकर आया है। इसमें दो मूल अवधारणाएँ निहित हैं।

पहली यह कि रोटी, कपड़ा और मकान की गारंटी हो जाए, ठीक-ठाक आमदनी होने लगे तो उसके बाद आदमी की जिन्दगी को और बेहतर बनाया जा सकता है। उसके पास अपने शौक-शगल पूरे होने का वक्त और सुविधाएँ हों और वह महज जिन्दा रहने से ऊपर उठकर उन चीजों का मजा ले सके जो दाल-भात में घी की तरह हों। और दूसरी यह कि जीवन की क्वालिटी तभी बेहतर हो सकती है जब आदमी की बुनियादी और शारीरिक आवश्यकताएँ बिना संघर्ष के पूरी हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

सकती हों और उसके पास काफी वक्त और पैसा हो कि वह मन में जो आए सहज ही कर सके।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने जैसे देश में करोड़ों लोग अब भी दो जून रोटी नहीं पा सकते, उनके बदन पर ठीक-ठाक कपड़े और सिर पर पक्की छत नहीं होती। वे आठ घंटे से ज्यादा काम करने को तैयार हैं लेकिन पूरा काम नहीं मिलता। जो मिलता है उससे भुखमरी को ही जैसे-तैसे दूर रखा जा सकता है। करोड़ों लोग ऐसे हैं जिन्हें काम तो किसी तरह मिल जाता है और रोटी, कपड़ा, मकान का भी जुगाड़ हो जाता है लेकिन नून तेल लकड़ी जुटाने में ही जिनकी जिन्दगी पूरी हो जाती है। वे सिर उठाकर आसमान को नहीं देख पाते कि उसमें उठकर कहाँ तक और कैसे जाया जा सकता है। कुछ करोड़ होंगे जिनके पास क्वालिटी ऑफ लाइफ सुधारने के साधन हों और अब शायद एक-दो करोड़ ऐसे भी हो गए हैं जिन्हें कोई काम करने की जरूरत नहीं। वे लगातार क्वालिटी ठीक करने में ही लगे रहते हैं।

ऐसे देश में रहते हुए और रात-भर अमेरिका में खेले जा रहे टेनिस मैचों का सीधा प्रसारण टीवी पर देखने के बाद मन में सिर्फ यही बात आए कि इस तरह जागकर अच्छा नहीं किया, कुल सेहत पर ठीक असर नहीं होगा और ऐसा साल में एक-दो बार से ज्यादा नहीं करना चाहिए तो यह अपने को उन निकम्मे लोगों में शामिल करना ही होगा जिन्हें क्वालिटी ऑफ लाइफ ठीक करने की ही पड़ी रहती है। यह सचमुच फ्रांस की उस महारानी की तरह ही कहना है कि अच्छा, तुम्हें रोटी नहीं मिलती तो केक क्यों नहीं खाते। इस देश में जीना रोटी है और क्वालिटी आफ लाइफ केक। मुझे तब भी लगा था और अब भी लगता है कि डॉक्टर अगर कहते कि तुम्हें बचाने के लिए हमें ऑपरेशन करना पड़ा तो मन पर यह अपराध-बोध नहीं होता। क्या खाक क्वालिटी ऑफ लाइफ सुधरी। जितनी वंचनाओं और वर्जनाओं में जीना पड़ता है और जितने पैसों की गोलियाँ रोज खानी पड़ती हैं उससे तो दिल पर बोझ और बढ़ा ही है। शामलाल ने कुछ साल पहले लिखा था कि जिस आदमी को इस देश में पाँच सौ रुपया महीना मिलता हो उसे अपने को विशेषाधिकार प्राप्त व्यक्ति समझना चाहिए। महँगाई ने इन पाँच सौ को अब हजारेक के आसपास पहुँचा दिया है। हिसाब लगाऊँ तो मेरी दवाएँ भी शायद उतने पैसों में नहीं आएँगी जितने एक आम आदमी को महीने-भर मेहनत करने पर मिलते होंगे।

यह काँटा दिल में लगातार चुभता रहे तो भाई साहब आप भले ही दिन-भर क्रिकेट और रात-भर टेनिस देखो और उन पर लिखकर अपना और पाठकों का मन बहलाओ, लाइफ की क्वालिटी तो नहीं सुधरेगी। भूखे, नंगे और बेघर लोगों के बीच रहते हुए यह सब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना अपने को अपराध में जिलाना है। अपराध का यह बोझ ही शायद अपने को जमीन के नजदीक दबाए रखता है और कहीं यह भी लगता है कि यह बोझ ढोते हुए अपन उससे तदाकार हो गए हैं जो जीवन का बोझ ढो रहा है। वह मजबूर है लेकिन अपन भी कोई शौक से अपने अपराध का बोझ नहीं ढो रहे हैं। सच, विश्वास कीजिए।

भटका नहीं हूँ। रात-भर टेनिस देखकर अपने जीवन की क्वालिटी नहीं सुधारी है। शरीर को तो थोड़ा नुकसान ही पहुँचाया है। लेकिन जो आदमी दिन-भर मजदूरी करके रात-भर नौटंकी या रामलीला या सिनेमा देखता है वह भी कोई जीवन की क्वालिटी नहीं सुधार रहा है। मन बहलाना उसकी जरूरत है, कल जो उसे फिर दिन-भर बोझ ढोना है उसके दबाव से राहत है और जो अपने को राहत देने के लिए करना पड़े वह जीने के लिए जरूरी है। बुनियादी जरूरत। क्वालिटी ऑफ लाइफ सुधारने का मतलब है कि आप जीने की बुनियादी जरूरतों से ऊपर उठ गए और अब आपकी तलाश आकाश के लिए है।

आकाश अवकाश से नहीं मिलता। आप घंटों बैठे नीले आकाश को देखते रहिए। अगर आँखों में कोई सपना नहीं होगा तो वहाँ कुछ नहीं दिखेगा। सपने के लिए जरूरी नहीं कि आपका पेट खूब भरा हो, शरीर पर शानदार कपड़े हों और छत पर बेल बूटे कढ़े हों। सपनों का मतलब जीवन में कुछ सार्थक करने की इच्छा से है। ऐसा कुछ करना कि जिसे करते हुए लगे कि आप ठीक और अच्छे से जी रहे हैं। ऐसे जीने का बुनियादी जरूरतों और उनके पूरे होने से कुछ अलग मतलब है।

जैसे मोनिका सेलेस ने कहीं कहा है कि जब वह टेनिस की पुरानी महारानी ख्रिस एवर्ट से कोई मैच खेल रही थी तो उसमें जीतने के साथ उसके माता-पिता और खुद उसका अमेरिका में रहना दाँव पर था। आप जानते हैं कि सेलेस का परिवार यूगोस्लाविया छोड़कर अमेरिका आया। वहाँ रहना मुश्किल था क्योंकि देश टूट रहा था और लोग लड़ रहे थे। अमेरिका में रहना मुश्किल था क्योंकि जब तक इतना पैसा न मिल जाए कि घर-बार बसाया जा सके और टेनिस खेला जा सके तब तक काम कैसे चले। मोनिका तब ठीक से लड़की भी नहीं हुई थी। अब भी क्या इक्कीस-बाईस की होगी। तो ख्रिस से जीतना उसके लिए तब जीने का जुगाड़ करना था। जीत गई तो आज करोड़ों में खेलती है और अच्छा खेलती है। तभी तो हम उसका नाम जानते हैं।

मोनिका को ही नहीं, चांग और सम्प्रास को भी खेलते देखकर मैं सिर्फ टेनिस के बारे में नहीं सोच रहा था। आप जानते हैं कि सम्प्रास ग्रीक माँ-बाप का बेटा है। अब अमेरिकी है क्योंकि माँ-बाप ग्रीस से रोजी की तलाश में अमेरिका आ गए। चांग भी, जैसा कि उसके नाम से ही साफ है चीनी है। उसके माँ-बाप भी चीन से आकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

अमेरिका में बस गए। इसलिए नहीं कि चीन में उनका मन नहीं लगता था। वे भी
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
रोजी-रोटी या बेहतर जीवन की तलाश में ही अपना देश और अपने लोगों को छोड़कर आए होंगे।

फाइनल में पहुँचे चांग और सम्प्रास के अलावा एक और टॉप अमेरिकी खिलाड़ी हैं आन्द्रे अगासी। अगासी सेमी फाइनल में चांग से हार गए थे। सीधे सेटों में। अगासी के पिता ओलम्पिक में किसी अरब देश की तरफ से मुक्केबाजी में खेल चुके हैं। वे भी अरब देश से आनकर अमेरिका में आ बस गए हैं। आंद्रे अगासी चांग और सम्प्रास की तरह सीधे-सपाट टेनिस खिलाड़ी नहीं हैं। जवान लड़के-लड़कियों के हीरो हैं। पहले घोड़े की पूँछ की तरह लम्बे बाल रखते और कानों में कुंडल पहनते थे। कुंडल तो अब भी पहनते हैं लेकिन गंजे हो रहे थे इसलिए आजकल बामन की तरह बिलकुल सफाचट करवाते हैं। छोटी-सी गोटी दाढ़ी रख लेते हैं। वे भी एक पीढ़ी पुराने अमेरिकी हैं। उनकी लोकप्रियता पॉप सितारे जैसी है और उनके पास अपना जेट विमान है जिससे आते-जाते हैं।

सम्प्रास, अगासी, चांग और सेलेस अमेरिका में बाहर से एक पीढ़ी पहले आए और अपने खेल में टॉप पर पहुँच गए। उनके माँ-बाप अपने-अपने देशों में रह जाते तो ये शायद टेनिस खेलते ही नहीं और खेलते भी तो टॉप पर नहीं पहुँचते। अब तक किसी ग्रीक, चीनी, अरबी और यूगोस्लावी ने ग्रैंड स्लेम कहाँ जीता है। सम्प्रास और अमेरिकी, तीन विंबलडन और एक आस्ट्रेलियाई ओपन जीत कर सक्रिय खिलाड़ियों में सबसे आगे हैं, अगासी एक विंबलडन, एक अमेरिकी और एक आस्ट्रेलियाई ओपन जीत चुके हैं। चांग ने भले ही एक फ्रेंच ओपन ही अब तक जीता हो पर वे दुनिया के नम्बर दो खिलाड़ी और सबसे जुझारू प्रतिद्वन्द्वी माने जाते हैं। मोनिका सेलेस भी विंबलडन छोड़कर सब जीत चुकी हैं।

इन्हें खेलते और जीतते देखता हूँ तो हर बार अपने से कहे बिना नहीं रहता कि जो भी हो अमेरिका ने समाज और जीवन के लगभग हर क्षेत्र में ऐसी व्यवस्था तो खड़ी की है जिसमें कोई कहीं से भी आया हो और कैसा ही विपन्न है अगर उसमें प्रतिभा हो तो वह शिखर पर पहुँच सकता है। अगर उसमें दमखम हो तो शिखर पर टिका रह सकता है। वह यश और धन कमा सकता है और अमेरिका उस पर गर्व कर सकता है। ऐसी व्यवस्था खड़ी करना ही कोई महत्त्वपूर्ण नहीं है जिसमें बिना किसी दूसरे विचार और कसौटी के सचमुच प्रतिभाशाली व्यक्ति शिखर पर पहुँच सके और अगर उसमें दम हो तो वहीं बना रह सके। जो भी देश ऐसा कर सके उसकी तारीफ की जानी चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

जानता हूँ कि अमेरिका की तारीफ करनेवालों की कोई कमी नहीं है और न वह मेरे प्रमाण पत्र का मोहताज है। फिर उसकी तारीफ में यह लिखकर मैं खुश हूँ क्योंकि अपन उस नेहरू भाई पीढ़ी के लोग हैं जो कम्युनिस्ट हुए बिना भी अमेरिका से सशंकित, सावधान और उसे शैतान की सन्तान मानने को ठीक समझते हैं। मुझे लगभग सभी अमेरिकी छिछले, संस्कारहीन, अतीतहीन और नवधनाढ्य लगते हैं जो दुनिया को अपना धन-बल और सैन्य बल दिखाते फिरते हैं। अपने को ख्वामख्वाह तीसमार खाँ मानते हैं और उन लोगों को भी उपदेश देते फिरते हैं जिनका सामूहिक अनुभव और विद्वत्ता, ज्ञान और संवेदनशीलता उनसे कहीं अधिक और गहरी है।

जिन्हें अपना अतीत खरीदना और बनाना पड़े और जिनने जुम्मा-जुम्मा चार दिन नहीं देखे हैं। उन्हें संस्कारी, पुराने और ज्ञानवृद्ध लोगों से विनम्रता से पेश आना चाहिए। जिनने नई और समृद्ध दुनिया बनाई है उन्हें उन लोगों का सम्मान करना सीखना चाहिए जो ऐसी कई दुनिया बनाकर उन्हें मिटते हुए देख चुके हैं। जिनने जैसे-तैसे दौलत पा ली हो उन्हें गरीबी में आत्मसम्मान और गौरव से जीने वाले आदमी की गरीबी की इज्जत करनी चाहिए। जो सफलता, धन और तत्काल को ही प्राप्त करने लायक नहीं मानते और जो सार्थकता को जीवन का सबसे बड़ा मूल्य मानते हों वे हिकारत करने और मखौल उड़ाने लायक लोग नहीं हैं। वे सफलता और धन की क्षणभंगुरता को ऊपर-नीचे, अन्दर-बाहर से समझे हुए लोग हैं। वे जो दौड़ में नहीं हैं वे भी लक्ष्य से आगे पहुँचे हुए लोग हो सकते हैं इसकी समझ पाए बिना आप कहाँ पहुँचेंगे ?

दुनिया के ज्यादातर पुराने और प्राचीन संस्कृति वाले लोगों और उनके देशों के प्रति अमेरिकियों के रवैये में जो उद्दंडता और रोडरोलरपन होता है वह मुझे उन्हें हेय दृष्टि से देखने पर बाध्य करता है। कूटनीति में तो अमेरिका ऐसे उदाहरण लगभग रोज देता है। वह जो अपने को दुनिया का नेता बताने और साबित करने में लगा रहता है उससे मुझे सख्त एतराज है। वह जो दादागिरी करता है उसे मैं बलवान नहीं मानता और जो बक-बक करता रहता है वह ज्ञानी भले ही हो, ऋषि नहीं हो सकता।

अमेरिका के बारे में अपने इतने ऊँचे विचार हैं। फिर भी जो देश एक ग्रीक सम्प्रास, एक चीनी चांग और एक अरबी अगासी और एक यूगोस्लाव सेलेस को शिखर पर पहुँचने दे उसकी व्यवस्था को अपना नमन। अपन इस देश में प्रतिभा के साथ कैसा बरताव करते हैं? क्या बताऊँ? आप जानते हैं।

(15.9.96)

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्रुव तारा हुआ एक आवारा

चौथा सेट भी टाई ब्रेक की तरफ बढ़ रहा था कि टेलीफोन की घंटी बजी। बजती रहती अगर मैं जल्दी से चोंगा उठा नहीं लेता। बजती रहती तो खेल में खलल डालती इसलिए दो-तीन घंटी के बाद ही उठा लिया। प्रसन्न और खिलखिलाती आवाज में लालू ने कहा—पापा, मैच देख रहे हो ना! आँखें डबडबाई और गला रुँधने लगा। हाँ बेटा, कहकर फोन रख दिया। लालू आप जानते हैं हमारी बेटी है। स्टार एनडीटीवी में एक्जिक्यूटिव प्रोड्यूसर है। शादी को पाँच साल हो गए। तीन बरस का बेटा है—राघव। पति है जो आजतक में तकनीशियन है। समाचार अपार्टमेंट में उसका घर है। लेकिन अब तो लगभग पौने दस बज रहे थे। दफ्तर जाने के बजाय वह सम्प्रास और अगासी का यूएस ओपन में चल रहा क्वार्टर फाइनल देख रही थी। मेरी ही तरह और इस घर में अपने बचपन की तरह।

जो भी थोड़ी-बहुत टेनिस समझता है जानता है कि जो वह देख रहा है—महान, सार्वकालिक, शास्त्रीय मैच देख रहा है। सम्प्रास और अगासी—दोनों अपना सर्वश्रेष्ठ टेनिस खेलते हुए और एक-दूसरे को एक इंच भी जगह और एक पल भी समय देने से इनकार करते हुए। बीसवीं सदी के आखिरी दशक के दो महान खिलाड़ी। एक—सम्प्रास शायद पूरी बीसवीं सदी बल्कि टेनिस का ही सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ी। दूसरा—उन्हीं का सबसे निकट और भीषण और प्रचंड प्रतिद्वन्द्वी अगासी। पुराण में ऐसा मैच हो रहा होता तो देवता स्वर्ग से फूल बरसाते और गन्धर्व दुन्दुभी बजाते, किन्नर नाचते। लेकिन न्यूयार्क के उस फ्लशिंग मीडोज के आर्थर ऐश स्टेडियम में आधी रात बीत जाने पर भी लोग ठसाठस भरे हुए और दो अमेरिकी योद्धाओं के मैच के प्रत्येक पॉइंट पर मदहोशी में ताली पीटते हुए।

दोनों एक पीढ़ी पहले ही बाहर से आए हुए माँ-बाप के बेटे—सम्प्रास ग्रीक परिवार के, अगासी—अरब परिवार के। लेकिन दोनों के लिए अमेरिकी दर्शकों में अपार अपनापन। अगासी नई पीढ़ी और मीडिया को अपने पॉप व्यक्तित्व से ज्यादा लुभाने और अपील करने वाले और सम्प्रास मीडिया और बाजार जिसे आसानी से बेच पाए उससे ठीक विपरीत महान खिलाड़ी लेकिन ऐंटी हीरो—नायक का प्रतिलोम।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमेरिकी मीडिया खेल उद्योग और बाजार ने बहुत कोशिश की कि इनमें भीषण प्रतिद्वन्द्विता दिखाई जाए और फिर उसे गरमागरम जलेबी की तरह बेचा जाए पर सम्प्रास बावजूद महानतम खिलाड़ी बनते हुए प्रचण्ड प्रतिद्वन्द्वी के रोल में फिट ही न हों। महानता बिकती नहीं प्रतिद्वन्द्विता बिकती है इसलिए अमेरिकी मीडिया अगासी पर आ टिका और सम्प्रास महान टेनिस खेलने के लिए छूट गए। इसलिए अगासी ज्यादा तालियाँ लूट लेते हैं।

मैच की कमेंट्री करने वाले भी अगासी की तरफ हैं। वे हालाँकि नम्बर एक नहीं आँके गए हैं लेकिन आम तौर पर माना जा रहा है कि वे यूएस ओपन जीतेंगे। सम्प्रास हालाँकि अगासी से एक साल छोटे और बेहतर एथलीट दिखते हैं। लेकिन गए साल विंबलडन में तेरहवाँ ग्रेंड स्लैम जीतकर सार्वकालिक रिकार्डधारी एमरसन से भी आगे जाने के बाद से वे कुछ भी जीत नहीं पाए हैं। उनका खेल वही है लेकिन जीतने की वह लपलपाती आकांक्षा जैसे शिखर पर चढ़कर तृप्त हो गई है। उनके सामने अब कोई शिखर नहीं है। वही उच्चतम शिखर है जिन तक पहुँचने के लिए दूसरे और नए खिलाड़ी रैकेट लहरा रहे हैं। इसलिए सम्भावना तो है कि वे पाँचवाँ अमेरिकी ओपन जीत जाएँ। एक और ग्रेंड स्लैम की सम्भावना तो उनमें है ही। फिर भी उनकी तुलना में अगासी ज्यादा सम्भावित विजेता हैं। सम्प्रास को नम्बर दस और अगासी को इसीलिए नम्बर दो दिया गया है। लेकिन जीत सम्प्रास रहे हैं। और अब कमेंट्री करने वाले उनकी तरफ झुक रहे हैं।

लालू जानती थी कि मैं सम्प्रास को जितवाने बैठा होऊँगा। शादी करके उसने भले ही अपना घर बसा लिया हो लेकिन जब भी वह कोई काँटे का शानदार मुकाबला देखेगी उसे इस घर में अपना बचपन और सारे घर का टेनिस पागलपन याद आएगा ही। सम्प्रास और अगासी को अपने घर के टीवी पर देखते हुए उसे पापा को फोन करना जरूरी लगा। अस्सी के दशक की शुरुआत में उसी के कारण हमारे घर टीवी आया। वह योन बोर्ग, जॉन मेकिनरो, जिमी कॉनर्स और इवान लेंडल का जमाना था। बोर्ग पाँच विंबलडन लगातार जीतकर इतिहास पुरुष हो चुके थे, मेकिनरो अपने विस्फोटक स्वभाव और रचनाकारी टेनिस से सबसे आकर्षक खिलाड़ी थे, कॉनर्स की कहावती संघर्षशीलता स्थापित थी। इवान लेंडल चेकोस्लोवाकिया से निकलकर अमेरिका आए मिट्टी के कोर्ट के शास्त्रीय खिलाड़ी मान लिए गए थे। इन्हें चुनौती दे रहे थे स्वीडन के विलांडर, एडबर्ग और आस्ट्रेलिया के कैश और इनसब को चमका देते हुए आए अनजाने बेकर जिनने दनादन करके सत्रह बरस की उमर में ही विंबलडन जीत लिया।

तीनों बच्चे जानते थे कि पुरानी पीढ़ी के खिलाड़ियों को नए लड़के-लड़की पीट-पाट कर चले जाएँ तो मुझे अच्छा नहीं लगता। हालाँकि क्रिस एवर्ट और मार्टिना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवरातिलोवा को पूरा घर ही पसन्द करता था। सबसे ट्रेजिक फिगर थे इवान लेंडल। उनमें बोर्ग, मेकिनरो और कॉनर्स की चमकीली तड़क-भड़क नहीं थी। वे गिरते-पड़ते जूझते किसी तरह जीत जाते थे और हारते भी थे। वे मिट्टी के कोर्ट पर फ्रेंच, नकली हार्ड कोर्ट पर अमेरिकी और आस्ट्रेलियन ओपन जीत चुके थे लेकिन विंबलडन की घास पर आते ही उनके पाँव फिसलने लगते थे। जब दूसरे ओपन वे जीत रहे थे तो विंबलडन में हारने की फिकर नहीं करते थे। एक बार कहा कि घास तो गैयाओं के लिए होती है। लेकिन जब उनसे दूसरे ओपन जीतना भी मुश्किल होने लगा तो उन्हें समझ आया कि सबसे गौरवशाली और प्रतिष्ठित तो विंबलडन ही है। तब वे कहने लगे कि मेरे दूसरे सब खिताब ले लो बदले में एक विंबलडन दे दो। लेकिन गलाकाटू होड़ वाले टेनिस संसार में अदला-बदली कहाँ होती है। दो बार पूरा जोर लगाकर लेंडल फाइनल में पहुँचे। एक बार अनजाने केविन करन ने उन्हें सर्विस से ही उड़ा दिया और एक बार आस्ट्रेलिया के पैट कैश ने। पैट कैश तो फिर भी अच्छे खिलाड़ी थे पर केविन करन ने तो उस एक विंबलडन के अलावा कुछ जीता ही नहीं था। और सर्विस दन्न से मारते थे लेकिन बाकी उनके खेल में कुछ नहीं था जो लेंडल को विंबलडन जीतने से इतने त्रासदायी ढंग से वंचित कर सके।

केविन करन से पराज़ित लेंडल से ज्यादा दुखदायी शायद ही और कोई खिलाड़ी रहा होगा। लेकिन हमारे तीनों बच्चे करन के जीतने से ही खुश नहीं थे लेंडल के हारने से भी प्रसन्न थे। मुझसे वे काफी रुपया जीत गए थे और रात को उससे जश्न मनाने निकल रहे थे। ऐसा तब अक्सर होता था। लेंडल जीतते लगते थे तो बच्चे मुझे चिढ़ा कर पैसे लगवा लेते थे। पैसा लेकर ट्रीट मना कर लौटते थे तो लेंडल हार चुके होते थे और मैं दुखी और उदास बैठा होता था और वे कहते थे कोई बात नहीं पापा—अब आस्ट्रेलियन ओपन लेंडल ही जीतेगा वह तो अम्पायर ने उसका गलत फॉल्ट दे दिया। एक बार रात-भर हम सब लोग मेट्स विलांडर को यूएस ओपन में खेलते देखते रहे। उस सुबह भी बच्चों ने मुझसे पैसे लूट लिये। यह भी खेल था। मैं पुरानी या बाहर होती पीढ़ी के किसी खिलाड़ी को जितवाने लगूँगा और बच्चे नए आए किसी अनजान लेकिन दनादन करते खिलाड़ी के पीछे लग जाते। भावनाएँ और रुपए तो मेरे ही लगे होते लेकिन घर स्टेडियम कोर्ट हो जाता। हम अपने को दर्शकों में बैठा पाते और यह अहसास रहता ही नहीं कि ब्लेक एंड व्हाइट टीवी पर दूरदर्शन के सौजन्य से मैच देख रहे हैं। तड़के आने वाला आस्ट्रेलियन ओपन हो या रात भर आने वाला अमेरिकी ओपन मेरे साथ बच्चे देखते और माता नाराज होती कि सबके स्कूल छूटेंगे। ऐसा टेनिस में ही नहीं होता, क्रिकेट में भी होता और फुटबॉल के विश्व कप में भी। मैं समझाता कि बच्चे खेल देखेंगे तो बेहतर इंसान बनेंगे। स्कूल की फिकर क्यों करती हो। बेहतर बने या नहीं मालूम नहीं। लेकिन खेल का शौक उन्हें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसा लगा है कि सम्प्रास और अगासी अगर सार्वकालिक महान मैच खेल रहे हों तो लालू भी दफ्तर नहीं जाएगी। खेल का यह आनन्द आपको जीवन के कुछ सबसे मूल्यवान और स्मरणीय क्षण देता है। यह क्या कम नियामत है ?

लालू के फोन ने मुझे भावुक कर दिया था और फिर सम्प्रास चौथे सेट का टाई ब्रेक भी जीत गए थे। उस मैच में किसी की सर्विस नहीं टूटी। टाई ब्रेक में एक—यानी पहला सेट अगासी जीते थे बाकी के तीनों टाई ब्रेक में ही सम्प्रास जीते। सम्प्रास का अब कहीं भी जीतना मुझे भावुकता करता है कृतज्ञता के आँसू। अपना सौभाग्य है कि टेनिस के इस महानतम खिलाड़ी को ग्यारह साल पहले अपना पहला ग्रेंड स्लैम जीतते अपन ने देखा, गए साल सातवाँ विंबलडन और तेरहवाँ खिताब जीतकर रोते हुए और उसके साथ अपने को रोते हुए देखा। अब उन्हीं सम्प्रास को जीतने के लिए कुछ नहीं रह गया है लेकिन उनसे कुछ जीता भी नहीं जा रहा है। हारने के बाद अगासी ने उनसे कहा था—यह ओपन तुम्हें जीतना है। स्टेफी ग्राफ जो अब अगासी के बेटे को पेट में लिये मैच देख रही थी अगासी से ज्यादा निराश और काली पड़ती दिखी। आखिर महिला टेनिस के सबसे ज्यादा खिताब जीतने वाले स्टेफी होने वाले पति को हारते देखकर निराश कैसे न होती। सम्प्रास जरूर तेरह खिताबधारी हैं लेकिन अगासी अभी खेलने वालों में अकेले खिलाड़ी हैं जिनने चारों खिताब जीते हैं। रॉड लेवर ने चारों दो बार जीते और एमरसन ने एक बार। अगासी अब भी उतने थके हुए नहीं लगते जितने सम्प्रास दिखते हैं हालाँकि वे एक साल छोटे हैं। चौथे सेट में कई बार सम्प्रास बेस लाइन पर बूढ़े सिंह की तरह टहलते लगते थे जबकि अगासी सम्प्रास के एस के सामने भी पराजित नहीं दिखे।

अगासी के बाद सेमीफाइनल में सम्प्रास ने इक्कीस बरस के उस रूसी चीते-मरात साफिन को सीधे सेटों में हराया जिसने इसी अमेरिकी ओपन में गए साल फाइनल में उन्हें सिर्फ तिरासी मिनट में हरा दिया था। लेकिन वह मैच अपन देख नहीं पाए। किसी राजधानी की किसी बर्थ पर वह रात सोकर कटी थी। सम्प्रास फाइनल में पहुँच गए हैं और सामने वही आस्ट्रेलियन लेकिन ह्यूविट है जिसे गए साल यहीं उनने हराया था। लेकिन यह फाइनल देखना भी अपनी किस्मत में बदा नहीं था। वह रात भी एक रेलगाड़ी में ही कटी और घर पहुँचे तो फ्लशिंग मीडोज से कुछ आ नहीं रहा था। ठीक ही हुआ क्योंकि बीस बरस के ह्यूविट ने तीस बरस के सम्प्रास को सीधे सेटों में मार दिया था और लगातार दूसरी बार सम्प्रास अपने से दस साल छोटे नई पीढ़ी के खिलाड़ी से हार गए थे। स्टार स्पोर्ट्स ने जब वह पूरा मैच दोबारा दिखाया तो अपन ने देखा लेकिन न तो वह उत्तेजना थी न वह निराशा क्योंकि वह उम्मीद खत्म हो गई है कि यह पहले ही मालूम था। चाहता था कि सम्प्रास को उसी जगह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपना आखिरी खिताब जीतते देखूँ जहाँ उनने उन्नीस बरस के लड़के की तरह अपना पहला ग्रेंड स्लैम जीता था और फिर जैसे कहूँ कि अब खेलना छोड़ दो। बहुत हो गया। जानता हूँ कि अगर आपकी सारी उमर खेलते हुए बीती है तो आप रिटायर होने के बाद भी कहाँ छोड़ते हैं। नवरातिलोवा, कॉनर्स और मेकिनरो डबल्स खेलते रहे और अब बेकर भी डबल्स खेलने आ गए हैं। सम्प्रास को कोई कमी नहीं है। पिछले एक दशक में जितना यश, पैसा और स्थान उनने कमाया है सौ साल में किसी टेनिस खिलाड़ी ने नहीं कमाया। टेनिस इतिहास के सबसे बड़े खिलाड़ी होने के खिताब पर बस एक ही सवाल है। फ्रांस के रोलाँ गारो के मिट्टी के कोर्ट पर वे एक बार भी जीत नहीं पाए। मिट्टी के कोर्ट पर जीत न पाना उनके खेल को वह सम्पूर्णता नहीं देता जो सबसे बड़े और महान खिलाड़ी के खेल में होना चाहिए। सम्प्रास को खेलकर जीतना हो तो अब उन्हें सिर्फ फ्रेंच ओपन में खेलना चाहिए। दस साल छोटे खिलाड़ियों से उसी फ्लशिंग मीडोज में हारना उन्हें शोभा नहीं देता जहाँ वे ग्रेंड स्लैम जीते थे। आखिर जीतना तो यौवन को ही है अनुभव को कोई चाहे ज़ितना समर्थन दे।

रनर अप खिलाड़ी का खिताब लेते हुए सम्प्रास से कहा गया कि इस ओपन में आपने चार फाइनल खेले, तीन जीते और एक में हारे। आप महानतम खिलाड़ी और अमेरिका की जीती जागती प्रतिभा हैं। सम्प्रास ने राफ्टर, अगासी और साफिन तीनों को हराया था और इनमें से कोई भी फाइनल में उनके सामने हो सकता था अगर उन्हें दसवें नम्बर पर न रखा गया होता। फाइनल में ह्यूविट से हारने के बाद सम्प्रास ने कहा—'इस बच्चे के पाँव बहुत तेज हैं। काश! मेरे पाँवों में भी उसके जैसी फुर्ती होती। यह बड़ा चैम्पियन है और अगले दस साल आप इसे वैसे ही खेलते देखेंगे जैसे पिछले दस साल मुझे देखा।' यह शिखर पर आश्वस्त चैम्पियन की आवाज थी। मैं उम्मीद कर रहा था कि जीतने वाला ह्यूविट कहेगा कि आज मैं महानतम खिलाड़ी से जीता यह मेरा सौभाग्य है। लेकिन उसकी तो सम्पट ही नहीं बँध रही थी। वह कितनी दूर जाएगा? सम्प्रास ने जब अपना पहला खिताब इसी अमेरिकी ओपन में जीता था तो कहा था—मैं क्या हूँ ! कैलिफोर्निया का कोई उन्नीस बरस का आवारा! वह आवारा अब टेनिस का ध्रुव तारा है।

(16.9.2001)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खेल प्रसारण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उतरते खुमार का खालीपन

बता नहीं सकता कि खूब शराब पीकर रात-भर जश्न मनाने वालों की सुबह कैसी होती है। हाय कमबख्त, तू ने पी ही नहीं। लेकिन ऐसे लोगों की ऐसी सुबहों के बारे में जो भी पढ़ा है उसे महसूस करके बताऊँ तो कहूँगा कि वह रात को विश्व कप समाप्त होने के बाद की सुबह जैसी होती होगी। खाली, बेजान और खुटी हुई। शायद उदास। शायद रस निकाले गए गन्ने के सूखे फोतरे जैसी। शायद स्थिर और मटमैले पानी पर यों ही हिचकोले खाती हुई। न अब कहीं जाना है न कोई ज्वार या भाटा आना है। किनारे के उथले पानी पर बस यों ही पड़े रहना है।

ऐसा मुझे अठारह मार्च की सुबह दिल्ली में ही नहीं लगा। पच्चीस मार्च की सुबह मेलबर्न में अपनी होटल की खिड़की से मेलबर्न क्रिकेट ग्राउंड के बिजली के खम्भों को देखकर भी लगा था। चार साल पहले आट्रेलिया और न्यूजीलैंड में इन्हीं फरवरी और मार्च के महीनों में हुए पाँचवें विश्व कप को कवर करने में कहीं ज्यादा यात्राएँ, भागदौड़ और उत्तेजनाओं में से होकर गुजरना पड़ा था। उसकी तुलना में तो इस बार कुछ नहीं किया। दिल्ली में होते हुए भी कोटला मैदान जाने के बजाय घर की बैठक में ही टीवी पर मैच देखा।

वह तो बँगलूर में भारत ने पाकिस्तान को हरा दिया नहीं तो अपन कलकत्ता और मोहाली के सेमी फाइनल भी देखने नहीं जाते। और जब मोहाली से सब लाहौर की ओर कूच कर रहे थे और अपने को ले जाने वाले भी कई दोस्त तैयार थे तब अपन चुपचाप दिल्ली लौट आए। जब स्टार वाले फरुख इंजीनियर और सैयद किरमानी को हांगकांग में स्टूडियो में बैठा कर टिप्पणी करवा सकते हैं और दूरदर्शन वाले मैदान में सैकड़ों मील दूर बैठाकर आँखों देखा हाल सुनवा सकते हैं तो अपन घर में बैठे टीवी पर देखे मैच पर क्यों नहीं लिख सकते? लेकिन सवाल लिखने का नहीं है। ऐसा हो नहीं सकता कि लिखना न हो तो अपन मैच ही नहीं देखें। यह भी नहीं हो सकता कि शहर में मैच हो और अपन घर में बैठे टीवी पर देखें। टीवी पर लम्बाई-चौड़ाई का तो फिर भी कुछ आभास हो जाता है लेकिन गहराई का नहीं होता। टीवी वालों के पास कितने ही और कितने ही बड़े कैमरे हों—टीवी का चित्र आखिर असली की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

छाया है। और टीवी वाले भले ही क्लोजअप और रिप्ले दिखा सकते हों—मैदान पर मैच देखने का जो अनुभव और आनन्द है वह टीवी पर आ ही नहीं सकता।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर भी भारत, पाकिस्तान और श्रीलंका में खेले गए छठे विश्व कप के पैंतीस में से सिर्फ दो ही मैच मैदान पर देखे। देखने को एक दिन में दो हुए मैचों में से एक को छोड़कर सभी मैच देखने जा सकते थे। कहा और बुलाया भी गया था। फिर भी नहीं गया तो इसलिए नहीं कि क्रिकेट का बुखार अब उतना नहीं चढ़ता। इसलिए भी नहीं कि अब पहले जैसी भागदौड़ नहीं होती।

आखिर तेरह को कलकत्ता और चौदह मार्च को मोहाली में दोनों सेमीफाइनल देखे ही। अलावा यात्राओं के दोनों ही सेमी-फाइनल अलग-अलग कारणों से निचोड़ देने वाले थे। फिर भी सत्रह मार्च से लाहौर में फाइनल वाले दिन सवेरे से वैसी ही धुकधुकी, उत्तेजना और उम्मीदें थीं जैसी हताशा एक बड़े मैच के पहले होती है और फाइनल के आठ घंटों में से टीवी के सामने से शायद ही उठा होऊँगा।

नहीं, न लगाव में कोई कमी थी, न देखने के अवसरों में। और विश्व कप की समाप्ति पर जो खालीपन आया वह इसी का सबूत है कि मन उसमें कितनी बुरी तरह से लगा हुआ था। फिर भी उसके मैच देखता, घूमता और लिखता नहीं रहा तो एक तो इसलिए कि क्रिकेट के जिस खेल को बचपन से खेलता और देखता रहा हूँ वह अब मैदान पर खेलने-देखने वाले खेल से ज्यादा वीडियो गेम हो गया है।

फिर फटाफट क्रिकेट पर बाजार इतना हावी हो गया है कि खेल का जो खालिस और मासूम आनन्द आया करता था उसमें अब बार-बार और इतना ज्यादा बाजारू खलल पड़ने लगा है कि चिढ़ ही नहीं आती गुस्सा भी आने लगता है। टीवी पर खासकर दूरदर्शन पर हमारे मुनमुन प्रसाद सिंह ने वह स्पोर्ट्स चैनल ढूँढ़ लिया है जिस पर कोई विज्ञापन नहीं आता। भले ही असल नहीं उसकी छाया ही हो पर खेल से ज्यादा विज्ञापन तो नहीं देखना पड़ता।

मैदान पर, आयोजकों के बीच और टीम के साथ बाजार इतना और ऐसे फूहड़पन से मौजूद दिखता है कि उस सबको ध्यान से हटाकर सिर्फ खेल में ही मन लगा पाना मुश्किल हो जाता है। शायद ज्यादा जानकारी भी दुखदायी होती है। अंग्रेजी की वह कहावत शायद ठीक है कि अज्ञान परमानन्द है। जब आपको मालूम हो कि खेल से बड़ा उसे चलाने वाला पैसा है और जितने खिलाड़ी उसे खेल रहे हैं, आयोजन कर रहे हैं और देख रहे हैं उनसे ज्यादा उसे बेचने में लगे हुए हैं तो मैदान पर होते हुए आपको लगता है कि आप मंडी में आ गए हैं।

मंडी भी आदमी और उसके सामाजिक जीवन में अनिवार्य है। उसके बिना अपने शहर कस्बे और गाँव नहीं चल सकते। मंडी यानी बाजार नहीं होता तो जिसे हम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
सभ्य और संस्कृत समाज कहते हैं और जिसमें रहते हुए अपने को बेहतर मनुष्य मानते हैं वह भी नहीं होता। बन्द बाजार से तो खुला बाजार अच्छा, भौतिक अर्थ में भी और आर्थिक मामले में भी। पशु और मनुष्य जीवन का अन्तर बताने वाला एक तत्व बाजार भी है। इसलिए बाजार से मनोविकृति की हद तक नफरत करना पागलपन है। लेकिन उसे मनुष्य जीवन के हर उजले-अँधेरे कोने में पहुँचाना और उसे चलाने के बजाय उससे संचालित होना भी उससे उलट किस्म का मनोविकार है।

धन के बिना विश्व कप जैसा आयोजन नहीं हो सकता। अपने यहाँ तो कहा ही गया है कि यज्ञ करने के लिए भी हवन सामग्री की जरूरत होती है। आदिम से आदिम समाज में भी सारी हवन सामग्री जंगल और बस्तियों से इकट्ठा नहीं की जा सकती। जितना बड़ा आयोजन होगा उतना ही धन उसमें लगेगा और यह धन बाजार से आएगा। राज्य भी जो धन देता है वह आखिर लोगों से उगाहा गया होता है और लोग बाजार से पैसा पाते हैं और वहीं लगाते हैं। इसलिए बाजार और धन के बिना किसी आयोजन की कल्पना भी नहीं हो सकती।

लेकिन हुआ यह है कि कुल समाज के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए खेल जरूरी हैं इसलिए उन्हें चलाने में पैसा लगाने के बजाय बाजार के हित साधने में खेलों को लगाया जा रहा है।

खेल अपने नियम और मूल्य और उनके जरिए व्यक्ति और समाज के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए बाजार के हितों के लिए चलाए और बदले जा रहे हैं। उनमें करोड़ों रुपया डाला जा रहा है ताकि मुनाफे के साथ उसे खेलों से वापस पाया जा सके। टीवी और अखबार इसमें खेल से ज्यादा चाहे-अनचाहे बाजार के साथ हो गए हैं। ढिंढोरा पिटने से खेलों को लेकर लोगों में एक ऐसी उत्तेजना और उम्मीदों का मायाजाल बनता है जो वास्तविक खेल के सच्चे आनन्द से भिन्न होता है।

वास्तविक खेल और उसे खेलने देखने से मिलने वाला आनन्द लोगों को खेलने और इस तरह स्वस्थ रहने और सक्रिय मनोरंजन पाने को प्रेरित करता है। लेकिन उसके ढिंढोरे से बनने वाला मायाजाल उसे दर्शकों का खेल बना देता है जो निराशा और अतिरेकी खुशियों में भटकता है। लोक उसमें सघनता के साथ पड़ सकें इसलिए कभी राष्ट्रप्रेम को लगाया जाता है तो कभी मनुष्य की पाशविक वृत्तियों को खुलकर खेलने के लिए उकसाया जाता है। यह सब बाजार की शक्तियाँ करती हैं ताकि उत्पादों का प्रचार और उससे उनकी बिक्री बढ़ सके।

कुछ यूरोपीय और लातीनी अमेरिकी देशों में फुटबाल में न सिर्फ बड़े उद्योग लगे हुए हैं बल्कि माफिया भी उन्हें चलाते हैं। इससे फुटबाल खिलाड़ी जरूर करोड़पति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
हो गए हैं लेकिन इससे बढ़ने वाले जुनून से होती हिंसा और बढ़ता अपराध भी सब जगह देखा जा सकता है। इटली के क्लबों में खिलाड़ियों की खरीदफरोख्त और माराडोना जैसे जादुई खिलाड़ी का उपयोग नशीली दवाओं के व्यापार में होना अपराध और धन के खेल से निन्दनीय गठजोड़ के उदाहरण हैं।

इंग्लैंड दुनिया भर को खिलाड़ी भावना और खेलों से पनपने वाले ऊँचे मूल्यों पर उपदेश दिया करता था। उसके फुटबाल दर्शकों की हिंसा ऐसी बदनाम हो गई है कि कई देशों ने तो उनके खेल देखने आने पर पाबन्दी लगा दी है। काफी कोशिश करके भी इंग्लैंड अपने फुटबाल दर्शकों की हिंसा पर काबू नहीं कर पाया है। वह इन दर्शकों की आक्रामकता को रचनात्मक अभिव्यक्ति देने के तरीके भी नहीं निकाल पाया है। फुटबाल का स्तर भी वहाँ इतना गिर गया है कि नौसिखिया अमेरिका ने ही उसकी टीम को हरा दिया था। इंग्लैंड का राष्ट्रीय खेल ही सौकर है क्रिकेट नहीं। कई दशक हो गए उसने फुटबाल का विश्व कप नहीं जीता न क्रिकेट का। लगभग साठ साल से उसका कोई टेनिस खिलाड़ी विंबलडन नहीं जीता। इसी तरह बाक्सिंग जैसा हिंसक खेल भी करोड़ों लोगों और दर्शकों से ज्यादा करोड़ों रुपयों का खेल बन गया है। एक बाउट यानी दंगल को खूब चढ़ाया जाता है और फिर फुस्स हो जाता है। उसमें भी प्रायोजक, बिचौले और विज्ञापन वाले पैसे कमाने के लिए ऐसी हिंसा को प्रोत्साहित करते हैं जो समाज में खेल और खिलाड़ी भावना के बजाय हिंसा को बढ़ावा देती है। अमेरिका की गन्दी बस्तियाँ हिंसा और बाक्सिंग दोनों की ही जननी हैं।

ये उदाहरण इसलिए दिए कि भारत और पाकिस्तान के बीच हाकी और क्रिकेट को लेकर जो राष्ट्रवादी और धार्मिक उन्माद बढ़ता है उसका दरअसल खेल से कोई लेना-देना नहीं है। ये देश तीन युद्ध तो बाकायदा लड़ चुके हैं। फिर भी इनमें लड़ने की इतनी खुन्दक बनी हुई है कि कभी कोई कहता है कि कश्मीर का फैसला कुश्ती के अखाड़े या हाकी के मैदान या क्रिकेट के पिच पर हो जाएँ। और इस तरह की जुमलेबाजी राजनेता नहीं खुद खिलाड़ी करते हैं।

प्रकृति वैज्ञानिक आपको बताएँगे कि प्रकृति ने खेलों का विकास युद्धों को टालने के लिए किया। प्रकृति चूँकि प्रजातियों को विकसित और रक्षित करना चाहती है इसलिए वह मारक हिंसा को टालकर उसकी जगह ऐसी तरकीबें निकालती है जो प्राणियों की आक्रामक प्रवृत्तियों को हानिहीन अभिव्यक्ति दे सके। खेल युद्ध टालने के लिए विकसित हुए उनमें लोगों की आक्रामक प्रवृत्तियाँ हिंसा और मृत्यु में निकालने के बजाय सकारात्मक मनोरंजन में प्रकट हो सके।

लेकिन भारत और पाकिस्तान ने उन खेलों को भी युद्ध के मैदान में बदल दिया है जिनको युद्ध टालने के लिए प्रकृति ने मैदान में खेले जाने वाले खेल के रूप में विकसित किया। छठे विश्व कप में बँगलूर में हुए भारत-पाकिस्तान के मैच ने इसी तरह दोनों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
तरफ युद्धवत भावनाएँ भड़काईं। पाकिस्तान हार गया तो भारत में होली के बाद फिर दीवाली मन गई और पाकिस्तान में ऐसा स्यापा हुआ मानो वह सचमुच के युद्ध में पराजित हो गया हो। दोनों ओर जो भावनाएँ और प्रतिक्रियाएँ देखने को मिलीं वे खेल की नहीं पड़ोसी देशों की युद्ध में निकली दुश्मनी की अभिव्यक्तियाँ थीं। जो मैच क्रिकेट मैच नहीं होते दरअसल छाया युद्ध होते हैं उनका आप खेल की तरह वर्णन भी नहीं कर सकते। मैंने इस मैच का वर्णन इस तथ्य को स्पष्ट करते हुए किया और वे हिसाब बताए जो लोगों के मन में साफ हुए होंगे। कोई पैंतालीस साल से मैं भी सुनता आ रहा हूँ कि हिन्दू भारत में तूफानी गेंदबाज पैदा नहीं हो सकते और हिन्दुओं में वह किलर इंस्टिकंट नहीं है जो टीमों को जिताती है। ये प्रवृत्तियाँ इसलामी पाकिस्तान में ही हैं। मैं थोड़ा बहुत खेल समझता हूँ और अंग्रेजों की फैलाई इन भ्रान्तियों की असलियत भी जानता हूँ। और यह भी जानता हूँ कि इनसे भारत और पाकिस्तान दोनों ग्रस्त हैं और इन्हें चिकनी-चुपड़ी बातों से दबाया नहीं जा सकता।

लेकिन मेरी रपट से मेरे तमाम समाजवादी और साम्यवादी मित्र दुखी हुए। उनकी राय में मेरी रपट ने हिन्दू-मुसलमान दुश्मनी को हवा दी और साम्प्रदायिकता को खेल में अभिव्यक्त किया। और मेरे जैसे खेल प्रेमी और पन्थ निरपेक्ष आदमी ने ऐसा किया इसका उन्हें और भी बुरा लगा। इन दोस्तों से माफी माँगते हुए भी कहना चाहता हूँ कि वास्तविकता को उधेड़कर उसका सामना करने के अलावा कोई चारा नहीं है। खेल-खेलकर जब तक हम भारत-पाक मैच का क्रिकेट मैच नहीं बना देंगे वे छाया युद्ध बने रहेंगे।

ढिंढोरा पीटने से खेल कैसे राष्ट्रीय निराशा और शर्म के विस्फोट के साधन बनते हैं इसकी सच्चाई हमने तेरह मार्च को कलकत्ता के ईडन गार्डन में देखी। श्रीलंका से सबसे ज्यादा कोई खेलता रहा है तो भारत। फिर भी उसके हाथों अचानक पराजय हमें उपद्रवी बना गई क्योंकि अब तक श्रीलंका को हम अपने मैदानों पर हराते आए हैं। बँगलूर अगर राष्ट्रीय विवादों का विस्फोट था तो कलकत्ता ढिंढोरा पिटने से झूठमूठ बढ़ी उम्मीदों के गुब्बारे का फटना। दोनों ही खेल नहीं थे। क्रिकेट तो बिलकुल नहीं।

एक राष्ट्रवाद का तो दूसरा बाजारवाद का विकार था। छठे विश्व कप में ढिंढोरेबाजी ज्यादा थी खेल बहुत कम। मुश्किल से एक-दो मैच ऐसे हुए जिनमें फटाफट क्रिकेट का रोमांच और खेल का सच्चा आनन्द था। जिस तरह यह आयोजित किया गया उसमें यही सब होना था। इसलिए सक्रिय भागेदारी और सघन लगाव से बचने की कोशिश की। विकृत राष्ट्रवाद और अनियन्त्रित बाजारवाद से अपने सबसे प्रिय खेल को तमाशा बनते देखने से बचने की बहुत कोशिश की। फिर भी हफ्ता हो गया। छठे विश्व कप की समाप्ति का खालीपन बना हुआ है। इसे बँगलूर की व्यर्थता और कलकत्ते की शर्म भी भर नहीं सकती। यह क्रिकेट का हेंग ओवर है।

(24.3.96)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अच्छा पिच है टीवी का परदा

हमारे कौल साब व्यंग्य और मजाक से कहते हैं कि देखिए जो लोग टीवी को ट्रिवियनाइजेशन (नगण्यीकरण) का माध्यम कहते हैं, टीवी वाले भी उन्हीं को टिप्पणी करने को बुलाते हैं।

कौल साब के 'जो लोग' अपन हैं। अपन ने ही एक टीवी चैनल पर मीडिया में चुनाव के कवरेज पर बात करते हुए कहा था कि उसमें मुद्दे और बहस नहीं है क्योंकि उस पर टीवी छाया हुआ है। और टीवी पर मुद्दे उठाकर बहस नहीं की जा सकती क्योंकि यह एक्शन और दृश्य का माध्यम है गम्भीर बहस का नहीं। बल्कि सच पूछिए तो टीवी बात को तुच्छ और नगण्य बना देता है। उस पर कोई भी चीज मिनट-डेढ़ मिनट से ज्यादा टिकने नहीं दी जाती। टीवी वाले मानते हैं कि इससे ज्यादा देर दर्शक परदे पर ध्यान नहीं लगा सकता। कहते हैं यह हिसाब अमेरिका में टीवी दर्शकों की आदत का अध्ययन करने के बाद लगाया गया है। वहाँ टीवी दर्शक मिनट-डेढ़ मिनट में चैनल बदल देते हैं। टीवी पर कार्यक्रमों की रेटिंग का ध्यान रखने वाले जानकारों ने अपने को यही बताया है।

अपना निजी अनुभव इससे उलट है। जैसे टीव पर क्रिकेट, टेनिस फुटबॉल आदि में खूब देखता हूँ। खूब यानी घंटों। जैसे आस्ट्रेलिया से क्रिकेट प्रसारण अपने यहाँ के सुबह साढ़े पाँच से शुरू हो जाते हैं। मैच अगर पर्थ में हो रहा हो तो सवेरे साढ़े सात बजे। और आस्ट्रेलिया के पड़ोसी देश न्यूजीलैंड में हो रहा हो तो अपने यहाँ के रात कोई साढ़े तीन बजे। भारतीय उपमहाद्वीप में हो तो नौ से दस बजे तक। दक्षिण अफ्रीका में टैस्ट हो तो दोपहर कोई साढ़े बारह बजे। इंग्लैंड में साढ़े तीन बजे और वेस्टइंडीज में शाम साढ़े सात बजे। यानी आस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका और वेस्टइंडीज में एक साथ टैस्ट खेले जा रहे हों तो आप सवेरे साढ़े पाँच बजे से दूसरे दिन सवेरे तीन बजे तक लगातार क्रिकेट देख सकते हैं। ऐसा अब तक हुआ नहीं कि आस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका और वेस्टइंडीज में एक साथ टैस्ट खेले गए हों। लेकिन इनमें से दो देशों में प्रसारण तो पिछले महीने ही मैंने देखा यांनी चौदह घंटे तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
लगातार। चिढ़ आई है तो इसी पर कि बीच-बीच में और कई बार बहुत नाजुक क्षणों में विज्ञापन दिखाए जाते हैं। विंबलडन बीबीसी पर देखने का सबसे बड़ा आनन्द यही है कि बीच में कोई विज्ञापन नहीं होता।

सही है कि अपने जैसे पागल दर्शक लाखों में एक-दो ही होते होंगे लेकिन यह कतई नहीं हो सकता कि आम दर्शक एक-डेढ़ मिनट से ज्यादा देर ध्यान लगाने के लायक ही न हों। यह तो बाजार ने अपने विज्ञापन फँसाने और टीवी चैनलों ने कमाई की साजिश की है। बहरहाल टीवी पर यही सब चलता है इसलिए वह स्थायी असर डालने वाला माध्यम नहीं बन सकता। उसके भारत में आने के पहले से उसे बुद्धू बक्से के नाम से जानते हुए भी अपन टीवी विरोधी नहीं हैं। फिर भी इतने वर्षों तक मैं दूरदर्शन पर नहीं गया। पत्रकार होने के पहले ही तय कर लिया था कि जब तक आकाशवाणी और दूरदर्शन पर सरकारी कब्जा है उस पर जाकर अपने को बोलना नहीं है। जब प्रसार भारती लागू हुआ और दूरदर्शन वालों ने यह याद दिलाते हुए बुलाया कि अब हम स्वतन्त्र हैं तभी मैं गया।

लेकिन इस बार चुनाव अभियान के पहले और नतीजे आने के दौरान जरा ज्यादा ही हो गया। दूरदर्शन समेत ऐसी कोई चैनल नहीं छूटी जिसने अपने को बुलाया न हो और अपन गए न हों। किसी-किसी पर तो दिन में दो या तीन बार भी बोलना हो गया। अब अगर आप मानते हों कि टीवी बातों को तुच्छ बना देता है तो उस पर इतना जाना और बोलना क्यों ? कौल साब का व्यंग्य सही है। लेकिन उसे समझते हुए भी इस बार टीवी पर इतना बोला तो इसलिए कि खेल करना था। और खेल आप तभी कर सकते हैं जब उससे ऊपर उठ सकते हों और उसमें होते हुए भी उसका मजा ले सकते हों। और मजा लेने का मतलब यह नहीं होता कि आप कुछ भी कहें। सच्चा मजा तो तभी है जब आप बिलकुल वही कहें जिसमें आपका विश्वास हो।

फिर, इस बार फिर अपनी प्रिय पार्टी सब कुछ करने के बावजूद जनादेश से वंचित रह गई थी। जयललिता जैसी अभिनव नेत्री से चुनावी गठबन्धन करने और लालू प्रसाद यादव के तमाम भ्रष्टाचारों के गुणगान को भूलकर वह ऐसी हर पार्टी और व्यक्ति से हाथ मिलाने को तैयार थी जो कुछ लाख वोट और एकाध सीट दिलवा दे। गए साल अक्टूबर में यूपी में सत्ता में बने रहने के लिए उसने साम दाम दंड भेद का जो खेल किया उससे साफ हो गया था कि अबकी बार दिल्ली के तख्त पर चढ़ने में वह कोई कसर नहीं छोड़ेगी। उसने छोड़ी भी नहीं थी। पिछले डेढ़ साल से वह चौदह पार्टियों के गठबन्धन का मखौल उड़ा रही थी। अब उसने इतनी ही छोटी-मोटी पार्टियों से तालमेल गठबंधन आदि कर रखा था। पंजाब में अकालियों को कोई रियासत दी थी तो तमिलनाडु में किसी द्रविड़ पार्टी को कुछ और।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
उसके लचीलेपन और निपट सिद्धान्तहीनता को देखकर मेरी इच्छा होती थी कि किसी दिन गोविन्दाचार्य को पकड़कर पूछूँ कि भाई यह क्या हो गया है आपकी पार्टी को। सन् नब्बे में जब लालकृष्ण आडवाणी के रामरथ को लालू ने बिहार में पकड़ लिया तो भाजपा ने अपनी घोषणा पर अमल करते हुए वीपी सिंह की राष्ट्रीय मोर्चा सरकार से समर्थन वापस लेने की तैयारी कर ली। सरकार का गिरना इससे तय था। राष्ट्रीय मोर्चे को बाएँ से वाम मोर्चा और दाहिने से भाजपा समर्थन दे रही थी और किसी के समर्थन वापस लेने से उसका गिरना अवश्यम्भावी था। तब हम गोविन्दाचार्य से दलील कर रहे थे कि अपन लोगों ने मिलकर इस सरकार के बनने में इतना काम किया है। अब यह भाजपा के समर्थन वापस लेने से गिर जाए तो अच्छा नहीं होगा। तब सब सुनने के बाद बेचारे व्यथित गोविन्दाचार्य ने कहा था कि हमारी पार्टी दूसरी राजनीतिक पार्टियों जैसी नहीं है जो सत्ता के लिए अपनी आन-बान पर न अड़े। हमने कहा था कि अगर लालकृष्ण आडवाणी को रोका गया तो हम समर्थन वापस ले लेंगे तो लेंगे चाहे सरकार गिरे या कुछ हो जाए।

अब गोविन्दाचार्य की यही पार्टी सत्ता के लिए किसी से भी समझौता कर रही थी और न ही राजनीतिक नैतिकता का एक सिद्धान्त उसने साबुत छोड़ा था। सही है कि दूसरी भी कोई पार्टी दूध की धुली नहीं है और कोई भी दावा नहीं कर सकती कि उसकी साड़ी दूसरी की साड़ी से उजली है। लेकिन दूसरी कोई पार्टी अपने चाल, चेहरे और चरित्र को दूसरे से इतना भिन्न और ऊँचा नहीं बताती थी और सारी लोकतान्त्रिक मर्यादाएँ तोड़ते हुए मर्यादा पुरुषोत्तम राम का मंदिर बनाने की सौगन्ध नहीं खाती थी। जब मस्जिद गिराना और राम मन्दिर बनाने का वादा करना सत्ता में पहुँचाने के लिए पर्याप्त सिद्ध नहीं हुआ तो भाजपा ने कांग्रेस के रास्ते चलकर सत्ता पर काबिज होने का तय किया। और उत्तर प्रदेश में सब करके भी दिखा दिया।

इसके बावजूद संघ के चालक नेताओं ने कहा कि जैसी परिस्थिति हो उसमें वैसे ही निपटने और जैसे राजनीति चलती है वैसे ही उसमें चलना पड़े तो चलना चाहिए। सिर्फ यही सावधानी रखनी चाहिए कि माफियाओं को हम कंट्रोल कर सकें और उन्हें सुधार सकें। यानी भाजपा चाहे सब दलबदलुओं को मन्त्री बनाए और उसमें दर्जन भर अपराधी सरगना हों—संघ के नेता उन्हें अपनी नैतिक शक्ति से ठीक कर देंगे। ऐसे लोगों की सोहबत से भाजपा नहीं बिगड़ेगी, बिगड़े हुए लोग सुधरेंगे। चूँकि सत्ता में आने और रहने के लिए यही सब करना पड़ता है इसलिए सिद्धान्त पर अड़कर सत्ता से दूर नहीं रहना चाहिए। हमारी मातृ संस्था तो आखिर एक सांस्कृतिक-सामाजिक संगठन है और उसमें इतना नैतिक बल निश्चित है कि सत्ता में होने के दोषों का परिष्कार कर सके। इस नैतिक दम्भ को पालने वाले लोग आसानी से भूल जाते हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि गांधी युग के राजनीतिक नेता भी कोई कम तपस्वी और बलिदानी नहीं थे और जनता की सेवा करने की भावना उनके सीने में भी धधकती थी। लेकिन सत्ता ने उनका भी पतन किया। उन्हें न सर्वोदय बचा सका, न रचनात्मक कार्यकर्ताओं के सेवानिष्ठ संगठन। सत्ता में आने और रहने के लिए जो कांग्रेसी समझौते करने पड़ते हैं वे अंततः अपने करने वालों को ही निगल जाते हैं। लेकिन कांग्रेस की जगह लेने को उत्सुक संघ परिवार उसके पतन से सबक लेना नहीं चाहता। उसे गरूर है कि वह नैतिक पतन से ऊपर है।

भाजपा के इस आत्मभ्रम और संघ वालों के नैतिक दम्भ की हवा निकालने की इच्छा इसलिए नहीं है कि अपने को कांग्रेस प्यारी है या संयुक्त मोर्चे का राज पसन्द है या भाकपा और माकपा को अपन कोई सिद्धान्तनिष्ठ पार्टियाँ मानते हैं भले ही उनके सिद्धान्तों में विश्वास हो या न हो। देश के राजनीतिक पतन और सार्वजनिक जीवन से प्रामाणिकता की समाप्ति में सभी पार्टियों का योगदान है। कांग्रेस चूँकि देश की मात्र राजनीतिक संस्था है इसलिए उसकी जिम्मेदारी सबसे ज्यादा है। फिर अपन ने जब से राजनीतिक होश सँभाला अपने को गैर कांग्रेसी मानसिकता में ही पाया है और सन् उनहत्तर में अपनी निजी सत्ता के लिए इन्दिरा गांधी ने जिस तरह कांग्रेस को दो फाड़ किया उससे उनकी हत्या तक अपन उनके आलोचक और विरोधी बने रहे। जिस तीसरी ताकत में अपना विश्वास सन् सतत्तर और उसके बाद पनपा था उसे भी बिखरते और अपने ही दोगलेपन से समाप्त होते भी देखा। कम्युनिस्ट पन्थ से अपने देश और लोगों की समस्याएँ सुलझ सकती हैं ऐसा अपने को कभी नहीं लगा। इसलिए कोई इस गलतफहमी में न रहे कि दूसरी किसी पार्टी और संगठन को बचाने या जमाने के लिए अपन भाजपा और संघ के पीछे पड़े रहते हैं। कतई नहीं। लेकिन भारतीयता का नाम लेकर उठने-बैठने वाले लोगों को भारतीयता की कसौटी पर नहीं कसें तो क्या हम अपना काम ईमानदारी और निष्ठा से कर सकेंगे?

सत्ता में ये आए कि वो इससे अपने को कोई फर्क नहीं पड़ता। अपन नहीं मानते कि राजनीतिक सत्ता से इस देश में कोई बुनियादी परिवर्तन हो सकता है। सत्ता से सेवा हो सकती है इस कांग्रेसी जुमले से बड़ा झूठ और दूसरा नहीं है। लेनिन ने सत्ता सँभाली और माओ ने भी। लेकिन सत्ता से इनकी क्रान्तियाँ भ्रष्ट ही हुई हैं उससे वे आगे नहीं बढ़ीं। उनका जो भी क्रान्तिकारी काम हुआ है वह लोगों को परिवर्तन के लिए प्रेरित करने से हुआ है, सत्ता की बागडोर सँभालने से नहीं। गांधी ने बुद्ध और ईसा की तरह राजनीतिक सत्ता से परे जाकर नए समाज और नया आदमी बनाने का अनुष्ठान किया। गांधी साम्प्रदायिक हिंसा और भारत के विभाजन को नहीं रोक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
सके। वे कांग्रेस को अपनी अहिंसक क्रांति का संगठन नहीं बना सके। उनके शिष्य होने का दावा करने वाले बड़े-बड़े नेता सत्ता के रास्ते पर ऐसे फिसले कि फिर उनसे कोई क्रान्तिकारी कार्य हुआ ही नहीं। जो सत्ता के पचड़े में नहीं पड़े वे भी दिनोंदिन श्रीहीन होकर कुम्हलाए और बिखरकर मिट्टी में मिल गए। इस सबके बावजूद गांधी यह तो साबित कर ही गए कि अहिंसक लोक शक्ति बड़ी से बड़ी राजनीतिक सत्ता को उखाड़कर फेंक सकती है और बुनियादी परिवर्तन राजनीतिक सत्ता से नहीं, प्रेरित लोक शक्ति से ही हो सकते हैं।

इसलिए सत्ता में बैठे आदमी से या पार्टी से न अपने को डर लगता है, न अपन उससे दोस्ती को लालायित होते हैं। भाजपा और संघ के जो लोग कहने में लगे हैं कि प्रभाष जोशी यह सब इसलिए कहता है कि हमने उसे राज्यसभा में नहीं भेजा, भगवान उन्हें माफ करना वे बेचारे जानते नहीं हैं। संघ परिवार और जनसंघ जिस जेपी आन्दोलन के जरिए विपक्ष की मुख्य धारा में आने की कोशिश कर रहा था उसके जेपी से लेकर लालू तक के नेताओं को अपन जानते थे। सतत्तर में राजनीति में सोच समझ कर नहीं गए। फिर उननब्बे में तो भाजपा और जनता दल के तालमेल में अपना भी हाथ था। तब कोई भी सीट अपने लिए खाली थी, अपन ने नहीं ली। तो भाजपा की मेहरबानी से पीछे के रास्ते से कोई क्यों जाता? और जुलाई बानवे से तो संघ परिवार से अपना खुला खेल फर्रूखाबादी चल रहा है। क्यों गुमान में हो कि भाई किसी को राज्यसभा की सीट से खरीद सकते हो? अपन बिकाऊ नहीं हैं।

और हमारा सुशील कुमार सिंह कहता है कि दूरदर्शन के भाजपाई अधिकारी कहते फिर रहे हैं कि प्रभाष जोशी ने निजी खुन्दक निकाली है। भैया एक बात ऐसी नहीं कही जो पहले लिखी न हो। अपना विश्वास टीवी के बोले हुए शब्द पर नहीं लिखी हुई बात पर है। कोई निरक्षर न पढ़े तो लिखने वाला क्या करे? बहरहाल कौल साब हफ्ते भर टीवी पर वही मजा आया जो गावसकर को आखिरी के बरसों में पिच पर आता था।

(8.3.98)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी एक खेल चैनल भी होनी चाहिए कि नहीं?

ईएसपीएन और स्टार स्पोर्ट्स दोनों ही पे चैनल बनकर अब अपने दर्शकों को बुद्धू बना रही हैं।

जब ये भारत में शुरू हुईं और उन्हें स्थापित होना था तब तो इनने भारतीय दर्शकों की रुचि के खेल दिखाने और ऐसा करने में एक दूसरे से होड़ करते हुए दिखने की खूब कोशिश की। ऑनली ऑन स्टार स्पोर्ट्स और ईएसपीएन द वर्ल्ड लीडर जैसे जुमलों की उद्‌घोषणाओं से दिन-रात एक कर दिया। फिर किसी वन डे क्रिकेट टूर्नामेंट के पहले या फ्रेंच ओपन या विंबलडन के वक्त ब्लेक आउट करके केबल ऑपरेटरों और दर्शकों को अलग से पैसे देने पर मजबूर किया। कई जगह और कितने ही ऑपरेटरों ने इन तरीकों के विरोध में इनकी सेवाएँ लेना बन्द कर दीं। लेकिन दर्शकों के दबाव में उन्हें झुकना पड़ा।

अब नतीजा यह है कि इस साल इन दोनों में से किसी ने भी न तो आस्ट्रेलियन ओपन दिखाया न हाल ही में पूरा हुआ फ्रेंच ओपन। फ्रांस में सॉकर, फुटबॉल का वर्ल्ड कप चल रहा है और कहते हैं सारी दुनिया पर उसका बुखार चढ़ा हुआ है। लेकिन खेलकूद के इन दोनों चैनलों पर आप एक मैच लाइव नहीं देख सकते। समय और ट्रांसमिशन में गड़बड़ी और जाने कैसे-कैसे कम्पीयर और कमेंटेटर बैठाने के बावजूद दूरदर्शन कम-से-कम विश्व कप फुटबॉल के मैच 'लाइव' दिखा रहा है। उसने फ्रेंच ओपन के क्वार्टर फाइनल से लेकर फाइनल तक के मैच भी सीधे प्रसारण से दिखाए। वह तो दूरदर्शन अगर अपनी एकाधिकारवादी मानसिकता में फँसा न होता तो क्रिकेट और हॉकी जैसे भारत में सबसे लोकप्रिय खेलों का प्रसारण उसके हाथों से निकलता नहीं और स्टार स्पोर्ट्स और ईएसपीएन के पाँव हमारे यहाँ जमते नहीं।

लेकिन सेटेलाइट चैनलों से होड़ के सामने अपने तौर-तरीके बदलने के बजाय दूरदर्शन पुराने और अकड़ू रवैये पर कायम रहा। उसका मानना था कि कोई मैच या पूरा टूर्नामेंट दिखाकर वह आयोजकों, खेल और दर्शकों पर एहसान कर रहा है। वह न सिर्फ सीधे प्रसारण की सब सुविधाएँ फोकट चाहता था—मैदान पर जो आमदनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होती है उसमें से भी उसे हिस्सा चाहिए था। अब जिन खेलों को दर्शकों और आयोजकों का समर्थन नहीं होता वे तो बेचारे दूरदर्शन की मेहरबान नजर पाने के लिए तरसते रहे।

लेकिन क्रिकेट वालों ने दुनिया का बाजार देखा और पाया कि दो साल पहले भारत-पाकिस्तान और श्रीलंका में हुए क्रिकेट वर्ल्ड कप के कई ग्राहक हैं और बोर्ड ने पाँचेक करोड़ की आय पर भारतीय क्रिकेट दिखाने के सर्वाधिकार एक अमेरिकी टीवी कम्पनी को बेच दिए। फिर सुप्रीम कोर्ट ने कह दिया कि तरंगों पर किसी सरकार का एकाधिकार नहीं हो सकता इसलिए दूरदर्शन को भी अपने दर्शकों को किसी तरह सन्तुष्ट करने के लिए विदेशी कम्पनी से अपना ही क्रिकेट अपने ही देश में दिखाने के अधिकार खरीदने पड़े। दुनिया में शायद ही किसी राष्ट्रीय प्रसारण सेवा के साथ अपने ही देश में ऐसा सौतेला बरताव हुआ हो। लेकिन अपने यहाँ हुआ और उसमें दूरदर्शन का ही नहीं अपने देश के सर्वोच्च न्यायालय का भी हाथ रहा।

दूरदर्शन को तो सबक मिल गया लेकिन उसकी कीमत हमारे खेल और भारत के दर्शक चुका रहे हैं। जैसे इससे वाहियात और दयनीय क्या होगा कि आप इंग्लैंड की काउंटियों के मैच तो सीधे अपने घर में बैठे देख सकते हैं लेकिन हमारी अपनी रणजी ट्रॉफी, दिलीप ट्रॉफी, देवधर ट्रॉफी आदि राष्ट्रीय प्रतियोगिताओं के मैच नहीं देख सकते। ईएसपीएन हफ्ते में एक बार एक घंटे का कैपसूल दिखा देगी। उसमें आप जो भी निकाल सकें निकाल लीजिए। हमारे देश के घरेलू क्रिकेट में कोई कमाई नहीं है। इसलिए उसका सीधा प्रसारण करने में किसी विदेशी व्यावसायिक चैनल की क्यों रुचि होगी? और घरेलू क्रिकेट के प्रसारण के अगर ये हाल हैं तो दूसरे खेलों को कौन पूछे?

जिन मरडोक साब की स्टार टीवी चैनल है उन्हीं की इंग्लैंड में स्काई स्पोर्ट्स के नाम से चैनल हैं। स्काई के दर्शकों को दिखाने के लिए जो खेल वे खरीदते हैं उन्हें भारत में भी दिखा देते हैं। हींग लगे न फिटकरी और रंग चोखा होय। इसी कारण आप भारत में पूरा का पूरा इंगलिश क्रिकेट लाइव देख सकते हैं। काउंटी क्रिकेट से वन डे और टैस्ट मैच तक। लेकिन भारत में होने वाले वही मैच देख सकते हैं जो विदेशी कम्पनी को फायदेमंद लगते हों। वे भारतीय खेलों को बढ़ावा देने और भारतीय दर्शकों की रुचि पूरी करने के लिए यहाँ नहीं आई हैं। वे फायदा कमाने के लिए आई हैं। उनकी इस व्यावसायिकता के चलते न सिर्फ इंगलिश क्रिकेट बल्कि अमेरिकी कॉलेज की हेंडबाल और फुटबॉल प्रतियोगिताएँ, बास्केटबॉल, बेसबॉल, फारमूला वन कार रेसिंग, डब्ल्यूडब्ल्यूएफ की पुरुषों और औरतों की कुश्तियाँ और दुनिया पार के ऐसे खेल इन चैनलों पर चलते रहते हैं जिनमें भारत के खेल प्रेमियों की कोई रुचि नहीं होती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे फिर भी देखते रहते हैं क्योंकि खेल देखना आखिर एक जबरदस्त व्यसन है और अगर आप एक खेल के बेहद शौकीन हैं और जब वह नहीं दिखाया जा रहा हो तब आप दूसरे खेल भी देखते रहते हैं। इस तरह भारतीय खेल प्रेमी अपने खेल और प्रतियोगिताएँ देखने से तो वंचित हैं लेकिन अमेरिकी कॉलेज फुटबॉल, आइस हॉकी, बेसबॉल, बास्केटबॉल आदि मजे में देख सकते हैं। न दूरदर्शन को समझ आता है कि चौबीसों घंटे न चलने वाली न सही लेकिन भारतीय खेल लगातार दिखाने वाली कोई चैनल होनी चाहिए, न अपनी निजी चैनलों को खेलकूद दिखाने में कोई रुचि है। खेल प्रसारण के मामले में हम विदेशी कम्पनियों पर दयनीय रूप से निर्भर हैं। ये कम्पनियाँ अपनी चैनल भारतीय दर्शकों की रुचि के अनुसार नहीं अपने सांसारिक हितों के मुताबिक चलाती हैं। क्रिकेट जैसा कमाऊ खेल भी जब इन कम्पनियों के भेदभाव का शिकार है तो भारतीय हॉकी, फुटबॉल और दूसरे खेलों की अनदेखी तो समझी जा सकती है। कोई विदेशी कम्पनी प्रायोजित कर दे तो समुद्री किनारे पर सैलानियों का बीच वालीबॉल भी प्रसारित हो सकता है—लेकिन दूसरे और ज्यादा लोकप्रिय खेल प्रसारित नहीं होते।

फिर विदेशी कम्पनियों के हाथ में जाने के बाद उनकी जो दुर्गति होती है उसे भी समझ लेना चाहिए। जैसे क्रिकेट ही ले लीजिए। स्टार और ईएसपीएन दोनों ही भारतीय क्रिकेट दिखाती हैं। दोनों ने एक-एक भारतीय कम्पीयर रख छोड़ा है। स्टार ने चारू शर्मा और ईएसपीएन ने हर्ष भोगले। लेकिन इन दोनों की कमेंट्री टीमें ऐसे विदेशी कमेंट्रीकारों से भरी हुई हैं जो साल-भर न तो भारतीय क्रिकेट देखते हैं, न भारतीय घरेलू क्रिकेट की उन्हें कोई जानकारी होती है। सुनील गावसकर और रवि शास्त्री—दो ही भारतीय कमेंटेटर नियमित रूप से इन चैनलों पर आते हैं। नहीं तो ट्रेवर कर्क जैसे दक्षिण अफ्रीकी, एलन विलकिन्स और मार्क निकलस जैसे इंगलिश, माइकल होल्डिंग जैसे वेस्टइंडियन और डेविड हुक्स जैसे आस्ट्रेलियन कमेंट्रीकार भी ऐसे मैचों में बुला लिए जाते हैं जिनमें उनके देश की टीम खेल नहीं रही होती। कटक के पिच के बारे में भोगले मार्क निकलस से पूछते हैं और वे बेचारे कहते हैं कि इस पिच को तो मुझसे बेहतर तुम्हीं जानते हो जो कि सच भी है। अब कर्क, हुक्स, विलकिन्स सब अच्छे कमेंट्रीकार हैं—लेकिन ये न भारतीय नामों का उच्चारण कर पाते हैं—न भारतीय क्रिकेट की इन्हें जानकारी है। और तो और ये हर्ष भोगले को हर्षा भोगली और चारू शर्मा को शारू शर्मा कहते हैं और हमारे कम्पीयर अपने नाम तक उनसे ठीक बुलवा नहीं सकते। विदेशी कमेंट्रीकारों पर इनकी निर्भरता इतनी दयनीय है कि गोवा में श्रीलंका से भारत के हारने के बाद हर्षा भोगली ने रणजीत फरनांडो से पूछा कि बताइए कि भारतीय क्रिकेट में क्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खराबी है। अब कल के श्रीलंकाई विकेटकीपर हमें बताएँगे कि हमारे क्रिकेट में क्या गड़बड़ी है।

अब मजा यह है कि बाहर जब ऐसी सीरीज हो रही हो जिसमें भारत न खेल रहा हो तो गावसकर तक को कमेंट्री करने नहीं बुलाया जाता। वहाँ या तो सभी कमेंट्रीकार घरू देश के होते हैं या एक-दो मेहमान टीम के। तीसरे देश के कमेंट्री करने वाले नहीं होते। फिर जिसमें भारत खेल रहा होता है उसमें भी ऐसा नहीं होता कि भारत के जीतने पर पराजित टीम की ओर से गावसकर या शास्त्री से पूछा जाए कि बताइए हमारी टीम में क्या खामी या हमारे क्रिकेट में क्या गड़बड़ है ? मैंने आज तक नहीं सुना कि किसी लंकाई या पाकिस्तानी या वेस्टइंडीज, या इंगलिश या आस्ट्रेलियन ने गावसकर से पूछा हो कि हमारे क्रिकेट में क्या गड़बड़ है। गावसकर तो जैसे खिलाड़ी रहे हैं और जैसी उनकी जानकारी है—वे निश्चित ही बता सकते हैं कि वेस्टइंडीज या इंगलिश क्रिकेट क्यों पतन में है और श्रीलंका टैस्ट क्यों नहीं जीत सकती। लेकिन ये देश बाहरवाले की राय पर नहीं चलते। हमारे बेचारे हर्षा भोगली और शारू शर्मा—विदेशी कम्पनी में अपना कांट्रेक्ट बचाते रहते हैं।

अब अगर बाहर के कमेंट्रीकार और एंकर भारतीय क्रिकेट के अन्तर्राष्ट्रीयकरण की बात करते रहते हैं तो समझा जा सकता है क्योंकि न तो उन्हें भारतीय क्रिकेट के चरित्र की समझ है न वे भारतीय क्रिकेट का—गावसकर या शास्त्री की तरह—भला चाहने वाले हो सकते हैं। वे थोड़े समय के लिए एक व्यावसायिक कर्तव्य करने आए हैं और जैसा बनता है करते हैं। उन्हें इस बात का दुख नहीं हो सकता कि भारतीय बोर्ड की नपुंसकता के कारण राजेश चौहान जैसे गेंदबाज का कैरियर चौपट हो रहा है या आईसीसी में वोटों के लिए डालमिया मई-जून की भयंकर गरमी में केन्या और बांग्लादेश से भारत का वन डे टूर्नामेंट करवा देते हैं। या यह कि इतने वन डे खेलाकर बोर्ड भारतीय खिलाड़ियों का पचक्कड़ निकलवा रहा है। या यह कि वर्ल्ड कप की तैयारी के लिए भारत को क्या करना चाहिए। स्टार स्पोर्ट्स और ईएसपीएन से आप यह उम्मीद नहीं कर सकते कि वे भारतीय खेलों को सहानुभूति के साथ दिखाएँ और उनके भले के लिए उनके रचनात्मक पहलू को लगातार प्रक्षेपित करें। इन चैनलों के लिए भारतीय खेल धन्धा है और अगर उससे लाभ नहीं होता हो तो वे क्यों उसे दिखाएँगे ? दूरदर्शन का एक राष्ट्रीय कर्तव्य और जिम्मेदारी हो सकती है। स्टार स्पोर्ट्स और ईएसपीएन का तो सिर्फ धन्धा ही है।

लेकिन प्रसार भारती बन जाने के बाद भी दूरदर्शन और आकाशवाणी की समझ नहीं आता कि अपने खेल खुद दिखाने में एक ऐसा रवैया सामने आता है जो खेल को प्रसारण से आगे ले जाकर राष्ट्रीय जीवन से जोड़ता है और खेल के साथ-साथ राष्ट्रीय जीवन को भी समृद्ध करता है। हमारे अपने कमेंट्रीकार खड़े करना सिर्फ खेल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के अच्छे प्रसारण के लिए ही जरूरी नहीं है इसलिए भी अनिवार्य है कि वे एक राष्ट्रीय समझ और सरोकार को लगातार दर्शकों में प्रक्षेपित कर सकें और अपने खेल की बेहतरी में रचनात्मक योगदान दे सकें। भाई-भतीजावाद के चलते आकाशवाणी और दूरदर्शन ऐसे कमेंट्रीकारों की फौज खड़ी नहीं कर पाए जो कौशल में बाहरी कमेंट्रीकारों से बेहतर नहीं तो टक्कर के होते और जिनकी हमारे खेलों की समझ और जानकारी खेल और प्रसारण दोनों के लिए ही बहुत काम की होती। लेकिन अब तो स्वायत्तता का लाभ लिया जा सकता है।

बहुराष्ट्रीय कम्पनियों और स्वदेशी की एक बहस अपने देश में सन् इकानवे से नए सिरे से चल रही है। वैसे आजादी मिलने के बहुत पहले से हम यह जानते रहे हैं कि बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ न तो हमारी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को ताकत दे सकती हैं न हमारे राष्ट्रीय हितों को बढ़ावा दे सकती हैं। इसलिए आजादी की लड़ाई में स्वदेशी पर इतना जोर दिया गया। स्वदेशी सिर्फ इसलिए नहीं कि उससे हमारे आर्थिक हितों की रक्षा हो सके, स्वदेशी इसलिए और भी जरूरी कि उससे हर क्षेत्र में हमारे देशी चरित्र, स्वभाव और दृष्टिकोण की समझ बढ़ सके और उसका प्रभुत्व स्थापित हो सके। लेटिन अमेरिकी देशों में फुटबॉल लगभग धर्म है और वे बहुत गरीब और पर-निर्भर देश हैं। लेकिन आप देखिए कि अपने फुटबॉल को वे कितना अपना मानकर अपने ढंग से खेलते हैं और उसे यूरोप से अलग मानते हैं क्योंकि उन्हें लगता है कि उनका फुटबॉल उनके राष्ट्रीय चरित्र और पहचान का प्रक्षेपण है। यह उनके फुटबॉल की राष्ट्रीयता है।

फ्रांस में फुटबॉल का विश्व कप एक लोकोत्सव है क्योंकि यूरोप में फुटबॉल ही लोक खेल है। हमारे खेलों में ऐसा क्या है जिसे हम अपने राष्ट्रीय चरित्र, व्यक्तित्व और गौरव का प्रक्षेपण मान सकें ? क्या हम यह समझ भी बढ़ाने को तैयार हैं कि खेल सिर्फ मनोरंजन नहीं होते वे राष्ट्रीय चरित्र और शक्ति को भी अभिव्यक्त करते हैं और इसलिए उनके प्रसारण के लिए एक राष्ट्रीय चैनल होना जरूरी है। एक ऐसी चैनल जो स्टार स्पोर्ट्स और ईएसपीएन की तरह सिर्फ धन्धे के लिए न हो और जो अपनी अक्षमताओं को राष्ट्रीयता के नाम पर न छुपाती हो। क्या प्रसार भारती का बोर्ड कभी यह भी जरूरी मानेगा कि एक स्वस्थ देश को अपने स्वास्थ्य के लिए एक अच्छी खेल चैनल भी चाहिए?

(14.6.98)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस मखौल में सब शामिल हैं

यह हो नहीं सकता कि किसी क्रिकेट मैच का सीधा प्रसारण हो रहा हो और अपन देखें नहीं। पिछले साल स्टार टीवी वाले इंग्लैंड के काउंटी मैच दिखा रहे थे क्योंकि यह उनके लिए फोकट का दिखाना था। स्काई स्पोर्ट्स और स्टार स्पोर्ट्स बहन कम्पनियाँ हैं। स्काई स्पोर्ट्स को तो इंग्लैंड में काउंटी मैच दिखाने ही होते हैं इसलिए उन्हें दिखाने के अधिकार वे खरीदते हैं।

स्टार स्पोर्ट्स को वे फोकट मिल जाते हैं इसलिए गए साल हमने देखा कि भारतीयों को अपने रणजी, दिलीप और देवधर ट्राफियों के मैच देखने को नहीं मिले लेकिन काउंटी चैम्पियनशिप सीधी दिखाई दीं। हमारे बोर्ड ने भारतीय क्रिकेट दिखाने के अधिकार पाँच साल के लिए एक अमेरिकी कम्पनी को बेच दिए हैं। इस कम्पनी को घरेलू क्रिकेट दिखाना पोसाता नहीं इसलिए टीवी दर्शक अपने ही देश का क्रिकेट देखने से वंचित रह जाते हैं।

इस बाजारू हरकत पर गुस्से के बावजूद अपन काउंटी चैम्पियनशिप देखते रहे। स्टार और ईएसपीएन वालों ने ऐसे कई टैस्ट और वन डे 'लाइव' दिखाए जिनमें भारत खेल नहीं रहा था। लेकिन सुबह जल्दी हो या रात देर तक अपन ये टैस्ट और वन डे भी एक नशेड़ी की तरह देखते रहे। अगर आप क्रिकेट नशे की तरह देखते हो तो जरूरी नहीं होता कि वही मैच देखें जिसमें आपकी टीम खेल रही हो। बल्कि क्रिकेटीय आनन्द के नाते ऐसे मैच ज्यादा अच्छी तरह देखे जा सकते हैं क्योंकि अपनावे की भावना उतनी धार पर नहीं होती।

फिर भी ढाका में खेले जा रहे एशियाई टैस्ट चैम्पियनशिप का फाइनल मैं नहीं देख रहा। इस चैम्पियनशिप का पहला मैच देखने और उस पर लिखने के लिए कलकत्ता गया था। भारत और पाकिस्तान के बीच दिल्ली में खेला गया टैस्ट देखने अपन कोटला भी नहीं गए। बड़े मजे में जा सकते थे और भारत को पाकिस्तान पर जीत हासिल करते देख सकते थे। लेकिन वह टीवी पर ही देखा। कलकत्ता देखने गया तो इसलिए कि ईडन गार्डंस पर कोई टैस्ट देखने का जो आनन्द है वह मेलबर्न में भी नहीं है भले ही दोनों की दर्शक समाने की क्षमता लगभग बराबर हो और दूसरे वह एशियाई टैस्ट चैम्पियनशिप का पहला टैस्ट था। पहली बार टैस्ट की कोई चैम्पियनशिप हो रही थी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो कि वन डे के विश्व कप की जगह क्रिकेट की सबसे बड़ी और सच्ची चैम्पियनशिप हो सकती है। इस माने में कलकत्ते में खेला गया वह टैस्ट सचमुच ऐतिहासिक था।

लेकिन उस रोमांचक टैस्ट के बाद कोलम्बो और लाहौर में जो हुआ उसने इस चैम्पियनशिप को एक असली मुकाबले के बजाय मिलीभगत बना दिया जिसमें यश लूटने की लड़ाई में दो देशों ने मिलकर तीसरे को किनारे कर दिया। श्रीलंकाई बोर्ड के एक अधिकारी ने कोलम्बो टैस्ट के दौरान कहा कि "एशियाई टैस्ट चैम्पियनशिप श्रीलंका के दिमाग से निकली है—खासकर सुमतिपाल तिलंग के दिमाग से। लेकिन यश कोई और ही लूट रहा है।" संकेत जगमोहन डालमिया की ओर है जो अन्तर्राष्ट्रीय क्रिकेट सम्मेलन और बंगाल क्रिकेट एसोसिएशन दोनों के ही अध्यक्ष हैं। कलकत्ता टैस्ट में इंग्लैंड, आस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका, जिम्बाब्वे, न्यूजीलैंड, वेस्टइंडीज आदि के ख्यातनाम और असरदार पूर्व खिलाड़ी आए थे। भारतीय उपमहाद्वीप के तो थे ही। और ये सभी डालमिया को टैस्ट चैम्पियनशिप के आयोजन पर बधाई दे रहे थे और उन्हें बड़ा भविष्यद्रष्टा क्रिकेट प्रशासक कहा जा रहा था।

आस्ट्रेलिया में त्रिकोणीय सीरीज खेलने गई श्रीलंका दस में से सिर्फ तीन वन डे जीत पाई और उसके दो धुरन्धर जयसूरिया और मुरलीधरन विश्व कप तक चोट के कारण खेल से बाहर हो गए। तेज गेंदबाज चामिंडा वास और दिग्गज बल्लेबाज अरविन्द डिसिल्वा भी हर मैच नहीं खेल पाए थे। खुद श्रीलंका वाले मानते हैं कि उन्हें पुराने और स्थापित खिलाड़ियों पर ही निर्भर रहना पड़ रहा है क्योंकि नई प्रतिभाएँ उभर नहीं रही हैं। एशियाई चैम्पियनशिप के दूसरे टैस्ट में वह जीत की कोशिश करने वाले खिलाड़ियों को जी जान लड़ा देने पर लगा नहीं सकते थे। इसलिए कोलम्बो का विकेट खाँटी लंकाई बनाया गया जिस पर कोई फैसला सम्भव नहीं था। भारत को फाइनल खेलने के कोलम्बो में जीतने की जरूरत थी लेकिन वह अपने तेज गेंदबाज श्रीनाथ को खेला नहीं सकता था क्योंकि वहाँ खेलने पर उनके टखने और बिगड़ सकते थे। श्रीलंका इस टैस्ट को ड्रा ही करवा सकता था और वह उसने किया।

आप जान ही चुके हैं कि लाहौर में पाकिस्तान और श्रीलंका ने मिलीभगत करके भारत को बाहर कर दिया जबकि पाकिस्तान गई श्रीलंकाई टीम कोलम्बो में खेली टीम से भी कमजोर थी। कप्तान रणतुंगा, अरविन्द डिसिल्वा और चामिंडावास भी इस टीम में नहीं थे। लेकिन इसे पहले तो गेंदबाजी के पॉइंट पाकिस्तान ने दिलवाए फिर बल्लेबाजी के। चूँकि टीवी पर धोखाधड़ी छुपाई नहीं जा सकती इसलिए पहले तो कहा गया कि जानबूझकर कुछ नहीं किया गया। हमने अपना स्वाभाविक खेल खेला। आखिर क्रिकेट को गौरवमयी अनिश्चितताओं का खेल कहा ही जाता है। खेल का यही अनिवार्य चरित्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाहौर में प्रकट हुआ। लेकिन यह बात जब अविश्वसनीय लगने लगी तो पाकिस्तान और श्रीलंका की मिलीभगत को आक्रामक सैद्धान्तिक जामा पहनाया गया।

शुरुआत की अपने सुनील गावसकर ने। पहले दाव के सौ ओवरों में बोनस पॉइंट मिलने और दूसरा दाव गिनती में ही न लेने की पॉइंट प्रणाली तय करने वाली तीन सदस्यों की कमेटी के एक सदस्य गावसकर भी थे। बाकी के दो थे असन्त डि मेल और माजिद खान। कहा जा रहा था कि इस पाइंट प्रणाली का लाभ उठाकर ही पाकिस्तान और श्रीलंका ने भारत को बाहर किया। इस पॉइंट प्रणाली का बचाव करते हुए गावसकर ने लिखा और कहा कि भारत को कोई कम मौके नहीं मिले थे लेकिन वे उसने गँवा दिए। अब छाती-माथा कूटने से क्या होगा। जो लाभ ले सकते थे, ले गए। सही है। कलकत्ते में भारत ने पाकिस्तान के सिर्फ छब्बीस रन पर छह विकेट उड़ा दिए थे। फिर भी वह 185 रन बना गया। भारत से दो बोनस पॉइंट के लिए अनिवार्य 225 रन भी नहीं बने। श्रीनाथ ने फिर आठ विकेट लेकर भारत को जीत के द्वार पर पहुँचाया। रमेश और लक्ष्मण ने बिना विकेट खोए 107 रन भी बना दिए लेकिन रमेश के आउट होने के बाद पूरी टीम से 172 रन नहीं बने। जीत न पाने की हैदस का यह ज़ोरदार नमूना था।

फिर श्रीलंका में भारत ने जल्दी और इतने रन नहीं बनाए कि श्रीलंका दबाव में टूटता। वह विकेट किसी के जीतने के लिए नहीं श्रीलंका के टैस्ट ड्रा करवाने के लिए बनाया गया था। पहले दिन भारत ने सिर्फ तीन विकेट 351 रन बना भी लिए थे। लेकिन दूसरे दिन पहली ही गेंद पर तेंदुलकर आउट हुए तो चाय तक यानी चार घंटे के खेल में कुल 167 रन बने। 518 के टोटल पर अजहर से बचने के लिए 318 रन की ही दरकार रह गई। वे भी श्रीलंका से नहीं बनते लेकिन डबल सेंचुरी मारने वाले महेला जयवर्धने के आधी दर्जन कैच छोड़े गए। दो तो तब जब वे 10 से 100 पर जा रहे थे। अगर छह सौ से ऊपर अपना टोटल गया होता श्रीलंका फालोऑन बचाने के दबाव में टूटता लेकिन हमारे खिलाड़ियों में जीत के लिए खेलने की आग और धार दिखती ही नहीं। अजहर अपने प्रेत लेखकों के जरिए कहते रहते हैं कि हर जीत के पीछे कड़ी मेहनत और दृढ़ निश्चय रहता है। वह दिखता तो नहीं।

जो हो, लाहौर में हुई मिलीभगत का यक्ष प्रश्न यह नहीं है कि भारत ने अपने मौके कैसे गँवाए और अब उसे शोर मचाने का क्या हक है? प्रश्न यह है कि दो टीमें शानदार खेल खेलकर तीसरी टीम को बाहर तो कर सकती हैं लेकिन वे मिलीभगत से खेलें तो क्या यह प्रतियोगिता होगी? श्रीलंकाई असन्त डि मेल ने बाकायदा बयान दिया कि पाकिस्तान को फाइनल में अपना प्रतिद्वन्द्वी चुनने का पूरा हक था। लेकिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगर आप क्रिकेट खेलते हों तो कहेंगे कि निश्चित है लेकिन खेलकर, मिलीभगत से नहीं। एक ओर तो आप कहें कि क्रिकेट गौरवमयी अनिश्चितताओं का खेल है और दूसरी ओर आप तय कर लें कि फलाँ टीम को फाइनल से बाहर रखना है इसलिए मिलकर खेलो। ये दोनों बातें एक साथ नहीं जा सकतीं क्योंकि अनिश्चितताएँ पहले से और मैदान के बाहर निश्चित नहीं की जा सकतीं।

पाकिस्तान को खेल कतई अधिकार नहीं देता कि वह मिलकर खेले। अगर आप तीसरी टीम को बाहर करने के लिए मिलकर खेल सकते हैं तो फिर पैसे के लिए या दूसरे किसी कारण से जान-बूझकर हार या जीत भी सकते हैं। पाकिस्तान के कुछ खिलाड़ियों पर सट्टाबाजों से मिलकर मैच हारने के आरोप थे। अब अगर उसे कैसे भी अपना प्रतिद्वन्द्वी चुनने का अधिकार है तो पैसों के लिए हारने या जीतने का भी अधिकार होना चाहिए। लेकिन सट्टेबाजों से पैसा खाने के आरोप हैं इसलिए पाकिस्तान भी अपने यहाँ न्यायिक जाँच करवा रहा है और वसीम अकरम, सलीम मलिक, इजाज अहमद, मुश्ताक अहमद और वकार युनूस पर जज साब ने उँगली उठाई भी है। इनमें से कुछ तो किनारे लगाए ही गए हैं और बाकी के विश्व कप के बाद किनारे कर दिए जाएँगे। क्योंकि सट्टाखोरों के पैसों के लिए खेलना, खेल का मखौल करना है तो किसी टीम को मिलीभगत से बाहर करने के लिए खेलना भी खेल का मजाक उड़ाना ही है।

यक्ष प्रश्न खेल में मुकाबले की विश्वसनीयता का है। अगर देखने वालों को लगने लगे कि खेल में प्रतियोगिता या मुकाबला नहीं हो रहा उसका नाटक हो रहा है तो वे खेल पर विश्वास कैसे करेंगे। उन्हें हमेशा लगेगा कि कैच छूटा तो हो सकता है जान-बूझकर छोड़ा गया हो। कोई आउट हुआ तो हो सकता है विकेट फेंक कर आया हो। और कोई बल्लेबाज धड़ल्ले से रन बनाता ही जाए तो बिलकुल सम्भव है कि उसे मारने देने के लिए ही गेंदबाजी की जा रही हो। एक बार देखने का विश्वास उठ जाए तो वे असल खेल और मुकाबले पर भी भरोसा नहीं करेंगे। जैसे फ्री स्टाइल कुश्ती को कोई कुश्ती नहीं मानता। टैस्ट क्रिकेट भी अगर मिलीभगत हो जाए तो आप लाख प्रतियोगिताएँ करवा लें उन्हें देखेगा कौन ? टैस्ट मैच अगर बेनिफिट मैच हो जाए तो दर्शक मान लेंगे कि यह मुकाबला नहीं है लोगों को खुश करने का खेल है। इंग्लैंड के सबसे गंभीर बल्लेबाज माने जाने वाले बॉयकॉट ने लाहौर में कहा ही मैच कार्निवाल वातावरण यानी मेले के खेल की तरह खेला जा रहा है।

दुनिया में कई जगह टैस्ट देखने लोग नहीं आते और चूँकि उनमें लोगों की रुचि नहीं होती इसलिए टीवी वाले भी उनका सीधा प्रसारण नहीं करते। भारत में गनीमत है कि टैस्ट में भी स्टेडियम खचाखच भर जाते हैं। कलकत्ते में तो पाँचों दिन 10 हजार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से एक लाख लोग आते रहे। लेकिन कोलंबो में मैदान उजड़े। लाहौर में स्टेंड खाली पड़े रहे और ढाका में भी कुछ हजार से ज्यादा लोग देखने नहीं आ रहे। टीवी पर कम से कम भारत में तो ज्यादा लोग नहीं देख रहे। जब अपने जैसे लाइलाज नशेड़ी ही नहीं देख रहे तो साधारण लोगों की रुचि समझी जा सकती है। अगर आप टैस्ट क्रिकेट को भी प्रहसन की तरह खेलेंगे तो लोग क्यों आएँगे और क्यों देखेंगे ? इस मामले में पाकिस्तान और श्रीलंका ने मिलीभगत करके भारतीय उपमहाद्वीप में क्रिकेट को हानि ही की है। जगमोहन डालमिया के रुतबे से श्रीलंका और पाकिस्तान के बोर्डों के अधिकारियों की जलन हो सकती है। लेकिन अगर कोई कहे कि उन्हें खुन्नस निकालने का हक है तो यह बेकार की बात है।

और यह नहीं कि पॉइंट प्रणाली ठीक नहीं थी इसलिए एशियाई चैम्पियनशिप मजाक बनके रह गई। कलकत्ता में पाँचवें दिन आए कोई 80 हजार दर्शकों को ईडन गार्डंस से निकालना पड़ा तभी मैच 'इन केमरा' यानी गोपनीयता में पूरा हो सका क्योंकि दर्शकों के उपद्रव से कोई मैच पूरा न हो सके तो उसका क्या होगा इसके बारे में कोई नियम नहीं था। कलकत्ते में उपद्रव के कारण विश्व कप का सेमी फाइनल ही कोई तीन साल पहले बीच में ही बन्द करके श्रीलंका को विजेता घोषित किया गया था। वहाँ तो इस सम्भावना पर ध्यान रखना ही चाहिए था। नहीं रखा गया इसलिए टैस्ट मैच में पहली बार हुआ कि दर्शकों से स्टेडियम खाली करवाया गया। इससे बड़ी शर्म और इससे बड़ा कलंक और क्या होगा।

बात यह नहीं है कि यह पहली टैस्ट चैम्पियनशिप थी इसलिए कमियाँ रह गई होंगी। सवाल नीयत का है। अगर यश लूटने की कोशिश में क्रिकेट के साथ मखौल किया जाए तो इससे तो खेल बिगड़ेगा ही। और गैर क्रिकेटीय कारणों से जो बिगड़ा हो उसे नियमों से सही ठहराने में गावसकर, माजिद खान और डि मेल जैसे खिलाड़ी भी लग जाएँ तो वे ऐसे प्रतिष्ठान के अंग हो रहे हैं जो सचमुच खेल विरोधी हैं। लाहौर में जो हुआ उसे पाकिस्तान के प्रतिद्वन्द्वी चुनने का अधिकार कहा जाए तो यही साबित होता है ना कि उस मखौल में डि मेल भी शामिल थे। सब जानते हैं कि शारजाह में जो होता है वह धन्धा है इसलिए उसी मैच में लोग आते हैं जिसमें भारत-पाकिस्तान के समर्थक दर्शकों की भावनाएँ भड़की रहती हैं। उस धन्धे में बुखातिर के साथ आसिफ इकबाल ही नहीं वे पुराने-नए खिलाड़ी भी शामिल हैं जो मर कर फूले बटुवे की प्रतीक्षा में शारजाह को माथे पर उठाए फिरते हैं।

और कहते हैं कि क्रिकेट पर सट्टे का सबसे बड़ा अड्डा शारजाह है और सट्टेबाजी में सबसे आगे पाकिस्तानी टीम है। कौन-सी खेल भावना की बात आप करते हैं।

(14.3.99)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो औलाद वे छोड़ गए

सीबीआई की विशेष अदालत से जारी गैर जमानती वारंट पर अगर स्टे नहीं मिला तो बिहार क्रिकेट संघ के अध्यक्ष लालू प्रसाद यादव अपने नए पद पर राँची जेल में बिराजेंगे। लालू का जेल जाना तय हो या न हो उनका बिहार क्रिकेट संघ का अध्यक्ष होना तय है। क्योंकि बीस मई को होने वाले चुनाव के लिए और किसी ने परचा भरा ही नहीं है। उनका चुनाव निर्विरोध होगा। अब अगर जेल में होते हुए लालू बिहार क्रिकेट संघ की बैठक बुला लें तो अपने अंग्रेजी अखबारों को मसालेदार खबर मिलेगी और वे उसी चटखारे के साथ उसे छापेंगे जैसी उनके परचा भरने की खबर चार मई को पहले पेज पर छापी थी।

लालू का क्रिकेट प्रशासक बनना अपने अंग्रेजी अखबारों और उनकी देखादेखी हिन्दी अखबारों को भी बड़ा अजूबा लगता है। उनके माने तो क्रिकेट एक अंग्रेजी खेल है जिसे भारत के पढ़े-लिखे और पैसे वाले लोगों ने अपनाया और उन्हीं का अंग्रेजी भद्रलोक उसे चला सकता है। समाजशास्त्री आशीष नन्दी ने क्रिकेट पर अपनी किताब की शुरुआत में ही कहा है कि क्रिकेट एक भारतीय खेल है जिसे संयोग से अंग्रेजों ने ढूँढ़ निकाला। आशीष नन्दी भारत के समाज को समझते हैं कि क्रिकेट को भी, इसलिए इन दोनों के बीच जो सम्बन्ध है उसे आसानी से समझ और बता सकते हैं। अपने अंग्रेजी अखबारों की समझ राजनीति के छिलके से भीतर नहीं जाती। इसलिए लालू उन्हें जोकर लगतें हैं। और लालू को भी भारत के अंग्रेजी भद्रलोक की ठेठ गावदी ढंग से हँसी उड़ाने में मजा आता है इसलिए जोकरगिरी करना उनकी राजनीति का खाँटी अन्दाज हो गया है। लालू जानते हैं कि जो उन्हें वोट देते हैं और जिनके समर्थन से वे नेता बने हैं उन लोगों को भारत के अंग्रेजी भद्रलोक का मखौल उड़ाना भाता है। वे अपने वोटरों को रिझाए रखने और अंग्रेजी अखबारों को बुद्धू बनाए रखने में आनन्द लेते हैं। वैसे भी लालू अपने को एक ऐसे गँवार ग्वाले की छवि में प्रक्षेपित करते रहना चाहते हैं जो अच्छे-अच्छे तीस मार खाँ अंग्रेजी गिटपिटिए को पलक मारते पटकनी खिला सकते हैं। गँवार या लल्लू बनाना लालू का राजनीतिक नाटक है और खेल करने में वे किसी भी अंग्रेजी-संस्कृत भाषी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

चाणक्य को मात दे सकते हैं। तभी तो इतने लोगों की दुश्मनी और दयानतदारी के बावजूद राजनीति में टिके हुए हैं। अंग्रेजी अखबार और हमारा भद्रलोक उनका कुछ बिगाड़ नहीं पाया। बाल भी बाँका नहीं कर पाया। चारा कांड कोई अंग्रेजी अखबारों ने खोज कर नहीं निकाला। वे खुद अपनी चतुराई के कारण मारे गए। जो गँवार ग्वाले का रोल करता है उसे जबरदस्त घोटाले करने का खेल हर्षद मेहता, केतन पारिख और सुसंस्कृत वित्त मन्त्रियों से सीखना चाहिए।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन अपन तो लालू की नहीं अंग्रेजी अखबारों और उनके भद्रलोक की क्रिकेट की समझ पर बात कर रहे थे। लालू का क्रिकेट प्रशासक बनना इनको इतना अजूबा इसलिए भी लगता है कि लालू का गाबदी और देसी होने पर जोर देना उन्हें खुद इस खेल से बाहर कर देता है। इसलिए जब तीन मई को लालू ने विहार क्रिकेट संघ के अध्यक्ष बनने का परचा भरा तो अंग्रेजी अखबारों को लगा कि क्रिकेट मैदान के चारे के अलावा लालू को क्रिकेट में क्या रुचि हो सकती है। क्रिकेट मैदान के चारे में लालू की रुचि दो कारणों से मानी गई। एक तो चारा घोटाला करके लालू ने चारे में अपनी दिलचस्पी बता ही दी है दूसरे उनकी भैंस या गैया को क्रिकेट मैदान का चारा ज्यादा लुभा सकता है। एक अखबार ने तो इस खबर के साथ जो कार्टून छापा उसमें कुरता-पाजामा पहने लालू जो बल्ला घुमा रहे हैं तो उसे एक भैंस ही तारीफ में देख रही है। अपने भैंस चराने और मुख्यमन्त्री निवास पर गैया पालने को वे खुद भी कोई कम प्रचार नहीं दिलवा चुके हैं। लेकिन अखबारों ने कुछ और भी कारण बताए हैं। जैसे कि दिल्ली और देश के एक प्रतिष्ठित अंग्रेजी अखबार ने लिखा है कि घर में बच्चों की एक क्रिकेट टीम उनने पैदा की ही है। दूसरे ने कहा कि इन बच्चों को घर के लॉन में खेलते देखकर उन्हें क्रिकेट प्रशासक बनने की प्रेरणा मिली होगी। एक और अखबार ने कहा है कि बिहार क्रिकेट संघ के खाते में डेढ़ करोड़ रुपया है। जब झारखंड का अलग संघ बन जाएगा तो बिहार संघ के पास जो चारा बचेगा उस पर हाथ साफ किया जा सकता है। ये सब कयास लगाने वाले रचनाधर्मी कल्पनाशील पत्रकारों को जाने क्यों नहीं सूझा कि आजकल क्रिकेट मैदान के चारे से ज्यादा मैच फिक्सिंग करने और इसके लिए खिलाड़ियों को पटाने में लालू किसी भी सट्टेबाज से बड़ा खेल खेल सकते हैं और वे क्रिकेट प्रशासन में आ गए तो जगमोहन डालमिया, बिन्द्रा, जयवन्त लेले आदि की छुट्टी हो जाएगी। ऐसा कयास उनने शायद इसलिए न लगाया हो कि उनके मन में क्रिकेट प्रशासकों और एमके गुप्ता जैसे सट्टेबाजों के लिए ज्यादा सम्मान हो।

बहरहाल ऐसा लगता है कि बिहार क्रिकेट संघ के अध्यक्ष बनने का प्रस्ताव बिहारी बाबू और भाजपा के राज्यसभा सांसद शत्रुघ्न सिन्हा के पास भी गया होगा। कहते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

हैं बिहार क्रिकेट संघ का कार्यालय अब तक जमशेदपुर में था और वहाँ टाटाओं का
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
कोई अधिकारी इसे चलाता आया है। अब चूँकि झारखंड अलग राज्य हो गया है और उसका संघ भी अलग हो जाएगा तो बिहार वाले चाहते थे कि उनका संघ टाटाओं के चंगुल से निकल आए। ऐसा करने के लिए किसी ऐसे राजनीतिक वजनदार खिलाड़ी की जरूरत थी जो न सिर्फ टाटाओं पर भारी पड़े बल्कि बिहार क्रिकेट संघ को भी साधनसम्पन्न बना सके। ऐसा रोल बिहार के पुराने अभिनेता शत्रुघ्न सिन्हा को आसानी से दिया जा सकता था और इसलिए उनका नाम लिया भी गया होगा। लेकिन मामला आखिर बिहार के दो पुलिस अफसरों के बीच था—इनमें से कोई एक अध्यक्ष बन सकने की स्थिति में नहीं था। इसलिए शत्रुघ्न सिन्हा का नाम चलाया गया। लेकिन जब बिहारी बाबू का नाम आया तो लालू का नाम कैसे न आता? आया तो भाजपाई सांसद ने कहा कि वे नहीं लड़ेंगे। वे तभी अध्यक्ष होंगे जब उन्हें निर्विरोध बनाया जाए। चूँकि ऐसी स्थिति अब नहीं है इसलिए वे मैदान में नहीं हैं। लेकिन ऐसा कहते हुए भी शाट गन सिन्हा ने लग्गी जरूर मारी। एक अखबार को उनने कहा—'अब देखना हमारे गुल्ली-डंडा खिलाड़ी गॉल्फ के प्रशासन में घुस आएँगे।' पटना का पचास साल पुराना गॉल्फ कोर्स विवाद में पड़ गया है। वहाँ अब चिड़ियाघर चलाने का प्रस्ताव है। पता नहीं चुनाव मैदान में शाट गन सिन्हा क्यों नहीं उतरे। मुम्बई में तो शिवसेना के नेता पुराने मुख्यमन्त्री और अब के केन्द्रीय मन्त्री मनोहर जोशी तो मुम्बई क्रिकेट संघ के अध्यक्ष का चुनाव लड़ ही चुके हैं और अब राष्ट्रीय कांग्रेस पार्टी के अध्यक्ष पुराने मुख्यमन्त्री और पुराने केन्द्रीय मन्त्री शरद पवार इस पद को सुशोभित कर रहे हैं। शत्रुघ्न सिन्हा या तो लालू के आने से मैदान को अपवित्र मान गए होंगे या उन्हें लगा होगा कि वे मैदान नहीं मार सकते।

भाजपा के एक और सांसद हैं कीर्ति आजाद, जो बिहार के भूतपूर्व मुख्यमन्त्री और भूतपूर्व केन्द्रीय मन्त्री भागवत झा आजाद के बेटे होने के नाते बिहारी हैं और बिहार से ही लोकसभा के सांसद चुने जाने के कारण भी बिहारी हैं। वे दिल्ली और भारत के लिए खेल चुके हैं। ऑफ स्पिन गेंदबाजी करते थे और धुआँधार बल्लेबाजी लेकिन सात टैस्ट ही खेल पाए उनसे भी लालू के अध्यक्ष होने पर एक अखबार ने पूछा। कीर्ति आजाद ने कहा—'अब बिहार क्रिकेट का भी वही होगा जो लालू राज में बिहार का हुआ है।' बिहार क्रिकेट कब जोर पर रहा है जो लालू उसे डुबो देंगे? न कीर्ति से पूछा गया, न उनने खुद बताया। बहरहाल दोनों भाजपा सांसद लालू की अध्यक्षता में बिहार क्रिकेट का घोटाला होते ही देख रहे हैं। एक अखबार ने कहा कि जो लालू कभी कबड्डी देखते थकते नहीं और अपने बचपन के गुल्ली-डंडा पागलपन का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बखान करते रहते हैं अब कहते हैं कि क्रिकेट से जो पैसा वे पाएँगे उसे ऐसे भारतीय खेलों को बढ़ाने में लगाएँगे जिन्हें कोई पूछता नहीं। 'क्रिकेट संघ का अध्यक्ष होने से मैं कोई कबड्डी और गुल्ली-डंडा को भूल नहीं जाऊँगा।' अखबार ने कहा कि लालू को मालूम नहीं था कि केन्द्र ने पाकिस्तान से क्रिकेट खेलने पर रोक लगा रखी है। जब बताया तो उनने कहा कि यह हिन्दू-मुसलमान को बाँटने का साम्प्रदायिक कदम है और इसके खिलाफ वे माहौल बनाएँगे।

लालू राजनीति के बड़े खिलाड़ी हैं–गुगली मारते हैं और चौके-छक्के उड़ाते हैं–यह तो इन अखबारों ने भी माना है। लेकिन यह सब राजनीतिक व्यंग्य की तरह। जो राजनीति में इतना शातिर खिलाड़ी है वह क्रिकेट प्रशासन में भी उस्ताद हो सकता है ऐसा कोई नहीं मानता। हमारे क्रिकेट प्रशासक कोई बड़े प्रशासक या प्रबंधक रहे हों या हों ऐसा भी नहीं है। और सिर्फ राजनीति के कारण क्रिकेट प्रशासन में आए नेताओं के नाम भी वे बताते हैं–जैसे मुम्बई क्रिकेट के अध्यक्ष हुए मनोहर जोशी और शरद पवार, मध्य प्रदेश क्रिकेट संघ के अध्यक्ष हैं माधव राव सिंधिया, दिल्ली क्रिकेट संघ के अरुण जेटली और खेलों में रहे प्रियरंजन दासमुंशी और सुरेश कलमाडी। इनके खेल प्रशासन में आते वक्त खबरें भी छपीं लेकिन राजनीतिक विवाद, पव्वेबाजी या बड़े क्रिकेट खिलाड़ियों को प्रशासन से दूर रखने के कारण। लालू के बारे में यह नहीं छपा कि उनने शत्रुघ्न सिन्हा या कीर्ति आजाद को नहीं बनने दिया। या क्रिकेट अध्यक्ष होने के लिए कैसे हथकंडे किए। लालू की खबरें इस नाते लिखी गईं कि क्या लालू और क्या क्रिकेट! मनोहर जोशी शिवसेना के हैं जिसके सैनिकों ने मुम्बई में क्रिकेट पिच खोद दिया था ताकि पाकिस्तान से मैच न हो। शिवसैनिकों ने क्रिकेट मुख्यालय पर पाकिस्तान के भारत दौरे के खिलाफ हमला कर दिया था। ऐसी शिवसेना के नेता मुम्बई क्रिकेट के अध्यक्ष कैसे हो सकते हैं ऐसा किसी ने नहीं पूछा। शरद पवार की अध्यक्ष होने की क्या योग्यता है यह भी किसी ने नहीं बताया। अरुण जेटली कभी क्रिकेट खेला हो या उसमें उनकी गहरी रुचि रही हो ऐसा भी किसी ने नहीं बताया। माधवराव सिन्धिया ऑक्सफोर्ड में थोड़ा-बहुत क्रिकेट खेले होंगे पर वे कोई मंसूर अली खाँ पटौदी नहीं थे। माधवराव तो भारतीय क्रिकेट बोर्ड के भी अध्यक्ष रहे लेकिन किसी ने नहीं पूछा कि ऐसा होने की उनकी योग्यता क्या है?

फिर लालू के बिहार क्रिकेट संघ के अध्यक्ष पद का परचा भरने पर ये सवाल क्यों उठाए गए? क्योंकि माधवराव सिन्धिया हों या अरुण जेटली, मनोहर जोशी हों या शरद पवार, प्रियरंजन दासमुंशी हों या सुरेश कलमाड़ी–ये सब हमारे नागरीय अंग्रेजी भाषी समाज के लोग हैं। इनमें प्रशासन की योग्यता है या नहीं या क्रिकेट को समझते कितना हैं या क्रिकेट को बढ़ावा देने में इनकी रुचि क्या है ये सवाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इनके क्रिकेट या खेल प्रशासक होने पर नहीं उठाए जाते। इनका नागरीय होना और अंग्रेजी भाषी भद्रलोक के आदमी होना ही क्रिकेट या दूसरे खेल प्रशासक बनने के लिए पर्याप्त मान लिया जाता है। राजनीति में से खेल प्रशासन में तो ये लोग भी आए हैं लेकिन इस कारण ये हँसी उड़ाए जाने के लायक नहीं समझे जाते। इनके बाल-बच्चों की भी गिनती नहीं होती। इनके लिए घोटालों को भी क्रिकेट से जोड़ा नहीं जाता। इन्हें क्रिकेट प्रशासन में आने का जन्मसिद्ध अधिकार है—ऐसा अपने अंग्रेजी अखबार मानते हैं और लालू जैसे गावदी और बिहारी आदमी को क्रिकेट प्रशासन में आने का कोई अधिकार नहीं है। इसलिए लालू की योग्यता पूछी और बताई जाती है। और सब बताने-पूछने के बाद निष्कर्ष भी निकाल लिया जाता है कि वे ऐसा काम कर रहे हैं जिसके योग्य नहीं हैं। लालू की अयोग्यता क्या है ? वे गावदी हैं, गँवारू बातें करने के आदी हैं, उनके शौक चारा घोटाला करने और उठापटक और जोड़तोड़ करने के हैं। वे कभी कोशिश नहीं करते कि भद्रलोक की तरह रहें और उसी तरह बातें करें। लालू गाँव के बिहार के और जनता के होकर रहना चाहते हैं इसलिए उनकी क्रिकेट में क्या जगह और क्रिकेट से उनका क्या काम है?

आशीष नन्दी भले लिखें कि क्रिकेट एक खाँटी भारतीय खेल है—अंग्रेजी अखबार नहीं मानेंगे। दो साल पहले इंग्लैंड में विश्व कप हुआ। वहाँ के तमाम अखबारों ने माना कि विश्व कप का जलसा नहीं होता अगर ब्रिटेन में बसे भारतीय, पाकिस्तानी, श्रीलंकाई और बांग्लादेशी अपनी-अपनी टीम का हौसला बढ़ाने और उन्हें खेलते देखने नहीं आते। चूँकि इंग्लैंड की टीम सुपर सिक्स में भी पहुँच नहीं पाई और माना गया कि कायाकल्प के बिना इंगलिश क्रिकेट बचेगा नहीं इसलिए अखबारों ने सुझाया कि अपने क्रिकेट में भारतीय उपमहाद्वीप के लोगों को लाओ। वे इंगलिश क्रिकेट में आएँगे तो वह पुनर्जीवित हो जाएगा क्योंकि इन्हीं लोगों में क्रिकेट का पागलपन बचा है। और क्या पता—लन्दन के एक अखबार ने लिखा—कोई माँ किसी सचिन तेंदुलकर को ही जन्म दे दे। इंग्लैंड के लोग और अखबार अपने खेल के पुनर्जीवन के लिए भारत की तरफ देखते हैं और हमारे अखबार लालू के क्रिकेट प्रशासक बनने का मखौल उड़ाते हैं। क्या कहावत है वो—अंग्रेज चले गए औलाद छोड़ गए।

(13.5.2001)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सब धन्धे के खेल में हैं

तीन-चार दिन से केबलवाला गुल की गई एक चैनल पर बता रहा था कि सोनी डिस्कवरी बुके ने अपनी चैनलों के दाम अनाप-शनाप बढ़ा दिए हैं। आप पर बेकार का बोझ न पड़े, इसलिए हमने वे बन्द कर दी है। कृपया सहन करें और हमसे सहयोग करें। इसके बावजूद फोन करके उसे मैंने डाँट नहीं पिलाई। बल्कि सन्तोष हुआ कि चलो चैम्पियन ट्रॉफी देखने से बच जाएँगे। बारह सितम्बर को काले में सफेद अक्षरों से अखबारों में विज्ञापन छपा कि दिल्ली में ब्लेक आउट है। इसे बरदाश्त मत कीजिए और तत्काल अपने केबल वाले को फोन कीजिए—मैक्स पर सीधा प्रसारण देखने का अपना हक माँगिए। विज्ञापन आप समझ ही गए होंगे कि सोनी, मैक्स, डिस्कवरी आदि ने दिया था। सोनी ने चैम्पियन ट्रॉफी दिखाने के एकाधिकार रूपर्ट मरढाक की कम्पनी ग्लोबल क्रिकेट कारपोरेशन से साढ़े पच्चीस करोड़ डालर में खरीदे हैं। पैसा वसूल करने का यही मौका है। इसलिए वह हमें प्रेरित कर रहा है कि भले ही ज्यादा पैसा देना पड़े पर सीधे मत देखिए। आखिरी पेज पर बड़े से रंगीन विज्ञापन में इलेक्ट्रोकल्स की मदद से विजडन द्वारा फिर स्थापित किए गए नए कट के कपिल पूछ रहे थे कि उनका इस महीने का कार्यक्रम जानना है? वे बारह से तीस सितम्बर तक मैक्स पर चैम्पियंस ट्रॉफी के लिए मैच दिखाने वाले हैं। पूरा कार्यक्रम और प्रसारण का टाइम दिया है।

एक कपिल ही सोनी मैक्स को प्रचार करने को मिले। उन्हें हाल ही कारपोरेट संसार ने विजडन का बीसवीं सदी का भारतीय खिलाड़ी बनवाकर स्थापित किया है। सट्टाखोरी के आरोपी की गुमनामी से निकले कपिल खुद भी अपनी हाल ही मिली प्रतिष्ठा को तेजी से भुनाने में लगे हैं। उन्हें सहारा वाले जगह-जगह घुमा कर सम्मानित करवा रहे हैं। वे सहारा के काउंसिल डायरेक्टर हैं। पहले भी थे पर सहारा अब उन्हें नए ढंग से परोसकर अपना प्रचार कर रहा है। कपिल मैक्स पर एक कार्यक्रम भी कर रहे हैं—कपिल दिल से। सोनी मैक्स आखिर बालीवुड की मनोरंजन चैनल है। वह क्रिकेट भी दिखाएगी तो फिल्मी स्टाइल में। इसलिए कपिल जो सदी के महान क्रिकेट खिलाड़ी बनाए गए हैं, क्रिकेट के बारे में फिल्म दिल से की तर्ज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर बताएँगे। आप जानते हैं कि कपिल से न बोलते बनता है न मजेदार ढंग से बात करते। वे फिर भी दिल से कार्यक्रम कर रहे हैं क्योंकि पैसा बनाने हैं। दो साल की गुमनामी की भरपाई करनी है। आगे के लिए अपने को बाजार में चलाना है। वे जो पैसा दें, उसके राजदूत यानी बेचने वाले बनने को तैयार हैं। उनकी मार्केटिंग देखकर मुझे शंका होती है कि कारपोरेट संसार ने उन्हें फिर स्थापित करने का खेल किया है। गावसकर और सचिन के साथ उन्हें फिर बाजार में पैदा किया है। कपिल को अपन सन अठहत्तर से जानते हैं, जब वे न हरियाणा की तरफ से खेले थे, न भारत की टीम से। वे विश्व कप जिताने वाले कप्तान और खिलाड़ी हैं और तभी से क्रिकेट को भुनाने में लगे हैं। मनोज प्रभाकर ने उन पर पैसा खाकर मैच हारने का आरोप लगाया। सीबीआई की जाँच में वे बच गए। लेकिन उन्हें कैसे बचाया गया, इसके किस्से जानकार बताते हैं। वे कोच थे तभी भारतीय खिलाड़ियों ने देश की टीम के लिए विदेशी कोच रखने पर जोर दिया था। सट्टाखोरी-रिश्वतखोरी के कांड से कपिल बच निकले पर बाजार ने उन्हें उतार दिया था। बदनाम नायक बाजार में नहीं चलता। इसलिए जब लोग भूलने लगे तो विजडन के जरिए कपिल को फिर स्थापित किया गया। जिसे विजडन ने ठप्पा लगाकर महान घोषित कर दिया हो, वह बाजार की गंगा में नहाकर फिर पवित्र हो जाता है। पवित्र कपिल बता रहे हैं कि अब उनका कार्यक्रम क्या है। क्रिकेट में अपना पागलपन कपिल के पैदा होने के बारह साल पहले से चल रहा है। अपन प्रेरित नहीं हुए न अपन ने केबलवाले को फोन किया। बाजार अपने को उल्लू नहीं बना सकता।

लेकिन टीवी पर कुछ देख रहा था कि अचानक कोलम्बो में हो रहा पाक-लंका मैच आने लगा। चैनल बदलकर देखा तो खबरों और खेलों की चैनल गायब थी और उनकी जगह नाच-गाने, धरम-करम और फिल्मों की चैनलें चल रही थीं। ग्यारह सितम्बर की तरह दुनिया ही बदली हुई थी। मैच फिर लगाकर केबलवाले को फोन किया। उसने गद्गद होकर कहा कि 'अंकल आपको मैच दिखा रहे हैं ना! कैसे? अपने पास दो लाइन होती हैं। मैच दूसरी पर आ रहा था इसलिए वह लगा दी। खबरों और खेल की सब चैनल भी आपकी चल रही हैं। घुमा के देख लीजिए!' देखा, दिनभर मैच देखा। रवि शास्त्री और टोनी ग्रेस वहाँ कमेंट्री करने पहुँचे हुए थे। अपने रोबिन सिंह और श्रीलंका के रोशन महानामा भी थे और बता रहे थे कि खेलने वालों को बोलने बुलाओ तो क्या गजब होता है। एक्स्ट्रा इनिंग्स में रूबी भाटिया नाम की कोई कन्या श्रीकान्त और अर्जुन रणतुंगा से सवाल पूछके बता रही थीं कि जितने मूरखपन से जितनी तेजी से सवाल पूछो, क्रिकेट उतना ही आम आदमी के पास पहुँचता है। फिल्मी चैनल क्रिकेट दिखाएगी तो और क्या करेगी। एक ओर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
कन्या खिलाड़ियों को बस से उतरते दिखा रही है। उनसे मीठे-मीठे मूरख सवाल पूछ रही है। कोई पिच पर पहुँची है, कोई शाट लगा रही है। अपने देश में क्रिकेट को बेचने की जरूरत नहीं है। वही सब चीजें बेचता है। लेकिन फिल्मी चैनल लड़कियों को नचवाए नहीं तो क्या करे ! क्रिकेट और फिल्म दोनों ही अपने देश में बेहद लोकप्रिय हैं। खेल चैनल खेल दिखाती हैं। सोनी मैक्स क्रिकेट और फिल्म का मसाला दिखा रही है। कपिल भी दिल से ऐसा ही मसाला दिखा रहे हैं। अपन दुर्भाग्य से क्रिकेट समझते हैं। तो भैया ये सोनी मैक्स तुम्हारे लिए नहीं है। यह आम आदमी तक क्रिकेट को पहुँचाने का महायज्ञ है। लेकिन मैंने तो बच्चों को ऐसी-ऐसी जगह क्रिकेट खेलते देखा है, जहाँ टीवी नहीं है। ठीक है। वहाँ क्रिकेट बिकता नहीं है। यहाँ बेचना है। इसलिए पुराने खिलाड़ी और नई कन्याएँ लगी हैं। तुम कुछ और देखो!

दूसरे दिन दक्षिण अफ्रीका और वेस्टइंडीज का मैच देख रहा था कि परदे पर कोई प्रवचन करने लग गया। चैनल बदल के देखी तो अपनी सब चैनलें अपने लगाए आर्डर में आ गई थीं। केबलवाले से पूछा कि ये क्या हुआ? 'छापा पड़ गया। अपन तो इललीगल दिखा रहे थे ना आपके लिए। वो लाइन बन्द करनी पड़ी।' सच बताऊँ। मुझे न गुस्सा आया, न निराशा हुई। बल्कि लगा कि चलो पाप कटा। स्कोर खबर में देख लेंगे। वो बहुत ही तेज चैनल है ना! वो मैच में पाँच ओवर हुए हों तो पचास ओवर का स्कोर बता देगी। नहीं अपना क्रिकेट का पागलपन खत्म नहीं हुआ है। अपन खेल को बाजार से अलग कर सकते हैं। अगर फिल्मी बाजार की चैनल ही क्रिकेट दिखाएगा और वह खेल के बजाय मुम्बइया फिल्म की तरह चलेगा तो अपन अपनी रुचि तो नहीं बिगाड़ेंगे। टीवी नहीं था तो रेडियो पर सुनते थे। रेडियो नहीं था तो अखबार में पढ़ते थे। फिर पढ़ लेंगे। लेकिन खेल के नाम पर उल्लू नहीं बनेंगे। सट्टाखोरी पर चलने वाले क्रिकेट से जैसे ठगे जाने का अहसास होता था, वैसा ही उसके फिल्मी अन्दाज से लगता है।

अपन सोनी मैक्स को रोक नहीं सकते। उसके पास पैसा है, वह एकाधिकार खरीद सकता है और जैसा मन में आए क्रिकेट दिखा सकता है। आखिर उसने ग्लोबल क्रिकेट कारपोरेशन को साढ़े पच्चीस करोड़ डॉलर दिए हैं। और रूपर्ट मरढाक के ग्लोबल क्रिकेट कारपोरेशन ने अन्तर्राष्ट्रीय क्रिकेट परिषद से पाँच साल के लिए क्रिकेट दिखाने का एकाधिकार खरीदा है–पचपन करोड़ डॉलर में। वह सोनी को नहीं बेचे तो लगाया गया पैसा वसूल कैसे होगा? कमाई कैसे होगी? और क्रिकेट परिषद दो ही प्रतियोगिताएँ करती हैं–विश्व कप और चैम्पियंस ट्रॉफी। वह भी एकाधिकार न बेचे तो ये प्रतियोगिताएँ कैसे करे? जहाँ क्रिकेट खेला नहीं जाता उन देशों में यह खेल कैसे ले जाए? पाकिस्तान, जिम्बाब्वे और न्यूजीलैंड जैसे घाटे में खेल चलाने वाले बोर्डों की मदद कैसे करे? क्रिकेट का बाजार कहीं है तो भारतीय उपमहाद्वीप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
में। इसमें भी लंका, पाकिस्तान, बांग्लादेश आदि छोटे और गरीब देश हैं। भारत एक अरब लोगों का देश है और उसका बाजार पूरे यूरोप के बराबर है। इसलिए क्रिकेट में पैसा आएगा तो भारत से ही आएगा। क्रिकेट परिषद और भारतीय बोर्ड यह पैसा उलीचकर अपनी जेब भर रहे हैं और थोड़ी-बहुत जूठन खेल-चलाने और उसे आगे बढ़ाने में लगा रहे हैं। परिषद और बोर्ड को पैसे कमाने हैं। ऐसा खेल चलाने और उसे सब जगह फैला कर ही किया जा सकता है। क्रिकेट का व्यापारीकरण करना है। उसे बेचना है। दुनिया के सब लोकप्रिय खेल धंधे हो गए हैं। जो खेल धन्धा नहीं होगा, वह बचेगा नहीं। क्रिकेट को बचाना है इसलिए डालमिया उसे बेच रहे हैं। परिषद के दो मैल्कम स्पीड और ग्रे ने क्रिकेट बेचना अपने व्यापारी डालमिया से सीखा है। डालमिया को अन्तर्राष्ट्रीय क्रिकेट परिषद का चेयरमैन बनना था। क्रिकेट को अच्छे दामों में बेचकर उनने बता दिया कि वे इस विश्व संस्था के चेयरमैन होने के कितने योग्य थे। उनने एशियाई क्रिकेट परिषद बनाई है, जिसके वे आजन्म अध्यक्ष हैं। वे एशियाई क्रिकेट परिषद को मालामाल करके इतनी अमीर और इतनी शक्तिशाली बना देंगे कि विश्व संस्था उनका हुकुम बजाने खड़ी रहेगी। वे पैसा कमाएँगे, नाम और ताकत भी कमाएँगे इसलिए परिषद के साथ क्रिकेट को बेचने में लगे हैं।

रूपर्ट मरढाक ने पचपन करोड़ डॉलर में परिषद का क्रिकेट दिखाने का एकाधिकार तो खरीद लिया। लेकिन पाया कि सिवाय भारत के क्रिकेट में कहीं पैसा नहीं है। इसलिए जो कम्पनियाँ उन्हें पैसा दे रही हैं उनने मूँछ मरोड़ी और खम ठोंके। कहा कि हम प्रायोजन का पैसा तभी देंगे जब परिषद के क्रिकेट को हमारी प्रतिद्वन्द्वी कम्पनियाँ बेच न सकें। एम्बुश मार्केटिंग यानी घात लगाकर सीनाजोरी से बेचने पर पाबन्दी लगानी पड़ेगी। परिषद जानती है कि जितना पैसा उसने लिया है, दूसरा कोई बन्दा या कारपोरेशन नहीं देगा। दुनिया में खेल के बाजार में क्रिकेट की हैसियत ही क्या है! इसलिए परिषद ने मरढाक की शर्तें मान लीं। कारनामे पर दस्तखत हो गए। सब बोर्डों ने मान लिया कि परिषद ने अच्छा किया है और उनने भी दस्तखत कर दिए। फिर उनने खिलाड़ियों से कहा कि खेल तभी सकोगे जब कारनामे पर दस्तखत करोगे। खिलाड़ियों ने कहा कि हमने भी कुछ कम्पनियों से करार कर रखे हैं। हमारा जो हर्जाना होगा और अगर हमें जुर्माना भी देना पड़ा तो क्या होगा ? वे टालमटोल करने लगे। परिषद का करारनामा कहता था कि चैम्पियन ट्रॉफी और विश्व कप के एक महीने पहले, एक महीने बाद और उनके दौरान तुम्हारा विज्ञापन वहीं करेंगे—जिनने हमें प्रायोजन के पैसे दिए हैं। अब पाकिस्तान, न्यूजीलैंड, जिम्बाब्वे जैसे देश के खिलाड़ियों को तो अपने बोर्ड से जो पैसा मिल जाए वही काफी है। उनके विज्ञापन करने वाली कम्पनियाँ नहीं हैं, न उनके करारनामे हैं। आस्ट्रेलया, इंग्लैंड और दक्षिण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अफ्रीका के खिलाड़ी थोड़ी बहुत कमाई विज्ञापन से कर लेते हैं—लेकिन कोई खास नहीं। उनका हर्जाना बोर्ड दे देगा। वे मान गए। अड़े भारतीय खिलाड़ी—सचिन, गांगुली, द्रविड़, सहवाग आदि को विज्ञापनों से अच्छी कमाई होती है। सचिन को तो एक विज्ञापन का एक करोड़ रुपया मिलता है। गांगुली और द्रविड उनसे नीचे हैं। बाकी के उनसे भी नीचे। लेकिन क्रिकेट में यही खिलाड़ी हैं जो थोड़ी बहुत कमाई कर लेते हैं। हालाँकि इनकी भी कमाई—दुनिया के फुटबॉल, टेनिस, गोल्फ, बास्केटबॉल, बेसबाल, कार रेसिंग आदि के खिलाड़ियों से पैसे भर नहीं है।

भारतीय सितारा खिलाड़ी अड़ गए। उनने कहा—एक तो हमसे पूछा नहीं, हमारे व्यावसायिक हितों को ध्यान में नहीं रखा और अब ऐन मौके पर कहते हैं दस्तखत करो। कर दें तो कमाई तो मारी ही जाएगी, वे कम्पनियाँ करार तोड़ने का हर्जाना माँगें तो हम कहाँ से देंगे? क्यों देंगे? हम कोई बोर्ड और परिषद की नौकरी तो करते नहीं। वे तो हमें खेलने की फीस भर देते हैं। बाकी अपनी कमाई तो खुद हमीं को करनी पड़ती है। बोर्ड के करारनामे पर दस्तखत करके हम अपने हाथ क्यों कटवाएँ? उनने मना किया तो पहले तो बोर्ड और परिषद ने खम ठोके। हम दूसरी टीम भेज देंगे। छोटे खिलाड़ी तैयार हैं। तुम देश के लिए खेलते हो कि पैसे के लिए? पर उनने पाया कि पैसे वाली कम्पनियाँ और जनता खिलाड़ियों के साथ हैं। वे नहीं खेलेंगे तो चैम्पियंस ट्रॉफी फट हो जाएगी। प्रायोजक पैसे नहीं देंगे। उन्हें घुटने टेकने पड़े। खिलाड़ियों से कहा करारनामा सिर्फ चैम्पियंस ट्रॉफी का है और पाबन्दी ट्रॉफी के अठारह दिन और बाद के सत्रह दिन ही लगेगी। खिलाड़ी तैयार हो गए। कहते हैं जीत क्रिकेट की हुई। जी नहीं, जीत प्रायोजकों और पैसों की हुई। महीनेभर पैसे का यह खेल खुले में चला। ऐसा चला कि मुझ जैसे क्रिकेट दीवाने का भी चैम्पियंस ट्रॉफी से मन उचट गया। अब बेचारी पुलिसवाली किरण बेदी और बिलियर्ड के खिलाड़ी गीत सेठी क्रिकेट और अपने भारतीय खिलाड़ियों को गरिया रहे हैं। यह वाहियात खेल है और इसका पैसा दूसरे खेलों को दो। किरण बेदी और गीत सेठी को हीरो और हीरोइन किसने बनाया? इन्हीं अखबारों और टीवी ने। थोड़ी शरम करो भैया क्रिकेट में पैसा है तो इसलिए कि करोड़ों उसके दीवाने हैं। और फिर जिस दुनिया में बेचना ही सबसे बड़ा पुण्य और उपलब्धि है और जहाँ धर्म, आस्था, साहित्य, संगीत, मनुष्य और उसके सम्बन्ध सब बिकने के लिए बाजार में हैं तो क्रिकेट तो खेल है। धर्म-धन्धा है, राजनीति धन्धा है, सरकार धंधा है तो क्रिकेट धन्धा होने से कैसे बचेगा? बताइए!

(15.9.2002)

●●●

144430

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

GURUKUL KANGRI LIBRARY

	Signature	Date
Access on	[signature]	10/02/09
Class on	[signature]	27/
Cat on	[signature]	30/06/09
Tag etc.	[signature]	04/08/09
Filing		
E.A.R.	[signature]	3
Any others		
Checked		

Recommended By........ डा० कमलकान्त बुधकर

Entered in Database

Signature with Date

10/02/09

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभाष जोशी

प्रभाष जोशी का जन्म इन्दौर और भोपाल के बीच पार्वती के किनारे आष्टा में 15 जुलाई, 1937 को हुआ। बचपन क्षिप्रा और नर्मदा के बीच मालवा अंचल में बीता। इन्दौर के प्राथमिक स्कूलों और महाराजा शिवाजी राव मिडिल स्कूल में शिक्षा हुई। मैट्रिक के बाद पहले होलकर कॉलेज फिर गुजराती कॉलेज और बाद में क्रिश्चियन कॉलेज में हुई। गणित और विज्ञान पढ़ते हुए समाजशास्त्र के प्रोफेसर पाटिल के साथ आसपास के गाँवों में जाना हुआ। फिर अपनी मर्जी से मालवा के गाँवों में पैदल और साइकिल से घूमते रहे। आखिर क्रिकेट का खेलना और गणित विज्ञान का पढ़ना छूटा और इंटर किए बिना कॉलेज छोड़कर गाँवों में रहने लगे। फिर क्षिप्रा के किनारे गाँव सुनवानी महाकाल में डेरा डाला। पाँच साल ग्राम सेवा और अध्यापन किया। इस गाँव में रहते हुए ही हिन्दी और अंग्रेजी के जरिए दुनिया का साहित्य पढ़ा। 'नई दुनिया' में कविता, कहानियाँ लिखीं और एंटन चेखव के 'थ्री इयर्स' का अनुवाद किया।

इन्दौर में विनोबा भावे के पहले नगर प्रवास जुलाई, 1960 का महीने-भर नई दुनिया के अलग परिशिष्ट में कवरेज किया। पत्रकारिता में रहने का मन बना तो 'नई दुनिया' ने खूब मौके दिए : प्रूफ रीडिंग से लेकर सम्पादकीय लेखन तक और साहित्य परिशिष्ट से विशेषांक और दैनिक निकालने तक। क्रिकेट, नाटक, संगीत, संस्कृति, साहित्य और ग्रामीण जीवन सबकी रिपोर्टिंग की। ब्रिटेन में पत्रकारिता करने और घूमने का भी मौका मिला। कोई छह साल तक पत्रकारिता और साहित्य में रहने और लिखने की सघन ट्रेनिंग हुई। सन् 66 में इन्दौर छोड़कर भोपाल से शरद जोशी के साथ नया दैनिक 'मध्यदेश' निकाला और सन् 68 में गांधी शताब्दी समिति के प्रकाशन निकालने दिल्ली आ गए। यहीं देवेन्द्र भाई, राधाकृष्ण और जयप्रकाश नारायण के साथ काम करने का मौका मिला। सन् 72 में जेपी के साथ बागियों के आत्मसमर्पण पर चम्बल घाटी में काम किया। फिर जेपी के साप्ताहिक 'एवरीमैंस' और गुजरात और बिहार के छात्र आन्दोलन से जुड़े।

हिन्दी दैनिक निकालने इंडियन एक्सप्रेस आए और सन् 74 में प्रजानीति साप्ताहिक निकाला जिसे इमरजंसी में बन्द करना पड़ा। 'आस पास' निकाला, उसे भी बन्द करना पड़ा। मार्च, 77 में जनता पार्टी की सरकार बनने के बाद एक्सप्रेस में दिल्ली में ही काम किया। फिर जनवरी, 78 से अप्रैल, 81 तक चंडीगढ़ में इंडियन एक्सप्रेस का सम्पादन किया। ये चार साल सुनवानी महाकाल के वर्षों की तरह ही प्रेरणादायी थे। लौटकर इंडियन एक्सप्रेस के दिल्ली संस्करण का सम्पादन किया। अमदाबाद के एक्सप्रेस के अखबार भी देखे। तब जाकर नवम्बर, 83 में 'जनसत्ता' की शुरुआत की। 'जनसत्ता' ने पहले ही साल 2 लाख 32 हजार का सर्कुलेशन पा लिया। सन् 87 में चंडीगढ़, 88 में मुम्बई और 91 में कोलकाता से जनसत्ता के संस्करण निकाले। सन् 94 में मुम्बई में बाईपास सर्जरी हुई। नवम्बर, 95 में प्रधान सम्पादकी छोड़ी और सम्पादकीय सलाहकार की भूमिका में आ गए। बाद में इससे भी मुक्त हो गए। प्रकाशित पुस्तकें : चम्बल की बन्दूकें, गांधी के चरणों में, मसि कागद, हिन्दू होने का धर्म।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

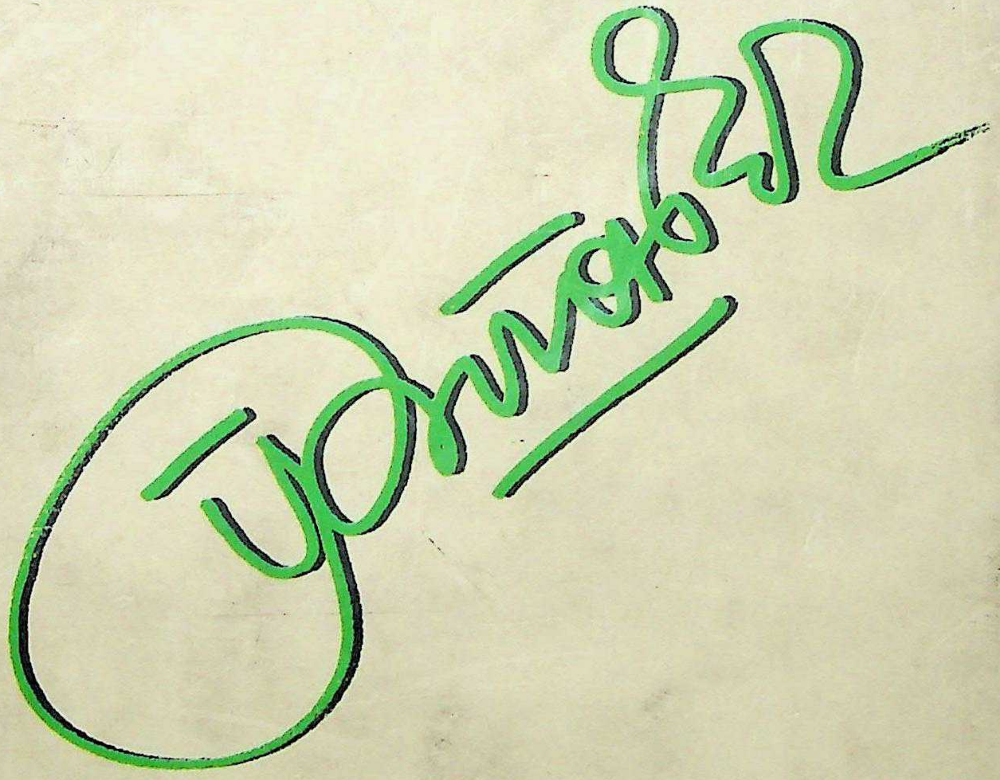

ISBN : 978-81-267-1610-4
450 रुपये
9 788126 716104

राजकमल प्रकाशन
नयी दिल्ली पटना इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar